मास्टर ऑफ आर्ट्स (संस्कृत)

Master of Arts (Sanskrit)

तृतीय सेमेस्टर - एम0ए0एस0एल - 602

गद्य एवं पद्य काव्य

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी-263139

Toll Free : 1800 180 4025
Operator : 05946-286000
Admissions : 05946-286002
Book Distribution Unit : 05946-286001
Exam Section : 05946-286022
Fax : 05946-264232
Website : http://uou.ac.in

पाठ्यक्रम समिति

कुलपति (अध्यक्ष)
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
प्रोफे0 ब्रजेश कुमार पाण्डेय,
संस्कृत एवं प्राच्य विद्या अध्ययन संस्थान,
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
प्रोफे0 रमाकान्त पाण्डेय,
राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान जयपुर परिसर, राजस्थान
प्रोफे0 कौस्तुभानन्द पाण्डेय,
संस्कृत विभाग, अल्मोड़ा परिसर,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

प्रो0 एच0 पी0 शुक्ल-(संयोजक)
निदेशक, मानविकी विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
डॉ0 देवेश कुमार मिश्र,
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
डॉ0 नीरज कुमार जोशी,
असिस्टेन्ट प्रोफेसर-ए.सी.,संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

मुख्य सम्पादक

प्रोफे0 ब्रजेश कुमार पाण्डेय
संस्कृत एवं प्राच्य विद्या अध्ययन संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम संयोजन एवं सम्पादन

डॉ0 नीरज कुमार जोशी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई लेखन

डॉ0 नीरज कुमार जोशी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

खण्ड एवं इकाई संख्या

प्रथम एवं द्वितीय खण्ड सम्पूर्ण

प्रकाशक: (उ0 मु0 वि0, हल्द्वानी) -263139
पुस्तक का शीर्षक - गद्य एवं पद्य काव्य
कॉपीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
ISBN No. 978 - 93 - 84632-26- 7

मुद्रक:
प्रकाशन वर्ष :

नोट:- यह पुस्तक छात्र हित में शीघ्रता के कारण, प्रकाशित की गयी है। संशोधित व परिवर्द्धित संस्करण का प्रकाशन पाठ्यक्रम के पूर्ण लेखन व सम्पादन के पश्चात् किया जायेगा। इसका उपयोग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना अन्यत्र किसी भी रूप में नहीं किया जा सकता।

अनुक्रम

खण्ड 1. प्रचीन गद्य कवि **पृष्ठ संख्या 01-04**

इकाई 1. संस्कृत गद्यकाव्य की परम्परा **05-39**

इकाई 2. सुबन्धु **40-62**

इकाई 3. बाणभट्ट **63-92**

इकाई 4. आचार्य दण्डी **93-114**

खण्ड 2. दशकुमारचरितम् **पृष्ठ संख्या 115**

इकाई 1. दशकुमारचरितम् का रचनाविधान एवं वैशिष्ट्य **116-128**

इकाई 2. प्रथम उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ) **129-191**

इकाई 3. द्वितीय उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ) **192-214**

इकाई 4. तृतीय उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ) **215-232**

इकाई 5. चतुर्थ उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ) **233-260**

इकाई 6. पंचम उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ) **261-299**

तृतीय सेमेस्टर/SEMESTER-III
खण्ड–प्रथम
प्राचिन गद्य कवि

इकाई-प्रथम
संस्कृत गद्यकाव्य की परम्परा

इकाई की रूप रेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 संस्कृत गद्यकाव्य की परम्परा

1.3.1 गद्यकाव्य का प्रयोजन

1.3.2 गद्यकाव्य का उद्भव एवं उत्कर्ष

1.3.3 गद्यकाव्य का विकास क्रम

1.3.4 गद्यकाव्य के भेद एवं प्रकार

1.3.5 प्रमुख संस्कृत गद्यकाव्य

1.3.6 आधुनिक संस्कृत गद्यकाव्य

1.4 सारांश

1.5 शब्दावली

1.6 अभ्यासार्थ प्रश्न-उत्तर

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.8 उपयोगी पुस्तकें

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना:-

प्रिय शिक्षार्थियो !

स्नातकोत्तर तृतीय सेमेस्टर, द्वितीय प्रश्न पत्र, गद्य एवं पद्य काव्य से सम्बन्धित यह प्रथम खण्ड की प्रथम इकाई है। वैदिक साहित्य में गद्य साहित्य का रूप उनमें वर्णित आख्यानों में दिखाई पड़ता है। इन आख्यानों में गद्य के साथ पद्य का भी भाग मिलता है जिसे ''गाथा'' कहते हैं। ऋग्वेद में 'नाराशंसी' गाथाओं का उल्लेख है। वैदिक गद्य में छोटे-छोटे सरल एवं सुबोध शब्दों का प्रयोग है। संस्कृत गद्य का आरम्भ ब्राह्मण-ग्रन्थों और उपनिषदों के गद्य में देखा जा सकता है। बहुत दिनों तक सरल स्वाभाविक शैली में गद्य लिखने की परम्परा चलती रही। समय के साथ गद्य में भी काव्य के उपादानों को प्रविष्ट कराने की प्रवृत्ति का जन्म हुआ। आरम्भिक शिलालेखों में गद्य-काव्य प्राप्त होते हैं। रूद्रदामन का गिरनार-शिलालेख तथा हरिषेण रचित समुद्रगुप्त-प्रशस्ति महत्वपूर्ण गद्य काव्य के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। संस्कृत में गद्य-काव्य की रचना बहुत कम हुई है। पद्य की अपेक्षा अधिक श्रम, आलोचकों की उपेक्षा तथा ऊँचा मानदण्ड ये तीन मुख्य कारण हैं जिसके चलते गद्य की ओर कवि अभिमुख नहीं होते थे। उक्त बातों को यह उक्ति पुष्ट करती है-''**गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति**''

उपर्युक्त परेशानियों के बावजूद भी संस्कृत साहित्य में गद्य-काव्य की रचना हुई। यह रचना प्रायः छठी-सातवीं शताब्दी में गद्य काव्य के दण्डी, सुबन्धु एवं बाणभट्ट के द्वारा की गई। दण्डी का दशकुमारचरितम्, सुबन्धु की वासवदत्ता एवं बाणभट्ट की कादम्बरी तथा हर्षचरितम् संस्कृत साहित्य के उत्कृष्टतम गद्य काव्य हैं। लगभग 1200 वर्ष बाद उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में पण्डित अम्बिकादत्त व्यास ने 'शिवराजविजयम्' लिखकर बीच के खालीपन को दूर करने का प्रयास किया। इनके अतिरिक्त गद्य रचना विभिन्न कालों में प्रायः बाण का अनुकरण ही प्रतीत होता है। इस इकाई में आप संस्कृत गद्य काव्य की परम्परा का उद्भव किस प्रकार हुआ, गद्यकाव्य का प्रयोजन क्या है, गद्यकाव्य का विकास, गद्यकाव्य के भेद, प्रमुख संस्कृत गद्यकाव्यों का परिचय तथा आधुनिक संस्कृत गद्यकाव्य के बारे में अध्ययन करेंगे।

इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकेंगे कि संस्कृत गद्य काव्य की परम्परा का उद्भव किस प्रकार हुआ। साथ ही गद्यकाव्य का विकास क्रम के विषय में विस्तार से विश्लेषण कर सकेंगे।

1.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता सकेंगे कि—

- ❖ संस्कृत गद्यकाव्य की परम्परा का विकास किस प्रकार हुआ।
- ❖ गद्यपरम्परा से सम्बन्धित महत्त्व पूर्ण तथ्यों का अध्ययन कर सकेंगे।
- ❖ गद्यकाव्य का उद्भव एवं उत्कर्ष के विषय में आप अध्ययन करेंगे।

- ❖ गद्यकाव्य के विकास क्रम के विषय में अध्ययन करेंगे।
- ❖ संस्कृत के प्रमुख गद्यकाव्यों के विषय में अध्ययन करेंगे।
- ❖ गद्यकाव्य के भेद एवं प्रकार के विषय में अध्ययन कर सकेंगे।
- ❖ आधुनिक संस्कृत गद्यकाव्य के विषय में अध्ययन करेंगे।

1.3 संस्कृत गद्यकाव्य की परम्परा:-

मुख्य रूप से काव्य के तीन भेद माने गए हैं—पद्यकाव्य, गद्यकाव्य तथा चम्पू जिसे मिश्रितकाव्य भी कहते हैं। संस्कृतसाहित्य में गद्य की परम्परा वैदिक संहिताओं के समान प्राचीन कही जाती है। पद्य की अपेक्षा गद्य को संस्कृतसाहित्य में अधिक महत्व दिया जाता है, क्योंकि गद्य के लेखक को अपने भावों को अभिव्यक्त करने की पूर्ण छूट है, किन्तु पद्य में छन्द अक्षर, ह्रस्व, दीर्घ आदि का बन्धन रहने से लेखक को उतनी स्वतन्त्रता नहीं रहती । इसलिए गद्य के सम्बन्ध में यह उक्ति है- **'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति'** गद्य कवियों के लिए एक कसौटी है, जिसमें जितना प्रबल वैदुष्य रहेगा, वह कवि उतना ही उत्तम गद्य लिख सकता हैं।

वेद, ब्राह्मण, उपनिषद्, निरुक्त, महाभारत, पुराण प्रवृत्ति ग्रन्थों से संस्कृत भाषा के गद्य को सम्वर्द्धनशील परम्परा प्राप्त हुई है। आगे चलकर टीकाओं, कथाकाव्यों आख्यायिका ग्रन्थों तथा चम्पू, नाटक आदि में भी गद्य का प्रौढ़ रूप सामने आया है । यहां तक कि, तत्वज्ञानसम्बन्धी दार्शनिक ग्रन्थों में, ज्योतिषशास्त्रों में तथा व्याकरण के ग्रन्थों में भी गद्य को फूलने-फलने और अपना विकास करने की पूरी सुविधाएँ प्राप्त रही हैं।

ऐतिहासिक गवेषणाओं से प्रतीक होता है कि भारतीय साहित्य के प्राचीनतम अंश वैदिक वाङ्मय में गाथाओं का अस्तित्व बड़ा ही प्रभावोंत्पादक एवं महत्वपूर्ण रहा है। वैदिकसाहित्य में भाषा, आख्यान, इतिहास एवं पुराणों का स्पष्ट उल्लेख है, जो धार्मिक संस्कारों या यज्ञ के अवसरों पर सुनाये जाते थे। इसमें गद्य के साथ पद्यों का भी मिश्रण है।

गद्यभाषा की प्राचीनतम गाथा एवं आख्यायिकाएँ आज हमें उपलब्ध नहीं हैं, फिर भी प्रचीन ग्रन्थ है, इस सम्बन्ध में हमें पर्याप्त विवरण उपलब्ध करा देते हैं। सुप्रसिद्ध वैयाकरण वार्तिकार कात्यायन 400 ई0 पू0 हमें आख्यायिका से सुपरिचित जान पढ़ते हैं । दूसरे महावैयाकरण महाभाष्यकार भगवान पतञ्जलि 200 ई0 पू0 के सम्बन्ध में ऐसा विश्वास है कि वासवदत्ता, सुमनोत्तरा और भैमरथी नामक अख्यायिकाओं को अपने हाथों से उलट-पुलट चुके थे। उनका महाभाष्य तो गद्य की समृद्धि का पूर्ण परिचायक है। रुद्रदामन का गिरिनार शिलालेख 150 ई0 भी

गुप्तकालिक शिलालेख और विभिन्न स्थानों में सैकड़ों अभिलेखों को देखकर गद्य के प्राचीन अस्तित्व का सहज में अन्दाजा लगाया जा सकता है। कथाकार बाणभट्ट ने एक सिद्धहस्त गद्यकार भट्टारक का नाम उद्धृत किया है। उसी प्रकार कल्हण के कथानुसार बररुचिकृत चारुमति, रोमिल्ल सोमिल्लकृत शूद्रककथा तिलकमंजरीकार धनपाल के कथानुसार श्रीपालिकृत तरंगवतीकथा तथा अन्धभृत्य सातवाहन राजाओं के समय में लिखे गए शतकर्णीहरण, नमोवन्तीकथा आदि ग्रन्थ भी प्राचीन ग्रन्थ की परम्परा का समर्थन करते हैं।

इन कथाकृतियों के कारण ही दण्डी, सुबन्धु, बाणभट्ट जैसे अद्भुत गद्यकारों की प्रतिभा को हम पा सके हैं। आचार्य दण्डी, सुबन्धु और बाणभट्ट ये तीनों ही संस्कृत के गद्य वैभव के स्वामी है। फिर भी यह स्मरणीय है कि इनके पूर्व भी संस्कृत के गद्य लेखन की परम्परा अवश्य विद्यमान थी। दर्शनशास्त्र के क्षेत्र में शास्त्रीय गद्य का अवतरण करने वाले तीन विद्वानों शबरस्वामी 400 ई0, स्वामी शंकराचार्य 700 ई0 तथा जयन्तभट्ट 900 ई0 के नाम उल्लेखनीय हैं। पौढ़मीमांसा शबरस्वामी का कर्म मीमांसाभाष्य, स्वामी शंकराचार्य कृत ब्रह्मसूत्र, गीता एवं उपनिषद् के भाष्य सुप्रसिद्ध नैयायिक जयन्तभट्ट के न्यायमंजरी आदि दर्शनग्रन्थ गद्य का परिष्कृत एवं सुसंस्कृत रूप उपस्थित करते हैं।

गद्यकाव्य के क्षेत्र में इस प्रकार के प्रबुद्ध, लोकप्रिय, श्लाघ्य गद्य के प्रवर्तन दण्डी, सुबन्धु और बाणभट्ट की कृतियों से लक्षित होता है। यद्यपि गद्य का वैभवशाली रूप, जिससे संस्कृत भाषा को आगे बढ़ाने का पर्याप्त अवसर हमें दण्डी, सुबन्धु तथा बाणभट्ट की रचनाओं में मिलता है। फिर भी यह सुनिश्चित मत है कि गद्य परम्परा दण्डी आदि से भी पहले की है। दण्डी, सुबन्धु और बाणभट्ट इन तीनों गद्यकार कवियों ने अपनी-अपनी स्वतन्त्र शैलियों को दिया, जो अत्यन्त ही रोचक थी, इसी परम्परा को आगे के गद्यकार इनका ठीक-ठीक अनुकरण करने में समर्थन हो सके।

1.3.1 गद्यकाव्य का प्रयोजन:-

प्रयोजन के बिना किसी भी कार्य में प्रवृत्ति नही होती है। अतः साहित्य ग्रन्थों के काव्य में अनेक प्रयोजन कहे गए हैं। कुछ लोगों की धारणा है कि काव्य प्रायः श्रृंगारात्मक होने के कारण विषयी लोगों के मनोरञ्जन का साधन मात्र है। किन्तु यह ठीक नहीं, क्योंकि काव्य के अध्ययन से धार्मिक, नैतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, दार्शनिक एवं व्यावहारिक ज्ञान की भी प्राप्ति होती है। सत्काव्य के अनुशीलन से सभी मनोभिलास पूर्ण हो सकते हैं। भामह ने अपने काव्यालंकार में धर्म,

अर्थ और काम के अतिरिक्त सत्काव्य को मोक्ष का साधन तथा विभिन्न कलाओं के ज्ञान का धारण भी माना है। काव्यालंकार में कहा गया है—

धर्मार्थ काममोक्षाणां वैचक्षण्यं कलासु च ।
प्रीतिं कारोति कीर्तिं च साधुकाव्यनिषेवणम् ।। काव्यालंकार 1/2

आत्मज्ञान के लिए वेदों में, धर्म के लिए धर्म शास्त्रों में और नीति के लिए नीति ग्रन्थों में प्रचुर उपदेश हैं, किन्तु उनका मार्ग अत्यत गूढ़, दुर्गम एवं दुर्भेद्य होने के कारण उनमें प्रवेश पाना दुष्प्राप्य है। वेद में प्रभुसम्मित शब्द हैं, वे राजज्ञा के समान आत्म ज्ञान का उपदेश करते हैं। और और धर्मशास्त्र में सुहृदसम्मित शब्द हैं जो मित्र की तरह हित एवं अहित को समझाते हैं, किन्तु जो लोग उनके उपदेशों में रुचि नहीं रखते, ऐसे लोगों को उनके द्वारा शिक्षा पाना कठिन है। अतः उनके निमित्त काव्य द्वारा ही सदुपदेश उपयुक्त हो सकता है, क्योंकि काव्य में कान्तासम्मित शब्द हैं। जिस प्रकार कामिनी अपने प्रियतम को हाव-भाव कटाक्ष आदि की मधुरता से अनुरक्त करके अपने अनुकूल कर लेती है, उसी प्रकार सत्काव्य में भी वेदशास्त्रों से विमुख जनों को अपने मधुर श्रृंगार आदि रसों की सरसता से अपने में अनुरक्त करके सदुपदेश देता है। काव्य द्वारा उपदेश रुचिपूर्वक सेवन किया जा सकता है। अत: निर्विवाद सिद्ध है कि काव्य का अध्ययन मनोरञ्जन मात्र नहीं किन्तु अत्यन्त प्रयोजनीय, सहज और सुख साध्य होने के कारण अन्य मार्गों से विलक्षण है।

अनादिकाल से इस भूमण्डल पर असंख्य राजा-महाराजा एवं यशस्वी सम्राट हो गए हैं। किन्तु उनमें से जिन के विषय में कुछ नहीं लिखा गया है, उनका कुछ भी स्मृतिचिन्ह अवशेष नहीं है, किन्तु जिनका चरित्र काव्यों में अंकित है उन्हीं का सुयश चिरस्थायी रह गया है। बिल्हण ने ठीक ही कहा है कि जिस राजा के दरबार में बड़े-बड़े कविराज नहीं रहते, उनके यश का प्रसार नहीं होता—

महीपते: सन्ति न यस्य पाश्र्वे कवीश्वरास्तस्य कुतो यशांसि।
भूपा: कियन्तो न बभूवुरूर्व्या नामापि जानाति न कोऽपि तेषाम्।।

लोकव्यवहार का ज्ञान, दुख की निवृत्ति, ब्रह्मानन्द के समान सुख की उपलब्धि और कान्ता सम्मित सदुपदेश का लाभ बतलाया है। काव्यप्रकाश में कहा गया है —

काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षये।
सद्य: परनिर्वृत्तये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे।। काव्यप्रकाश 1/1

1.3.2 गद्यकाव्य का उद्भव एवं उत्कर्ष:-

संस्कृत साहित्य में गद्य काव्य की परम्परा को वैदिक संहिताओं जितना प्राचीन कहा जा सकता है। साहित्य के अनुशीलन से यह सिद्ध होता है कि गद्य काव्य का प्रादुर्भाव सर्वप्रथम संस्कृत भाषा में ही हुआ है। प्राचीनतम गद्य का उदाहरण कृष्णयजुर्वेद, तैत्तिरीयसंहिता, ब्राह्मण ग्रन्थों, उपनिषद ग्रन्थों, निरुक्त, महाभारत और महाभाष्य आदि-आदि ग्रन्थों में संस्कृत भाषा के गद्य को सम्वर्धनशील परम्परा उपलब्ध हुई। आगे चलकर गद्यकाव्य का पौढ़ रूप सामने आया तत्वज्ञान, दर्शन, विज्ञान, ज्योतिष, भाषाशास्त्र, व्याकरण आदि ग्रन्थों में भी गद्य को पुष्पित-पल्लवित करने की पूरी सुविधाएं प्राप्त रही। आरम्भ में ऐतिहासिक गवेषणाओं से हमें प्रतीत होता है कि भारतीय साहित्य के प्राचीनतम अंश वैदिकसाहित्य में गाथाओं का अस्तित्व बड़ी प्रभावोत्पादक रीति से स्वीकार किया गया है। प्रारम्भ में यद्यपि गद्य रचना को काव्य कौशल का कारण माना जाने लगा था गद्य कृतियों को काव्य न कह कर उसको कवियों की कसौटी माना जाने लगा था, तथापि हम देखते हैं कि इसका परिणाम यह हुआ कि आत्मश्लाघा एवं काव्य कौशल के लिए कवियों ने ऐसे गद्य का निर्माण किया जो समासबहुल, अतिदुरूह और पाण्डित्य प्रदर्शन से भरपूर था। हम देखते हैं कि एक छोटी सी कथा को विभिन्न प्रसंगों में उलझा कर, इतना जटिल बना दिया गया कि मुख्य कथा को समझना ही दुष्कर हो जाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि वैदिक काल से ही गद्य काव्य का उद्भव एवं उत्कर्ष प्रारम्भ हो चुका था।

1.3.3 गद्यकाव्य का विकास क्रम:-

संस्कृत में गद्य काव्यों की प्राचीनता में कोई सन्देह नहीं। वैदिक युग से लेकर मध्यकाल तक गद्य के विकास का क्रम अत्यन्त मनोरम है। यह प्राचीन भाषा दो वर्गों में विभाजित हैं एक वैदिक एवं दूसरी लौकिक। वैदिक भाषा वैदिक साहित्य में- संहिताओं, ब्राह्मणों, आरण्यकों, उपनिषदों एवं सूक्तों में प्रयुक्त हुई है तथा लौकिक संस्कृत परवर्ती साहित्य में देखा गया है। साहित्य जहाँ प्रारम्भ में पद्यात्मक तथा बाद में गद्यात्मक हो जाता है, वहीं लौकिक संस्कृत साहित्य का अधिकांश भाग पद्यात्मक है। यहाँ तक कि ज्योतिष, गणित, व्यवहार, आयुर्वेद जैसे शास्त्रीय विषयों में भी संस्कृत साहित्यकारों ने पद्य का ही आश्रय लिया। गद्य का प्रयोग व्याकरण ग्रन्थों, भाष्यों, आख्यायिकाओं तथा आंशिक रूप से नाटकों में हुआ है। संस्कृत साहित्य के विपुल विस्तार को देखते हुए उसमें गद्य का भाग बहुत ही कम है। लेखकों और पाठकों का रूझान पद्य की ओर अधिक रहा है। कंठस्थ करने में सरल होने के कारण गद्य जनप्रिय रहे हैं, वह भी उस समय में जब अध्ययन-अध्यापन मुख्य रूप से मौखिक ही होता था। 'रामायण', 'महाभारत' तथा विशाल पुराण साहित्य पद्य में ही रचे गये थे,

किन्तु शीघ्र ही गद्य ने अपने व्यवहारिक महत्व के कारण, साहित्य में प्रतिष्ठित पद प्राप्त कर लिया और उसे कवियों की सच्ची कसौटी माना जाने लगा।

साहित्य की दृष्टि से संस्कृत गद्यकाव्य को हम मुख्यतः छ: भागों में विभाजित कर सकते हैं— 1. वैदिकगद्य, 2. दार्शनिकगद्य, 3. सूत्रात्मकगद्य, 4. पौराणिकगद्य, 5. शास्त्रीयगद्य, 6. लौकिकगद्य। वैदिक साहित्य में गद्य के दो प्रकार के रूप मिलते हैं— वैदिक काल में सामान्य बोल चाल का गद्य तथा लौकिक संस्कृत का प्रौढ़, समास युक्त, दोनों प्रकार के गद्यों में अपना विशिष्ट सौन्दर्य है। वैदिक गद्य में सीधे-साधे छोटे-छोटे शब्दों का प्रयोग पाते हैं। वैदिक गद्य में यज्ञादि विधान का उद्देश्य होता था, वहाँ पाण्डित्यप्रदर्शन का कोई भाव नहीं है। वहॉ उपमा तथा रूपक का कमनीय सन्निवेश वैदिक गद्य को विदग्धों की दृष्टि से हृदयावर्जन बनाये हुए हैं। उक्त कथन की पुष्टि अथर्ववेद के 15 वें काण्ड से कर सकते हैं— **व्रात्य आसीदीयमान एव स प्रजापतिं समैरसत्। स प्रजापति:सुवर्णमात्मन्नपश्यत् तत् प्राजनयत्। तदेकमभवत्, तल्ललामभवत्, तन्महदभवत्,तदज्जेष्ठमभवत्,तद् ब्रह्माभवत् तत्ततोऽभवत्तत्सत्यमभवत्, तेन प्रजायत्।** एतेरेय ब्राह्मण में पद्य इस रूप में प्राप्त होता है— **'अग्निर्वे देवानामवमो विष्णु: परमस्तदन्तरेण सर्वा अन्या देवता:। आग्नावैष्णवं पुरोडाशं निर्वपन्ति दीक्षणीयमेकादशकपालं सर्वाभ्य एवैनं तद्देवताभ्योऽनन्तरायं निर्वपन्ति'।** स्पष्ट है कि वैदिक गद्य सरल और सहज रूप में थे।

वैदिकगद्य और लौकिक संस्कृत के गद्य को मध्य में मिलाने का काम पौराणिक गद्य करता है। पौराणिकगद्य भारतीय इतिहास और परम्परा के विश्वकोष हैं। पुराणों में वैदिकसाहित्य का ही लोक के लिये सुगम भाषा और शैली में पल्लवन हुआ है। व्याकरण, साहित्य, धर्म, दर्शन, आयुर्वेद, ज्योतिष तथा अन्य शास्त्रों का भी इनमें समावेश हैं। श्रीमद्भागवद् में कहा गया है- "अखिल ब्रह्माण्ड की सृष्टि स्थिति व लय की विचित्र पहेली का सुन्दर समाधान एकमात्र पुराण ही है"। इसी विवेचन के कारण पुराणों को पाँचवा वेद कहा गया है। "महर्षि वेदव्यास ने मानव जाति के कल्याण एवं मंगल के लिए वेदों के मंत्रों का एवं उनके रहस्यों को पुराणों में भाष्य के रूप में अभिव्यक्त किया है। इसी महत्ता के कारण पुराणों को जनकल्याण के लिए वदों का विस्तृत भाष्य कहा जाता है। गद्य लेखन की इस परम्परा को पौराणिकों ने भी स्वीकार किया। महाभारत, श्रीमद्भागवत, विष्णुपुराण का गद्य इसका स्पष्ट उदाहरण है। महाभारत का एक उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य है—**'तस्येदानीं तमस: सम्भवस्य पुरूषस्य ग्रह्मयोनेब्रह्मण: प्रादुर्भावे स पुरूष: प्रजा: सिसृक्षमाणो नेत्राभ्यामग्नीषोमौ'** यहाँ सृष्टि के प्रारम्भ में परम पुरूष के अग्नि से चन्द्रमा की उत्पत्ति का वर्णन किया गया है।

वैदिक काल एवं पौराणिकगद्य के अनन्तर गद्य साहित्य के विकास में शास्त्रीयगद्य का भी बहुत योगदान रहा। सूत्रात्मकता तथा साररूप में चिन्तन को व्यक्त करने की क्षमता इस गद्य की विशेषता है। पूर्वपक्ष तथा उत्तरपक्ष को प्रस्तुत करने की विशेष शैली इसमें विकसित हुई। इसके प्राचीन रूप सूत्र ग्रन्थों में देखे जा सकते हैं। आगे चलकर कौटिल्य के अर्थशास्त्र, पतञ्जलि के महाभाष्य आदि में इस प्रकार के गद्य का स्वरूप विकसित हुआ।

शास्त्रीयगद्य की आधारशिला एक प्रकार से निरुक्त में रखी जा चुकी थी। इसका सम्बन्ध गम्भीर चिन्तन और विषय विश्लेषण से था। दर्शनशास्त्रों के सूत्र इसी गद्य प्रकार में विकसित हुए। पतञ्जलि का महाभाष्य, शबरस्वामी का शावरभाष्य, शंकराचार्य का शारीरकभाष्य, जयन्त भट्ट की न्यायमंजरी, आचार्य आनन्दवर्धन का ध्वन्यालोक, अभिनवगुप्त की टीकायें, सायणाचार्य का वेदभाष्य इत्यादि उत्कृष्ट शास्त्रीय गद्य के उदाहरण हैं। अष्टाध्यायी के वार्तिककार कात्यायन ने आख्यायिका का साहित्यिक रचना के रूप में दो बार उल्लेख किया है। पाणिनि के सूत्र **‘‘अधिकृत्य कृते ग्रन्थे’’** पर टिप्पणी करते हुए कात्यायन ने आख्यायिका का उल्लेख किया है। इस विषय में ईसा से तीसरी शताब्दी के पूर्वार्ध में महाभाष्य के प्रणेता पतञ्जलि का भी साक्ष्य उपलब्ध होता है। पतञ्जलि ने वासवदना, सुमनोत्तरा और भैभरथी इन तीनों आख्यायिकाओं के नामों का उल्लेख किया है, ये तीनों आख्यायिकाएँ वर्तमान में उपलब्ध नहीं है। यह वासवदना न तो सुबन्धु की ‘वासवदना’ है और न ही बाण के द्वारा उल्लिखित ‘वासवदना’। पतञ्जलि के द्वारा इन ग्रन्थों का उद्धरण ईसा से पूर्व द्वितीय शताब्दी में ‘गद्य काव्यों’ की उपलब्धता को सिद्ध करता है।

तिलकमंजरी में श्रीपालित की तरंगवती नाम की कथा का उल्लेख किया गया है राजा हाल की सभा का सदस्य होने के कारण श्रीपालित का काल ईसा की द्वितीय शताब्दी माना जा सकता है। इसी प्रकार रोमिल एवं सोमिल के द्वारा रचित शूद्रक के चरित्र पर आधारित ‘शूद्रक कथा’ का तथा भट्टारक हरिश्चन्द्र के द्वारा रचित कथाओं का उल्लेख उपलब्ध होता है। परन्तु ये सब रचनाएं उपलब्ध नहीं हैं।

साहित्यिकगद्य का प्रारम्भ तो ऐतिहासिक गद्यकाव्य की आत्मभूत आख्यायिकाओं से ही हो चुका था। इनमें से सबसे प्राचीन दण्डी, सुबन्धु एवं बाण की कृतियां उपलब्ध हैं जो भारतीय गद्यकाव्य के पूर्ण विकास को प्रदर्शित करती हैं। सुबन्धु की वासवदत्ता नाम की कथारचना संस्कृत साहित्य में प्रथम कथा के नाम से जानी जाती है। प्राचीन ग्रन्थों के अभाव में संस्कृत गद्यकाव्य के विकास का वर्णन एक कठिन कार्य है। संस्कृत के गद्यकाव्य में कथासूत्र अथवा पात्रों के साहसपूर्ण

कर्मों का वर्णन न्यून रूप में मिलता है और शास्त्रीय अलंकरणों, प्रकृति के सूक्ष्म वर्णनों और शारीरिक, मानसिक तथा नैतिक गुणों से युक्त विस्तृत चरित्र-चित्रण पर अधिक बल दिया गया है।

इस प्रकार संस्कृत गद्यकाव्य का सम्पूर्ण विकास स्वतन्त्र रूप से भारतवर्ष में हुआ। आख्यायिका का विकास प्रशस्तियों में काव्यशैली का समन्वय करने से हुआ, निश्चित रूप से साहित्यिक गद्य का स्पष्ट उदाहरण अभिलेखों में प्राप्त होता जैसा कि रुद्रदामन के गिरिनार शिलालेख तथा समुद्रगुप्त के इलाहाबाद स्तम्भलेख में देखा जा सकता है। इनमें अलंकृत वर्णनात्मक गद्यकाव्य में संक्षिप्त ऐतिहासिक तथ्यों को प्रस्तुत किया गया है। इसी प्रकार गाथाओं की सामग्री पर आश्रित 'कथा' को, लौकिक एवं अलौकिक घटनाओं एवं उद्देश्यों के साथ मुख्य कथानक में रखने की चेष्टा की गई है। क्योंकि ये गद्यकाव्य सुसंस्कृत पाठकों के लिए लिखे गए हैं अतः इनमें सब प्रकार के वर्णन अतीव अलंकृत भाषा में उपलब्ध होते हैं।

1.3.4 गद्यकाव्य के भेद एवं प्रकार:-

आख्यायिका कथा खण्डकथा परिकथा तथा।
कथालिकेति मन्यन्ते गद्यकाव्यं च पञ्चधा।।

अग्निपुराण में (336/12) गद्यकाव्य के पाँच भेदों का वर्णन मिलता है। दण्डी आदि आचार्यों ने संस्कृत गद्यकाव्य के दो ही मुख्य भेद किये हैं- कथा और आख्यायिका । यथा—

अत्रैवान्तर्भविष्यन्ति शेषाश्चाख्यानजातय: । काव्यादर्श 1/28

संस्कृतसाहित्य में गद्य-रचनाएं प्राचीनकाल से ही प्राप्त होती हैं। यजुर्वेद के गद्य सूक्तों एवं अथर्ववेद के कुछ गद्य भागों के अतिरिक्त ब्राह्मण एवं उपनिषद बहुत प्राचीन गद्य रचनाओं के उदाहरण हैं। इन ग्रन्थों में कहीं-कहीं आख्यान भी हैं उदाहरणतः ऐतरेय एवं शतपथ ब्राह्मण के आख्यान, उपनिषदों में सत्यकाम जाबाल इत्यादि की कथाएँ मिलती हैं। कौटिल्य अर्थशास्त्र तथा पतञ्जलि का महाभाष्य भी गद्य में लिखे हुए है। परन्तु उनकी शैली का उद्देश्य तथ्यों का उद्घाटन करना है। गहन-विषयों का शास्त्रीय विश्लेषण एवं विवेचन ही उनका मुख्य उद्देश्य है। अभिव्यक्ति के परिष्कार, अलंकरण अथवा विस्तार का कोई प्रयत्न नहीं किया गया न ही मनोरंजन उनका उद्देश्य है। परन्तु गद्य काव्यों की बात बिल्कुल इनके विपरीत है।

संस्कृत अलंकारिकों में भामह ने प्रथमत: गद्य भेद की अवतारणा अपने काव्यालंकार में की। उनके अनुसार आख्यायिका की कथावस्तु वास्तविक होती है, जिसे कवि स्वयं वक्ता रूप में प्रकट

करता है आख्यायिका के विभागों का नाम उच्छवास होता है जिसके आदि और अन्त में भावी घटनाओं के सूचक श्लोक होते हैं, जो वक्त्र या अपरवक्त्र छन्द में निबद्ध होते हैं। कथा की कथावस्तु कवि की निजी कल्पना होती है जिसका वक्ता नायक से कोई इतर व्यक्ति होता है। इसमें आख्यायिका के सामने उच्छवास का विभाग रहता है ना वक्त्रादि व्रत्तों की सत्ता दण्डी के अनुसार कथा और आख्यायिका में किसी मौलिक भेद तथा पार्थक्य की कल्पना सम्भव नहीं है। उनका स्पष्ट मत है—

तत्कथाख्यायिकेत्येका जातिः संज्ञाद्वयांकिता ।

अर्थात् ये दोनों भेद एक ही गद्यरूपा जाति के हैं। केवल नामकरण में ही विभिन्न संज्ञायें उपलब्ध होती हैं। आचार्य विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में काव्यस्वरूप निरूपण प्रसंग में काव्य के दो भेद बताए हैं- दृश्य काव्य तथा श्रव्य काव्य। दृश्य काव्यों में नाटक, प्रहसन आदि रूपकों तथा उपरूपकों का विशद् विवेचन है। श्रव्य काव्यों का पुनः द्विधा विभाग किया पद्यकाव्य तथा गद्यकाव्य। गद्यकाव्य को परिभाषित करते हुए गद्य के चार प्रकार बताए गए- (1) मुक्तक (2) वृत्तगन्धि (3) उत्कलिकाप्राय: (4) चूर्णक ।

वृत्तगन्धोज्छितं गद्यं मुक्तकं वृत्तगन्धि च ।
भवेदुत्कलिकाप्रायं चूर्णकं च चतुर्विधम्।।

इन भेदों का कथन रचनाशैली, समासशैली, पदसमावेश आदि के आधार पर किया गया है।

1- समास से रहित गद्य रचना अर्थात् सरस पदावली, असमस्त पद युक्त रचना को मुक्तक कहते हैं। यथा- **'गुरुर्वचसि-पृथुरुरसि'** इत्यादि इसमें प्रत्येक पद्य मुक्त होता है।

2- जहाँ गद्य में छन्द के अंश आ जाएँ अर्थात् वृत्तों के अंश यत्र-तत्र प्रतित हुआ करें उसे वृत्तगन्धि कहते हैं। जैसे- **समरकण्डूल निविडभुजदण्ड कुण्डलीकृतकोदण्ड शिजिंनीटंकारोज्जागरितवैरिनगर** - यहाँ 'कुण्डलीकृतकोदण्ड' पद अनुष्टुप् छन्द का चरण है और समरकण्डूल पद भी पहले के दो अक्षरों को हटा देने पर अनुष्टुप् छन्द का चरण बन जाता है।

3- जहाँ लम्बे-लम्बे समस्त पदों से युक्त गद्य हो वह उत्कलिकाप्राय कहलाता है। जैसे- **'अणिसविसुमरनिशितशरविसरविदलितसमरपरिगतप्रवरपरबलः'(अनिशविसृमरनिशितशर विसरविदलितसमरपरिगतप्रवरपरबल..)** इत्यादि। प्रस्तुत गद्य में लम्बा समस्त पद परिलक्षित होता है।

4- जिस गद्य रचना में अल्पसमास हो अर्थात् जिसमें छोटे-छोटे समस्त पदों का उपनिबन्ध हो उसे चूर्णक कहते हैं। जैसे- कामनीमदन, जनरंजन, इत्यादि। विश्वनाथ ने इसे इस प्रकार परिभाषित किया है—

अद्यं समासरहितं वृत्त भागयुतं परम् ।

अन्यद् दीर्घसमासाढयं तुर्यं चाल्पसमासकम्।।

साहित्यदर्पण में स्पष्ट रूप से आचार्य विश्वनाथ ने कहा है- कथा में गद्य द्वारा सरस कथानक का निर्माण होता है, इसमें कहीं-कहीं आर्या छन्द, कहीं वक्त्र, अपरवक्त्र छन्दों में भी रचना होती है। इसके आरम्भ में नमस्कार और खल आदि का वर्णन करते रहता है। दूसरी और आख्यायिका भी कथा के सामान होती है जिसमें कवि वंश का भी वर्णन करता रहता है। इसमें अन्य कवियों का भी कहीं-कहीं पद्यात्मक वर्णन होता है। कथा भाग के खण्डों को आश्वास (उच्छवास) कहते हैं।–

कथायां सरसं वस्तु गद्यैरेव विनिर्मितम्।

क्वचिदत्र भवेदार्या कवचिद्ववक्त्रापवक्त्रके।

आदौ पद्यैर्नमस्कार: खलादेर्वृत्तकीर्तनम्।।

आख्यायिका कथावत्स्यात्कवेर्वंशानुकीर्तनम् ।

अस्यामन्यकवीनां च वृत्त पद्यं क्वचित्क्वचित्।।

कथांशानां व्यच्छेद आश्वास इति बध्यते।

आर्यावक्त्रापवक्त्राणां छन्दसा येन केनचित् ।।

अन्यापदेशे नाश्वासमुखे भाव्यर्थसूचनम्।

कथा में कथावस्तु कविकल्पित होती है, कथा का विभाजन नहीं होता है इसमें रसयुक्त इतिवृत्त की रचना होती है। कथा में कहीं-कहीं आर्या छन्द, कहीं वक्त्र, अपरवक्त्र छन्दों में भी रचना होती है। कथा के आरम्भ में नमस्कारात्मक मंगलाचरण किया जाता है। दुर्जननिन्दा तथा सज्जनप्रशंसा सम्बन्धी पद्यों का निबन्धन भी इसमें किया जाता है। बाणभट्ट की कादम्बरी इसका उदाहरण है।

आख्यायिका में ऐतिहासिकता होती है, इसमें प्राचीन कवियों की प्रशंसा पद्य में और कवि का वंश वर्णन गद्य में होता है। इसमें प्रायः कथा की ही विशेषताएं रहती हैं। कवि अपने वंश का अनुकीर्तन करता है। अन्य कवियों की चर्चा भी प्रसंगानुसार करता रहता है। इसमें पद्यसूक्तियाँ भी रहती हैं। आख्यायिका में कथाशों का विभाग उच्छवासों या नि:श्वासों में विभक्त होता है।

आख्यायिका में कवि अपना वृत्तान्त देकर मुख्य कथा को आरम्भ करता है। इसमें आर्या, वक्त्र, अपवक्त्र किसी एक छन्द के द्वारा वर्णनीय विषय की जानकारी भी दी जाती है। यथा - 'हर्षचरितम्'।

इन दोनों में समानता के तथ्य भी बहुत हैं जैसे- दोनों की रचना संस्कृत गद्य में होती है। गद्य की शैली दोनों में समान रहती है। रसों और भावों का समान रूप से प्रयोग होता है। नगर, वन, सरोवर, राजा, राजसभा, प्रेम आदि का समान रूप से वर्णन हो दोनों में होता है। इसलिए दण्डी ने इन दोनों के भेदों के प्रति अरुचि दिखाई है। कुल मिलाकर उच्छवासों में विभाजन तथा कथावस्तु का स्वरूप यही दो बिन्दु इनके परम्परागत अन्तर रह जाते हैं। अग्निपुराण में इन दो भेदों के अतिरिक्त भी अन्य भेद कहे गये हैं। प्राचीन गद्यकाव्य कथा और आख्यायिका ही हैं।

बोध प्रश्न:-

अभ्यास प्रश्न (1)

(1). बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1. मुख्य रूप से काव्य के कितने भेद माने गए हैं-

(क) तीन (ख) चार

(ग) छ: (घ) दो

2. साहित्य की दृष्टि से संस्कृत गद्यकाव्य को मुख्यतः कितने भागों में विभाजित कर सकते हैं-

(क) तीन (ख) छ:

(ग) चार (घ) दो

3. महाभाष्य के रचयिता हैं-

(क) मनु (ख) पाणिनी

(ग) कौटिल्य (घ) पतञ्जलि

4. ध्वन्यालोक के रचनाकार हैं-

(क) शबरस्वामी (ख) शंकराचार्य

(ग) आनन्दवर्धन (घ) जयन्त भट्ट

5. अष्टाध्यायी के वार्तिककार का क्या नाम है।

(क) पतञ्जलि (ख) कौटिल्य

(ग) कात्यायन (घ) इनमें से कोई नही

6. अग्निपुराण में गद्यकाव्य के कितने भेदों का वर्णन मिलता है।

(क) पाँच (ख) पांच

(ग) तीन (घ) दो

7. हर्षचरित एक है-

(क) नाटक (ख) कथा

(ग) प्रकरण (घ) आख्यायिका

8. कादम्बरी कथा कितने भागों में विभक्त है-

(क) दो भागों में (ख) चार भागों में

(ग) तीन भागों में (घ) पांच भागों में

9. काव्यादर्श में कितने परिच्छेदों हैं।

(क) दो परिच्छेद (ख) नौ परिच्छेद

(ग) चार परिच्छेद (घ) तीन परिच्छेद

10. धनपाल का समय क्या है-

(क) दसवीं शताब्दी (ख) नवीं शताब्दी

(ग) आठवीं शताब्दी (घ) सातवीं शताब्दी

(2). रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:-

1. .... काममोक्षाणां वैचक्षण्यंच कलासु च ।
2. .... कथा खण्डकथा परिकथा तथा।
3. कथालिकेति मन्यन्ते .... च पञ्चधा।
4. त्रयो दण्डीप्रबन्धाश्च .... विश्रुता:।
5. .... समासभूयस्व मेतद् गद्यस्य जीवितम्।

(3). निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तर पर सही (√) गलत उत्तर पर (×) का चिह्न लगाइए—

1. पुराणों को पाँचवा वेद कहा गया है। ( )
2. शंकराचार्य का शारिकाभाष्य गद्य साहित्य का उदाहरण है। ( )
3. तिलकमंजरी में श्रीपालित की तरंगवती नाम की कथा का उल्लेख किया गया है। ( )
4. सुबन्धु के बाद दूसरे गद्यकार बाण हैं। ( )
5. आचार्य विश्वनाथ ने दृश्य काव्य तथा श्रव्य काव्य को काव्य के दो भेद माना है। ( )

6. कथा भाग के खण्डों को आश्वास (उच्छवास) कहते हैं। ( )

7. दण्डी का काल बाण के पश्चात सातवीं शती ई0 का अन्तिम चरण और आठवीं का पूर्वार्द्ध माना जाता है। ( )

8. दशकुमारचरित तीन उच्छवासों में विभक्त है। ( )

9. 11वीं शताब्दी में वादीभसिंह ने गद्यचिन्तामणि नामक गद्य काव्य लिखा। ( )

10. राजशेखरसूरी का समय14 वीं शताब्दी है। ( )

1.3.5 प्रमुख संस्कृत गद्यकाव्य:-

महाकवि सुबन्धु—

संस्कृत साहित्य के इतिहास में सुबन्धु का नाम गद्य लेखक के रूप में प्रसिद्ध है। सुबन्धु बाण के कुछ पूर्ववर्ती थे। सम्प्रति समुपलब्ध गद्यकाव्य में सुबन्धु की वासवदत्ता ही सबसे प्राचीनतम प्रतीत होती है। बाण ने हर्षचरित के सम्मानपूर्वक सुबन्धु का समुल्लेख किया है। हर्ष के सभापण्डित होने के कारण उन्हें बाण का स्थितिकाल सप्तम शती ई0 प्राय: सुनिश्चित है। सुबन्धु के काल के विषय में उनके नाम का प्राचीनतम उल्लेख वाक्पतिराज का है जिनका काल 734 ई0 है। उनके ग्रन्थ का प्राचीनतम उल्लेख कन्नौज के राजा हर्षवर्धन (606-647 ई0) के समकालीन कवि बाण का है। इस प्रकार अवश्य ही सुबन्धु बाण के पूर्ववर्ती है। सुबन्धु के काल पर एक और साहित्यिक साक्ष्य इस प्रकार है-**''न्यायस्थितिमिवोद्योतकरस्वरूपाम्''** अर्थात् उद्योतकर वे द्वारा प्रतिपादित न्यायस्थिति के समान। यहाँ सम्बन्ध के द्वारा उल्लिखित उद्योतकर न्यायवार्तिक के रचियता माने जाते हैं, उन्होंने बौद्ध तांत्रिक दिङ्नाग (525-600) का खण्डन किया है। यदि दिङ्नाग और उद्योतकर को समकालीन भी मान लिया जाय तो भी वासवदना की रचना 520 ई. से पूर्व सिद्ध नहीं हो सकती अतः सुबन्धु को छठी शताब्दी के उत्तरार्ध में ही रखना होगा। ऐसा भी माना जाता है कि सुबन्धु बाण का समकालीन था। परन्तु यह मत तर्कसंगत नहीं है क्योंकि बाण ने वासवदना को उत्कृष्ट साहित्यिक रचना माना है जिससे कवियों का दर्प टूट गया था। पुनश्च, दिङ्नाग तथा उद्योतकर का काल भी पूर्णतः निश्चित नहीं है इसलिए सम्भवतः सुबन्धु बुद्धगुप्त विक्रमादित्य छठी शताब्दी का पूर्वार्द्ध के काल के कुछ समय ही बाद रहे होंगे। अतः सुबन्धु को इतिहासविदों ने छठी शती ई0 का माना है।

वासवदत्ता—

सुबन्धु की रचना संस्कृत गद्यकाव्य का एक उत्कृष्ट आदर्श है। वासवदत्ता की स्वल्प कथावस्तु को अपने वर्णन वैचित्र्य से एक पूर्ण काव्य का रूप में दिया है। इनके काव्य में प्रत्येक अक्षर में श्लेष है, जिसे वह स्वयं कहते हैं—

प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रपञ्चं विन्यासवैदग्ध्यनिधिप्रलम्बम्।
सरस्वतीदत्तवरप्रसादश्चक्रे सुबन्धु सुजनैकबन्धु।।

यद्यपि इनका काव्य गौड़ी रीतिप्रधान होने से क्लिष्ट है, प्रसाद और माधुर्य की न्यूनता के कारण स्वभाविक भी उसमें उतनी नहीं है, फिर भी कवि का अपना अप्रतिम पाण्डित्य और विचित्र वर्णन क्षमता इस एक ही काव्य उसे महाकवि पद पर समासीन कर देती है।

महाकवि बाणभट्ट—

सुबन्धु के बाद दूसरे गद्यकार बाण हैं। संस्कृत गद्यकाव्य में बाण अनुपम हैं। बाण ने गद्य के इतिहास में वही स्थान प्राप्त किया है जो कि कालिदास ने संस्कृत काव्य क्षेत्र में। बाद के लेखकों ने एक स्वर में बाण पर प्रशस्तियों की अभिवृष्टि की है। आर्या सप्तती के लेखक गोवर्धनाचार्य का कथन है—

''जाता शिखंडिनी प्राग्यथा शिखंडी तथावगच्छामि।
प्रागल्भ्यमधिकमाप्तुं वाणी बाणी बभूवेति।''

इनके नाम से पाँच रचनाएँ प्रकाशित हैं- हर्षचरित (आख्यायिका), कादम्बरी (कथा), पार्वती-परिणय, (नाटक) चण्डीशतक (स्तुतिकाव्य) और मुकुटताडितक (नाटक) का उल्लेख चण्डपाल और गुणविजयगणि ने बाण की कृति के रूप में है। किन्तु यह उपलब्ध नही हैं। चण्डीशतक की विवेचना गीतिकाव्य के प्रसंग में की जा चुकी है। अत: यहाँ दो गद्याकाव्यों का परिचय दिया जा रहा है।

हर्षचरित—

हर्षचरित में बाण ने अपना और अपने वंश का समग्र विवरण दिया है। बाण संस्कृत के कुछ गिने-चुने लेखकों में से एक हैं जिनके जीवन एवं काल के विषय में निश्चित रूप से ज्ञात है। कादम्बरी की भूमिका में तथा हर्षचरित में बाण ने अपने वंश के सम्बन्ध में विस्तारपूर्वक सूचना दी है। हर्ष के सभापण्डित होने के कारण प्रायः इनका भी स्थितिकाल सप्तम शती निश्चित है। आठ उच्छवासों में उपलब्ध हर्षचरित एक आख्यायिका है। प्रारम्भ के इक्कीस श्लोकों में भगवान् शिव और पार्वती का वन्दन किया गया है। तदनन्तर संस्कृत साहित्य के प्रमुख कवियों तथा ग्रन्थों की भी स्तुति की गई है। प्रथम उच्छवास में बाण का स्वयं का वर्णन, मित्रवर्णनादि विषय संवलित है। तीन उच्छवासों के पश्चात बाण हर्षचरित सुनाना प्रारम्भ करते हैं।

कादम्बरी—

कादम्बरी विश्वसाहित्य के अनुपम और समस्त दृष्टियों से उन्नतकोटि का गद्यकाव्य स्वीकार किया गया है। कादम्बरी का वर्ण्य विषय गुणाढ्य की बृहत्कथा से लिया गया है। इस कथा में तीन जन्मों की कथा आपस में गुंथी हुई है। इसका नायक प्रथम जन्म में चन्द्रमा, द्वितीय में चन्द्रापीड तथा तृतीय में शूद्रक बना है। प्रथम जन्म का पुण्डरीक, द्वितीय जन्म में वैशम्पायन तथा तृतीय जन्म में शुक बना है। कथा तीन भागों में विभक्त है - कथामुख, पूर्वभाग तथा उत्तर भाग। बाण की सहज प्रफुल्लित प्रकृति, चित्रग्रहिणी प्रतिभा, कल्पनाशील मन और असाधारण पाण्डित्य का जो प्रदर्शन हमें हर्षचरित में दृष्टिगोचर होता है, वह कादम्बरी में नितान्त परिपक्व और पुष्ट होकर निखर उठता है। अर्थ के अनुरूप शब्द की योजना, घटना के अनुसार और असमास, अल्पसमास या दीर्घसमास की संरचना, प्रकृति का अद्भुत तद्रूप निरूपण एवं पात्रों का सटीक चरित्र चित्रण करने की अद्भुत क्षमता बाण में है। पाञ्चाली रीति और ओज गुण के लिए विख्यात बाण काव्य की सभी विधाओं में निष्णात हैं।

महाकवि दण्डी—

संस्कृत गद्यकाव्य के इतिहास में सरस गद्य लेखक के रूप में दण्डी का नाम अमर है। बाण के अनन्तर प्रसिद्ध गद्यकार दण्डी हैं। संस्कृत वाङ्मय के विश्रुत महाकवि भारवि के प्रपौत्र थे। इनकी विद्वत्ता की इतनी ख्याति थी कि बाल्मीकि और व्यास की कोटि में इन्हें गिना जाता था। इनका स्थिति काल बाण के पश्चात अर्थात् सातवीं शती ई0 का अन्तिम चरण और आठवीं का पूर्वार्द्ध माना जाता है। क्योंकि नवम शताब्दी में ग्रन्थकारों ने इनका उल्लेख किया है और अपने काव्यादर्श में दण्डी ने राजवर्मा का उल्लेख किया है। पल्लवराज नरसिंहवर्मा द्वितीय का उपनाम राजवर्मा था और उसका शासनकाल 690 से 715 ई0 है। **'त्रयो दण्डीप्रबन्धाश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुता:'** राजशेखर कि इस उक्ति से ज्ञात होता है कि दण्डी ने तीन ग्रन्थों की रचना की जो निम्न है—

1- काव्यादर्श, 2- अवन्तिसुन्दरीकथा 3- दशकुमारचरित। **'ओज: समासभूयस्त्वमेतद् गद्यस्य जीवितम्'** इनका यह वाक्य उनके प्रखर गद्यकार होने का साक्षी है।

1-काव्यादर्श—

काव्यादर्श तीन परिच्छेदों का पद्यात्मक काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ है, प्रथम परिच्छेद में काव्य का महत्व, लक्षण, भेद, महाकाव्य, गद्यकाव्य, भाषाभेद, तथा काव्यगुणों का विचार है। द्वितीय

परिच्छेद में अलंकारों का विवेचन एवं तृतीय परिच्छेद में यमक अलंकार, चित्रकाव्य तथा काव्यदोषों का विवेचन है। इस ग्रन्थ के आधार पर भामह के काव्यालंकार तथा दण्डी के पौर्वापर्य पर विवाद रहा है। किन्तु काव्यादर्श में काव्यालंकार के सिद्धान्तों का खण्डन दिखाई पड़ने से दण्डी ही परवर्ती लगते हैं। दोनों ग्रन्थ सरस शैली में विवेचन परक है किन्तु काव्यादर्श में कहीं-कहीं शास्त्रार्थ का भी दृष्टिगोचर होता है।

2- अवन्तिसुन्दरीकथा—

दशकुमारचरितम् की पूर्वपीठिका में मालव नरेश की पुत्री अवन्तिसुन्दरी का प्रणय वृत्त संक्षेप में वर्णित है, उसी का विस्तार निरूपण इस अवन्तिसुन्दरीकथा में किया गया है। अवन्तिसुन्दरीकथा ही दण्डी की मुख्य रचना है, इसी का सार दशकुमारचरित की पूर्वपीठिका के रूप में किसी ने प्रस्तुत किया होगा।

प्राचीन साहित्य में दशकुमारचरित की अपेक्षा इसी ग्रन्थ को दण्डी की रचना के रूप में अधिक ख्याति मिली थी। नामसंग्रहमाला में अप्पयदीक्षित ने कहा है, 'इत्यवन्तिसुन्दरीये दण्डीप्रयोगा:' इसमें सुबन्धु, मयूर और बाण की प्रशंसा की गई है, जिसके आधार पर दण्डी का काल इनके अनन्तर 700 ई0 में माना गया है। आचार्य बलदेव उपाध्याय का मत है कि अवन्तिसुन्दरीकथा के शैली सौन्दर्य के आधार पर पण्डितों ने यह प्रशस्ति चली थी- 'दण्डीन: पदलालित्यम्' जो लोग इस ग्रन्थ को दण्डी की कृति नहीं मानते, उनका कथन है कि इसके कवि ने दण्डी और बाण के प्रमुख विशेषताओं को लेकर इसका वर्णन किया था। तदनुसार दशकुमारचरित से पूर्वपीठिका का कथानक एवं भाषा में पदलालित्य का ग्रहण किया गया है। अवन्तिसुन्दरीकथा की प्रमाणिकता पर इसका काल मुख्यत: आश्रित है।

3- दशकुमारचरित—

गद्यकवि दण्डी द्वारा रचित दशकुमारचरित हस्तलिखित तथा प्रकाशित संस्करणों में प्रायः तीन खण्डों में विभाजित है। पूर्वपीठिका, दशकुमारचरित और उत्तरपीठिका। दशकुमारचरित चौदह उच्छवासों में विभक्त है। पूर्व पीठिका में पाँच, दशकुमारचरित में आठ तथा उत्तरपीठिका में एक उच्छवास है। पूर्वपीठिका के पाँच उच्छवासों में अवन्तिसुन्दरी की कथावस्तु वर्णित की गई है। मध्यभाग के आठ उच्छवासों में आठ राजकुमारों का चरित्र वर्णन प्राप्त है और उत्तरपीठिका में दो कुमारों का वर्णन प्राप्त है।

सुबन्धु एवं बाण की कृतियां पश्चाद्वर्ती गद्य लेखकों के लिए आदर्श रूप में प्रस्तुत हुई। पश्चाद्वर्ती लेखकों में निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं। धारा के सम्राट मुंज और भोज के सभापण्डित धनपाल ने दसवीं शताब्दी में 'तिलकमंजरी' की रचना की। यह कादम्बरी को आदर्श मानकर लिखी गई है। यद्यपि धनपाल की कृति में भाषा एवं शैली के अलंकरण उपस्थित हैं तथापि उसमें बाण के काव्यात्मक गुणों का अभाव है। ग्यारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में जैन उदयदेव वादीभसिंह ने 'गद्यचिन्तमामणि' की रचना की। गुणमद्र के उत्तर पुराण में उपलब्ध जीवन्धर की गाथा पर यह आधरित है। यह शैली के प्रयोग में लगभग बाण का अनुकरण है। वामनभट्ट बाण ने रेड्डी सम्राट वीरनारायण के प्रशस्तिभूत 'वेमभूपालचरित' नामक ग्रन्थ की रचना की। वह बाणरचित हर्षचरित से स्पष्ट रूप में प्रभावित हुआ परन्तु बाण के कवित्व के सौन्दर्य को प्राप्त करने में सफल न हुआ। सोड्ढल की 'उदयसुन्दरीकथा' जो कभी चम्पूकाव्य भी माना जाता था, बाण की शैली को अपना कर लिखी गई है। उसके वर्णन विस्तृत हैं और भाषा तथा अलंकार के प्रयोग करने में कवि का अधिकार है। परन्तु वास्तविक काव्य का सौन्दर्य उपलब्ध नहीं होता। सोड्ढल को लाटाधिपति वत्सराज 1026-1050 ई0 का राजाश्रय प्राप्त था।

दण्डी आदि पूर्ववर्ती लेखकों ने संस्कृत गद्यकाव्य को जिन ऊँचाइयों पर पहुँचाया था परवर्ती कवियों के लिए वह अनुकरणीय हो गया, किन्तु गद्य का वैसा स्वरूप परवर्ती काव्यों में प्राप्त नहीं होता है। कुछ गद्य लेखकों और उनकी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित है—

धनपाल—

10 वीं शती के उत्तरार्ध एवं एकादश शती के पूर्वार्ध में धनपाल ने तिलकमञ्जरी की रचना की । ये राजा भोज के चाचा मुञ्जराज के सभा में सम्मानित कवि थे। राजामुञ्ज ने इनकी काव्य प्रतिभा से अभिभूत होकर उन्हें 'सरस्वती' विरुद्ध के से सम्मानित किया था । तिलकमञ्जरी पर कादम्बरी का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है तथा तात्कालिक भारत की सामाजिक एवं राजनीतिक परिस्थितियॉ प्रतिबिम्बित होती हैं, साथ ही तात्कालिक शिल्पकला एवं मूर्तिकला का सुन्दर चित्रण तिलकमञ्जरी में प्राप्त होता है।

वादीभसिंह—

11वीं शताब्दी धनपाल के कुछ दिनों बाद महाकवि वादीभसिंह हुए थे जिन्होंने गद्यचिन्तामणि नामक गद्य काव्य लिखा । ये तमिल राज्य के निवासी थे । इनके नाम से स्याद्वादसिद्धि, नवपदार्थनिश्चय आदि पांच कृतियां निर्दिष्ट हैं।

प्रभाचन्द्र—

प्रभाचन्द्र का समय 12 वीं शताब्दी तथा जिनभद्र (13 वीं शताब्दी) था । प्रभाचन्द्र ने गद्यकथाकोष के रूप में 89 कथाओं की काव्य कथा प्रस्तुत की है। इनमें मुख्यत: गुजरात, राजस्थान, मालवा तथा वाराणसी के प्रसिद्ध महापुरुषों की कथाएं हैं।

मेरुतुगाचार्य—

14 वीं शताब्दी में प्रबन्धचिन्तामणि नामक ग्रन्थ के लेखक, मेरुतंग चंद्रप्रभ मुनि के शिष्य थे। प्रबन्ध चिन्तामणि के कुल 11 प्रबन्ध है, जिनमें ऐतिहासिक महापुरुषों के जीवन से सम्बद्ध घटनाओं का वर्णन है।

राजशेखरसूरी—

इनका समय 14 वीं शताब्दी है । इनकी कई कृतियां प्रसिद्ध है जिसमें गद्यकाव्य प्रबन्धकोश भी है। इसकी रचना 1405 विक्रमाब्द 1348 ई0 में पूरी हुई थी । इसका दूसरा नाम चतुर्विंशतिप्रबन्ध भी है क्योंकि इसमें 24 महापुरुषों के जीवन वृत्त हैं। इतिहास की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है यद्यपि दन्तकथाओं का भी इसमें समावेश है ।

बामनभट्टबाण—

1450 ई0 बामनभट्टबाण का समय है। बाणभट्ट के समान ये भी वत्स गोत्र के थे । तेलंगाना के शासक वेमभोपाल की राज्यसभा में इन्होंने आदर पाया था, उनके जीवनवृत्त को वेमभूपालचरित नामक आख्यायिका में गुम्फित किया । यह हर्षचरित से प्रेरित गद्यकाव्य है। वेमभूपाल स्वयं भी कवि थे जिन्होंने अमरुशतक पर श्रृंगारमंजरी टीका लिखी थी। बामनभट्ट ने बाण की ख्याति और पौढि का दावा किया है। इन्होंने अन्य भी कई ग्रन्थ लिखे।

विश्वेश्वरपाण्डेय—

इनका समय 18 वीं शती का पूर्वार्ध माना गया है। यह अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि के थे तथा व्याकरण, दर्शन, साहित्य, के प्रकाण्ड पण्डित थे। इन्होंने विविध विषयों से सम्बन्धित लगभग 20 ग्रन्थों का प्रणयन किया । मन्दारमञ्जरी इनकी उत्कृष्ट गद्य रचना है जिस पर कादम्बरी का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। भाषा सरस एवं ललित कादम्बरी की कथा के समान मुख्य कथा में अनेक कथाओं का नियोजन किया गया है। इनके अन्य ग्रन्थ इस प्रकार हैं- वैयाकरणसिद्धान्तसुधनिधि, तर्ककुतूहल, श्रृंगारमंजरी, रसचन्द्रिका, अलंकाप्रदीप, रोमावलीशतक आदि।

बोध प्रश्न:-

अभ्यास प्रश्न (2)

(1). बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1. अर्थशास्त्र के प्रवर्तक हैं-

(क) कौटिल्य (ख) पतञ्जलि

(ग) वेदव्यास (घ) कालिदास

2. शावरभाष्य के प्रणेता का क्या नाम है-

(क) शबरस्वामी (ख) शंकराचार्य

(ग) आनन्दवर्धन (घ) जयन्त भट्ट

3. न्यायमंजरी के प्रवर्तक हैं-

(क) सायणाचार्य (ख) जयन्त भट्ट

(ग) अभिनवगुप्त (घ) शंकराचार्य

4. सुबन्धु का समय किस उत्तरार्ध में माना गया है-

(क) छठी शताब्दी के (ख) सातवीं शताब्दी के

(ग) आठवीं शताब्दी के (घ) नवीं शताब्दी के

5. आचार्य विश्वनाथ ने काव्य के कितने भेद बताए हैं-

(क) चार (ख) दश

(ग) दो (घ) एक

6. कथा भाग के खण्डों को क्या कहते हैं-

(क) उच्छवास (ख) उल्लास

(ग) सर्ग (घ) परिच्छेद

7. हर्षचरित में कितने उच्छवास है-

(क) पांच उच्छवास (ख) दश उच्छवास

(ग) आठ उच्छवास (घ) चार उच्छवास

8. कादम्बरी का वर्ण्य विषय कहा से लिया गया है-

(क) गुणाढ्य की बृहत्कथा से(ख) पुराणें से

(ग) वेद (घ) महाभारत से

9. दशकुमारचरित कितने उच्छवासों में विभक्त है-

(क) चौदह उच्छवासों (ख) तेरह उच्छवासों

(ग) पांच उच्छवासों (घ) आठ उच्छवासों

10. ‘तिलकमंजरी’ की रचनाकार है-

(क) धनपाल (ख) वादीभसिंह

(ग) प्रभाचन्द्र (घ) विश्वनाथ

(2). रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. काव्य के तीन भेद .... तथा चम्पू माने गए हैं।

2. काव्यं यशसेऽर्थकृते .... शिवेतरक्षये।

3. पतञ्जलि ने वासवदना.. और भैमरथी इन तीनों आख्यायिकाओं के नामों का उल्लेख किया है।

4.. पदलालित्यम्।

5. ग्यारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में जैन उदयदेव वादीभसिंह ने .... की रचना की।

(3). निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तर पर सही (√) गलत उत्तर पर (×) का चिह्न लगाइए—

1. मुख्य रूप से काव्य के तीन भेद माने गए हैं। ( )
2. संस्कृत गद्यकाव्य को मुख्यतः छः भागों में विभाजित कर सकते हैं। ( )
3. पतञ्जलि ने अर्थशास्त्र लिखा। ( )
4. शबरस्वामी का शावरभाष्य उत्कृष्ट शास्त्रीय गद्य के उदाहरण हैं। ( )
5. अष्टाध्यायी के वार्तिककार पतञ्जलि हैं। ( )
6. कथा में कथावस्तु कविकल्पित होती है। ( )
7. सुबन्धु बाण के पूर्ववर्ति थे। ( )
8. हर्षचरित में भगवान शिव और पार्वती की वन्दना की गयी है। ( )
9. काव्यादर्श पद्यात्मक काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ है। ( )
10. धनपाल राजा भोज के चाचा मुञ्जराज के सभा में सम्मानित कवि थे। ( )

1.3.6 आधुनिक संस्कृत गद्यकाव्य:-

संस्कृत साहित्य का विकास क्रम किसी भी युग में अवरूद्ध नहीं हुई और यह कम आश्चर्य की बात नहीं है कि आधुनिक काल अर्थात् विगत शताब्दी और प्रवर्तमान शताब्दी में उसमें निर्मित उच्च कोटि का विशाल साहित्य हमारे आकलन का विषय रहा है। प्राचीनकाल में भारत में संस्कृत

साहित्य के इतिहास का लेखन नहीं हुआ। इसके लेखन की परम्परा पहले, विगत शताब्दी में पाश्चात्य विद्वानों ने स्थापित की।

संस्कृत साहित्य के इतिहास का आधुनिक काल का आरम्भ कब से जाना जाए, इस सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद व्याप्त हैं। सामान्यतः कह सकते हैं कि जो पूर्व है वह प्राचीन है और जो प्रवर्तमान है वह आधुनिक है, गद्य साहित्य का विकास पद्य साहित्य के बाद का माना जाता है। संस्कृत में अर्वाचीन समय से ही पद्य और गद्य का प्रचुर साहित्य उपलब्ध है। वेदों का वाङ्मय पद्य और गद्य दोनों में निबद्ध है और प्राचीनतम काल से दोनों साहित्य में प्राप्त होता है। ऋग्वेद पद्यबद्ध है तो यजुर्वेद गद्य में। ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक, उपनिषद आदि गद्यबद्ध हैं और उनका गद्य इतना परिपक्व, सुगठित और उच्चस्तरीय है कि वह आदिमकालीन या प्रारम्भिक अवस्था का न होकर चरम, परिपक्व और विकसित अवस्था का परिलक्षित होता है। पञ्चतन्त्र की कथाएँ विश्व के प्राचीनतम कथा-साहित्य में प्राप्त होती हैं। नाट्य साहित्य में भी गद्य और पद्य के समन्वित रूप प्राप्त होते हैं।

गद्य साहित्य की कुछ प्राचीन विधाएँ संस्कृत साहित्य के आदिकाल से ही प्राप्त होती है। संस्कृत गद्य की इस चिरन्तन धारा में युगानुरूप विकास भी हुआ है । कादम्बरी जैसी प्राचीन कृतियाँ उपन्यास विधा में प्राचीन हैं, आधुनिक काल में भी संस्कृत लेखन हुआ है। लघुकथा की नवीन विधा संस्कृत में आधुनिक काल में ही जन्मी है, ललित निबन्ध, यात्रावृत्तान्त आदि आधुनिक काल में लिखे जाने लगे। सर्वप्रथम संस्कृत उपन्यास कहा जाने वाला 'शिवराजविजयम्' सर्वप्रथम 'संस्कृतचन्द्रिका' पत्रिका में ही धारावाहिक रूप से निकला था। उस समय की अधिकांश कहानियों, उपन्यासों, निबन्धों, पत्रों आदि का जन्म संस्कृत पत्रकारिता से ही हुआ था। अप्पाशास्त्री राशिवडेकर (1873-1913), जिन्होंने 'संस्कृतचन्द्रिका' में स्वयं अनेक उपन्यास, कहानियाँ आदि लिखीं तथा जिनके कार्यकाल में अनेक विख्यात लेखक हुए। फिर भट्ट मथुरानाथ शास्त्री (1889-1964) ने 'संस्कृत रत्नाकर' में शतशः कथाएँ, उपन्यास, निबन्ध आदि लिखे, इसी प्रकार डॉ0 वेंकटराघवन (1908-1979) ने देश की साहित्य अकादमी की मुख पत्रिका 'संस्कृत प्रतिभा' द्वारा भारत के संस्कृत नवलेखकों को प्रोत्साहित और स्वयं मंच-नाटक काव्य आदि में नूतन सर्जना की। इस दृष्टि से आधुनिक काल की संस्कृत सर्जना को इन तीन युगों में विभाजित किया जा सकता है—

(1) अप्पाशास्त्री युग 1890-1930 (2) भट्ट मथुरानाथ शास्त्री युग 1930-1960 (3) राघवन युग 1960-1980 इन तीन युगों में संस्कृत गद्य में भी क्रान्तिकारी विकास हुआ। "आधुनिक युग का संस्कृत गद्यकार देवी-देवताओं की स्तुति या उपाख्यान ही नहीं लिखता, अब उसके नायक हैं

राष्ट्रनेता, समाजसेवक, उसकी विषय वस्तु है विश्वशान्ति की आवश्यकता, सामाजिक विद्रूपताओं पर प्रहार, राजनीति का प्रदूषण, भ्रष्टाचार, विश्वक्षितिज पर हो रही घटनाएँ। संस्कृत में उपन्यास और कहानियाँ लिख रहा है, आधुनिक संस्कृत गद्यकाव्य की नवीन विधायें-कथा, आख्यायिका आदि प्राचीनकाल से प्रचलित हैं। महाकवि बाण भट्ट की रचनाओं, हर्षचरित और कादम्बरी को संस्कृत की अलंकृत गद्यशैली का सर्वोत्कृष्ट प्रयोग माना गया और उनके आदर्श पर अनेक शताब्दियों तक संस्कृत में लेखन की प्रवृत्ति अभिलक्षित होती है।

आधुनिककाल के संस्कृत के प्रथम उपन्यास पं. अम्बिकादत्त व्यास रचित 'शिवराजविजयम्' को बहुत प्रतिष्ठा मिली, निश्चय ही गद्य लेखन में पं0 व्यास को मिली प्रतिष्ठा ने संस्कृत में गद्य लेखन को दूर तक प्रेरित किया है।

संस्कृत में लघुकथा साहित्य का भी आधुनिक काल में अपेक्षित विकास हुआ है। अनेक लघु कथाओं के संग्रह प्रकाश में आ चुके हैं। इसी प्रकार आधुनिक संस्कृत साहित्य में निबन्ध विधा का विकास भी हुआ है, जिसमें ललित निबन्ध भी लिखे गये हैं तथा लिखे जा रहे हैं। इसी प्रकार जीवनचरित पर गद्य रचनाएँ भी प्रकाश में आयी हैं और यावृत्तान्तों का भी अभ्युदय हुआ है। आधुनिक युग में संस्कृत गद्य साहित्य की नवीन प्रवृत्तियाँ एवं विधाएँ निम्न हैं—

उपन्यास—

उपन्यास विधा का अस्तित्व भारत मे लगभग एक हजार वर्षो से चला आ रहा है। सुबन्धु की वासवदत्ता और बाणभट्ट की कादम्बरी को थोड़े बहुत अन्तर के साथ उपन्यास का ही एक रूप माना जा सकता है। इस प्रकार यह विधा विश्व के किसी भी प्राचीन साहित्य में हमें प्राप्त नहीं होती है। इस प्रकार उपन्यास विधा मूलतः भारत की ही देन है।

आधुनिक काल में संस्कृत के उपन्यासों की एक लम्बी श्रृंखला है। सर्वप्रथम संस्कृत उपन्यास पं. अम्बिकादत्त व्यास का शिवराजविजयम् माना जाता है। अपनी नूतन शैली और प्रेरक विषयवस्तु के कारण यह इतना लोकप्रिय हुआ कि इसके अनेक संस्करण, टीका, अनुवाद आदि निकले। भारत में मुगलों के साम्राज्य, अत्याचार आदि के विरूद्ध हुए आन्दोलन के प्रतीक के रूप में शिवाजी महाराज द्वारा किया गया सशस्त्र संघर्ष इसकी विषयवस्तु है। नगेन्द्रनाथ सेन का कल्याणी (1918), रेणुदेवी का रजनी (1920) और राधा (1922), राधारानी (1930), बलभद्र शर्मा का वियोगिनी बाला (संस्कृतचन्द्रिका, 1906) गोपालशास्त्री की अतिरूपा (अतिरूपाचरितम्) (स. सा. परिषद् पत्रिका, 1908), भट्ट मथुरानाथ शास्त्री की 'अनादृता' जैसी कहानियाँ जिसे लघु उपन्यास कहा जा सकता है।

इस युग के प्रमुख उपन्यासकारों में अम्बिकादत्त व्यास, मेधाव्रत शास्त्री, श्रीनिवास शास्त्री, रुद्रदत्त पाठक, दुर्गादत्त शास्त्री, श्रीनाथ हसूरकर, सत्यप्रकाश सिंह, श्याम विमल, कान्त आचार्य, कृष्णकुमार, हरिनारायण दीक्षित, रामशरण त्रिपाठी शास्त्री एवं जगदीशचन्द्र आचार्य हैं।

लघुकथा—

आधुनिक युग में लघुकथा का विकास पाश्चात्य साहित्य, विशेषकर अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव की देन मानी जाती है, किन्तु यह पूर्णतः सत्य नहीं है। कथा विधा की परम्परा संस्कृतसाहित्य में सहस्त्राब्दियों पुरानी है। वेद और पुराण के उपाख्यान भी कथाएँ हैं और संक्षिप्त हैं। पंचतंत्र की कथाओं को कथा-साहित्य की जननी माना जा सकता है। हितोपदेश, भोजप्रबन्ध, वेतालपंचविंशति, सिंहासनबत्तीसी, सुआबहत्तरी तथा दशकुमारचरित आदि अनेक ऐसी कथाएँ हैं जिन पर किसी प्रकार का विदेशी प्रभाव नहीं है। बीसवीं सदी के मध्यकालीन चार-पाँच दशकों (1930-1970) में कथा साहित्य का विपुल विस्तार सभी दृष्टियों से उल्लेखनीय है। इस अवधि में कुछ लेखकों ने तो निरन्तर कथालेखन का क्रम जारी रखा, जिनमें भट्टमथुरानाथ शास्त्री का नाम सर्वोपरि है।

लघुकथा लेखन विभिन्न शैलियों और वस्तुओं को लेकर आज भी निरन्तर प्रवर्तमान है। शिक्षाप्रद कथाएँ, लोककथात्मक कहानियाँ, प्रेमकथाएँ, ऐतिहासिक कहानियाँ, सामाजिक कथावस्तु पर आधारित प्रेरक कथाएँ, बोधकथाएँ, बालपाठ्य कथाएँ, प्रयोगधर्मी कथाएँ, संस्कृत में कहानियाँ लिखने का क्रम आज भी चल रहा है और स्तरीय कहानियाँ लिखी जा रही हैं।

इस युग के लघुकथाकारों में अभिराज राजेन्द्र मिश्र, नलिनी शुक्ला, कलानाथ शास्त्री, दुर्गादत्त शास्त्री, वी0 वेलणकर, श्रीधरभास्कर वर्णेकर, म.म.कालीप्रसाद शास्त्री, रामशरण शास्त्री, तिरुवेंकटाचार्य, गणेशराम शर्मा, डॉ0 कृष्णलाल, कर्णवीरनागेश्वर राव, शिवदत्त शर्मा, सूर्यनारायण शास्त्री, भागीरथप्रसाद त्रिपाठी शास्त्री, नरसिंहाचार्य, डॉ0 कमल अभ्यंकर, नारायण शास्त्री, प्रभुनाथद्विवेदी, प्रशस्यमित्र शास्त्री, केशवचन्द्रदाश एवं द्वारकाप्रसाद शास्त्री प्रमुख हैं।

निबन्ध—

प्राचीन संस्कृत साहित्य में निबन्धों का इतिहास विद्यमान है, जिसमें गद्यबद्ध निबन्ध, विमर्शात्मक निबन्ध, प्रबन्ध निबन्ध तथा ललित निबन्ध आते हैं। आधुनिक काल में जिस प्रकार के संस्कृत निबन्ध लिखे गये हैं वे कुछ अपवादों को छोड़कर व्यक्ति व्यंजक या ललितनिबन्ध न होकर विवेचनात्मक या विमर्शात्मक निबन्ध ही थे, बीसवीं सदी में प्रकाशित निबन्धों के संबंध में कहा जा

सकता है कि अधिकांश निबन्ध पाठ्यवस्तु के रूप में लिखे गये थे इन निबन्ध लेखकों में डॉ0 मगंलदेव शास्त्री का प्रबन्धप्रकाश, पं. चारूदेवशास्त्री की 'प्रस्तावतरंगिणी, डॉ0 रामजी उपाध्याय की संस्कृत निबन्धकलिका और संस्कृतनिबन्धावली, आचार्य केशवसेन शुक्ल का 'निबन्धवैभव', डॉ0 कपिलदेव द्विवेदी का 'संस्कृतनिबन्धशतकम्', डॉ0 रामकृष्ण आचार्य की 'संस्कृतनिबन्धांजलि', डॉ0 पारसनाथ द्विवेदी का 'संस्कृतनिबन्धनवगीतम्', डॉ0 राममूर्ति शर्मा का 'संस्कृत निबन्धादर्श', कैलाशनाथ द्विवेदी का 'कालिदासीय निबन्ध विषय', डॉ0 रमेशचन्द्र शुक्ल का 'प्रबन्धरत्नाकर' आदि प्रकाशित हो चुके हैं। संस्कृत निबन्ध संकलनों में श्री कर्णवीर नागेश्वर राव की 'वाणीनिबन्धमणिमाला' (मद्रास) पं. रघुनाथ शर्मा की 'चित्रनिबन्धावलि' (बनारस, 1964), डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय की निबन्धचन्द्रिका (बनारस,(1976), पं. नवलकिशोर कांकर का 'प्रबन्धमकरन्द' (जयपुर, 1978), पण्डित बटुकानाथ शास्त्री खिस्ते की 'साहित्यम जरी' (बनारस, 1976), नरसिंहाचार्य की साहित्यसुधालहरी (आंध्रप्रदेश), डॉ0 कृष्णकुमार अवस्थी का संस्कृत-निबन्धशेखर (लखनऊ), वासुदेवशास्त्री द्विवेदी की बालनिबन्धमाला और संस्कृतनिबन्धादर्शः (बनारस, 1978), नृसिंहनाथ त्रिपाठी की निबन्धकुसुमाञ्जली (लखनऊ), डॉ0 शिवबालक द्विवेदी की संस्कृतनिबन्धचन्द्रिका (कानपुर, 1985) और निबन्धरत्नाकर (कानपुर, 1985) भी प्रकाशित है जिनमें अधिकांश मूलतः पाठ्यपुस्तों की दृष्टि से लिखे गये निबन्धों के संकलन हैं।

ललित निबन्ध की विधा के मूलतः लिखने वाले अनेक लेखक बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में भी लिखते रहे जिनमें भट्टजी के अतिरिक्त गणेशराम शर्मा (डूंगरपरु), हरिकृष्ण शास्त्री (महापुरा), स्वामिनाथ आत्रेय, विष्णुकांत शुक्ल (सहारनपुर), नवलकिशोर कांकर, नारायण कांकर, कलानाथशास्त्री (जयपुर), परमानंद शास्त्री (अलीगढ़) आदि के नाम प्रसिद्ध हैं।

हृषीकेश भट्टाचार्य को गद्यसाहित्य में निबन्ध शैली के जन्मदाता के रूप में जाना जाता है। 'विद्योदय' नामक मासिक पत्र का 44 वर्षों तक इन्होंने सम्पादन किया था। संस्कृत निबन्ध लिखने में इन्हें विशेष ख्याति मिली। इनके निबन्धों का संग्रह 'प्रबन्धमञ्जरी' के नाम से 1930 ई0 में प्रकाशित हुआ। इसमें कुल 11 निबन्ध संकलित हैं, जिनमें काव्यात्मकता के कारण उद्भिज्जपरिषद् महारण्यपर्यवेक्षणम्, उदरदर्शनम् इत्यादि उल्लेखनीय है। इस युग के अन्य प्रमुख निबन्धकारों में पं. नृसिंहदेव शास्त्री, प्रो. रेवतीकान्त भट्टाचार्य, डॉ. मंगलदेव शास्त्री, पं. चारुदेवशास्त्री, डॉ. रामजी उपाध्याय, आचार्य केशवदेव शुक्ल, डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, डॉ. रामकृष्ण आचार्य, डॉ. पारसनाथ द्विवेदी, डॉ. रमेशचन्द्र शुक्ल, श्री कर्णवीर नागेश्वर राव, पं. रघुनाथ शर्मा, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, पं. नवलकिशोर कांकर, पं. बटुकानाथ शास्त्री, नरसिंहाचार्य, डॉ. कृष्णकुमार अवस्थी, वासुदेवशास्त्री

द्विवेदी, नृसिंहनाथ त्रिपाठी, डॉ. शिवबालक द्विवेदी, गणेशराम शर्मा, स्वामिनाथ आत्रेय, परमानन्द शास्त्री, विष्णुकांत शुक्ल, कलानाथ शास्त्री, एस.पी. भट्टाचार्य, पं. हरिहरसुरूप शर्मा, टी. गणपतिशास्त्री, बहादुरचन्द छाबड़ा, ए. राजगोपाल चक्रवर्ती एवं नारायणचन्द्र स्मृतितीर्थ आदि हैं।

यात्रावृत्त—

आधुनिक साहित्य में गद्यबद्ध विधाओं में 'यात्रावृत्त' और 'जीवनवृत्त' भी सम्मिलित माने जाते हैं। इन्हें उपन्यास, कथा, निबंध आदि से पृथक विधा मानने का कारण शायद यही हो सकता है कि इसमें कल्पना या मौलिक उद्भावना का तत्त्व कम और वृत्तवर्णन, स्थलवर्णन या 'रिपोर्टिंग' का तत्त्व अधिक होता है। यात्रावृत्त एक तरह से पत्रकारिता का ही अंग होता है, इसलिए इसे पत्रकारिता और साहित्य की मध्यरेखा पर स्थित विधा कहा जा सकता है।

प्राचीन साहित्य में यात्राओं के वर्णन तो मिलते हैं, सुललित पद्य या गद्य में निबद्ध उनका वर्णनात्मक साहित्यिक रूप भी उपलब्ध होता है पर उसे अलग से विधा या काव्यभेद नहीं माना गया। काव्य, गद्यकाव्य या चम्पू के अन्तर्गत ही यात्रावर्णनादि समाविष्ट होते रहे हैं- जैसे विष्णुगुणदर्शचम्पू में विभिन्न देशों प्रान्तों का वर्णन है किन्तु यह यात्रावृत्त मात्र नहीं है, इसका प्रतिपाद्य कुछ और है। प्राकृत साहित्य में व्यापारियों की श्रावकों की या तीर्थयात्रियों की यात्राओं के वर्णन तो मिलते हैं इनमें से कुछ यात्रावर्णन का प्रमुख उद्देश्य लेकर ही लिखे गये हैं जैसे- 'वसुदेवहिंडी'।

संस्कृत रचनाकारों में यात्राएँ करने और उनका वर्णन पद्य या कभी कभी गद्य में करने की प्रवृत्ति तो सदियों से चली आ रही है, किन्तु उनका प्रकाशन कभी-कभी ही हो पाता था। "तीर्थयात्रा की परम्परा सदियों से है और संस्कृत विद्वज्जन भी बद्रीनाथधाम की या जगन्नाथपुरी की यात्रा करते थे। उनका विवरण भी लिखते थे। यही कारण है कि ऐसी तीर्थयात्राओं के वर्णन करने वाले गद्य बीसवीं सदी से ही प्रकाशित रूप में मिल जाते हैं। संस्कृतचन्द्रिका में तथा अमरभारती में लक्ष्मण शास्त्री तैलंग का जगदीशपुरयात्रा वर्णन प्रकाशित हुआ था उत्तराखण्ड यात्रा के वर्णन तो अनेक गद्यकारों ने किये हैं। एस. पी. भट्टाचार्य की 'उत्तराखंडयात्रा' (कलकत्ता, 1948) प्रसिद्ध है। मथुरानाथशास्त्री ने 'अस्माकम् उत्तराखण्डयात्रा' संस्कृतगद्य में लिखी थी। पं. हरिहरसुरूप शर्मा ने हिमालयांचल की यात्रा की थी। इस पर गद्य व पद्य दोनों वर्णनात्मक लिखे थे। इन्होंने अपनी काश्मीर यात्रा का वर्णन 'मम काश्मीरयात्रा' शीर्षक से किया । टी. गणपतिशास्त्री का 'सेतुयात्रावर्णन' भी सुविदित है जिसमें धार्मिक आधारों का तो विवरण है ही, कुछ आधुनिक विकृतियों का भी विश्लेषण

हैं। वी.एस. रामस्वामिशास्त्री ने 'त्रिबिल्वदलचम्पू' (मदुरा 1937) में अपनी पूरी भारतयात्रा का वर्णन करते हुए न केवल तीर्थयात्राओं का विवरण दिया है, बल्कि विश्वविद्यालयों अन्य शिक्षासंस्थाओं, प्राचीन पुरातात्विक स्थलों, दर्शनीय स्थलों आदि का वर्णन भी किया है।

श्री शैल दीक्षित ने दो यात्राप्रबन्धों की रचना की है। प्रथम यात्रावृत्त है 'कावेरीगद्यम्' द्वितीय यात्रा प्रबन्ध है 'प्रवासवर्णनम्' ए. राजगोपालाचारी ने 'तीर्थाटनम्' शीर्षक से पाँच अध्यायों में भारत के प्रमुख तीर्थों का चित्रण किया है। नारायणचन्द्र स्मृतितीर्थ ने आधुनिक उड़ीसा के प्रवास का वृत्त लिखते हुए 'भुवनेश्वरवैभवम्' की रचना की है। अरबी के प्रसिद्ध कथाग्रन्थ 'अलिफलैला' (सहस्त्ररजनीचरित) में जहाजी सिन्दबाद की यात्राओं का जो वर्णन है, वह यात्रावृत्त की विधा में नहीं आता, वह काल्पनिक कथा है, जिसमें जहाज से समुद्र की यात्रा करते समय घटी रोचक और विस्मयकर घटना का वर्णन है। इसका अनुवाद भी संस्कृत में हुआ है।

पं. नवलकिशोर कांकर ने 'यात्राविलासम्' नामक एक उत्कृष्ट गद्यकाव्य की रचना की है, जिसमें अपनी उत्तराखण्ड यात्रा का प्रारंभ से अन्त तक सुललित वर्णन अल त संस्कृत गद्य में किया है जो पूर्णतः बाणभट्ट से प्रभावित शैली में है। इस गद्यकाव्य की प्रशंसा सारे देश में हुई, इसी के आधार पर संस्कृत सेवी संस्थाओं की आरे से उन्हें 'गद्यसम्राट' की उपाधि मिली।

जीवनवृत्त—

जीवनवृत्त विभिन्न कवियों या महापुरुषों के चरित्र या उपाख्यान के रूप में वर्षों से लिखे जाते रहे हैं, किन्तु आधुनिक साहित्य में जीवनी या बायोग्राफी के रूप में जो विधा विकसित हुई है उसका प्रमुख विषय है व्यक्तिचरित का वर्णन, जिसे आपने प्रत्यक्ष देखा हो। स्वयं दृष्ट व्यक्ति का चरितनिबन्धन जीवनी (बायोग्राफी) और स्वयं का आत्मचरित निबन्ध आत्मकथा (आटोबायोग्राफी) कहा जाता है और ये दोनों आधुनिक साहित्य की गद्य विधाएँ मानी जाती है।

बाणभट्ट ने हर्षचरित में कान्युब्जेश्वर स्थाण्वीश्वर जनपद नरेश हर्षवर्द्धन का चरित 'हर्षचरितम्' में निबद्ध किया है। इसे सर्वप्रथम गद्यबद्ध जीवनवृत्त कहा जा सकता है। शंकराचार्य के जीवन और कृतित्व ने इस देश पर जो प्रभाव छोड़ा उसे देखते हुए यह स्वाभाविक ही था कि उनका जीवनवृत्त भी लिखा जाए। 'शङ्करदिग्विजय' आदि शीर्षकों से विभिन्न विद्वानों ने शंकराचार्य का जीवन चरित्र विभिन्न शैलियों में लिखा है। उनमें भी अधिकांश पद्यबद्ध ही है।

आधुनिक काल में भी पद्यबद्ध जीवनचरित्र विपुल मात्रा में लिखे जाते रहे हैं। गंगाधर शास्त्री का 'रामशास्त्रीचरितम्', म.म.पं शिवकुमार मिश्र का 'यतीन्द्रदेशिकचरितम्' कुमारताताचार्य का 'चंडमारुताचार्यजीवनचरितम्' के. मार्कण्डेय शर्मा का 'श्रीदीक्षितचरितम्' तथा मेधाव्रताचार्य के 'नारायणस्वामिचरितम्' और 'महर्षिविरजानन्दचरितम्' जीवनी साहित्य के उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

आत्मकथा—

संस्कृत में आत्मकथाएँ भी लिखी गई हैं, किन्तु उनकी संख्या कम हैं। आत्मकथा दो प्रकार की होती है, एक तो वे किसी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति के अपने जीवन का वृत्त स्वयं अभिलिखित करती हों एवं दूसरी वे जो यथार्थवृत्त को लिपिबद्ध करती हो। प्रथम प्रकार की आत्मकथा में महात्मा गाँधी द्वारा लिखित जिसका अंग्रेजी शीर्षक 'माई एक्सपेरिमेंट्स विध टुरूथ' था। दूसरे प्रकार की आत्मकथाएँ वे भी हैं जो यथार्थवृत्त तो लिपिबद्ध नहीं करती हैं किन्तु एक कल्पित पात्र के द्वारा किसी भी नाम से उसकी आत्मकथा के रूप में लिखी गई हो, जबकि वस्तुतः वे उस पात्र के उद्भावक अर्थात् उस तथाकथित आत्मकथा के लेखक द्वारा लिखा एक काल्पनिक कथानक ही है, उसमें लेखक के स्वयं के जीवन के कुछ छायाचित्र रूप से चाहे प्रतिफलित हो जाते हों- जैसे 'बाणभट्ट की आत्मकथा' आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का लिखा आत्मकथा शैली का उपन्यास है, ऐसी आत्मकथाओं को उपन्यास ही माना जाता है। पं. ऋषिकेश भट्टाचार्य का लिखा 'आत्मवायोरुद्गारः' ऐसी ही एक आत्मकथा है। इसी प्रकार कलानाथ शास्त्री ने 'संस्कृतोपासिकाया आत्मकथा' लिखी है।

आधुनिक गद्यकाव्यकारों में हृषीकेश भट्टाचार्य, क्षमाराव, नवलकिशोर कांकर, रामशरण त्रिपाठी, मेधा व्रताचार्य, श्रीमती रजम्मा, श्रीनारायण शास्त्री खिस्ते, श्रीपादशास्त्री हसूरकर, रामावतार शर्मा, टी0 के0 गणपति, महालिंग शास्त्री, मथुरादत्त दीक्षित, चारू देव शास्त्री प्रभृति लेखक रत्नों ने बीसवीं शताब्दी में अपनी काव्यात्मक गद्य रचनाओं से संस्कृत साहित्य की श्रीवृद्धि की है।

बोध प्रश्नः-

अभ्यास प्रश्न (3)

(1). बहुविकल्पीय प्रश्नः-

1. प्रभाचन्द्र का समय माना गया है।

(क) 10 वीं शताब्दी (ख) 12 वीं शताब्दी

(ग) 11 वीं शताब्दी (घ) 9 वीं शताब्दी

2. जिनभद्र का समय माना गया है।

(क) 12 वीं शताब्दी (ख) 11 वीं शताब्दी

(ग)13 वीं शताब्दी (घ) 10 वीं शताब्दी

3. मेरुतुग किसके शिष्य थे।

(क) गौतम मुनि (ख) चन्द्रप्रभ मुनि

(ग) कण्व मुनि (घ) इनमें से कोई नही

4. किस गद्यकाव्य में 24 महापुरुषों का जीवन वृत्त हैं।

(क) चतुर्विंशतिप्रबन्ध (ख) प्रबन्धकोश

(ग) क एवं ख दोंनो में (घ) इनमें से कोई नही

5. बामनभट्टबाण का समय है।

(क) 1450 ई0 (ख) 1451 ई0

(ग) 1452 ई0 (घ) 1449 ई0

6. 18 वीं शती के पूर्वार्ध का समय है।

(क) बामनभट्टबाण (ख) मेरुतुग

(ग) विश्वेश्वरपाण्डेय (घ) भट्ट मथुरानाथ शास्त्री

7. विश्वेश्वरपाण्डेय की गद्य रचना का क्या नाम है ।

(क) मन्दारमञ्जरी (ख) वैयाकरणसिद्धान्तमसुधनिधि

(ग) रोमावलीशतक (घ) इनमें से कोई नही

8. सर्वप्रथम संस्कृत उपन्यास कहा जाने वाला ग्रन्थ है।

(क) शिवराजविजयम् (ख) श्रृंगारमंजरी

(ग) अलंकाप्रदीप (घ) इनमें से कोई नही

9. शिवराजविजयम् सर्वप्रथम किस पत्रिका में धारावाहिक के रूप से निकला था।

(क) संस्कृतचन्द्रिका (ख) संस्कृत रत्नाकर

(ग) संस्कृत प्रतिभा (घ) इनमें से कोई नही

10. भट्ट मथुरानाथ शास्त्री का समय माना गया है ।

(क) 1889-1964 (ख) 1888-1963

(ग) 1890-1965 (घ) 1870-1964

11.नगेन्द्रनाथ सेन के लघु उपन्यास का क्या नाम है।

(क) कल्याणी (ख) रजनी

(ग) शिवराजविजय (घ) इनमें से कोई नही

12.रेणुदेवी के लघु उपन्यास का क्या नाम है।

(क) शिवराजविजय (ख) कल्याणी

(ग) रजनी (घ) इनमें से कोई नही

13. बीसवीं सदी में प्रकाशित निबन्ध हैं।

(क) डॉ0 मगंलदेव शास्त्री का प्रबन्धप्रकाश

(ख) पं. चारूदेवशास्त्री की प्रस्तावतरंगिणी

(ग) आचार्य केशवसेन शुक्ल का निबन्धवैभव

(घ) उपरोक्त सभी

14. गद्यसाहित्य में निबन्ध शैली के जन्मदाता के रूप में जाना जाता है।

(क) हृषीकेश भट्टाचार्य को (ख) डॉ0 मगंलदेव शास्त्री को

(ग) आचार्य केशवसेन शुक्ल को (घ) लक्ष्मण शास्त्री तैलंग को

15. हृषीकेश भट्टाचार्य ने किस मासिक पत्र का सम्पादन किया था।

(क) विद्योदय (ख) संस्कृत प्रतिभा

(ग) संस्कृतचन्द्रिका (घ) इनमें से कोई नही

16. प्रबन्धमञ्जरी के रचनाकार का क्या नाम है।

(क)हृषीकेश भट्टाचार्य (ख) डॉ0 रामकृष्ण आचार्य

(ग) डॉ0 पारसनाथ द्विवेदी (घ) इनमें से कोई नही

17. लक्ष्मण शास्त्री तैलंग का जगदीशपुरयात्रा वर्णन प्रकाशित हुआ था।

(क) संस्कृतचन्द्रिका में (ख) अमरभारती में

(ग) क एवं ख दोंनो (घ) उत्तराखंडयात्रा

18. मथुरानाथशास्त्री द्वारा लिखा गया संस्कृतगद्य है।

(क) अस्माकम् उत्तराखण्डयात्रा (ख) हिमालयांचलयात्रा

(ग) यात्राविलासम् (घ) इनमें से कोई नही

19. बीसवीं सदी में प्रकाशित निबन्ध हैं।

(क) डॉ0 कपिलदेव द्विवेदी का 'संस्कृतनिबन्धशतकम्',

(ख) डॉ0 रामकृष्ण आचार्य की 'संस्कृतनिबन्धांजलि',

(ग) डॉ0 पारसनाथ द्विवेदी का 'संस्कृतनिबन्धनवगीतम्',

(घ) उपरोक्त सभी

20. आधुनिक काल में जीवनी साहित्य के उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

(क) गंगाधर शास्त्री का 'रामशास्त्रीचरितम्'

(ख) म.म.पं शिवकुमार मिश्र का 'यतीन्द्रदेशिकचरितम्'

(ग) के. मार्कण्डेय शर्मा का 'श्रीदीक्षितचरितम्'

(घ) उपरोक्त सभी

(2). रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:-

1. मेरुतुग का समय .... माना गया है।
2. प्रबन्धकोश का दूसरा नाम .... है।
3. भट्ट मथुरानाथ शास्त्री ने .... में शतशः कथाएँ, उपन्यास, निबन्ध आदि लिखे।
4. डॉ0 वेंकटराघवन का समय.. माना गया है।
5. रेणुदेवी के लघु उपन्यास रजनी का प्रकाशन... में हुआ था।
6. प्रबन्धमञ्जरी का प्रकाशन .... में हुआ।
7. पं. नवलकिशोर कांकर ने.................................... नामक गद्यकाव्य की रचना की है।
8. स्वयं के द्वारा दृष्ट व्यक्ति का चरितनिबन्धन....................................... कहा जाता है।
9. स्वयं का आत्मचरित निबन्ध ....कहा जाता है।
10. कलानाथ शास्त्री ने .... नामक आत्मकथा लिखी है।

(3). निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तर पर सही (√) गलत उत्तर पर (×) का चिह्न लगाइए—

1. 14 वीं शताब्दी में प्रबन्धचिन्तामणि नामक ग्रन्थ लिखा गया। ( )
2. राजशेखरसूरी का गद्यकाव्य प्रबन्धकोश है। ( )
3. प्रबन्धकोश नामक गद्यकाव्य में 20 महापुरुषों का जीवन वृत्त हैं। ( )
4. वैयाकरणसिद्धान्तमसुधनिधि विश्वेश्वरपाण्डेय की रचना है। ( )
5. आधुनिककाल में संस्कृत के प्रथम उपन्यास 'शिवराजविजयम्' पं. अम्बिकादत्त व्यास द्वारा रचित है। ( )
6. नगेन्द्रनाथ सेन के लघु उपन्यास कल्याणी का प्रकाशन (1918) हुआ।( )

7. प्रबन्धमञ्जरी में 11 निबन्ध संकलित हैं। ( )

8. एस. पी. भट्टाचार्य की 'उत्तराखंडयात्रा' प्रसिद्ध है। ( )

9. पं. नवलकिशोर कांकर को 'गद्यसम्राट' की उपाधि मिली। ( )

10. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का लिखा आत्मकथा शैली का उपन्यास है। ( )

1.4 सारांश:-

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से आपने संस्कृत गद्य काव्य की परम्परा, गद्यकाव्य का उद्भव एवं उत्कर्ष को विस्तार पूर्वक पढ़ा। आपने जाना कि संस्कृत वाङ्मय का क्षेत्र बहुत विशाल है। वह मुख्यतया गद्य व पद्य दो भागों में विभक्त है। पद्य काव्य प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, किन्तु गद्य साहित्य में भी अनेकानेक गरिमामय कृतियों का सृजन हुआ है। अधिकांश शास्त्र ग्रन्थ, दर्शन ग्रन्थ, टीकाएँ आदि भी गद्य में ही रची गई हैं। प्राचीन संस्कृत गद्य साहित्य में कथा, आख्यायिका, परिकथा, मणिकुल्या जैसे भेद दृष्टिगोचर होते हैं, मुख्य रूप से महाकवि सुबन्धु, बाणभट्ट, दण्डी, धनपाल, प्रभाचन्द्र, मेरुतुगाचार्य, राजशेखरसूरी, बामनभट्टबाण, विश्वेश्वरपाण्डेय आदि प्रमुख संस्कृत गद्यकाव्यकारों ने गद्य साहित्य के भण्डागार में अपनी लेखनी से श्री वृद्धि कर गद्य लेखन को समृद्ध किया। नवीन विधाओं में उपन्यास, निबन्ध, जीवनवृत्त, संस्मरण आदि लिखे जा रहे हैं। पण्डिता क्षमाराव, भट्टमथुरानाथ शास्त्री, अभिराज राजेन्द्र मिश्र, प्रो. रामकरण शर्मा, देवर्षि कलानाथ शास्त्री, हर्षदेव माधव, बनमाली बिश्वाल, नारायण दास, आदि आधुनिक संस्कृत गद्यकार गद्य साहित्य के भण्डागार में अपनी लेखनी से श्री वृद्धि कर रहे हैं। जिसका अध्ययन आप इस इकाई के माध्यम से करेंगे।

1.5 शब्दावली:-

आरम्भिक	-	शुरूआद के
उत्कृष्टतम	-	सबसे अच्छा
मनोभिलास	-	मन के अनुकूल इच्छा
परिष्कार	-	शुद्ध
उच्छवास	-	आख्यायिका के अंक विभाजन का नाम

पार्थक्य	-	अलग
चूर्णक	-	गद्य काव्य का भेद
कविकल्पित	-	कवि द्वारा रचित
आर्या	-	छन्द का एक भेद
पूर्ववर्ती	-	पहले के
निष्णात	-	ज्ञानी
अवरूद्ध	-	रूका हुआ

1.6 अभ्यासार्थ प्रश्न - उत्तर

अभ्यास प्रश्न (1)

(1). बहुविकल्पीय प्रश्नः-

1. (क) 2. (ख) 3. (घ) 4. (ग) 5. (ग) 6. (क) 7. (घ) 8. (ग) 9. (घ) 10. (क)

(2).

1. धर्मार्थ
2. आख्यायिका
3. गद्यकाव्यं
4. त्रिषु लोकेषु
5. ओजः

(3).

1. सही	2. सही	3. सही	4. सही	5. सही
6. सही	7. सही	8. गलत	9. सही	10. सही

अभ्यास प्रश्न (2)

(1). बहुविकल्पीय प्रश्नः-

1. (क) 2. (क) 3. (ख) 4. (क) 5. (ग) 6. (क) 7. (ग) 8. (क) 9. (क) 10. (क)

(2).

1. पद्यकाव्य, गद्यकाव्य
2. व्यवहारविदे

3. सुमनोत्तरा

4. दण्डीन:

5. गद्यचिन्तमामणि

(3).

1. सही	2. सही	3. गलत	4. सही	5. गलत
6. सही	7. सही	8. सही	9. सही	10. सही

अभ्यास प्रश्न (3)

(1). बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1. (ख) 2. (ग) 3. (ख) 4. (ग) 5. (क) 6. (ग) 7. (क) 8. (क) 9. (क) 10. (क)

11. (क) 12. (ग) 13. (घ) 14. (क) 15. (क) 16. (क) 17. (ग) 18. (क) 19. (घ) 20. (घ)

(2).

1. 14 वीं शताब्दी

2. चतुर्विंशतिप्रबन्ध

3. संस्कृत रत्नाकर

4. 1908-1979

5. 1920

6. 1930 ई0

7. यात्राविलासम्

8. जीवनी (बायोग्राफी)

9. आत्मकथा (आटोबायोग्राफी)

10. संस्कृतोपासिकाया

(3).

1. सही 2. सही 3. गलत 4. सही 5. सही

6. सही 7. सही 8. सही 9. सही 10. सही

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1.संस्कृत साहित्य का इतिहास – बलदेव उपाध्याय, प्रकाशक- शारदा निकेतन, कस्तुरवानगर, वाराणसी।

2.संस्कृत साहित्य का इतिहास – डॉ0 उमाशंकर शर्मा 'ऋषि' चौखम्बाभारतीअकादमी, वाराणसी।

3. संस्कृत वाङ्मय का बृहद इतिहास – जगन्नाथ पाठक सप्तम खण्ड, ।

4. अमरकोश – अमर सिंह

1.8 उपयोगी पुस्तकें:-

1. वासवदत्ता– सुबन्धु

2. कादम्बरी– बाणभट्ट, चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

3. दशकुमारचरित – आचार्य दण्डी

4. संस्कृत वाङ्मय का बृहद् इतिहास – सप्तम खण्ड, जगन्नाथ पाठक

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. गद्यकाव्य का प्रयोजन सिद्ध कीजिए ?
2. प्रमुख संस्कृत गद्यकाव्यकारों का परिचय दीजिए ?
3. आधुनिक संस्कृत गद्यकाव्यकारों पर प्रकाश डालिए ?
4. बाणभट्ट के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालिए ?
5. कादम्बरी एक कथा है सिद्ध कीजिए ?
6. सुबन्धु के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व का विवेचन कीजिए ?

खण्ड–प्रथम, इकाई 2 – सुबन्धु

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 सुबन्धु का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व

2.3.1 सुबन्धु का जीवन परिचय

2.3.2 सुबन्धु का समय

2.3.3 सुबन्धु की भाषा शैली

2.3.4 सुबन्धु का कर्तृत्व

2.3.5 वासवदत्ता का कथासार

2.4 सारांश

2.5 शब्दावली

2.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2. 8 उपयोगी पुस्तकें

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना:-

प्रिय शिक्षार्थियो!

इससे पूर्व की इकाई में आप ने संस्कृत गद्य काव्य की परम्परा के बारे में जाना। प्रस्तुत इकाई में आप सुबन्धु के विषय में विस्तार से अध्ययन करेंगे । संस्कृत साहित्य में गद्य का प्रयोग प्राचीन काल से ही होता आया है और प्राचीन काल में पद्य की अपेक्षा गद्य को अधिक सम्मान प्राप्त था। गद्य के विषय में संस्कृत में एक उक्ति है **''गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति''** अर्थात् गद्य कवियों की कसौटी है। इस प्रकार वेद, ब्रह्मण ग्रन्थों, उपनिषद् ग्रन्थों, निरुक्त आदि में संस्कृत गद्य साहित्य को सम्वर्द्धनशील परम्परा उपलब्ध हुई, तथा कलान्तर में विभिन्न रूपों में गद्य का प्रौढ़ रूप दिखाई पड़ा। गद्य साहित्य के प्रमुख रत्नत्रयी- सुबन्धु, बाण, दण्डी, में सुबन्धु सबसे प्राचीन कवि है। उनके द्वारा संस्कृत गद्य साहित्य की श्री वृद्धि हुई । उनके एक मात्र ग्रन्थ 'वासवदत्ता' को गद्य काव्य का सर्वप्रथम ग्रन्थ कहा गया है, महाकवि ने अपने काव्यत्व से संस्कृत गद्य साहित्य को समृद्ध बनाया है। इस इकाई के माध्यम से आप सुबन्धु के जीवन परिचय उनके कर्तृत्व और सुबन्धु द्वारा रचित वासवदत्ता के बारें में परिचिति होंगे।

2.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात आप—

- ❖ सुबन्धु तथा उनकी रचना से परिचित हो सकेंगे।
- ❖ गद्य काव्य को सरलता से जान सकेंगे।
- ❖ सुबन्धु के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व से परिचित हो सकेंगे।

2.3 सुबन्धु का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व:-

प्रिय शिक्षार्थियो!

संस्कृत गद्य काव्य लेखकों में सुबन्धु का नाम प्रतिष्ठा से लिया जाता है। सुबन्धु संस्कृत के प्रतिष्ठित कवि बाणभट्ट के पूर्ववर्ती हैं । बाणभट्ट ने अपने हर्षचरित की प्रस्तावना में सुबन्धु की वासवदत्ता को कवियों का दर्पभंग करने वाली रचना कहा है—

कवीनामगलद्दर्पो नूनं वासवदत्तया ।
शक्त्येव पाण्डुपुत्राणां गतया कर्णगोचरम्।।

सुबन्धु ने वासवदत्ता नामक गद्य काव्य की रचना की है । इसमें राजकुमार कन्दर्पकेतु और राजकुमारी वासवदत्ता का प्रणय चित्रित है। वासवदत्ता में सर्वत्र श्लेष के द्वारा कवि ने अनेक अर्थों को

रखकर अपने काव्य को चमत्कारी बनाया है। सुबन्धु का श्लेष उत्तम कोटि का है। कवि को अपनी शैली का चमत्कार दिखाने का सुन्दर अवसर प्राप्त हुआ है। लम्बे समासों का प्रयोग, अनुप्रासों का उपयोग, समासों में स्वर माधुर्य, अनुप्रास में संगीत सुबन्धु की विशेषता है। निःसन्देह सुबन्धु ने वासवदत्ता में अपने युग के अनुरूप चमत्कार-प्रदर्शन किया है। सचमुच **''प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रबन्धम्''**— यह उक्ति वासवदत्ता पर अक्षरशः प्रमाणित होती है।

2.3.1 सुबन्धु का जीवन परिचयः-

सर्वानुक्रमणी में एक सुबन्धु का उल्लेख किया गया है जिनको ऋग्वेद के चार ऋषियों में से एक तथा गोपायन तथा लोपायन का पुत्र बताया गया है। एक और सुबन्धु है जिनका उल्लेख दण्डी ने किया है। नाट्यशास्त्र की टीका 'अभिनवभारती' में अभिनवगुप्त ने 'नाट्यायित' के दृष्टान्त के रूप में 'वासवदत्तानाट्यधारा' नामक रूपक का उल्लेख किया है जिसके कृत्तिकार का नाम उन्होंने महाकवि सुबन्धु बताया है। रामचन्द्र और गुणचन्द्र के 'नाट्यदर्पण में भी इसी रूपक का वर्णन मिलता हैं। शारदातनय ने अपने 'भावप्रकाशन' में सुबन्धु नामक एक नाट्यशास्त्री का उल्लेख किया है जिसने नाटक के पाँच विभाग किये है। लेकिन पी०वी० काणे के अनुसार यह सुबन्धु 'वासवदत्तनाट्यधारा' वाले सुबन्धु से भिन्न है।

'वासवदत्ता' के रचनाकार सुबन्धु उपर्युक्त सभी सुबन्धु नामक व्यक्ति से भिन्न हैं। इनकी एकमात्र कृति 'वासवदत्ता' ही है जिसमें प्रदर्शित अपनी विद्वता और विलक्षण श्लेषयुक्त शैली के कारण सुबन्धु ने संस्कृत गद्यसाहित्य में प्रतिष्ठापूर्ण स्थान प्राप्त किया है। 'वासवदत्ता' की एक पाण्डुलिपि के अनुसार सुबन्धु को वररूचि की बहन का पुत्र बताया गया है। 'वासवदत्ता' के प्रारम्भ के तृतीय श्लोक के आधार पर आर०जी० हर्षे का अनुमान है कि दामोदर सुबन्धु के गुरु थे। 'वासवदत्ता' के प्रारम्भ में सुबन्धु ने विष्णु की स्तुति दो श्लोकों में की है। जबकि शिव की स्तुति में एक ही श्लोक लिखा है। इसके अतिरिक्त 'वासवदत्ता' में शिव की अपेक्षा विष्णु के संकेत बहुलता से मिलते है। इस आधार पर यह अनुमान किया जा सकता है कि सुबन्धु वैष्णव थे, यद्यपि उन्होंने शिव और अन्य देवी देवताओं के प्रति भी अपनी श्रद्धा दिखायी हैं।

2.3.2 सुबन्धु का समयः-

सुबन्ध का स्थितिकाल, समय, स्थान और वंश आदि का समय निश्चित नही है। सुबन्धु के माता-पिता उनकी शिक्षा-दीक्षा के बारे में कोई जानकारी प्राप्त नहीं होती है। निश्चित साक्ष्यों के अभाव में सुबन्धु का काल निर्धारित कर पाना दुरुह कार्य हैं। कुछ स्रोतों के आधार पर सुबन्धु का

सम्भावित समय प्राप्त किया जा सकता है। गद्यकाव्य के लेखकों में सुबन्धु ही सर्वप्रथम लेखक हैं। सुबन्धु वेद, धर्मशास्त्र, काव्यशास्त्र, व्याकरण, संगीत, नीतिशास्त्र और दर्शन आदि में निपुण थे। कुछ इन्हें कश्मीरी कुछ मध्यदेशीय स्वीकार करते हैं। बाणभट्ट के द्वारा प्रशंसित किये जाने के कारण ये बाण के पूर्ववर्ती सिद्ध होते हैं।

आचार्य वामन (800 ई०) ने 'काव्यालंकारसूत्र' में एक गद्यांश उद्धृत किया है— **कुलिशशिखरखरनखरप्रचयप्रचण्डचपेट पातिमत्तमातङ्गकुम्भस्थल – गलन्मदच्छटाच्छुरित चारुकेसरभार भासुरमुखे केसरिणि ।** यही गद्यांश बाण के 'हर्षचरित' में भी समान रूप में पाया जाता है । अंशाधिक परिवर्तन के साथ ही उक्त गद्यांश सुबन्धु की 'वासवदत्ता' में भी पाया जाता है- कुलिशशिखरखरनखर- प्रचयप्रचण्डचपेट- पातिमत्तमातङ्गकुम्भस्थल- रुधिरच्छताच्छुरित-चारुकेसरभासुर-केसरिकदम्बेन....। वामन और बाण के उद्धरणों में एकरूपता होने से यह प्रतीत होता है कि इस गद्यांश के सन्दर्भ में वामन बाण के 'हर्षचरित' से ही प्रभावित हुए होंगे क्योंकि बाण का काल सातवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध लगभग माना गया हैं। बाण, हर्ष (606 से 648) के दरबारी कवि होने से बाण का समय (630-640 ई0) तक मानना उचित प्रतीत होता है। बाण से पूर्ववर्ती होने के कारण सुबन्धु का समय 600 ई0 के आस-पास मानना उचित है। अतः बाण इस समय के आधार पर वामन (800 ई०) पूर्ववर्ती सिद्ध होते हैं। पुनः 'हर्षचरित' और 'वासवदत्ता' में उद्धरणों की साम्यता से यह प्रतीत होता है कि बाण ने सुबन्धु से इस गद्यांश को ग्रहण किया होगा क्योंकि बाण ने 'हर्षचरित' के प्रारम्भ में 'वासवदत्ता' नामक रचना का उल्लेख किया है। इसमें बाण ने 'वासवदत्ता को कवित्व के गर्व का नाशक बताया है। यह भी कहा जा सकता है कि बाण की उपरोक्त उक्ति भास के 'स्वप्नवासवदत्तम्' के बारे में भी हो सकती है लेकिन ऐसा सोचने के लिए कोई आधार नहीं है क्योंकि बाण ने 'हर्षचरित' के प्रारम्भ में भास का अलग से उल्लेख किया है। इसके अतिरिक्त 'स्वप्नवासवदत्तम्' सरल शैली में रचित एक नाटक है, जिसमें श्लिष्टता या विद्वत्ता का कोई विशेष पुट नहीं दिखता। अतः कहा जा सकता है कि कवियों का मान मर्दन कर सकने में कोई 'वासवदत्ता' सक्षम है तो वह है- सुबन्धु की 'वासवदत्ता'। अपने विद्वतापूर्ण वर्णनों के कारण, जटिल श्लेषयुक्त सामसिक शैली के कारण सुबन्धु की 'वासवदत्ता' को ही यह गौरव दिया जा सकता है। इस सम्बन्ध डॉ० भोलाशंकर व्यास का विचार द्रष्टव्य है- हमें ऐसा प्रतीत होता है, बाण को सुबन्धु की कृति का पूरी तरह पता था और हर्षचरित से भी अधिक इस बात की पुष्टि कादम्बरी की कथानक रूढ़ियों के सजाने और शैली के प्रयोग से होती है। अतः बाण सुबन्धु से परवर्ती सिद्ध होते हैं।

वाक्यपतिराज (700-725) ने प्राकृत-काव्य 'गउडवहो' की रचना किया हैं। इसमें उन्होंने सुबन्धु का उल्लेख किया है लेकिन बाण का नहीं । इससे यह प्रतीत होता है कि उस समय तक सुबन्धु की पर्याप्त प्रसिद्धि हो चुकी थी, पर बाण अभी तक अप्रसिद्ध ही थे। इन तथ्यों के आधार पर सुबन्धु के काल की उत्तरसीमा बाण से पूर्व अर्थात् लगभग 550 ई० आंका जा सकता है। अब सुबन्धु के काल की पूर्व सीमा पर विचार अपेक्षित है। सुबन्धु के काल की पूर्व सीमा 'वासवदत्ता' में उपलब्ध तथ्यों के आधार पर भी कुछ-कुछ निर्धारित की जा सकती है। इसमें रामायण, महाभारत, गुणाढ्य की बृहत्कथा, कालिदास के अभिज्ञानशाकुन्तलम् इत्यादि का उल्लेख मिलता है। सुबन्धु ने एक रमणी के वर्णन के प्रसंग में श्लेष के माध्यम से नैयायिक उद्योतकार तथा बौद्धधर्मकीर्ति के 'बौद्धसंगत्यालंकार' नामक ग्रन्थ का भी उल्लेख किया है परन्तु ये प्रमाण सुबन्धु के काल की पूर्वसीमा निर्धारित कर सकने में सक्षम नहीं हैं। क्योंकि उपरोक्त कृतियों या उद्योतकार का समय बहुत निश्चित नहीं हो पाया है लेकिन इतना निश्चित है कि उल्लेख करने के कारण सुबन्धु इन सबके बाद के विरूद्ध होते हैं। इस सम्बन्ध में एक साक्ष्य सहायक सिद्ध हो सकता है। सुबन्धु ने 'वासवदत्ता' के प्रारम्भ में महान विक्रमादित्य की मृत्यु पर विलाप करते हुए लिखा है कि— **''सा रसवत्ता विहता नवका विलसन्ति चरित नो कंकः। स्रसवीव कीर्तिशेषं गतवति भुवि विक्रमादित्ये।।**

यहाँ पर वर्णित विक्रमादित्य कौन था, इसका यथार्थ परिचय नहीं मिल पाता है। इतिहास में अनेक विक्रमादित्य का उल्लेख मिलता है इसलिए यह भ्रम होना स्वाभाविक है कि किस विक्रमादित्य का उल्लेख किया गया है लेकिन यहाँ पर ऐसा प्रतीत होता है कि विक्रमादित्य चन्द्रगुप्त द्वितीय (374-413ई०) का ही उल्लेख किया गया है क्योंकि वामन ने अपने 'काव्यलंकारसूत्र' में सुबन्धु को चन्द्रगुप्त के एक पुत्र का मन्त्री बताया है। अर्थप्रौढ़ी के पाँच भेदों में से अन्तिम साभिप्राय का वर्णन करते हुए वामन ने लिखा है- साभिप्रायत्वं यथा- **सोऽयं सम्प्रति चन्द्रगुप्तनयश्चन्द्रपकाशों युवा, जातो भूपतिराश्रयः कृतधियां दिष्टया कृतार्थश्रमः।** इसी की वृत्ति में वामन लिखते हैं— **'आश्रयः कृतधियामित्यस्य च सुबन्धुसाचिव्योपक्षेपमरत्वात् साभिप्रायत्वम्' ।**

डॉ० मानसिंह का मत है कि 'चन्द्रगुप्तनयः' से चन्द्रगुप्त द्वितीय के पुत्र कुमारगुप्त प्रथम का अभिप्राय है। ऐसा प्रतीत होता है कि कुमार गुप्त प्रथम युवावस्था में अपने पिता के पश्चात् 414 ई० में सत्तासीन हुआ, उसने सुबन्धु को बुद्धिमान (कृतार्थ) समझकर अपना मन्त्री बनाया। सुबन्ध को उस समय तक युवावस्था पार कर लेना चाहिए। इसलिए उनका जन्म कुछ पहले (400 ई०) हुआ होगा और उन्होंने विक्रमादित्य चन्द्रगुप्तद्वितीय का शासनकाल भी देख था। कुमारगुप्त प्रथम के शासन के उत्तरार्द्ध में शत्रुओं का आक्रमण हुआ जिसको सुबन्धु ने भी देखा। 'वासवदत्ता' उनके जीवन के उत्तरार्द्ध की रचना होगी। स्कन्दगुप्त (455-676) के शासन काल में भी सुबन्धु जीवित रहे होंगे। अतः सुबन्धु को 400-465 ई० के बीच का माना जा सकता है। ऐसा भी माना जा सकता है कि

'चन्द्रप्रकाश:' कुमारगुप्त प्रथम का विशेषण है क्योंकि कुमारगुप्त प्रथम के उनके सिक्कों में उसकी तुलना चन्द्रमा से की गयी है। ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर कुमारगुप्त प्रथम का मृत्युकाल लगभग 455 ई० माना गया है। सुबन्धु द्वारा उद्योतकार का उल्लेख करना भी उपरोक्त समय को मानने में सहायक है क्योंकि ऐसा समझा जाता है कि उद्योतकार ने प्रसिद्ध तर्कशास्त्री दिङ्नाग की आलोचना की है और ए०बी०कीथ ने दिङ्नाग को 400 ई० का माना है। आचार्य बलदेवउपाध्याय ने भी दिङ्नाग का समय 345-425 ई० माना है। इस प्रकार उद्योतकार उसके बाद के ही रहे होंगे। आचार्य बलदेव उपाध्याय के अनुसार उद्योतकार का समय षष्ठ शतक ई० हैं सुबन्धु द्वारा उद्योतकार का उल्लेख यह प्रमाणित करता है कि उद्योतकार का 'न्यायवार्तिक' 'वासवदत्ता' की रचना के समय ख्याति प्राप्त कर चुका होगा।

उपर्युक्त साक्ष्यों के आधार पर सुबन्धु के काल की पूर्वसीमा 385-414 ई० के लगभग मानी जा सकती है। इसके अतिरिक्त कुछ विद्वानों ने भी अपने शोध के आधार पर सुबन्धु के समय के सम्बन्ध में अपना मन्तव्य प्रकट किया है, जो इस प्रकार है—

1. पण्डित शंकदेवशास्त्री ने सुबन्धु का समय 500 ई० या इससे कुछ पूर्व माना है।
2. चन्द्रशेखर पाण्डेय ने सुबन्धु को 600 ई० या इससे कुछ पूर्व का ठहराया है।
3. डॉ० भोलाशंकर व्यास के अनुसार सुबन्धु का काल छठीं सदी का मध्य है।
4. डॉ० कपिलदेव द्विवेदी का मानना है कि सुबन्धु 600 ई० के लगभग रहे होंगे।
5. आचार्य बलदेव उपाध्याय ने भी इनको षष्ठ सदी के अन्त का बताया है।

अन्त में सुबन्धु के समय के सम्बन्ध में लुईस एच० डो के शब्दों को निश्कर्ष माना जा सकता है। इनके अनुसार सुबन्धु के काल की पूर्वसीमा उद्योतकार के बाद तथा उत्तरसीमा बाणभट्ट के पूर्व निर्धारित की जानी चाहिए। इस प्रकार सुबन्धु का काल 400-550 ई० निर्धारित किया जा सकता है और यह कहा जा सकता है कि सुबन्धु इसी बीच कभी रहे होंगे। इस प्रकार हम सुबन्धु के काल एव जीवनवृत्त के सम्बन्ध में उपर्युक्त तथ्यों एवं तर्कों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सुबन्धु 'वासवदत्ता' के रचयिता है जो उनकी एकमात्र कृति है। विक्रमादित्य-चन्द्रगुप्त द्वितीय के पुत्र कुमारगुप्त प्रथम (415 ई० 455) के दरबारी कवि थे और 385-500 ई० के बीच में कभी रहे होंगे। वे मध्यभारत के निवासी थे, सम्भवतः मालव के वैष्णव और सुबन्धु वररुचि की बहन के पुत्र थे। इनके गुरु का नाम दामोदर था। सुबन्धु के काल एवं निवास-स्थान के विषय में डॉ० मानसिंह का मत भी उक्त बिन्दुओं को पुष्ट करने में सहायक हो सकता है।

2.3.3 सुबन्धु की भाषा शैली:-

सुबन्धु वेदादि विभिन्न विद्याओं तथा धर्मशास्त्र, काव्यशास्त्र, व्याकरण, संगीत, नीतिशास्त्र और दर्शन आदि में निपुण थे। सुबन्धु ने गौडी रीति का प्रयोग किया है उनके ग्रन्थ के प्रत्येक अक्षर में श्लेष है। सुबन्धु ने अपनी श्लेषप्रधान शैली के विषय में कहा है—

''प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रपंचविन्यासवैदग्ध्य निधि प्रबन्धम्।
सरस्वती दत्तवरप्रसादश्चक्रे सुबन्धुः सुजनैकबन्धुः''।।

श्लेष के अतिरिक्त उपमा, उत्प्रेक्षा, विरोधाभास,आदि अलंकारों की भी कमी नहीं है। सुबन्धु को उनकी शैली के कारण विद्वानों में बहुत सम्मान प्राप्त हुआ। दीर्घ समासों से युक्त गौडी रीति के प्रयोग के कारण उनकी शैली में प्रसाद और माधुर्य न होकर आडम्बर, कृत्रिमता तथा क्लिष्टता ही अधिक है। सुबन्धु ने वर्णन-वैचित्र्य के कारण विशेष ख्याति अर्जित की।

2.3.4 सुबन्धु का कर्तृत्व:-

सुबन्धु का नाम संस्कृत साहित्य के लिए अपरिचित नहीं है। संस्कृत साहित्य में इनकी ख्याति 'वासवदत्ता' नामक कथा ग्रन्थ के रचनाकार के रूप में ही है । सुबन्धु का एक ही ग्रन्थ है जो वासवदत्ता के नाम से प्रसिद्ध है । वासवदत्ता का कथानक पूर्णतः कल्पित है, इसका कोई विभाजन नहीं है अतः इसे कथा की श्रेणी में रखा जाता है । इसमें राजकुमार कन्दर्पकेतु तथा राजकुमारी वासवदत्ता के प्रेम और विवाह का रोचक वृतान्त वर्णित है । परन्तु संस्कृत साहित्य में इनसे इतर अन्य सुबन्धुओं का भी विवरण मिलता है, जिनका यहाँ पर उल्लेख कर देना समीचीन होगा।

नाट्यशास्त्र की टीका 'अभिनवभारती' में अभिनवगुप्त ने 'नाटयायिटा' के दृष्टान्त के रूप में 'वासवदत्तनाट्यधारा' नामक रूपक का उल्लेख किया है जिसके कृतिकार का नाम उन्होंने महाकवि सुबन्धु बताया हैं रामचन्द्र और गुणचन्द्र के 'नाट्यदर्पण' में भी सुबन्धु नामक एक नाट्यशास्त्री का उल्लेख किया है जिसने नाटक के पाँच विभाग किया है लेकिन पी॰वी॰ काणे के अनुसार यह सुबन्धु 'वासवदत्तानाट्यधारा' वाले सुबन्धु से भिन्न है। 'वावदत्ता' रचनाकारसुबन्धु उपर्युक्त सभी सुबन्धुओं से भिन्न हैं। इनकी तक मात्र कृति 'वासवदत्ता' ही है जिसमें प्रदर्षित अपनी विद्वता और विलक्षण श्लेषयुक्त शैली के कारण सुबन्धु ने संस्कृत गद्यसाहित्य में प्रतिष्ठा पूर्ण स्थान प्राप्त किया है।

बोध प्रश्न:-

अभ्यास.1

(1). बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1. वामन के ग्रन्थ का क्या नाम है-

(क) अलंकारसारमंजरी (ख) काव्यालंकारसूत्र

(ग) साहित्यदर्पण (घ) काव्यप्रकाश

2. हर्ष का समय है-

(क) 800 ई० (ख) 400 ई०

(ग) 606 से 647 (घ) 609 से 640 ई०

3. वासवदत्ता के लेखक हैं-

(क) मम्मट (ख) हर्ष

(ग) वाणभट्ट (घ) सुबन्धु

4. सुबन्धु की रचना है -

(क) वासवदत्ता (ख) कादम्बरी

(ग) हर्षचरितम् (घ) इनमें से कोई नहीं

5. सुबन्धु का प्रिय अलंकार है-

(क) श्लेष (ख) अनुप्रास

(ग) यमक (घ) उपमा

6. कन्दर्पकेतु के साथ कौन भागती है -

(क) वासवदत्ता (ख) वसुमति

(ग) मालतीमाला (घ) अवन्तीसुन्दरी

7. पाषाणमूर्ति को कौन स्पर्श करता है -

(क) उदयन (ख) कन्दर्पकेतु

(ग)राजवाहन (घ) दुष्यन्त

(2). रिक्त स्थानों की पूर्तिकीजिए—

(क) वासवदत्ता के पति का नाम......................................है।

(ख) वासवदत्ता के नायक का नाम...................................है।

(ग) चित्र दो प्रकार के ....और................होते है।

(घ) सुबन्धु की रीति .... है।

(3). निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तर पर सही (√) गलत उत्तर पर (×) का चिन्ह लगाइए—

1. वासवदत्ता गद्यकाव्य के लेखक वाण हैं। ( )
2. वासवदत्ता का कथानक ऐतिहासिक है। ( )
3. सुबन्धु गौड़ी शैली के कवि हैं। ( )
4. वासवदत्ता नामक गद्यकाव्य की नायिका वासवदत्ता हैं। ( )

2.3.5 वासवदत्ता का कथासार:-

संस्कृत गद्य में सुबन्धु का यश उनकी एकमात्र रचना वासवदत्ता पर अवलम्बित है। वासवदत्ता में राजकुमारी वासवदत्ता की कथा है जिसमें कथानक नितान्त स्वल्प है परन्तु वर्णन प्रचुर मात्रा में है। संस्कृतसाहित्यशास्त्र में गद्य को गद्यकाव्य के रूप में ग्रहण किया जाता है और इसीलिए भामह, दण्डी और वामन से लेकर कविराज विश्वनाथ तक सभी आचार्यों ने गद्य के भेद-प्रभोदों का विशद विवेचन किया है। गद्यकाव्य के भेद के रूप में साहित्यशास्त्र में कथा तथा आख्यायिका इन दो संज्ञाओं की ही विशेष चर्चा हुयी है। सर्वप्रथम अमरकोश में कथा तथा आख्यायिका का स्वरूप निर्देश उपलब्ध होता है। इसके अनुसार आख्यायिका की कथावस्तु प्रख्यात एवं इतिहास-सम्मत होती है और कथा का विषयकवि कल्पित होता है। संस्कृत गद्यकाव्यों को कथा और आख्यायिका इन दो प्रमुख भेदों के अन्तर्गत परिगणित किया जाता है। दण्डी ने कथा और आख्यायिका के उस समय प्रचलित जो लक्षण बताये है वह इस प्रकार है—

1. ‘आख्यायिका’ में वक्त्र और अपवक्त्र छन्द रहने आवश्यक है, कथा में नहीं।
2. ‘आख्यायिका’ में उच्छवास नामक अध्याय होते है, कथा में नहीं।
3. ‘आख्यायिका’ में नायक सब कहानी कहता है, कथा में नायक या अन्य पात्र द्वारा कहानी कही जा सकती है।

दण्डी ने ही कथा और आख्यायिका के इन पूर्व प्रचलित भेदक लक्षणों की अत्यन्त उपेक्षा करते हुए लिखा है कि नायक द्वारा कहानी कही जाना या अन्य द्वारा, वक्त्र या अपवक्त्र छन्दों का प्रयोग होना या न होना, उच्छवासों का पाया जाना अथवा न पाया जाना ये सब महत्व की बातें नहीं है। कथा और आख्यापिका में कोई अन्तर नहीं हैं। इन समस्त लक्षणों की सीमा में रहकर किसी गद्यकवि ने ‘कथा’ अथवा ‘आख्यायिका’ की रचना नहीं की हैं। दण्डी के विचारों को पढ़ने से भी यी ज्ञात होता है कि प्राचीन समय में निर्धारित इन लक्षणों की प्रायः उपेक्षा ही होने लगी थी। ‘कथा’ और ‘आख्यायिका’ में मोटा अन्तर हम यही मान सकते हैं कि एक में ऐतिहासिक कथानक होता है और दूसरी में कवि-कल्पित।

वासवदत्ता का कथासार—

सुबन्धु की ‘वासवदत्ता’ में नायक राजकुमार कन्दर्पकेतु और नायिका राजकुमारी वासवदत्ता की प्रेमकथा वर्णित हैं लेखक का उद्देश्य दोनों का मिलन करना ही हैं छोटे से कथानक को लेखक ने अपनी वर्णन शक्ति के ग्रन्थ का कलेवर दे दिया है। संक्षेप में कथानक इस प्रकार है—

राजा चिन्तामणी का पुत्र राजकुमार कन्दर्पकेतु अपने पिता की ही भाँति सद्गुणों से युक्त नवयुवक है। एक बार स्वप्न में वह अष्टादश वर्षीया अप्रतिम सुन्दरी कन्या को देखता हैं उसकी सुन्दरता के आकर्षण से वह उस कन्या से प्रथम दृष्टया प्रेम कर बैठता है। प्रेमाभिभूत राजकुमार उस कन्या को पाने के लिए बेचैन हो उठता है और उसके वियोग में भूख-प्यास त्यागकर एकान्तवास

करने लगता है। किसी प्रकार उसका मित्र मकरन्द इस बात से अवगत होता है और उसको नीतिपरक उपदेश देते हुए समझाने का प्रयास करता है, किन्तु राजकुमार पर इसका कुछ भी प्रभाव नहीं होता है वह अपने मित्र से उस सुन्दरी को खोजने में सहायता मांगता है और उसको भुला पाने में अपनी असमर्थता व्यक्त करता है। इसके पश्चात उस अज्ञात सुन्दरी की खोज में कन्दर्पकेतु अपने मित्र मकरन्द के साथ निकल पड़ता है। खोजने के क्रम में एक रात वे विन्ध्य पर्वत की तलहटियों में एक वृक्ष के नीचे ठहरते है। रात में उसी वृक्ष पर बैठे एक शुकदम्पत्ती का वाकयुद्ध कन्दर्पकेतु को सुनायी देता है। सारिका (स्त्री शुक) परस्त्रीगमन का आरोप लगाते हुए देर रात्रि में आने कारण पूछती है शुक अपने देर से आने का कारण बताते हुए नायिका वासवदत्ता का निम्नवत् वर्णन करने लगता है, सकल गुणों से युक्त श्रृंगारशेखर कुसुमपुर का राजा है। राजा की एक पुत्री है, जिसका नाम वासवदत्ता उसकी माता का नाम अनंगती है। पुत्री के विवाह योग्य हो जाने पर राजा उसको मनपसन्द वर चुनने की छूट दे देता है और भूमण्डल के समस्त राजकुमारों को स्वयंवर हेतु आमंत्रित करता है। किन्तु वासवदत्ता को कोई भी राजकुमार पसन्द नहीं आता है। उसी रात वासवदत्ता स्वप्न में एक सुन्दर राजकुमार को देखती है और स्वप्न में ही कन्दर्पकेतु के प्रेमपाश में आबद्ध हो जाती है। इस प्रेमपाश से वासवदत्ता को मुक्त कराने में उसकी सखियों के सारे प्रयास निरर्थक सिद्ध होते हैं। उसकी विरहावस्था तीव्रतर होती जाती हैं अन्ततः राजकुमारी की विश्वस्त सारिका तमालिका को कन्दर्पकेतु का पता लगाने के लिए भेजा जाता है। जो कथा कहने वाले शुक के साथ उसी वृक्ष पर आ पहुँचती है जिसके नीचे कन्दर्पकेतु और मकरन्द विश्राम कर रहे थे इनता सब जानने के पश्चात् मकरन्द भी तमालिका से कन्दर्पकेतु के विषय में सम्पूर्ण वृतान्त बताता हैं। कन्दर्पकेतु बहुत प्रसन्न होता है और तमालिका को गले लगते हुए उससे वासवदत्ता का कुशलक्षेम पूछता है। इसके पश्चात दोनों मित्र तमालिका (सारिका) का अनुकरण करते हुए वासवदत्ता से मिलने के लिए उसके राज्य की ओर प्रस्थान करते हैं। वहाँ वासवदत्ता को अपने भव्य प्रसाद में दासियों से घिरे हुए देखकर खुशी से कन्दर्पके अचेत हो जाता है। वासवदत्ता भी अपने सपनों के राजकुमार को देखक मूर्च्छित हो जाती है। सखियों द्वारा युगलप्रेमी चेतना में लाये जाते हैं। इसके पश्चात् वासवदत्ता की प्रिय सखी कलावती कन्दर्पकेतु से वासवदत्ता की विरहकालीन व्यथाओं का वर्णन करती है। उसी के द्वारा यह भी ज्ञात होता है कि वासवदत्ता के पिता वासवदत्ता की इच्छा के विरूद्ध उसका विवाह विद्यधरों के देवपुत्र पुष्पकेतु से कल ही करना चाहते हैं। इतना जानते ही कन्दर्पकेतु सखियों की सहायता से वासवदत्ता के साथ मनोजव नामक जादुई घोड़े पर चढ़कर निकल भागता है और मकरनछ को नगर का समाचार जानने के लिए वही छोड़ जाता है। दोनों प्रेमी भागते हुए विन्ध्य जंगल में पहुँचते है और थककर एक लताकुंज में सो जाते हैं। प्रातः काल जब कन्दर्पकेतु सोया ही था, वासवदत्ता इसके लिए फल इत्यादि लाने जंगल में चली जाती है। वासवदत्ता को जंगल में घूमते देखकर वहीं पर डेरा डाले दो किरात समूह उस पर अपना-अपना अधिकार जताने लगते हैं। फलस्वरूप भयंकर युद्ध होता है और इसी में एक ऋषि की कुटिया भी नष्ट हो जाती है। इस उपद्रव का कारण वासवदत्ता को मानते हुए ऋषि उसे

शापमुक्त होने का रास्ता भी बताते हैं कि अपने अपने प्रिय द्वारा स्पर्शित होने पर शापमुक्त होकर पूर्वरूप में आ सकती है।

इधर नींद टूटने पर कन्दर्पकेतु अपनी प्रिया वासवदत्ता को वहाँ नहीं पाता है। वह उसकी खोज में इधर-उधर भटकता हैं अन्त में दुःखी होकर वह समुद्र में डुबकर अपने प्राण त्यागने को उद्यत होता है। किन्तु उसी समय आकाशवाणी उसे ऐसा करने से रोकती है और उसको प्रिया से पुर्नमिलन होने का आश्वासन देती है। इसके पश्चात् कन्दर्पकेतु प्रिया-वियोग में इधर-उधर घूमता-फिरता है। इस प्रकार रात-दिन और ऋतुएं व्यतीत होने लगती हैं। अन्त में घूमते हुए एक स्थान पर वह वासवदत्ता के सदृष एक पाषाणमूर्ति को देखा है, जब वह उस पाषाणमूर्ति का स्पर्श करता है तो उसके स्पर्श से वह मूर्ति सजीव हो जाती है। इस प्रकार वासवदत्ता पुनः स्त्री रूप में आ जाती है, शाप का प्रभाव समाप्त हो जाता है। दोनों प्रेमी प्रसन्न होकर आलिंगनबद्ध हो जाते है और दो समर्पित हृदयों का मिलन होता है। बाद में मकरन्द भी वहाँ पहुँच जाता है। कन्दर्पकेतु सबके साथ राज्य लौट आता है और अलभ्य मनोवांछित सुखों का उपभोग करते हुए समय व्यतीत करता है।

वासवदत्ता का विश्लेषण—

वासवदत्ता में आलंकारिकों के अनुसार कथा के प्रायः सभी लक्षण इसमें दृष्टिगोचर होते हैं। इसमें कन्दर्पकेतु और वासवदत्ता की प्रेमकथा का सरस गद्य में वर्णन है। अतः इसमें श्रृंगार रस मुख्य रस है। रचना के आरम्भ में आर्याछन्द में सरस्वती, कृष्ण और शिव की स्तुति की गयी हैं। इसके अनन्तर खल-निन्दा, कवि प्रशंसा कवि द्वारा अपना संक्षेप में परिचय इत्यादि का काव्य में सफल सन्निवेश हुआ है। इसके बाद कथा शुरू होती है और निर्बाधगति से अन्त तक चलती रहती है। कथा के लक्षणों के अनुसार इसमें कोई उच्छवास नहीं है और वक्त्र या अपरवक्त्र छन्दों का भी समावेश नहीं है। इसकी कथा मानक से भिन्न अन्य पात्र (शुक) से कहलवायी गयी है। इसमें अवान्तर कथा (शुक प्रसंग) का प्रयास सफलता से किया गया है। जो बाद में मुख्यकथा से सम्बद्ध हो जाती है। इसके अतिरिक्त इसको कथा सिद्ध करने के लिए सर्वप्रमुख कारण है, इसका कवि कल्पनाप्रसूत होना। इसकी कथा का ऐतिहासिक इतिवृत्त से कहीं कोई सम्बन्ध नहीं है। अमर सिंह की परिभाषा के अनुसार भी यह कथा ही है क्योंकि यह कवि कल्पना पर आधारित प्रबन्ध है।

इस प्रकार 'वासवदत्ता' में उपलब्ध उपर्युक्त तथ्यों जो कि साहित्यशास्त्रियों के अनुसार कथा के ही लक्षण है इनके आलोक में यह कहा जा सकता है कि 'वासवदत्ता' निःसन्देह रूप से कथा ही है किसी भी रूप में आख्यायिका नहीं है। सुबन्धु नाना विद्याओं में नितान्त प्रवीण थे। इन्होंने श्लेष और उपमा के प्रसंग में रामायण, महाभारत तथा हरिवशंकी अनेक प्रसिद्ध तथा अल्प-प्रसिद्ध घटनाओं और पात्रों का प्रचुर निर्देश कर अपनी विद्वत्ता का पूर्ण परिचय दिया है। उनकी दृष्टि में सत्काव्य वही हो सकता है जिसमें अलंकार का चमत्कार, श्लेष का प्राचुर्य तथा वक्रोक्ति का सन्निवेश रूप से रहता है-**''सुश्लेषवक्रघटनापटु सत्काव्यविरचनमिव''।** इसी भावना से प्रेरित

होकर सुबन्धु की लेखनी श्लेष की रचना में ही विशेष पटु है। उन्होंने स्वयं अपने प्रबन्ध को **'प्रत्यक्षर-श्लेषमयप्रपज्जविन्यासवैदग्धनिधि'** बनाने की प्रतिज्ञा की थी और इस प्रतिज्ञा का पूर्ण निर्वाह उन्होनें इस गद्यकाव्य में किया हैं सुबन्धु वस्तुतः श्लेष कवि है । इन्होंने अभंग उभय प्रकार के श्लेषों का विन्यास कर अपने काव्य को विचित्रमार्ग का एक उत्कृष्ट उदाहरण बनाया हैं परन्तु उनके श्लेष कहीं-कहीं इतने अप्रसिद्ध, अप्रयुक्त तथा कठिन हो गये हैं कि उन्हें समझने के लिये विद्वानों के भी दिमाग चक्कर काटने लगते हैं। कहीं-कहीं तो बिना कोष की सहायता से पाठक एक पग भी आगे नहीं बढ़ता और उसके ऊपर 'कोशं पश्यन पदे-पदे' की उक्ति सर्वथा चरितार्थ होती है। प्रसन्नश्लेष का यह उदाहरण रोचक तथा कमनीय है—**''नन्दगोप इव यशोदयान्वितः जरासन्ध इव घटित-सन्धि-विग्रहः, भार्गवइवा सदा न भेगः, दशरथ इव सुमित्रोपेतः सुमन्त्राधिष्ठितश्च, दिलीप इव सुदक्षिणयान्वितों रक्षितगुष्च।''**(आशय है कि यशोदा से अन्वित नन्दगोप के समान वह राजा यश और दया से अन्वित था, जरा के द्वारा संगठित अंगवाले राजा जरासन्ध के समान वह सन्धि और विग्रह (युद्ध) का सम्पादक था।

सुबन्धु ने विरोध, उत्प्रेक्षा, उपमा आदि नाना अलंकारों से अपने काव्य को सजाया है, परन्तु इन सब में भी श्लेष के कारण ही चमत्कार उत्पन्न करने का प्रयत्न किया गया हैं अनेक उपमायें केवल शब्द साम्य के ऊपर ही प्रतिष्ठित है। 'रक्त-पाद' होने के कारण कवि ने वासवदत्ता की उपमा व्याकरण शास्त्र से दी है। अष्टाध्यायी का एक पाद (4/2) 'तेन रक्तं रागात्' सूत्र से समन्वित है। उधर नायिका के भी पैर रक्त वर्ण के हैं। इस शब्द -साम्य के कारण ही यहाँ उपमा का चमत्कार है। नायिका का स्वरूप अत्यन्त प्रकाशमान है और इसी कारण वह उस न्यायविद्या के समान बतलाई गई है जिसके स्वरूप का निस्पादन तथा ख्याति उद्योतकर नामक आचार्य के द्वारा सम्पन्न है (न्यायविद्यामिव उद्योतकरस्वरूपाम्)। इस प्रकार के कौतूहलजनक उपमाओं के द्वारा पाठकों का मस्तिष्क अवश्य पुष्ट होता है तथा कवि की विलक्षण चातुरों का भी पूर्ण परिचय मिलता है, परन्तु यह केवल शब्द क्रीड़ा है, जो पाठकों के हृदय को तनिक भी स्पर्श नहीं करती । इस खेलवाड़ में कौतुक का ही विशेष स्थान है । परन्तु जहाँ सुबन्धु ने अपने श्लेष-प्रेम को छोड़कर काव्य का प्रणयन किया है वहाँ की शैली रोचक है तथा सहृदयों का पर्याप्त मनोरंजन करती है। साधारणतया गद्यकवि पद्यों के लिखने में कृतकार्य नहीं होता, परन्तु सुबन्धु का दृष्टान्त इससे विपरीत है। वे कोमल पद्यों की रचना में सर्वथा समर्थ हैं सत्कविता की यह स्तुति बहुत ही कोमल शब्दों में विन्यस्त की गई— **अविदितगुणापि सत्कवि-भणितिः कर्णेषु वमति मधुधाराम्। अनधिगतपरिमलापि हि हरति दृशं मालती-माला।।** (जिनके गुणों का ज्ञान नहीं होता वह भी सत्कवियों की वाणी श्रोताओं के कानों में मधु की धारा उड़ेलती है। गंध से परिचय न मिलने पर भी, मालती पुष्पों की माला नेत्रों को बरबस खींचती है। वासवदत्ता की कल्पनाओं का प्रभाव पिछले कवियों पर भी पड़ा था। विरह दुःखों की अवर्णनीयता की यह अभिव्यंजना महिम्नः स्तोत्र के एक सुप्रसिद्ध पद्य की जननी है। सुबन्धु के शब्दों में-**''त्वत्कृते याऽनया यातनाऽनुभूता सा यदि नभः पत्रायते, सागरो मेलानन्दायते, ब्रह्म**

लिपिकरायते, भुजगपतिर्वा कथकायते तदा किमपि कथमप्यनेकर्युगसहस्रैरभिलिख्यिते कथ्यते वा'' (वासवदत्ता, पृ० 306-307) । (तुम्हारे लिए इसने जो यातना झेली है, वह यदि आकाश कागज बने, समुद्र दावात बने, ब्रह्मा, लिखने वाला हो अथवा सर्पो का राजा कथक का काम करे तब किसी तरह से हजारों युगों में लिखी या कही जा सकती है।) महिम्नःस्तोत्र का 'असितगिरिसमं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रें' वाला प्रख्यात पद्य इसी की छाया पर निर्मित बहुत रुचिर तथा रोचक है। सुबन्धु की यह प्रसन्न श्लेषमयी वाणी आलोचकों के लिए नितान्त आह्लादजनक है—**विषधरतोऽतिविषमः खल इति न मृषा वदन्ति विद्वांसः। यदयं नकुलद्वेषी स कुलद्वेषी पुनः पिशुनः।।** विद्वानों का यह कथन झूठा नहीं है कि खल विषधर सर्प से भी अत्यन्त विषम होता है। देखिए, विषधर तो केवल 'नकुलद्वेषी' ही होता है, अर्थात् वह नकुल से ही द्वेष करता है, परन्तु 'न+कुलद्वेषी' वह अपने कुल से कभी द्वेष नहीं करता, लेकिन खलों की विचित्र दशा होती हैं वह तो अपने कुल से भी द्वेष तथा विरोध करता है। इस पद्य का प्राण है 'नकुलद्वेषी' पद, जो सुभ्लग सभश् के कारण नितान्त सरस तथा सरल है।

कवि ने प्राकृतिक दृश्यों का सुन्दर वर्णन प्रस्तुत किया है, जो श्लेष के प्रपंच से रहित होने के कारण काफी मनोरंजक हैं। प्रभात का वर्णन इसका स्पष्ट उदाहरण है स्वरूप का निष्पादन तथा ख्याति उद्योतकर नामक आचार्य के द्वारा सम्पन्न है (विद्यामिव उद्योतकरस्वरूपाम्) इस प्रकार के कौतूहलजनक उपमाओं के द्वारा का मस्तिष्क अवश्य पुष्ट होता है तथा कवि की विलक्षण चातुरी का भी पूर्ण परिणाम मिलता है, परन्तु यह केवल शाब्दी क्रीड़ा है, जो पाठकों के हृदय को तनिक भी स्पर्श करती। इस खेलवाड़ में कौतुक का ही विशेष स्थान है। कवि ने प्राकृतिक दृश्यों का सुन्दर वर्णन प्रस्तुत किया है, जो श्लेष के प्रपंच से रहित होने के कारण काफी मनोरंजक है। प्रभात का वर्णन इसका स्पष्ट उदाहरण है। परन्तु यहाँ भी उपमा तथा उत्प्रेक्षा का साहित्य नहीं हैं सच तो यह है कि सुबन्धु के काव्य मं कलापक्ष का ही साम्राज्य हैं उनकी यह 'वासवदत्ता' उस विशाल सुसज्जित प्रसाद के समान है जिसक प्रत्येक कक्षा चित्रों से भूषित है तथा अलंकारों के प्राचार्य से जो दर्शकों की आँखों को हमेशा चकाचौध किया करता है। कुन्तक के द्वारा वर्णित 'विचित्र-मार्ग' का सबसे सुन्दर उदाहरण है। सुबन्धु की यही कृति। बाणभट्ट की यह आलोचना वस्तुतः श्लाघ्य तथा तथ्यपूर्ण है, जिसमें वासवदत्ता के द्वारा कवियों के दर्प को चूर्ण कर देने की बात कही गई है—

कवीनामंगलद्दर्पो नूनं वासवदत्तया। शक्त्येव पांडुपुत्राणां गतया कर्णगोचरम्।। सुबन्धु तथा बाणभट्ट की शैली में महान् अन्तर है। सुबन्धु का गद्य यदि 'अक्षराडम्बर' का साक्षात् रूप हैं, तो बाण का गद्य स्निग्ध, रसपेशल 'पांचाली' का भव्य प्रतीक है। सुबन्धु ने आँख मूँदकर सन्दर्भ का बिना विचार श्लेष का ही व्यूह खड़ा किया, परन्तु बाणभट् की दृष्टि वर्ण्य विषय तथा अवसर के ऊपर गड़ हुई है। वह जो लिखते है वह अवसर तथा सन्दर्भ से संघर्ष नहीं करता। स्निग्ध, रसपेशल तथा हृदयावर्जक गद्य का जीवित प्रतीक बाण सहृदयों के हृदय को स्पन्दित करता है, जब कि सुबन्धु का गद्य केवल मस्तिष्क से ही टक्कर खाता हुआ कथमपि प्रवेश पाता है। दण्डी से भी सुबन्धु का

पार्थक्य स्पष्ट है। दण्डी की तीव्र निरीक्षणशक्ति तथा यथार्थवादी शब्दविन्यास का अभाव 'वासवदत्ता' के लोकप्रिय न होने का पर्याप्त हेतु हैं सुबन्धु, बाणभट्ट तथा कविराज के साथ 'वक्रोक्ति-मार्ग' के एक निपुण कवि माने गये है अवश्य, परन्तु बाण का 'कादम्बरी' के सामने 'वासवदत्ता' का काव्य पण्डितों की गोष्ठी का ही केवल विषय है, विदग्धों की गोष्ठी से उसका सीधा सम्पर्क नहीं है।

वासवदत्ता का राजनीतिक पक्ष—

राजा— सुबन्धु ने सातों अंगों (राजा, अमात्य, कोश, दण्ड, मित्र, जनपद और पुर) में राजा को राज्य का सर्वप्रमुख अंग माना है। अतः समस्त प्रजा के लिए सुख शान्ति की व्यवस्था करना राजा का परम कर्त्तव्य मानते है। सुबन्धु राज्य के लिए राजा को सर्वाधिक महत्व प्रदान करते है। उनका विचार है कि जिस प्रकार आंखे शरीर के कल्याण साधन में प्रवृत्त रहती है। उसी प्रकार राजा अपने राज्य में सत्य और धर्म का प्रचार कर राष्ट्र के हित में तल्लीन रहते हुए दुष्टों को नियन्त्रण में रखकर अनिष्ट निवारण में लगा रहता है।

इन गद्य सात्यिकारों ने कई श्रेष्ठ राजाओं का चरित्र अपने समकालीन राजाओं के समक्ष रखा है जो राजा होते हुए भी अपने को प्रजा का सेवक समझते थे। राजा का कर्त्तव्य होता है कि वह अपने प्रजाओं का देखभाल करें। वासवदत्ता कथा में राजा के वर्णन में भी शैली का अत्यधिक साम्य है— **यत्र च शासति घरणिमण्डलं छलनिग्रहप्रयोगो वादेशु, नास्तिकला चार्वाकेषु, कष्टकयोगो नियोगेषु, परिवादों वीणासु..।** 'वासवदत्ता' में नायक कन्दर्पकेतु नायिका वासवदत्ता के प्रति आसक्त होकर जब पागल सा हो जाता है तो उसका मित्र मकरन्द उसे ठीक उसी प्रकार फटकारता है। जैसे- **यस्मिंश्च राजनि जितगति पालयति महीं चित्रकर्मसु वर्णसंकराः, रेतशु केशग्रहाः काव्येषुदृढ़बन्धा शास्त्रेषु चिन्ता..।** 'कादम्बरी' में महाश्वेता के प्रति आसक्त पुण्डरीक को उसका मित्र कपिंजल। कन्दर्पकेतु और पुण्डरीक के प्रत्युत्तर भी एक समान है। वादवदत्ता में कन्दर्पकेतु कहता है—**नायमुपदेशकालः। पच्यन्त इव मेऽगांनि। कृश्यन्त इवेन्द्रियाणि। भिद्यन्त इव मर्माणि। निस्सरन्तीव प्राणाः। उन्मूल्यन्त इव विवेकाः। नष्टेव स्मृति। अधुना तदलनमनया कथया।** हे मित्र (मकरन्द) हमारे समान (कामबाणविद्ध) लोगों का चित्त-व्यापार इन्द्र से युक्त (दैत्यमाता) दिति के समान सैकड़ों शाकों से व्याप्त होता है। मेरे अंग मानो पक रहे हैं। इन्दियां मानो खौल रही हैं। मर्मस्थल मानो फट रहे हैं। प्राणवायु निकल रहे है। कर्त्तव्याकर्त्तव्यनिवारण बुद्धि मानों जड़ से उखड़ रही हैं स्मरण करने की शक्ति मानों नष्ट हो रही है। अब इस कहने से क्या लाभ? यदि तुम बचपन से मेरे दुःख और सुख के साथी हो तो मेरे साथ आओ-ऐसा कहकर वह अनुचरों से छिपकर उस (मकरन्द) के साथ नगर (अथवा घर) से निकल पड़ा। पुत्री की इच्छा को जानने वाले श्रृंगारशेखर ने अपनी कन्या के स्वयंवर के लिए सम्पूर्ण भूमण्डल के राजकुमारों का सम्मेलन किया। तत्पश्चात् पति का चयन करने वाली वासवदत्ता मंच पर आरूढ़ हुयी। उस स्वयंवर सभा में कुछ (राजकुमार) नगर की वेश्याओं को जानने वाले स्तेयशास्त्र चौरशास्त्र) के प्रवर्तक के समान नागरिक आभूषणों से शोभायमान थे। दूसरे (राजकुमार) धृतराष्ट्र (अथवा कृष्ण), द्रौपदी और (गुरुद्रोणाचार्य अथवा

भीष्मादि) से युक्त पाण्डवों के समान सुन्दर नेत्र वाले और कृष्णागुरु के लेप से युक्त थे। अन्य (राजकुमार) दूर तक विस्तृत दिशाओं वाले शरदकालीन दिनों के समान अत्यन्त बढ़ी हुयी (वासवदत्ता की प्राप्ति) की अभिलाषा से सम्पन्न थे। कुछ अपने बल का प्रयोग करने की इच्छा से युक्त थे। कुछ पकड़ने के लिए पक्षियों का स्वर सुनने वाले बहेलियों के समान शुभ शकुन को सुनने वाले थे। कुछ मृगों के पीछे दौड़ने वाले शिकारी के समान सौन्दर्य के अनुसार (अर्थात् स्वयंवर) प्रवृत्त थे।

'कादम्बरी' में चाण्डाल कन्या का कथन है-हेस्वामी यह वैशम्पायन नाम का तोता सब शास्त्रों के अर्थों का ज्ञाता, राजनीतिक के प्रयोग में चतुर, पुराण और इतिहास की कथा कहने में कुशल, संगीत की श्रुतियों का ज्ञाता, काव्य, नाटक, आख्यायिका, आख्यान इत्यादि असंख्य सुभाषितों का अध्ययन करने और स्वयं रचना करने वाला, हँसी की बातें करने में कुषल, वीणा, बाँसुरी ओर मुरज आदि (वाद्यों) का अद्वितीय श्रोता, नृत्य प्रयोग के देखने में निपुण, चित्रकला में कुशल, जुआ खेलने में चतुर प्रेम कलह में रूठी हुयी स्त्री के लक्षणों का ज्ञाता और समस्त पृथ्वीतल का रत्नरूप है और स्वामी समुद्र की भांति समस्त रत्नों के पात्र है, यह मानकर उसे (वैशम्पायन शुक को) लेकर हमारे स्वामी की पुत्री स्वामी के चरणमूल में आयी है। अतः आप इसे अपना ले। यह कहकर पिंजरे को राजा के सामने रखकर वह (पुरुष) दूर हट गया। जिसके पृथ्वीमण्डल का शासन करने पर वाद विवादों में ही कपट और निग्रह का प्रयोग होता था। प्रजाओं में कपट और बन्धन दण्ड का प्रयोग नहीं था। प्रजाओं में दरिद्रता नहीं थी। प्रजाओं में नीच का संसर्ग नहीं था। प्रजाओं में उस क्षत्रिय राजा से किसी की विरोध नहीं था। चिन्तामणी (अपने चरित से) सभी राजाओं को तिरस्कृत कर देने वाला राजा था। गन्धर्वों को आनन्दित करने से विरत न रहने वाले पर्वत के समान उत्सव कराने वाला, घोड़ों को आनन्दित करने से विरत नहीं था।

राज्य—वासवदत्ता के अध्ययन से यहां स्पष्ट हो जाता है कि सुबन्धु समाज की रक्षा के लिए राज्य को अनिवार्य व्यवस्था के रूप में स्वीकार करते है।–**छलनिग्रहप्रयोगो वादेषु, चार्वाकेषु कण्टकयोगोनियोगेषु परीवादो वीणासु.. नेत्रात्पाटनं मुनीनां द्विजराजविरूद्धता पंकजानां...।** राजा चिन्तामणी के शासकाल में छल, जाति, और निग्रह (स्थान) का प्रयोग वाद-विवाद में ही होता था, प्रजाओं में छलपूर्वक शूद्रादि जातियों का निग्रह नहीं होता था। नैतिकता चार्वाकों में ही थी, प्रजाओं में नास्तिकता (दरिद्रता) नहीं थी। पारस्परिक संयोगों में ही कण्टक रोमांच (सूची के अग्रभाग) का सम्बन्ध कभी नहीं होता था। मुनि नामक वृक्षों में ही वल्कल (नेत्र) उतारने का कार्य होता था, प्रजाओं में किसी को नेत्र (आँख) निकालने का दण्ड नहीं दिया जाता था। कमलों में ही द्विजराज (चन्द्रमा) के प्रति विरूद्धता पायी जाती थी, प्रजाओं में अपने राजा के प्रति विद्रोहाचरण नहीं पाया जाता था।

राजा श्रृंगारखेर के राज्य में श्रृंखलाबन्ध केवल काव्यों में ही पाया जाता था प्रजा को श्रृंखलाबन्ध (जंजीर से बांधना) नहीं किया जाता था। प्रजा में किसी का आक्षेप नहीं पाया जाता था।

दुर्वर्ण (चाँदी) का प्रयोग कटकादि भूषणों में ही पाया जाता था, स्त्रियों में दुर्वर्ण नहीं पाया जाता था। गान्धार राग का विच्छेद रागों में ही होता था, स्त्रियों में गान्धार राग का विच्छेद नहीं होता था। राजा के शासन में पितृ कार्यों में ही साड़ का छोड़ना होता था, प्रजाओं में धर्म का परित्याग नहीं था। प्रजाओं का कन्या से संगमन और तुला पर आरोहण नहीं था। योगों में शूल और व्याघात चिन्तन होता था, प्रजाओं में दाहिने और बांए हाथ पैर इत्यादि को काटना नहीं था। प्रजाओं में दान का व्यवधान नहीं था। प्रजाओं में खजाना का अभाव नहीं था। 'वासवदत्ता' में कन्दर्पकेतु पिता के आज्ञा बिना ही घर से मित्र मकरन्द के साथ निकल जाते है।

राजा का कर्त्तव्य— सुबन्धु के अनुसार राजा राज्य का सर्वोच्चाधिकारी माना गया है। अतः राज्य में सब प्रकार के विघ्नों का निवारण करते हुए सुख शान्ति करना उसका परम कर्त्तव्य है। प्रजा का पुत्रवत् पालन करते हुए उसको सर्वांगीण विकास के अवसर प्रदान करना भी राजा का प्रमुख कार्य बताया गया है। राजा प्रजा की रक्षा के कार्य में संलग्न हो, अपने राज्य में निवास करने वाले सब लोगों को प्राणों के समान एवं प्रिय पुत्रों के समान समझकर सदा सावधानी के साथ उनकी रक्षा करता हैं वह अक्षय कीर्ति पाकर अन्त में ब्रह्मलोक की प्राप्ति करता है।

वासवदत्ता का कलात्मक पक्ष—

स्थापत्य कला—विद्वानों ने कला के दो भेद उपयोगी तथा ललित कला माने है। ललित कला के भी दो भेद है-मूर्तकला और अमूर्त कला। स्थापत्य कला वस्तुतः मूर्त कला है। इसलिए यह संगीत कला और कविता से श्रेष्ठ ठहराई गयी है। यह कला, चाक्षुष सौन्दर्य बोध से सम्पन्न होने के कारण अमूर्त कला की अपेक्षा संप्रेषणशीलता की तीव्रता के लिए रहती है। यह कला सहज, सरल, सार्वजनिक तथा ग्राह्य होती है। कला-मर्मज्ञ के साथ ही कला-अनभिज्ञ व्यक्ति भी स्थापत्य कला की विविध सौन्दर्य उर्मियों को देखकर मुग्ध हो सकता है। भारत में स्थापत्य कला की अपनी मौलिक विशेषताएं हैं। भारत अनादिकाल से धार्मिक एवं दार्शनिकों का देश रहा है। इस देश में जीवन के वाह्य सौन्दर्य से हटकरण मनुष्य की आन्तिरिक भावनाओं पर अधिक मनन चिन्तन हुआ है। इसलिए यहां की स्थापत्यकला में भी इनकी अभिव्यक्ति सहज स्वरूप में हुई हैं देव मन्दिर के निर्माण से लेकर राजमहलों तक यही नहीं साधारण मनुष्यों के गृहों में, अनेक विदेशी स्थापत्य कलाओं को अपनी कुक्षि में पचाये हुए धर्म दर्शन का अद्भूत समन्वय यहां की स्थापत्य कला में मुखरित हुआ है। वासवदत्ता की कथा में स्थापत्य कला का बहुत परिचय मिलता है।

प्राचीन स्थापत्य कला के केन्द्र है-पौराणिक ऐतिहासिक। प्रायः राजभवनों और राजनगरों में निर्मित भवनों में ही स्थापत्यकला अधिक मुख हुयी है। राजतन्त्र में राजा, अमात्य, मैत्री, सचिव, सेनापति, राजपुरुष, कवि, पण्डित, आचार्य, पुरोहित नगर निवासी आदि सभी राजधानी में रहते थे। इनसे नगर (राजधानी) की शोभा में अभिवृद्धि होती थी। राजप्रसाद की अपनी भव्यता होती थी। राजपरिवार के प्रायः प्रत्येक सदस्य के लिए अत्यन्त सुसज्जित और आकर्षक ढंग से ये भवन निर्मित होते थे। नगर में यातायात के लिए राजमार्ग की व्यवस्था थी। वासवदत्ता में बने विविध भवनों का

विस्तार चाक्षुष बिम्ब के रूप में प्रस्तुत किया हैं राजभवनों और राजनगरों में निर्मित भवनों में ही स्थापत्यकला अधिक मुखर हुयी है। राजतंत्र में राजा, अमात्य, मंत्री, सचिव, सेनापति, राजपुरुष कवि पण्डित, आचार्य, पुरोहित, नगर निवासी आदि सभी राजधानी में रहते थे। इनमे नगर (राजधानी) की शोभा में अभिवृद्धि होती थी। राजपरिवार के प्रायः प्रत्येक सदस्य के लिए अत्यन्त सुसज्जित और आकर्षक ढंग से ये भवन निर्मित होते थे। राजा के निवास के लिए जो भवन निर्मित होता था उसको राजभवन या राजकीय भवन राजमहल, राजमन्दिर, राजप्रसाद आदि संज्ञाओं से अभिहित किया गया है। इन राजमहलों में स्थिति एक राज्यसभा या राजसभा होती थी। राजधानी में स्थापत्य कला की दृष्टि से राजभवन के अतिरिक्त अन्तःपुर या अन्तःपुर का द्वार, नगर भवन, मंत्रणागृह, कलाभवन, विलास भवन या उल्लास भवन, राजकीय घाट, राजकीय मंदिर, राजकीय उद्यान, राजद्वार, कारागार, रंगशाला, राजमार्ग आदि विवेचनीय है। वासवदत्ता कथा में राजधानी का वर्णन करते हुए वे कहते है- (कन्दर्पकेतु ने वासवदत्ता के भवन को देखा) जो एक-के अन्त पर जड़े हुए सुर्वण, मोती, नीलमणि और पद्मराग मणियों के कारण मानो वासवदत्ता के देखने के लिए आये हुए देवतागणों से युक्त परकोटो से घिरा हुआ था। जो वायु द्वारा हिलायी गयी आकाशरूपी वृक्ष की युश्यमंजरी के समान अमरावती की शोभा को तिरस्कृत करती हुयी पाटकाओं से शोभायमान था।

वासवदत्ता का भवन अनेक नदियों से सुशोभित था जो नदियां सुवर्णशीलाओं से युक्त थी जो कर्पूर, केसर, चन्दन, इलायची और लवंग की सुगन्ध को धारण करने वाली थी। तट के समीप में रखे गये स्पार्तक शिलाओं पर सुखपूर्वक बैठे हुए न जाने पड़ते कबूतरों से युक्त थी, जो तट पर स्थित वृक्षों के गिरते हुए पुष्पों से गुच्छेदार जल वाली थी। कर्पूर समूह से विरचित पुलिनों पर बैठे हुए राजहंसों के कलरव से राजहंसी का अनुमान हो रहा था। राजा की चित्तवृत्ति के समान छोटी-छोटी नदियों को तिरस्कृत करने वाली अनेक नदियों से सुशोभित भवन को देखा।

चित्रकला— साधारणतः चित्र दो प्रकार होते है।- 1. भित्ति चित्र 2. प्रतिकृति। प्राचीन भारत में प्रथम प्रकार के चित्र कंदराओं, अजन्ता की गुफाओं एवं प्रासादों की दीवारों पर मिलते है तथा द्वितीय प्रकार के चित्र एक व्यक्ति अथवा अनेक व्यक्तियों की प्रतिकृति को कहते है। इसमें प्रकृत व्यक्ति बिंब का काम करता है। उपलब्ध ऐतिहासिक सामग्री के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारत की चित्रकला उसकी अन्य कलाओं की भांति अति प्राचीन है। इनमें से अधिकांश प्रस्तुरयुगीन है। भारतीय जनजीवन में राजा महाराजाओं से लेकर पेशेवर चित्रकार तक ये चित्र बनाते तथा प्रासादों को सजाते थे। विश्व प्रेम में शूरसेन अपने कमरे में देवताओं की बड़ी-बड़ी तस्वीरे तथा रूपसेन श्रीराम पंचायत, अयोध्यानरेश और अयोध्या के दृश्यों के चित्र लगाता है। वासवदत्ता में कन्दर्पकेतु स्वप्न में वासवदत्ता को चित्रित पाता है। जय पराजय में 'भारमाली' अपने प्रेमी का चित्र रखती है जो स्वप्न में गिरकर भावी आपत्ति की सूचना देता है। 'विश्व प्रेम' का भोग विलास में डूबा राजा चन्द्रसेन अपने कमरे में सुन्दरी स्त्रियों की तस्वीरें तथा राजयोग में चन्द्रसूदन अपने कमरे में भड़कदार बाजारू चित्र टांगता है।

मूर्तिकला— संसार में मूर्ति प्रतीक जितना प्रभावी सिद्ध हुआ है, उतना अन्य कोई प्रतीक नहीं। भारत में मूर्तिकला प्राड. मौर्य युग से लेकर आधुनिक युग तक के इतिहास को अपने कृति में आत्मसात किये हैं, इसलिए विद्वानों ने मूर्तिकला को प्राङ्.मौर्य, मौर्य, शुगं, शक, कुशाण, गुप्त पूर्वमध्य, उत्तरमध्य प्रागाधुनिक, वर्तमान मूर्तिकला की शैलियों के नाम से विभाजित किया है। कहीं अनेक रूपों वाली विष्णु की मूर्ति के समान अनेक पशुओं से व्याप्त थी।

संगीत-नृत्य— संगीत, गायन, नर्तन और वादन के समाहार को कहते है। गद्यकाव्यों में गायन नर्तन एवं वादन का समावेश अतिप्राचीन काल से होता आया है। कथाकारों ने भी संगीत को प्रचुरता के साथ प्रयुक्त किया है। इन गद्यकारों की भाषा आनुप्रासिक संगीत और लयात्मकता से युक्त है एक मधुर संगीतमय नाद की अनुभूति कराती है। इस सन्दर्भ में मलय वायु सम्बन्धी वर्णन द्रष्टव्य है- **कन्दप्रकेलिसम्पल्लम्पलाटीललाटतटलुलितालक धम्मिल्लभारबकुलकुसुम-परिमल मेलन समृद्धमधुरिमगुणः, कामकला कलापकुषल चारूकर्णातसुन्दरीस्तनकलाषधुसृण धूलिपटलपरिमलामोदवाही, रणरकरसितापरान्तकान्त कुनतलोल्लनसंक्रान्त परिमलमिलितालिमालामधुरतरझंकर वमुखरितनभः स्थलः.................................(146/148)** वह (मलयपवन) सुरतक्रीड़ा विलास में आसक्त लाटप्रदेश की रमणियों के ललाटपटल पर लटकते हुए केशों के जूड़े में लगे हुए मौलश्री के पुष्पों की सुगन्ध के संयोग से बढ़े हुए मनोहर गुणों वाला था। वह कामकला समूह मे निपुण और सुन्दर कर्णाटक प्रदेश की युवतियों के स्तनकलश पर लगाये गये कुंकुमों ने धूलिकणों के सम्पर्क से अत्यन्त मनोहर गन्ध को धारण करने वाला था। वह उत्सुकता से उत्पन्न अनुराग वाली अपरान्त देशकी ललनाओं के केशों के हिलने के कारण सवंमित गन्ध से एकत्रित भ्रमरपंक्ति की मधुर गुंजार से आकाशमण्डल को ध्वनित करने वाला था। वह नवयौवना के अनुराग से चंचल केरल प्रदेश की युवतियों के कपोलों पर पत्रावली बनाने में कुशल था। वह चौसठ कलाओं में निपुण तथा सौन्दर्य सम्पन्न मालवप्रदेश की युवतियों के नितम्ब मण्डल की धीरे-धीरे दबाने में चुतर था। वह काम क्रीड़ा के परिश्रम से थकी हुयी आन्ध्र प्रदेश की कामनियों के निविड विशाल स्तनों के पसीने की बूंदों के समूह से शीतल था। ऐसा मलयपवन बह रहा था। जो मंच चलते हुए काले अगरू की सुगन्ध से प्रसन्न मनोहर भ्रमरों के समूह के गुंजार से गुंजरित था, जो (दासियों की) प्रसन्नता के कारण हंसी के किरण समूह से शुभ्रता सम्पन्न था। जो अनेक प्रकार के परिहास कथन के समूह में कुलश और सजे-धजे लोगों से व्याप्त था जो जलते हुए गूगुल इत्यादि सुगन्धित पदार्थो की सुगन्ध से आकर्शित नगर-उपवनों के भ्रमरसमूह से व्याप्त था जो नन्द नाम के अर्जुन के रथ की ध्वनि से ध्वनित दिषाओं वाले अर्जुन के युद्ध के समान पादध्वनि से ध्वनित दिषाओं वाला था। जो (अन्य) राजाओं द्वारा दिये गये उपहारों से सम्पन्न राजभवन के समान राजा द्वारा दिये गये उपहारों से समन्वित था। आदर्शवादी व्यक्तियों के लिए कुछ सीमा तक गीत नृत्य आदि कलाएं भोग की सामग्री मानी जाती हैं। विशेषकर उस अवस्था में जब देश परतन्त्रता की बेड़ी से जकड़ा हुआ है। उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि संगीत-

नृत्य तथा नाट्यकला आदि के प्रति पर्याप्त अभिरूचि प्रदर्शित की है। ये नाटककार प्रायः सामन्ती संस्कृति स्र प्रेरित एवं प्रभावित रहे है और दूसरी ओर ये कला संचेतना से परिपूरित भी प्रतीत होते हैं उनके नाटक वस्तुतः आधुनिक कला चेतना के प्रमाण है।

पाककला—वासदवदत्ता में भोजन तथा भोजन के प्रकार का विवरण मिलता हैं मकरन्द अपने मित्र कन्दर्पकेतु के लिए फल-फूल खाने के लिए लाता है जब दोनों प्रेमी भागते हुए विन्ध्य जंगल मे पहुंचते है और थककर वह लताकुंज में सो जाते है। प्रातःकाल जब कन्दर्पकेतु सोया ही था वासवदत्ता उसके लिए फल इत्यादि लाने जंगल में चली जाती है।

प्रसाधन, वेश-भूषा, आभूषण एवं कुण्डल— गद्यकाव्यकारों ने किसी जाति तथा वर्ग विशेष की वेशभूषा की विस्तृत चर्चा नकरके मात्र संकेत किया है, जैसे-स्वतंत्र युवतियां सुरतोचित वेश, राजकुमार के वेशमें कन्दर्पकेतु, राजकुमारी के वेश में वासवदत्ता मित्र के वेश में मकरन्द, पथिक के वेश में किरात, पक्षी के वेश में शुकसारिका सुन्दर पोशाक पहने हुए दूर-दूर से आये हुए राजकुमार स्वयंवर में सुशोभित हो रहे है।

प्राचीन काल से ही व्यक्ति सौन्दर्य प्रेमी रहा है। वह शरीर को सुन्दर और आकर्षक बनाने के लिए विभिन्न प्रकार के वस्त्रों के अतिरिक्त अनेक प्रकार का प्रयोग करता है।

उत्तंक नामक वेद का शिष्य, अपनी गुरुपत्नी के लिए जनमेजय के यहां मणिकुण्डल मांगने जाता हैं वासवदत्ता में कन्दर्पकेतु कुण्डल धारण करता है। इसी प्रकार 'कुलीनता' में प्रत्येक पुरुष पात्र कुण्डल धारण करता है। इसमें संदेह नहीं किया जा सकता है कि कुण्डल भारत का अतिप्राचीन अलंकार है। संस्कृत महाकाव्यों में यह कुण्डल अत्यन्त लोकप्रिय आभूषण रहा है जिसे स्त्री पुरुष दोनों धारण करते हैं वाल्मीकि रामायण में अयोध्या का तो प्रत्येक नागरिक कुण्डल धारण करता है। कवि कालिदास ने भी कुण्डल पहनने का चित्रण किया है। हार, केयूर, वलय, मुद्रिका तथा नुपूर-केयूर, नूपुर, भुजबन्ध, कंकण का व्यवहार प्राचीनकाल से शुरू हो गया था। हनुमान जी ने लंका जाते समय देखा कि मैनाक पर्वत पर रहने वाली स्त्रियां गले में हार, पैरों में नूपुर, भुजाओं में केयूर धारण करके आकाश में पति के साथ विस्मिता होकर मुस्करा रही थी। वलय तो कालिदास में इतना प्रिय है कि उनके द्वारा चित्रित नगर निवासनी पहनती ही थी। आश्रमवासिनी शकुन्तला धातु के स्थान पर कमल नाल का वलय बनाकर पहनती है। इसी प्रकार आभूषणों में मुद्रिका कम प्राचीन नहीं है। हाँ, यह अवश्य है कि पहले इसका नाम मुद्रिका (अंगूठी) न होकर अंगुलीय था। उपर्युक्त आभूषणों का उल्लेख सबसे अधिक सेठ गोविन्ददास ने किया है। वासवदत्ता में बाजूबन्द (बांह में पहनने वाले आभूषणाविशेष), गले में हार, माला से युक्त, केशविन्यास पैरों में नूपुर का उल्लेख किया गया है।

पेयपदार्थ— भारतीय जन-जीवन में 'मद्य' पेय के रूप में अपनाया जाता रहा है तथा इसके साथ ही, इस पेय को वर्जित भी किया गया है। मनु ने इसकी तुलना पाप से की है। महाभारत में कहा गया है कि इसके पान से लज्जा और बुद्धि नष्ट हो जाती है तथा मद्यप कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य का ध्यान छोड़कर इच्छानुसार कार्य करने लगता है। वह विद्वानों का आश्रय छोड़कर पाप को प्राप्त होता है और

रूखा, कड़वा भयंकर बोलने लगता है। वासवदत्ता में भी सुरापान बतलाया गया हैं राजा लोग मद्यमापन करते थे। राजा के महल में रहने वाले प्रजाओं को भी सुरापान करते पाया गया है।

अन्य मादक पदार्थ— मद्य को छोड़कर मानव अनेक नशीली वस्तुओं का प्रयोग करता है। स्कन्दगुप्त में में धातुसेन कहता है-चाणक्य कुछ भांग पीता था। उसने लिखा है कि राजपुत्र भेड़िए है, इसके पिता को दैव सावधान रहना चाहिए। विशाल में महापिंगल तो पूर्णतः भंगड़ी लगता है। विशाख की रानी तरला व्यंग्य में अपने पति से कहती है-इस बुढ़ापे में प्रेम की अफीम खाने चला है। वासवदत्ता में प्रेम बन्धनहीन चित्ततत्त्व की आनन्दमयी स्थिति है।

2.4 सारांश:-

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से आपने सुबन्धु के बारे में विस्तृत रूप से पढ़ा। आपने इस इकाई के अध्ययन से जाना कि संस्कृत गद्य साहित्य में सुबन्धु का शीर्षस्थ स्थान है । सुबन्धु ही सर्वप्रथम लेखक हैं जिनका ग्रन्थ अलंकृत शैली में निबद्ध गद्य का उत्कृष्ट उदाहरण है। उनकी एकमात्र कृति वासवदत्ता है। श्रृंगार रस प्रधान यह कथा काल्पनिक कथानक पर आधारित है । सुबन्धु कालिदास तथा वात्स्यायन से अवान्तरकाली हैं क्योंकि इन्होंने 'वासवदत्ता' में इन दोनों कवियों का उल्लेख किया है। सुबन्धु की इस वासवदत्ता का सम्बन्ध प्राचीन भारत की प्रसिद्ध आख्यायिका वासवदत्ता तथा उदयन की प्रणय कहानी से कुछ भी नहीं है । यह पूरा कथानक कवि के मस्तिष्क की उपज है। केवल नायिका का अभिधान प्राचीन है । वासवदत्ता कथा में समाजशास्त्री दृष्टि से सामाजिक संचेतना मुख्य विचारणीय बिन्दु है । पारिवार सामाजिक जीवन का प्रामाणिक दस्तावेज है। इसमें समाज के अन्दर बनते बिगड़ते मानव मूल्यों को अंकित करने का स्तुत्य प्रयास किया है । विवाह संस्था द्वारा परिवार को स्थायी रूप प्रदान किया जाता है। इसमें प्रेम कथाएँ शुद्ध लौकिक प्रेम का अदर्शन उपस्थित करती है वासवदत्ता विशुद्ध रूप से प्रेमकथा है । जिसका अध्ययन आप इस इकाई के माध्यम से बड़ी ही सरलता पूर्वक करेंगे ।

2.5 शब्दावली:-

पूर्ववर्ती	-	पहले से विद्यमान
सारिका	-	सुक
जीवनवृत्ती	-	जीवन से सम्बन्धित
अवान्तरकाली	-	बाद के समय
प्राच्य	-	प्राचीन

बोध प्रश्नः-

अभ्यास (2)

(1). बहुविकल्पीय प्रश्नः-

1. वासवदत्ता है-

(क) नाटक (ख) आख्यायिका

(ग) नाटिका (घ) कथा

2. सुबन्धु के काल की पूर्वसीमा है-

(क) 385 से 414 ई० (ख) 263 से 281 ई०

(ग) 400 से 480 ई० (घ) 606 ई०

3. श्रृंगारशेखर में श्रृंखलाबन्ध किया जाता था-

(क) प्रजा का (ख) सेनापति का

(ग) काव्यों का (घ) कवियों का

4. वासवदत्ता नायक/नायिका हैं -

(क) उदयन/ वासवदत्ता (ख) कन्दर्पकेतु/ वासवदत्ता

(ग) उदयन/मालती (घ) दुष्यन्त/ वासवदत्ता

5. कौन सी रचना संस्कृत साहित्य में प्रथम कथा के नाम से जानी जाती है-

(क) वासवदत्ता (ख) हर्षचरित

(ग) दशकुमारचरित (घ) कादम्बरी

(2). रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

(क) गद्यं.. निकषं वदन्ति।

(ख) गद्य साहित्य के प्रमुख रत्नत्रयी.......................बाण, दण्डी है।

(ग) डॉ० कपिलदेव द्विवेदी ने सुबन्धु का काल ....माना है।

(घ) प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रपंचविन्यासवैदग्ध्य ....।

(ड़) राजा चिन्तामणी के पुत्र का नाम राजकुमार ....है।

(3). निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तर पर सही (√) गलत उत्तर पर (×) का चिन्ह लगाइए—

1. सुबन्धु रचित गद्यकाव्य कादम्बरी है। ( )
2. वासवदत्ता में सुबन्धु ने वैदर्भी रीति का प्रयोग किया है। ( )
3. कन्दर्पकेतु एवं वासवदत्ता के प्रेम एवं विवाह का वर्णन वासवदत्ता में किया है। ( )
4. कन्दर्पकेतु नामक नायक का वर्णन वासवदत्ता में है। ( )

2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर:-

अभ्यास प्रश्न (1)

(1). बहुविकल्पीय प्रश्न:-

(1) ख (2) ग (3) घ (4) क (5) क (6) क (7) ख

(2).

(क) कन्दर्पकेतु

(ख) कन्दर्पकेतु

(ग) भित्तिचित्र और प्रतिकृति

(घ) गौड़ी

(3)-

1. गलत
2. सही
3. सही
4. सही

अभ्यास प्रश्न (2)

(1). बहुविकल्पीय

(1) (घ) (2) (क) (3) (ग) (4) ख (5) क

(2).

(क) कवीनां

(ख) सुबन्धु

(ग) 600 ई॰ के लगभग

(घ) निधि प्रबन्धम्

(ड़) कन्दर्पकेतु

(3)-

1. गलत
2. गलत
3. सही
4. सही

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1.संस्कृत साहित्य का इतिहास – आचार्य बलदेव उपाध्याय, प्रकाशक- शारदा निकेतन, कस्तुरवानगर, वाराणसी।

2.संस्कृत साहित्य का इतिहास – डॉ0 उमाशंकर शर्मा 'ऋषि' चौखम्बा भारती अकादमी, वाराणसी।

3. संस्कृत साहित्य का बृहद इतिहास– आचार्य बलदेव उपाध्याय, उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ।

4. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास– डॉ0 कपिल देव द्विवेदी, रामनारायणलाल, प्रयागराज

2. 8 उपयोगी पुस्तकें:-

1. वासवदत्ता– सुबन्धु

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. सुबन्धु के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व का विवेचन कीजिए।
2. सुबन्धु के जीवन परिचय एवं समय पर प्रकाश डालिए।
3. वासवदत्ता की कथा के कथानक पर प्रकाश डालिए।
4. वासवदत्ता का राजनीतिक परिचय दीजिए।
5. सुबन्धु की भाषा शैली पर प्रकाश डालिए।

खण्ड – प्रथम, इकाई 3 – बाणभट्ट

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 गद्य कवि बाणभट्ट का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व

3.3.1 बाणभट्ट का जीवन परिचय

3.3.2 बाणभट्ट का स्थितिकाल

3.3.3 बाणभट्ट की भाषा शैली

3.3.4 बाणभट्ट का कर्तृत्व

3.4 बाणभट्ट की कृतियों का कथासार

3.5 सारांश

3.6 शब्दावली

3.7 बोधप्रश्नों के उत्तर

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3. 9 उपयोगी पुस्तकें

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना:-

प्रिय शिक्षार्थियों!

गद्य एवं पद्य काव्य से सम्बन्धित यह प्रथम खण्ड की तृतीय इकाई है। इससे पूर्व की इकाई में आपने सुबन्धु के व्यक्तित्व, कर्तृत्व और भाषाशैली का अध्ययन किया। अब आप बाणभट्ट के व्यक्तित्व, कर्तृत्व और भाषाशैली उनके ग्रन्थों का विस्तार पूर्वक अध्ययन करेंगे। गद्व्क्तायांवाचि- अर्थात् गद् धातु का अर्थ है - शुद्ध बोलना। यत् प्रत्यय लगने के उपरान्त गद्य शब्द निष्पन्न है। संस्कृतसाहित्य मतानुसार काव्य के मुख्यतया दो रूपों में (श्रव्य और दृश्य) प्रथम रूप के प्रभेद रूप में 'गद्य' को ग्रहण किया गया है। काव्य और नाटक के क्षेत्र में जो स्थान तथा कीर्ति कालिदास को प्राप्त है वही गद्यकाव्य के क्षेत्र में बाणभट्ट को प्राप्त है। कवित्व की दृष्टि से बाणभट्ट तथा उनके द्वारा रचित कथा साहित्य ने संस्कृत-साहित्य का गौरव बढ़ाता है।

बाणभट्ट - संस्कृत गद्य-साहित्य में सर्वाधिक प्रतिभाशाली गद्यकार हैं। बाणभट्ट ने परम्परा से हटकर अपनी रचना में अपना पूर्ण परिचय दिया है। बाणभट्ट हर्षवर्द्धन के दरबार में रहते थे। महाकवि बाणभट्ट की तीन गद्य रचनायें मानी जाती हैं। मुकुटताडितक नाम का नाटक, कादम्बरी नाम की कथा तथा हर्षचरित नाम की आख्यायिका है। यह आठ उच्छवासों में विभक्त है।

बाणभट्ट की दूसरी रचना कादम्बरी है। यह कवि-कल्पित कथानक पर आश्रित होने के कारण कथा नामक गद्य-काव्य है। काव्यशास्त्र के सभी उपादानों रस, अलंकार, गुण, रीति आदि का औचित्यपूर्ण प्रयोग करने के कारण कादम्बरी बाण की उत्कृष्ट गद्य रचना है। विषय की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए वर्णन-शैली अपनाई गई है। इसे पाञ्चाली शैली कहा जाता है जिसमें शब्द और अर्थ का समान गुम्फन है। पात्रों का सजीव निरूपण है। रस का समुचित परिपाक हुआ है। मानव जीवन के सभी पक्षों को दर्शाया गया है। आलोचकों ने मुक्त कण्ठ से इसकी प्रशंसा की है तथा कह दिया है कि बाण ने पूरे संसार को जूठा कर दिया है- **''बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्।''** उनके वर्णन से कुछ भी बचा नही है। निःसंदेह बाणभट्ट का हर्षचरितम् एवं कादम्बरी संस्कृत गद्य साहित्य के दो बहुमूल्य रत्न है।

अत: बाणभट्ट नामक इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप बाणभट्ट के व्यक्तित्व एवं कृतित्व, उनकी रचनाओं के बारे में विस्तृत अध्ययन करेंगे।

3.2 उद्देश्य:-

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप–

- ❖ बाणभट्ट के व्यक्तित्व के विषय में अध्ययन कर सकेंगे।
- ❖ बाणभट्ट की रचनाओं के विषय में सरलता पूर्वक परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

- ❖ उनकी भाषाशैली के विषय में आप अध्ययन कर सकेंगे।
- ❖ बाणभट्ट की रचनाओं को समग्र रूप से अध्ययन करने की प्रेरणा प्राप्त कर सकेंगे।
- ❖ बाणभट्ट के समय के विषय में आप अध्ययन करेंगे।

3.3 गद्य कवि बाणभट्ट का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व:-

संस्कृत साहित्य के रचनाकारों में महाकवि बाणभट्ट ही उन प्रतिष्ठित कवियों में हैं जिनका विस्तृत जीवन परिचय हमें उनके शब्दों में ही मिलता है। ये वात्स्यायन वंश के पण्डित कुबेर के घर जन्मे। इनके पूर्वज शोण नदी के किनारे प्रीतिकूट नगर में निवास करते थे। इनके पिता का नाम चित्रभानु और माता का नाम राजदेवी था। बाणभट्ट का एक पुत्र भूषणभट्ट हुआ कहीं कहीं इसका नाम पुलिन्दभट्ट भी मिलता है। शैशवकाल में ही इनकी माता का स्वर्गवास हो गया था और 14 वर्ष की आयु तक इनके पिता की भी मृत्यु हो गई थी। ये समृद्ध परिवार से थे युवावस्था में मित्रमण्डली के साथ स्वयं ही संसार भ्रमण के लिए निकल गए। इन्होंने अनेक देशों की यात्रा कर विशिष्ट ज्ञान प्राप्त किया जिसका प्रभाव इनकी कृतियों पर स्पष्ट दिखाई पड़ता है। बाणभट्ट के स्थितिकाल के विषय मे किसी प्रकार का कोई सन्देह नहीं है क्योंकि हर्षचरित में अपने विषय में बताते हुए इनका कथन है कि ये सम्राट् हर्षवर्धन के समकालीन और सभापण्डित थे।

3.3.1 बाणभट्ट का जीवन परिचय:-

बाणभट्ट के जीवन के सम्बन्ध में पर्याप्त जानकारी उनके ग्रन्थ हर्षचरित में प्रारम्भिक उच्छवासों से मिलती है। वे वत्सगोत्रीय ब्राह्मकुल में उत्पन्न हुए थे। इनके पिता का नाम चित्रभानु और माता का नाम राजदेवी था। बाण की माता का निधन उनकी वाल्यावस्था में ही हो गया था। बालक बाणभट्ट का पालन-पोषण उनके पिता चित्रभानु ने किया। जब बाण की आयु चौदह वर्षकी थी। तभी दुर्भाग्य से उनके पिता का भी देहावसान हो गया। इसके पूर्व ही उनके पिता ने बाण के सभी ब्राह्मणोचित संस्कार यथासमय शास्त्रसम्मत रीति से अपनी कुलपरम्परा के अनुसार सम्पन्न करा दिया था। बचपन में ही बाण के सिर से माता-पिता के हाथों की छाया उठ जाने से बाण अत्यन्त सन्तप्त हो गये किन्तु काल-प्रभाव से जब शोक कम हुआ तो बाण में सहज चपलता पूरी तरह घर कर गयी। पिता, पितामहादि के द्वारा अर्जित और संचित धन-वैभव प्रभूत मात्रा में था। अतः बाण की मित्र-मण्डली खूब जम गयी और वे उन सबके साथ देशाटन के लिए घर से निकल पड़े। इस तरह विभिन्न स्थलों का भ्रमण करने के पश्चात् वे अपनी जन्मभूमि में वापस आ गये।

हर्षचरित के अनुसार, ग्रीष्मकाल में एक दिन महाराज हर्ष के भाई कृष्ण ने बाण को बुलवाया बहुत विचार करके युवक बाण ने वहाँ जाने का निश्चय किया। प्रातःकाल तैयार होकर वे अपने ग्राम

प्रीतिकूट से निकले। प्रथम दिन मल्लकूट तथा दूसरे दिन यष्टिग्रहक नामक ग्राम में रात बिताने के पश्चात् तीसरे दिन मणितार के समीप अजिरवती के तट पर स्थित महाराज हर्षदेव के स्कन्धावार में पहुँचे तथा राजभवन के समीप ही निवास किया।

सायंकाल बाणभट्ट महाराज हर्ष से मिलने पहुँचे। प्रथमतः उन्होंने हर्षके हाथी 'दर्पशात' को देखा और तब राजभवन में प्रविष्ट होकर हर्षके दर्शन किये। किन्तु 'यह वही भुजंग बाण है'-कहकर हर्ष ने बाण से बात नहीं की। बाण ने अपनी भुजंगता (लम्पटता) के भ्रम को मिटाने के लिए अपनी ओर से पर्याप्त स्पष्टीकरण दिया किन्तु हर्ष उन पर प्रसन्न न हुए फिर भी हर्ष के प्रति बाण के हृदय में श्रद्धा भर गयी। वे राजभवन से निकलकर अपने मित्रों के यहाँ रूक गये। राजा ने धीरे-धीरे बाण के सम्बन्ध में अच्छी तरह पता किया और उनके वैदुष्य तथा ब्राह्मणोचित स्वभाव से परिचित होने पर प्रसन्न हो गये। पुनः बाण राजभवन में प्रविष्ट हुए तो राजा ने उन्हें प्रेम, मान, विश्वास और धन की पराकाष्ठा पर पहुँचा दिया। महाराज हर्ष के साथ बहुत समय तक रहकर बाण पुनः अपनी जन्मभूमि प्रीतिकूट को लौट आए।

बाणभट्ट विवाहित थे। बाण के पुत्र का नाम भूषणभट्ट या पुलिनभट्ट था। इस नाम के विषय में ऐकमत्य नहीं है। भूषणबाण, पुलिन्द, पुलिन्ध्र या पुलिन नाम भी कहे जाते हैं। कादम्बरी विषयक एक जनश्रुति के अनुसार बाणभट्ट के दो पुत्र थे। बाण के चन्द्रसेन और मातृशेण नामक दो भाई भी थे। बाणभट्ट के गुरु का नाम भत्सु या भर्वु था। इनके अन्य भी पाठभेद पाये जाते हैं। यह स्पष्ट नहीं है कि गुरु का सही नाम क्या था ? वल्लभदेव की 'सुभाषितावली' में 'भश्चु' द्वारा निर्मित श्लोक उद्धृत किये गये हैं। महाराजा हर्ष के यहाँ लौटने के पश्चात् अपने बन्धु-बान्धवों के आग्रह पर बाणभट्ट ने महाराज हर्षवर्धन का चरित सुनाया था (अर्थात् अपनी अलंकृत गद्य-शैली में 'हर्षचरित' की रचना की)। इसके पश्चात् बाण के शेष जीवन का वृत्त उपलब्ध नहीं होता। हाँ, किंवदन्ती है कि बाण 'कादम्बरी' को पूरी नहीं कर सके थे और मृत्यु-शैया पर पड़ गये। अपने जीवन के अन्तकाल में उन्होंने अपने दोनों पुत्रों को बुलाकर पूछा कि कादम्बरी कौन पूरी करेगा ? दोनों पुत्रों ने इसके लिए हामी भरी। तब उन्होंने कादम्बरी के अनुरुप भावकल्पना और भाषा-प्रयोग के सम्बन्ध में परीक्षा लेकर भूषणभट्ट या पुलिनभट्ट को कादम्बरी पूर्ण करने की आज्ञा दी।

बाण का समृद्ध ब्राह्मण-परिवार में पैदा हुए थे। महाराज हर्ष ने भी उन्हें पर्याप्त धन प्रदान किया था। अतः भोग-ऐश्वर्य की प्रचुर सामग्री उन्हें उपलब्ध थी। इस तरह उन्हें किसी भी प्रकार का अभाव न था और उनका जीवन आर्थिक दृश्टि से निरापद एवं सुखमय था।

बाण और मयूर के सम्बन्ध की चर्चा अनेकत्र प्राप्त होती है। बाण की मित्रमण्डली में स्त्री-पुरुष मिलाकर प्रायः चालीस की संख्या में तरह-तरह के लोग थे। इनमें से एक विषवैद्य 'मयूरक' भी था। मित्रों के नाम और उनके गुण वैषिष्ट्य का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि ये नाम उनके गुणों के आधार पर रख दिये गये थे (यथा-विषवैद्य मयूरक, पुस्तक-वाचक सुदृष्टि, स्वर्णकार चामीकर आदि)। किन्तु जिस मयूर के साथ बाण के मैत्री-सम्बन्ध की चर्चा मिलती है, वे हर्ष के सभाकवि के

रूप में जाने जाते हैं। कुछ लोग मयूर को बाण का श्वसुर और कुछ लोग साला कहते हैं। प्रभाचन्द्राचार्य द्वारा विरचित 'प्रभावकचरित' में बाण और मयूर का श्लोकबद्ध आख्यान मिलता है। तद्नुसार मयूर ने विद्वान् कवि युवक बाण के साथ अपनी कन्या का विवाह कर दिया था। एक बार बाण अपनी रूठी हुई पत्नी को मना रहे थे। चूँकि बाण पद्य-कवि नहीं थे अतः एक श्लोक की तीन पंक्तियाँ ही बराबर दुहरा रहे थे, चौथी पंक्ति नहीं बन पा रही थी। बाहर उनसे मिलने के लिए आये हुए मयूर खड़े थे। उनसे नहीं रहा गया और उन्होंने श्लोक के भावानुरूप चौथी पंक्ति बनाकर ऊँचे स्वर में कह दी। इस पर पिता का स्वर पहचाने बिना बाण की पत्नी ने चौथी पंक्ति बनाने वाले उस व्यक्ति को मान-रस-भंगकरने के अपराध के लिये कुष्ठ होने का शाप दे दिया। बाद में अपने पिता को तत्काल कुष्ठ हुआ देखकर उसे बड़ा पश्चाताप हुआ। फिर मयूर ने 'सूर्यशतक' की रचना करके भगवान सूर्य की आराधना की और उनके प्रभाव से कुष्ठ रोग से मुक्त हो गये। मयूर की काव्यात्मक स्तुति का अद्भुत प्रभाव देखकर बाणभट्ट ने भी अपना प्रभाव प्रकट करने के लिए अपने हाथ-पैर काट डाले और देवी चण्डिका की स्तुति की। भगवती की अनुकम्पा से बाण पुनः पूर्ववत् कमनीय भक्तों वाले हो गये। बाणभट्ट द्वारा विरचित 'चण्डीशतक' प्राप्त होता है। 'प्रबन्धचिन्तामणि' में भी इसी प्रकार का बाण-मयूर विषयक आख्यान मिलता है। अन्यत्र भी इस विषय में संकेत प्राप्त होते हैं। आचार्य मम्मट ने भी काव्यप्रकाशमें मयूर के सम्बन्ध में संकेत किया है।

अतः बाण का समय वही है जो इतिहास में हर्षवर्द्धन का अर्थात् 607 ई0 से 648 ई0। बाणभट्ट वात्स्यायन-गोत्रीय ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम चित्रभानु था। विद्वान् परिवार में जन्म लेने के कारण इन्होंने सभी विद्याओं का अभ्यास किया। बचपन में हीं अनाथ हो गए बाणभट्ट ने युवावस्था में मित्रों की मण्डली बनाकर पर्याप्त देशाटन किया। अनुभव सम्पन्न होकर अपने ग्राम 'प्रीतिकूट',शोण के तट पर लौटे। राजा हर्षवर्द्धन के बुलावे पर यह उनके दरबार में गए और उनकी कृपा से वहीं रहने लगे।

3.3.2 बाणभट्ट का स्थितिकाल:-

संस्कृत साहित्य के जिन कवियों के स्थितिकाल का निर्धारण अत्यन्त दुष्कर है, महाकवि बाणभट्ट उनमें से नहीं है। अन्तः साक्ष्यों के आधार पर बाणभट्ट के स्थितिकाल का निर्धारण असानी से हो जाता है। सम्राट हर्षवर्धन के साथ बाणभट्ट का संबंध ऐतिहासिक प्रणामों से पुष्ट है। बाण, हर्ष की सभा के सम्मानित सदस्य थे। हर्षवर्धन का शासनकाल 606 ई० से 647 ई तक था। बाणभट्ट का समय सातवीं शताब्दी ई० निश्चित ही है। चीनी यात्री हुएनसांग 629 ई० से 645 ई० तक भरत में रहा और उसने अपने यात्रा-विवरण में हर्षवर्धन और उनकी राज्यव्यवस्था पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। बाण ने भी हर्ष के जीवनवृत्त का कुछ साहित्यिक रीति से हर्षचरित में सन्निविष्ट किया है। दोनों वर्णनों की तात्विक तुलना करने पर सिद्ध होता है कि दोनों द्वारा वर्णित हर्ष एक ही हैं।

बाणभट्ट के समय सम्बन्ध में बर्हिःसाक्ष्यों पर दृष्टिपात करना समीचीन होगा। क्षेमेन्द्र (11वीं शताब्दी ई०) ने अपने रचनाओं में अनेकश: बाण का उल्लेख किया है। भोजराज अपने सरस्वती-कण्ठाभरण में बाण रचानाओं से उदाहरण देते हैं भोजराज भी 11वीं शताब्दी ई० के पूर्वार्द्ध में शासन करते थे। सोड्ढल ने उदयसुन्दरीकथा में कई श्लोकों में बाण की प्रशंसा की है। सोड्ढल का समय प्रायः 1000 ई० है। आचार्य धनंजय (10वीं शताब्दी ई० का उत्तरार्ध) ने कादम्बरी और बाण का उल्लेख कई बार किया है। धनपाल ने भी 'तिलकमंजरी' वाणभट्ट और उनकी कृतियों-हर्षचरित तथा कादम्बरी की प्रशंसा की है। धनपालका का समय भी 10वीं शताब्दी का उतरार्ध है। त्रिविक्रम भट्ट ने 'नलचम्पू' का रचनाकाल 10वीं शताब्दी ई० का पूर्वाद्ध है। आन्दवर्धन-कृत 'ध्वन्यालोक' में बाण और कादम्बरी का उल्लेख हुआ है। उसमें 'हर्षचरित' के भी उद्धरण प्राप्त होते हैं। आनन्दवर्धन कश्मीर नरेश अवन्तिवर्मा के समकालिक थे जिनका शासनकाल 855 ई० से 884 ई० तक था। अभिनन्द का समय नवीं शताब्दी ई० का पूर्वार्द्ध है। अभिनन्द ने 'कादम्बरीकथासार' की रचना की है जिसमें कादम्बरी-कथा संक्षेपतः श्लोकबद्ध निबद्ध है। आचार्य वामन ने अपनी 'काव्यलंकारसूत्रवृति' में कादम्बरी से उद्धरण दिये हैं। वामन का स्थितिकाल 800 ई० के आसपास माना जाता है। प्रकाशवर्ष ने अपने रसार्णवालंकार में बाण का उल्लेख किया है। प्रकाशवर्षका समय सातवीं शताब्दी ई० का उत्तरार्ध है।

उपर्युक्त प्रमाणों के आधार हमें यह ज्ञात होता है कि बाणभट्ट का उल्लेख तथा उनकी कृतियों से उद्धरणों का प्रयोग सातवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से ही किया जाने लगा था। अतः बाणभट्ट के स्थितिकाल की पूर्व सीमा सातवीं शताब्दी ई० के पश्चात् कथमपि नहीं रखी जा सकती। सम्प्रति अन्तः साक्ष्यों का अवलोकन कर उन पर भी विचार कर लेना समीचीन होगा। बाणभट्ट की कृतियों में अनेक लेखकों और ग्रंथों का उल्लेख प्राप्त होता है। कादम्बरी और हर्षचरित में रामायण और महाभारत (वाल्मीकि और व्यास) का उल्लेख हुआ है। ये दोनों आर्ष महाकाव्य निश्चित रूप से ईसा से कई सौ वर्ष पूर्व विरचित हो चुके थे। हर्षचरित में महाकवि (नाटककार) भास का उल्लेख हुआ है। भास का समय ई० पूर्व चतुर्थ पंचम शताब्दी माना जाता है। कादम्बरी में 'आर्थशास्त्र' के प्रणेता कौटिल्य का नामोल्लेख किया गया है। अर्थशास्त्र की रचना ई० पू० 321 से 300 के मध्य की गयी होगी। हर्षचरित में महाकवि कालिदास की सूक्तियों की प्रशंसा बाण ने मुक्तकण्ठ से की है। अधिकांश विद्वान कालिदास का समय ई० पू० प्रथम शताब्दी मानते हैं। कुछ विद्वान कालिदास को गुप्तकाल (350 ई० से 450 ई० के मध्य) में मानते हैं। बाणभट्ट ने गुणाढ्यकृत 'बृहत्कथा' का प्रशंसार्य हर्षचरित में की है। 'बृहत्कथा' अब उपलब्ध नहीं है किन्तु बाणभट्ट ने अवश्य ही इसका अवलोकन किया होगा। 'बृहत्कथा' की रचना पैशाची प्राकृत में की गयी थी। 'बृहत्कथा' पर आधारित कथासरित्सागर' (सोमदेव) और 'बृहत्कथामञ्जरी' (क्षेमेन्द्र) दो ग्रंथ में पद्यात्मक रूप में उपलब्ध होते हैं। उनसे तुलना करने पर प्रतीत होता है कि बाणभट्ट की 'कादम्बरीकथा' अवश्य ही बृहत्कथा की वस्तु और रचनाषिल्प से प्रभावित है। बृहत्कथा का रचना काल प्रथम शताब्दी ई०

अनुमानित है। हर्षचरित में ही बाण ने 'सेतुबन्धु' के रचयिता प्रवरसेन का उल्लेख किया है। यह प्रवरसेन वाकाटक वंश के राजा प्रवरसेन द्वितीय हैं, जिनका समय पांचवी शताब्दी ई० है।

उपर्युक्त प्रमाणों की समीक्षा करने पर ज्ञात होता है कि बाण ने अपनी रचानाओं में जिन कृतियों का उल्लेख किया वे ई० पूर्व से लेकर पांचवी ई० तक के हैं। इससे भी सातवीं शताब्दी ई०, बाण का स्थिति काल पुष्ट होता है। सबसे पुष्ट प्रमाण तो सम्राट हर्ष की समकालिक होना ही है।

3.3.3 बाणभट्ट की भाषा शैली:-

बाण से पूर्व सुबन्धु ने दुरूह श्लिष्ट पदावली से युक्त अलंकृत गद्यशैली का प्रयोग किया था। दण्डी की शैली में सरलता थी। बाण ने इन दोनों प्रकार की शैलियों का अपूर्व सन्तुलन प्रस्तुत किया और वर्ण्य विषय के अनुरूप पदावली का प्रयोग करते हुए गद्य के परिनिष्ठित स्वरूप को उपस्थापित किया। बाण की गद्यशैली का आदर्श वही है जिसे उन्होंने स्वयं अपने शब्दों में दुर्लभ कहा है—

नवोऽर्थो जातिरग्राम्या श्लेषोऽक्लिष्टः स्फुटो रसः।
विकटाक्षरबन्धश्च कृत्स्नमेकत्र दुष्करम्।।

अर्थात् नया अर्थ, सुन्दर स्वभावोक्ति, श्लेष अलंकार, रस तथा अक्षरों की दृढबन्धता - ये सभी एक साथ दुर्लभ हैं। शब्दचयन की दृष्टि से बाण की गद्यशैली को पांचाली रीति माना गया है। इस रीति में अर्थ के अनुरूप शब्दों की योजना होती है। सुतरा, बाण एक कलावादी कवि हैं और कला उनके वश में है। वे शृङ्गार में कोमल एवं सरस शब्दों का और वीभत्स आदि के वर्ण में कठोर वर्णों का प्रयोग करते हैं। दीर्घ समस्त पदों का प्रयोग गद्य में ओजोगुण उत्पन्न करता है और उसे ही गद्य का जीवन कहा गया है। बाण ने अपने गद्य में समासों के अवसरानुकूल प्रयोग का असाधारण उदाहरण प्रस्तुत किया है। शुकनासोपदेश के निम्नलिखित उदाहरण उनकी शैली की विविधता को स्पष्ट करते हैं कि किस प्रकार कहीं दीर्घसमासों वाली भाषा का तो कहीं अत्यन्त सरल वाक्यों का प्रयोग करने में वे सिद्धहस्त हैं।–

"कष्टमनऽजनवर्तिसाध्यमपरमैश्वर्यतिमिरान्धत्वम्। अशिशिरोपचारहार्योऽतितीव्रो दर्पदाहज्वरोष्मा । सततममूलमन्त्रगम्यो विषमो विषयविषास्वादमोहः। नित्यमस्नानशौचवध्यो बलवान् रागमलावलेपः। अजस्रमक्षपावसानप्रबोधा घोरा च राज्यसुखसंनिपातनिद्रा भतीति विस्तरेणाभिधीयसे।" बाण की समास रहित शैली का एक उदाहरण यह है— **"न परिचयं रक्षति, नाभिजनमीक्षते, न रूपामालोकयते। न कुलक्रमानुवर्तते, न शीलं पश्यति, न वैदग्ध्यं गणयति, न श्रुतमाकर्णयति, न धर्ममनुरुध्यते, न त्यागमाद्रियते, न विशेषज्ञतां विचारयति, नाचारं पालयति, न सत्यमनुबुध्यते।"** जहाँ भी इस

प्रकार के उपदेश के प्रसंग हैं अथवा प्रेम या शोक आदि भावनाओं के अवसर हैं, वहाँ बाण की शैली प्रायः समासहीन या अल्प समास वाली है।

बाण की शैली का सौन्दर्य उनके अलंकारों के प्रयोग पर आधारित है। इस शैली का आकर्षण श्लिष्ट उपमाओं और उत्प्रेक्षाओं में निहित है। इससे वर्णन में सजीवता आ गयी है। उपमा, दीपक, श्लेष, स्वभावोक्ति, विरोधाभास, रूपक एवं परिसंख्या उनके प्रमुख अलंकार हैं। अपने अलंकार-प्रयोग की ओर उन्होंने स्वयं ही संकेत किया है।–

हरन्ति कं नोज्जवलदीपकोपमैर्नवैपदार्थैरुपपादिता कथाः।

निरतन्तरश्लेषघनाः सुजातयो महास्रजश्चम्पककुड्मलैरिव।।

इनकी उपमाएँ प्रायः श्लिष्ट हैं और विशेषण की शाब्दिक समानता पर आधारित हैं। यथा—‘ **अप्रत्ययबहुला च दिवसान्तकमलमिव समुपचितमूलदण्डकोश मण्डलमपि मु´चति भूभुजम्, लतेव विटपकानध्यारोहति। गडेग्ेव वसुजनन्यपि तरङ्गबुद्बुद्च´चला, दिवसकरगतिरिव प्रकटितविविधसंक्रान्तिः पातालगुहेव तमोबहुला हिडिम्बेव भीमसाहसैकहार्यहृदया, प्राविडिवाचिरद्युतिकारिणी, दुष्टपिशाचीव दर्शितानेकपुरुषोच्छ्राया स्वल्पस्वत्त्वमुन्मत्तीकरोति।‘** इनके विरोधाभास का एक उदाहरण इस प्रकार है— **‘सततमूष्माणमुपजनयन्त्यपि जाड्यमुपजनयति। उन्नतिमादधानापि नीचस्वभावतामाविष्करोति। तोयराशिसंभवापि तृष्णां संवर्धयति। ईश्वरतां दधानाप्यशितप्रकृतित्वमातनोति। बलोपचयमाहरन्तयपि लघिमानमापादयति।** उत्प्रेक्षालंकार का एक उदाहरण इस प्रकार द्रष्टव्य है— **अभिषेकसमय एव चैतेषां मङ्गलकलशजलैरिव प्रक्षाल्पते दाक्षिण्यम्, अग्निकार्यधूमेनेव मलिनीक्रियते हृदयम्, पुरोहितकुशाग्रसम्मार्जनीभिरिवापहि्यते क्षान्तिः, उष्णीषपट्टबन्धेनेवाच्छाद्यते जरागमनस्मरणम्, आतपत्रमण्डलेनेवापसार्यते परलोकदर्शनम्।** अपनी विशिष्टि शैली के कारण निश्चय ही बाण सर्वश्रेष्ठ गद्यकवि हैं। उन्होंने बाद के अनेक गद्यकवियों को प्रभावित किया है। संस्कृत के विद्वानों में बाण की शैली की प्रशंसा में अनेक सूक्तियाँ प्रचलित हैं।–

बाण की प्रशस्ति में प्रचलित सूक्तियाँ

जाता शिखण्डिनी प्राग्यथा शिखण्डी तथावगच्छामि।

प्रागल्भ्यमधिकमाप्तुं वाणी बाणो बभूव ह ।। - **गोवर्धनाचार्य ।**

रुचिरस्वरवर्णपदा रसभाववती जगन्मनो हरति।

सा किं तरुणी नहि नहि वाणी बाणस्य मधुरशीलस्य। **- धर्मदास ।**

श्लेषे केचन शब्दगुम्फविषये केचिद्रसे चापरे-

ऽलंकारे कतिचित्सदर्थविषये चान्ये कथावर्णने।

आः सर्वत्र गभीरधीरकविताविन्ध्याटवीचातुरी-

सऽचारी कविकुम्भिकुम्भभिदुरो बाणस्तु पऽचाननः॥-**चन्द्रदेव ।**

केवलोऽपि स्फुरन्बाणः करोति विमदान् क्वीन्।

किं पुनः क्लृप्तसन्धानपुलिन्दकृतसन्निधिः॥-**धनपाल**

हृदि लग्नेन बाणेन यन्मन्दोऽपि पदक्रमः।

भवेत् कवि-कुरङ्गाणां चापलं तत्र कारणम्॥-**त्रिलोचन भट्ट**

सहर्षचरितारम्भाद्भुतकादम्बरीकथा।

बाणस्य वाण्यनार्येव स्वच्छन्दं भ्रमति क्षितौ ।- **राजशेखर**

बाणः कवीनामिह चक्रवर्ती । - **सोड्ढल**

3.3.4 बाणभट्ट का कर्तृत्वः-

बाणभट्ट की दो प्रसिद्ध रचनाएं हर्षचरित और कादम्बरी को विद्वानों ने एक मत से स्वीकारा है। इसके अतिरिक्त चण्डीशतक, मुकुटताडितक, पार्वतीपरिणय और पद्य कादम्बरी को भी कुछ विद्वानों ने बाणभट्ट की रचना माना है किन्तु भाषा और भाव की दृष्टि से इन्हें निर्विवाद रूप से बाण की रचना नहीं माना जा सकता। मुकुटताडितक, हर्षचरित तथा कादम्बरी इस नाटक का उल्लेख सरस्वतीकण्ठाभरण के प्रणेता भोज ने किया है और नलचम्पू के टीकाकार चंद्रपाल और गुणविजयगणि ने इसे बाण की रचना के रूप में निर्दिष्ट किया है। यह महाभारत के कथानक के ऊपर आधारित रचना थी, जिसमें अन्त में भीम दुर्योधन के मुकुट को तोड़ा डालते हैं। यह नाटक उपलब्ध नहीं है और यह सम्भावना की जा सकती है कि बाण की इस प्रकार की एकाध और रचनायें थीं, जो अनुपलब्ध हैं। चण्डीशतक नाम की एक ऐसी रचना बाण के नाम से उल्लिखित है। बाणभट्ट द्वारा विचरित गद्यकाव्यों का विस्तृत विवरण आगे प्रस्तुत किया जायेगा। यहां सूत्रात्मक रूप में परिचय किया जा रहा है। हर्षचरित, कादम्बरी और चण्डीशतक बाणभट्ट की इन कृतियों में प्रथम दो गद्दकाव्य है और तीसरी कृति पद्यकाव्य है। यहाँ हम क्रमश: बाणभट्ट की कृतियों का परिचय संक्षेपतः प्रस्तुत कर रहे हैं।

हर्षचरित—

यह बाण की प्रारम्भिक रचना है और गद्य के भेद आख्यायिका के अन्तर्गत आती है। इसमें आठ उच्छवास हैं। प्रथम दो उच्छवासों में अपना जीवन परिचय और अपने पूर्ववर्ती कवियों के विषय में बताया है। शेष छः उच्छवासों में अपने आश्रयदाता और तत्कालीन राजा हर्षवर्धन के पूर्वजों का वर्णन करते हुए उनके जन्म से लेकर उनकी बहन राज्यश्री की प्राप्ति तक का वर्णन रोचक शैली में किया है। अष्टम उच्छवास में ग्रन्थ की अचानक समाप्ति ग्रन्थ की अपूर्णता को बताती है। इस प्रकार हर्षचरित राजा हर्ष के जीवन की एक घटना है जिसमें बाण ने हर्ष की प्रस्थान करती हुई सेना

का, राज्यसभा का तथा ग्रामों आदि का सुन्दर वर्णन किया है। अतः यह ऐतिहासिक कथानक वाला उपन्यास है।

कादम्बरी—

यह संस्कृत गद्य साहित्य की सर्वोत्कृष्ट रचना और बाणभट्ट की विशिष्ट कृति है। यह गद्य काव्य के कथा भेद के अन्तर्गत आती है। इसमें चन्द्रापीड़ और वैशम्पायन एवं कादम्बरी और महाश्वेता के तीन जन्मों की कथा का वर्णन है। यह दो भागों में विभक्त है- पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध। महाकवि बाण अपने जीवनकाल में इसे पूर्ण नहीं कर पाए, माना जाता है कि उनके योग्य पुत्र भूषणभट्ट ने इसे पूर्ण किया। इस प्रकार उत्तरार्द्ध भाग को भूषणभट्ट द्वारा रचित माना जाता है। कादम्बरी की कथा सात्विक प्रेम रहा है, भाव, भाषा एवं कल्पना की दृष्टि से यह उत्कृष्ट रचना मानी जाती है।

चण्डीशतक—

102 श्लोकों में निबद्ध भगवती चण्डी की स्तुति बाण विरचित है। इन तीनों प्रसिद्ध रचनाओं के अतिरिक्त बाण के नाम से अन्य भी कई रचानायें जुड़ी हैं। उनका संक्षिप्त विवरण अधोलिखित है-

मुकुटताडिक—

चण्डपालकृत नलचम्पू की व्यख्या से ज्ञात होता है कि बाण ने 'मुकुटताडितक' नामक नाटक की रचना की थी। चण्डपाल ने इसका एक पद्य भी उल्लिखित किया है। भोजकृत श्रृंगारप्रकाश में इसका उल्लेख है।

शारचन्द्रिका—

शारदातनयकृत भावप्रकाशन से ज्ञात होता है कि बाण ने 'शारदचन्द्रिका' की रचना की थी।

पार्वतीपरिणय—

कुछ विद्वान् गोत्र और नाम साम्य के आधार पर इसे बाणभट्ट की रचना मानते हैं। वस्तुतः यह ग्रन्थ पन्द्रहवी शताब्दी ई० के वत्सगोत्रीय वामनभट्टबाण की रचना है। इनके अतिरिक्त 'पद्यकादम्बरी', शिवस्तुति', 'सर्वचरितनाटक' रचानाओं को भी बाण के नाम से जोड़ा जाता है।

बोध प्रश्नः-

अभ्यास प्रश्न 1-

(1) बहुविकल्पीय प्रश्न -

1- किस अवस्था में बाण की माता का निधन हो गया ?

(क) किशोरावस्था में (ख) बाल्यावस्था में

(ग) बृद्धावस्था में (घ) शैशवावस्था में

2- बाणभट्ट कितने वर्ष की अवस्था में पितृविहीन हो गये ?

(क) चौदह वर्ष की अवस्था में (ख) दश वर्ष की अवस्था में

(ग) अठारह वर्ष की अवस्था में (घ) ग्यारह वर्ष की अवस्था में

3- बाणभट्ट ने अपने मित्रों की लम्बी सूची किसमें दी है।

(क) हर्षचरित में (ख) कादम्बरी

(ग) मुकुटताडितक (घ) इनमें से कोई नही

4- बाणभट्ट किसके समकालीन थे।

(क) वामन के (ख) हर्षवर्धन के

(ग) अवन्तिवर्मा के (घ) सोमदेव के

5- हर्षवर्धन ने कब से कबत क शासन किया था।

(क) 606 ई0 से 648 ई0 तक

(ख) 600 ई0 से 648 ई0 तक

(ग) 560 ई0 से 606 ई0 तक

(घ) 648 ई0 से 680 ई0 तक

6- बाण की गद्य रचना हर्षचरितम् क्या है?

(क) कथा (ख) नाटक

(ग) आख्यायिका (घ) इनमें से कोई नही

7- बाणभट्ट की प्रख्यात गद्य रचना कादम्बरी क्या है ?

(क) एक कथा है (ख) एक नाटक है

(ग) एक आख्यायिका है (घ) इनमें से कोई नही

8- सुबन्धु की अलंकृत गद्यशैली के श्रेष्ठ कलाकार कौन है?

(क) दण्डी (ख) अम्बिकादत्त व्यास

(ग) बाणभट्ट (घ) इनमें से कोई नही

9- बाणभट्ट ने अपने पूर्वजों तथा स्वयं अपना परिचय किसके माध्यम से दिया है?

(क) श्लोक के माध्यम से (ख) कथा के माध्यम

(ग) आख्यायिका के माध्यम से (घ) इनमें से कोई नही

10- बाणभट्ट कादम्बरी के आरम्भ के पद्यों में अपने किसका वर्णन किया है?

(क) अपने वंश का वर्णन किया (ख) राजा का वर्णन किया

(ग) चन्द्रापीड का वर्णन किया (घ) लक्ष्मी का वर्णन किया

11- महाकवि बाण की कितनी कृतियाँ प्रसिद्ध हैं ?

(क) दो (ख) चार

(ग) सात (घ) तीन कृतियाँ

12- महाकवि बाणभट्ट की कौन सी कृति इनमें से नही हैं ?

(क) हर्षचरित (ख) कादम्बरी

(ग) मुकुटताडितक (घ) वासवदत्ता

13- बाणभट्ट के पिता का नाम क्या था?

(क) चन्द्रापीड (ख) सुबन्धु

(ग) चित्रभानु (घ) इनमें से कोई नही

14- बाणभट्ट की माता का नाम क्या था।

(क) राजदेवी (ख) मामल्देवी

(ग) कादम्बरी (घ) इनमें से कोई नही

(2) निम्न वाक्यों में सही के सामने (√) और गलत के सामने (×) का चिन्ह लगायें—

1. बाणभट्ट की गद्य रचना कादम्बरी है।
2. बाणभट्ट के पिता का नाम दामोदर था।
3. बाणभट्ट ने अपने जीवन के अनेक वर्ष सम्राट हर्षवर्धन के समृद्ध आश्रय में व्यतीत किये थे।

(3). रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

1. कादम्बरी का प्रधान रस ....है।
2. हर्षचरित ....काव्य है।
3. चन्द्रापीड .... अवतार थे।
4. कादम्बरी की नायिका .... है।
5. (हर्षचरित .... का उदाहरण है।
6. हर्षचरित में ....उच्छवास है।
7. वैशम्पायन पूर्वजन्म में ....था।
8. कादम्बरी के कथानक का मूलस्रोत .... है।
9. कादम्बरी के मंगलाचरण में ....की वन्दना की गयी है।

3.4 बाणभट्ट की कृतियों का कथासार:-

हर्षचरित—

विदित ही है कि महाकवि बाणभट्ट ने अपने जीवन के अनेक वर्ष सम्राट हर्षवर्धन के समृद्ध आश्रय में व्यतीत किये थे। इसलिए स्वाभाविक है कि हर्ष जैसे महान् सम्राट का गुणकीर्तन उसके

आश्रित प्रतिभाशाली विद्वान कवि के द्वारा किया जाय। हर्षचरित, ऐतहिसासिक पृष्ठभूमि पर आधारित एक उच्चकोटि की गद्यकाव्य रचना है जिसे समीक्षकों ने:आाख्यायिका' की कोटि में रखा है। इसमें महाकवि बाण और सम्राट हर्षके जीवन में कुछ अंशों की अलंकृत गद्यशैली में काव्यात्मक प्रस्तुति है।

हर्षचरित आठ उच्छवासों में विभक्त है। इनके प्रारम्भिक तीन उच्छवासों में कवि वंशानुकीर्तन पूवर्क अपना परिचय तथा शेष पाँच उच्छवासों में अपने आश्रयदाता सम्राट हर्षवर्धन के जीवन का कुछ अंश प्रस्तुत किया है। कुछ विद्वानों की मान्यता है कि हर्षचरित एक अपूर्ण रचना है। किन्तु यदि हम हर्षचरित में बाण के कथनों का अनुशीलन करें तो ज्ञात होगा कि यह एक पूर्ण रचना है।

प्रथम उच्छवास:- भगवान शिव और भगवती उमा की स्तुति करने के पश्चात कुकवि निन्दा और सुकवि प्रशंसा करके बाण ने पौराणिक शैली में अपने वंश के उद्भव की मनोरमा कथा प्रस्तुत की है। ब्रह्मा की सभा में दुर्वासा से अभिशप्त होकर सरस्वती, सावित्री के साथ नियतकाल के लिए निर्वासित होकर मर्त्यलोक अवतरित होती है। और शोणन्द के पष्चिमी तट पर एक मनोरम वन प्रान्त में निवास करने लगती है। वहां दैव योग से महर्षि च्वयन और सुकुन्याय के पुत्र कुमार दधीच से सरस्वती का सुदंर प्रीतिमय मिलन हुआ। उससे सारस्वत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्रोत्पति के साथ ही शाप समाप्त हो जाने के कारण सरस्वती, सावित्री के साथ ब्रम्हा लोक चली गयी। उदास दधीच ने पुत्र के पालन का भार भार्गव वंशोत्पन्न ब्राह्मण हुआ। अक्षमाला ने सामन वात्सल्य ने दोनो का पालन-पोषण किया। सारस्वत ने वत्स को सभी विद्याये प्रदान की तथा उसके लिए प्रीतिकूट नामक निवास बना दिया। स्वयं तपस्या के लिए पिता के पास चला गया । वत्स के कुल में बहुत समय पश्चात कुबेर पैदा हुए। उनके चार पुत्र जिनमें से पाशुपत से अर्थपति नामक पुत्र हुआ। अर्थपति के ग्यारह पुत्र हए जिनमें से जिनमें से चित्रभानु का विवाह राजदोही से हुआ। इसी दम्पती के पुत्र बाण हुए । राजदेवी का निधन होने के पश्चात् बालक बाण का पालन पिता चित्रभानु ने किया। बाण जब चौदह वर्ष के हुए तो पिता भी दिवंगत हो गये किन्तु इसके पूर्व ही बाण के सारे संस्कार यथाविधि संपन्न हो चुके थे। पितृवियोग का शोक कम होने पर बाणयस अपने मित्रों के साथ देशाटन करने निकले और कुछ पश्चात् अपने गांव लौटे। बान्धवों ने बाण का अभिनन्दन किया।

द्वितीय उच्छवास:- सम्राट हर्ष के भाई कृष्ण के बुलावे पर बाण हर्षसे मिलने गये। हर्षके मन में बाण के प्रति जो कुविचार थे, वे दूर हो गये तथा वे सम्राट के प्रेम-भजन उनके आश्रम में रहने लगे।

तृतीय उच्छवास:- पर्याप्त काल हर्ष की सन्निधि में व्यतीत कर बाण प्रीतिकूल में अपने बंधु बान्धवों के बीच उन लोगों के कहने पर उन्होंने महाराज हर्ष का चरित सुनाना आरंभ किया। प्रारंभ में उन्होंने हर्ष के पूर्वज श्रीकण्ठ जनपदान्तर्गत स्थणीश्वर प्रदेशके राजा पुष्यभूति का वर्णन किया।

चतुर्थ उच्छवासः- पुष्यभूति से प्रवर्तित राजवंशमें हूणहरिणकेसरी राजाधिराज प्रभाकरवर्धन उत्पन्न हुए। आदित्यपूजक उस राजा की पत्नी का नाम यशोमती था। इस दम्पती को राजवर्धन, हर्षवर्धन और राज्यश्री नामक तीन संतानों हुई । यशोमती के भाई का पुत्र भण्डिय इन दोनों राजकुमारों के अनुचर के रूप में साथ रहने लगा । दो मालव कुमार-कुमारगुप्त और माधवगुप्त भी इनके सहचर हो गये। राजश्रीदास का विवाह मौखरिवंश के ग्रहवर्मा के साथ हुआ ।

पंचम उच्छवासः- राजा प्रभाकरवर्धन ने कुमार राज्यवर्धन को हुणों को परास्त करने के लिए उत्तरी सीमा पर भेजा। हर्षवर्धन भी कुछ दूर तक उनका अनुगमन करते रहे किन्तु बाद में आखेट के लिए रूक गये। एक रात उन्होंने दुःस्वप्न देखा और अगले दिन उन्हें पिता की गंभीर रूग्णावस्था का संदेश मिला। वे तुरंत लौटे और पिता की दशा देखकर संतप्त हो गये। राजा ने किसी तरह आलिंगन पूर्वक हर्ष को भोजन के लिए राजी किया। राजा की हालत बिगड़ने लगी। चिकित्सा कर रहे वैद्य ने निराश होकर अग्नि में प्रवेश कर लिया। रानी यशोमती ने भी, हर्ष के लाख मनाने के बावजूद राजा की मृत्यु के पूर्व ही अग्निप्रवेश कर लिया। कुछ देर ही राजा का भी प्राणान्त हो गया। हर्ष शोक-सन्तप्त हो गये और बड़े भाई के आगमन की प्रतीक्षा करने लगे ।

षष्ठ उच्छवासः- राज्यवर्धन लौटे और दोनों अत्यंत शोक पूर्वक देर तक रोते रहे। राज्यवर्धन को राज्य से विमुख जानकर हर्ष ने अषिषय विनय कुमार किया । तभी राज्यश्री का परिचारक आकर रोने लगा कि मालवराज ने ग्रहवर्मा की हत्या करके राज्यश्री को कारागार में डाल दिया है। हर्ष को राज्यभार सौंप कर राज्यवर्धन, भण्डि और दश हजार घुड़सवारों के साथ मालवराज को विनष्ट करने हेतु चल पड़ा। कुछ ही दिनों बाद कुन्तल ने आकर बताया कि राज्यवर्धन ने मालवराज को परास्त कर दिया था किन्तु गौडाधिप ने धोखे से राज्यवर्धन का मार डाला। यह सुनकर हर्ष क्रोध से तमतमा उठा। हर्श ने सिंहनाद नाम सेनापति से प्रेरित होकर प्रतिज्ञा की गौडाधिप समेत सभी षत्रुओं का विनाश कर एकच्छत्र राज्य स्थापित करूगाँ। इस अवसरस पर गजाधिप स्कन्दगुप्त ने अनेक राजाओं की विपत्तियों का वर्णन किया।

सप्तम उच्छवासः- महाराज हर्षवर्धन ने शुभ मुहूर्त में दिग्विजय के लिए प्रस्थान किया। एक पड़ाव पर प्राग्ज्योतिशेश्वर कुमार का दूत आकर उन्हें 'आभोग' नाम छत्र भेंट कर गया और राजा ने कुमार के अनुराध पर उसे अपना मित्र बना लिया । कुछ समया बाद भण्डि (हर्ष के मामा का पुत्र) आया और उसने रोते हुए बताया कि राज्यवर्धन की मृत्यु के बाद गुप्त ने कुशस्थल पर अधिकार कर लिया और राज्यश्री कारागार से निकलकर विन्ध्य के वनों में चली गयी है। उसने उसे खोजने के लिए कुछ आदमी लगाये किन्तु सफलता न मिली। तब सोना समेत भण्डि को गौड़ देश का आदेशदेकर हर्ष स्वयं राज्यश्री को खोजने चल पड़ा।

अष्टम उच्छवास:- वन में कई घूमने के पष्चात् एक शबर युवक की सहायता से हर्ष गिरिनदी के तट पर रहने वाले भिक्षु दिवाकर मिश्र के आश्रम में पहुँचे। दिवाकर मित्र के साथी एक भिक्षु द्वारा तत्काल लाये गये वृत्तान्त को सुनकर वे सभी उस स्थान पर पहुँचे जहाँ एक स्त्री साहस पूर्वक अग्नि प्रवेश करने जा रही थी। हर्श अपनी बहन राज्यश्री को पहचान गये और उसे पकड़कर बचा लिया। भाई-बहन का यह मिलन अद्भुत कारूणिक था। राज्यश्री ने काशाय ग्रहण करने की आज्ञा हर्ष से मांगी किन्तु हर्ष ने उसे तब तक के लिए मना कर दिया जब तक वह दुःखी प्रजा को शत्रुओं का दमन करके सुखी न कर दे। दिवाकर मित्र ने इसका अनुमोदन किया। रात वहीं आश्रम में व्यतीत की। भाई-बहन दोनों अगले दिन प्रातः काल अपने शिविर को चले गये।हर्ष का इतना ही चरित सुनाते-सुनाते दिवसावसान हो गया।

चण्डीशतक—

102 श्लोकों में निबद्ध भगवती चण्डी की स्तुति बाण विरचित है। देवी महिषासुर का वध करती है- यही इस स्तोत्रकाव्य का कथानक है। अमरूशतक के टीकाकार अर्जुनवर्मदेव चण्डीशतक से श्लोक उद्धृत किया गया है। चण्डीशतक पर चार टीकाओं का उल्लेख मिलता है। यह गंगारथ मार्कण्डेयपुराण के दुर्गासप्तशतीय (देवीमाहात्म्य) से प्रभावित है।

कादम्बरी—

यद्यपि ‘कादम्बरी’ के प्रथम पात्र ‘शूद्रक’ के अनेक विद्वान् इतिहास प्रसिद्ध राजा सिद्ध करते है तथापि कथानक वस्तुतः कविकल्पित (उताद्य) है। गुणाढ्य कृत ‘बृहत्कथा’ का मकरन्दिकोपाख्यान को कादम्बरी-कथा का मूलस्रोत माना जाता है। बृहत्कथा पैशाची प्राकृत में निबद्ध थी और वर्तमान में अनुपलब्ध है किन्तु बाणभट्ट ने अवश्य ही उसका अवलोकन किया होगा। सम्प्रति बृहत्कथा के दो पद्यात्मक संस्करण प्राप्त होते हैं-सोमदेवकृत कथासरित्सागर और क्षेमेन्द्रकृत बृहत्कश्थामंजरी। इसके अतिरिक्त ‘बृहत्कथाश्लोकसंग्रह’ भी प्राप्त होता है। इन तीनों में ही ‘मकरन्दिकोपाख्यान’ प्राप्त होता है। ‘मकरन्दिकोपाख्यान’ के पात्रों के नाम कादम्बरी-कथा के पात्रों से भिन्न हैं किन्तु दोनों के ही कथानकों का ढांचा प्रायः मिलता-जुलता है। चूँकि बाण सप्तम शताब्दी ई० के हैं और गुणाढ्य ई० पूर्व चतुर्थ शताब्दी के आस-पास के। अतः निश्चय ही कादम्बरी का कथानक बृहत्कथा से प्रभावित है। कादम्बरी-कथा में और कथासिरत्सागर के राजा सुमनस् की कथा में बहुत अधिक समानता है। कथासरितसागर की यह कथा बृहत्कथा में रही होगी। बाण ने कादम्बरी की रचना में इससे प्रेरणा ग्रहण की है। किन्तु अपनी काव्यप्रतिमा, काव्यप्रतिमा, वैदुष्य (पाण्डित्य), उत्प्रेक्षाषक्ति के बल पर उसे पूर्णतः स्पोज्ञ (मौलिक) बना दिया। कादम्बरी के शूद्रक, चाण्डाल-कन्या, वैशाम्पायन (शुक), जाबालि, हारीत, तारापीड, विलासवती, चन्द्रापीड, शुकनास, महाश्वेता, पुण्डरीक और कादम्बरी

क्रमश: कथासरित्सागर के सुमनस् मुक्तलता, शास्त्रगप्र, पौलस्त्य, मारीच, ज्योतिष्प्रभ, हर्षवती, सोमप्रभ, प्रभाकर, मनोरथप्रभा, रश्मिवान् और मकरन्दिका हैं। कुछ अन्य गौड़ पात्रों और स्थानों के नाम भी भिन्न हैं।

बाणभट्ट ने अपनी प्रतिभा और रचना-शक्ति से मूलकथा में पर्याप्त परिवर्तन करके कादम्बरी को वैसा ही नवीन रूप दे डाला है जैसे फाल्गुन के महीने में शोभांजन वृक्ष (सहजन या सहिजन का पेड़) नवीन कलेवर धारण कर लेता है। उन्होनें उत्स के रूप में एक सामान्य लोककथा को लेकर उसे संस्कृत वाड्.मय की उत्कृष्टतम कथा के रूप में प्रस्तुत कर लिया। यह बाण के लोकोत्तरवर्णन निपुण कतिकर्म का ही परिणाम है। उन्होंने अलंकृत गद्य-शैली के आश्रय से काल्पिक प्रणय कथा को अत्यन्त हृदयावर्जन बनाने के साथ ही शुकनासोपदेश जैसे जीवन के व्यावहारिक पक्ष को भी अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। औचित्य और रस के निर्वाह की दृष्टि से मूल कथा में आवश्यक परिवर्तन भी किये गये है।

कादम्बरी का कथानक—

संस्कृत गद्य-साहित्य का समुज्ज्वल रत्न 'कादम्बरी' एक कथा-ग्रंथ है । आधुनिक काव्यशास्त्रीय दृष्टि से इसे एक मनोरम 'उपन्यास' कहा जा सकता है। कादम्बरी का कथानाक चन्द्रापीड और पुण्डरीक के तीन जन्मों से संबंध है। गद्यकाव्य कादम्बरी का आरंभ पद्यबद्ध रूप से होता है। इन पद्यों के द्वारा महाकवि बाणभट्ट ने अजरूप परब्रम्हा, शिव और विष्णु को नमस्कार करने के पश्चात दुजर्न-निन्दा और संज्जन प्रशंसा की है। माननीय कथा का स्वरूप् प्रतिपादित करने के पश्चात् क्रमश: वात्स्यायन वंश में उत्पन्न कुबेर, अर्थपति और अपने पिता चित्रभानु की महिमा का निरूपण कर अन्ततः अपना परिचय दिया है। तत्पश्चात् कथा प्रारंभ होती है।

विदिशा नरेश शूद्रक एक प्रतापी राजा थे। कला-परखी, गुणज्ञ, गोष्ठी,-प्रिय विद्वान शासक थे। एक दिन एक चाण्डाल कन्या पिंजड़े में वैशम्पायन नाम का तोता लेकर राजा की सेवा में उपस्थित हुई और उसने पक्षिरत्नभूत उस शक को राजा को उपहार के रूप में समर्पित कर दिया। वैशम्पायन सभी शास्त्रों का ज्ञाता, बुद्धिमान् और मनुष्यवाणी में स्पष्ट बोलने वाला था। उसने अपना दाहिना पैर उठाकर राजा की जयकार की और उनके सम्बन्ध में एक 'आर्या' का पाठ किया। राजा अत्यन्त विस्मित और प्रसन्न हुआ। उसने मध्याह्न भोजन के पश्चात् राजा को कथा सुनायी। विन्ध्याटवी में अगस्त्य-आश्रम के समीप पम्पा सरोवर है। पम्पा सरोवर के पश्चिम तट पर विशाल सेमलवृक्ष की कोटर में एक वृक्ष पक्षी अपने शावक के साथ रहता था। एक दिन शबरों की सेना भीषण कोलाहल करती हुई उधर से गुजरी। सेना के निकल जाने के पश्चात् एक वृद्ध उस विशाल सेमल के वृक्ष पर चढ़ गया और कोटरों से शुकों को निकला कर मारकर जमीन पर फेंक देता। उसने उस वृद्ध शुक को मारकर फेंक दिया और उसके साथ ही अपने पिता के पंखों में चिपका हुआ वह शिशु शावक भी नीचे गिर पड़ा। पुण्य बाकी रहने के कारण वह सूखे पत्तों के ढेर पर गिरा। शबर के भूमि पर उतरने के पूर्व ही अपने प्राणों के मोह में वह शुकशावक पास के तमाल वृक्ष की जड़ में जाकर छिप गया। वह

जमीन पर पड़े शुकों को बटोर कर (लेकर) चला गया। जब प्यास से व्याकुल वह डरा हुआ भी रेंगता हुआ पानी की खोज में धीरे-धीरे चल पड़ा। स्नान करने के लिए सरोवर की ओर जाते हुए जाबालि-पुत्र हारीत की दृष्टि उस पर पड़ी। वे एक ऋषिकुमार के द्वारा शुक-शावक को सरोवर के पास ले गये, उसके मुँह में पानी की कुछ बूँदें डाली हौर स्नान करने के बाद उसे अपने रमणीय आश्रम में ले गये। शुक-शावक को अशोक वृक्ष के नीचे रखकर उन्होंने पूज्य पिता जाबालि का चरण-स्पर्ष पूर्वक अभिवादन किया। मुनियों के पूछने पर उन्होंने षुक षावक की प्रगति का वृत्तान्त बतलाया और कहा कि पंख निकलने तक इसे इसी आश्रम में पाला जायेगा। तब महर्शि जाबालि ने शुक-शावक की ओर देखकर कहा कि यह अपने ही अविनय का फल भोग रहा है। यह सुनकर हारीत समेत सभी मुनियों को बड़ा कुतूहल हुआ। उन्होंने उसके रहस्य को जानना चाहा। तब सन्ध्याकालिक कृत्य सम्पन्न करके महर्षि जाबालि ने शुक के पूर्व जन्म का वृत्तान्त बताया।

उज्जयिनी के राजा तारापीड ने अपने योग्य महामन्त्री शुकनास पर समस्त राज्यभार छोड़कर चिरकाल तक यौवन सुख का उपभोग किया। जब आयु अधिक होने लगी और और कोई सन्तान नहीं हुई तो उनकी चिन्ता बढ़ने लगी। एक दिन महारानी विलासवती भी अपनी निःसन्तान के कारण अत्यन्त दुःखी होकर विलाप करने लगी। महाकाल के दर्शनों के लिए गयी हुई महारानी ने वहां हो रही महाभारत की कथा के एक प्रसंग में सुना कि पुत्रहीनों को शुभ लोक नहीं मिलते। महाराज तारापीड ने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा कि दैवाधीन वस्तु के लिए सन्तप्त होना उचित नहीं है। गुरु, ऋषि और देवों की अर्चना अपने अधीन है। भक्तिपूर्वक ऐसा करने पर वे प्रसन्न होकर मनोवांछित उत्तम वर देते हैं।

राजा और रानी ने ऐसा ही किया। तारापीड को विलासवती से चन्द्रापीड नामक पुत्र तथा मन्त्री शुकनास को अपनी पत्नी ब्राह्मणी मनोरमा से वैशम्पायन नामक पुत्र की प्राप्ति हुई। दोनों बालक परस्पर मित्रभाव से साथ ही साथ रहने लगे। दोनों को आचार्यों ने समग्र विद्याओं की शिक्षा दी। विद्या प्राप्त कर चन्द्रपीड इन्द्रायुध नामक अश्व पर सवार होकर वैशम्पायन के साथ राजभवन लौटा और माता-पिता के दर्शन कर आनन्दित हुआ। माता विलासवती ने चन्द्रापीड की ताम्बूलकरंकवाहिनी के रूप में कुलूतेश्वर की पुत्री पत्रलेखा को नियुक्त किया ओर वह कुमार का विश्वास अर्जित कर उनकी सेवा में लग गयी। तारापीड ने चन्द्रापीड को युवराज पद पर अभिषिक्त किया और चन्द्रापीड ने तीन वर्षों में दिग्विजय कर पृथ्वी मण्डल के राज्यों को अपने अधीन कर लिया। यौवराज्यभिषेक से पूर्व मन्त्री शुकनास ने चन्द्रापीड को राजनीति और आचार-व्यवहार की शिक्षा (उपदेश) दी। किरातों के नगर सुवर्णपुर का जीत कर वह सेना को विश्राम देने के लिए कुछ दिनों के लिए वहां रुक गया। एक दिन उसने एक किन्नर युगल को देखा। कुतूहल वश उनका पीछा करते हुए वह वन में दूर तक निकल गया। किन्नर युगल तो पर्वत षिखर पर चढ़ गया और चन्द्रपीड जल खोजता हुआ अच्वोद सरोवर पर पहुँच गया। वहाँ षिवमन्दिर में वीणा बजाकर तन्मयतापूर्वक

शिवाराधन में निरत एक दिव्यकन्या को देखा। बाद में वह उसके साथ बैठकर उसका सारा हाल जानने लगा। उस कन्या का नाम 'महाश्वेता' था और वह गन्धर्वराज 'हंस' तथा अप्सराकान्या गौरी की एकमात्र कन्या थी। एक दिन वह अपनी माता के सात स्नानार्थ अच्छोद सरोवर पर आयी थी। वहां उसे एक दिव्य सुगन्धि का अनुभव हुआ हौर उस सुगन्धि का अनुसरण कर वह आगे बढ़ी तो मुनिपुत्र पुण्डरीक और कपिंजल से उसकी भेंट हुई। पुण्डरीक ने वह पारिजत मंजरी महाश्वेता को दे दी। दोनों के बीच प्रणय अंकुरित हो गया। दोनों अपने-अपने घर लौट गये और परस्पर वियोग से सन्तप्त रहने लगे। एक दिन कपिंजल ने आकर पुण्डरीक की गम्भीर अवस्था का निवेदन महाश्वेता से किया। अपनी दासी तरलिका के साथ जब महाश्वेता पुण्डरीक को देखने उसके आश्रम पहुँची तब तक उसके प्राण निकल चुके थे। महाश्वेता विलाप करने लगी और आत्मदाह के लिए उसने तरलिका से चिता तैयार करायी। इसी समय चन्द्रमण्डल से एक दिव्य पुरुष उतरा और पुण्डरीक का निर्जीव शरीर लेकर चला गया। उसने महाश्वेता को पुण्डरीक से पुनर्मिलन का विश्वास दिलाया और प्राणत्याग न करने के लिए कहा। कपिंजल भी उसका पीछा करता हुआ आकाश में उड़ गया।

महाश्वेता ने बताया कि गन्धर्व चित्ररथ की पुत्री कादम्बरी उसकी सखी है। उसने निश्चय किया है कि जब तक महाश्वेता शोकावस्था में रहेगी, तब तक वह अपना विवाह नहीं करेगी। फिर वह चन्द्रापीड को लेकर कादम्बरी से मिलने उसके वास-स्थान हेमकूट गयीं। महाश्वेता ने कादम्बरी से चन्द्रापीड का परिचय कराया। कादम्बरी ने चन्द्रपीड को 'शेष' नामक दिव्य हार उपहार में दिया और साथ ही अपना हृदय भी अर्पित कर दिया। कुछ दिन वहां रहकर चन्द्रापीड और महाश्वेता वापस अच्छोद सरोवर के समीपस्थ आश्रम में लौट आए। कुछ दिन बाद कादम्बरी का सन्देश-वाहक केयूरक वह हार लेकर आया जो चन्द्रपीड वहीं छोड़ आया था। उसने कादम्बरी की कामावस्था को भी चन्द्रपीड से निवेदित कर गया। तब चन्द्रपीड पत्रलेखा के साथ पुनः हेमकूट गया और पत्रलेखा को वही छोड़कर वापस आ गया। पिता तारापीड का सन्देश पाकर चन्द्रपीड ने वैशम्पायन को सेना समेत आने के लिए कहकर स्वयं इन्द्रायुध पर सवार हो, शीघ्र उज्जयिनी पहुँच कर माता-पिता के दर्शन किये। कुछ दिनों बाद पत्र-लेखा आयी। उसने कादम्बरी और महाश्वेता का हाल बताकर चन्द्रपीड से कहा कि उसने कादम्बरी से आपको मिलाने का वचन दिया है। (यहां तक बाण-रचित कादम्बरी का पूर्वभाग समाप्त होता है और आगे भूषणभट्ट द्वारा लिखित कादम्बरी उत्तरभाग की कथा आरम्भ होती है।) मेघनाद के साथ केयूरक और पत्रलेखा को पुनः कादम्बरी के पास जाने के लिए रवाना करके चन्द्रापीड स्वयं दशपुर तक आयी सेना के साथ आर रहे अपने मित्र शुकनासपुत्र वैशम्पायन से मिलने चले पड़ा। किन्तु स्कन्धावार में वैशम्पायन को न पाकर बहुत दुःखी हुआ। बाद में पता लगा कि वैशम्पायन तो अच्छोद सरोवर पर ही रह गया। तब चन्द्रापीठ वापस उज्जयिनी आया और तारापीड तथा शुकनास से यह वृत्तान्त बताकर वैशम्पायन को खोजने शीघ्रतापूर्वक अच्छोद सरोवर पहुँचा। वहाँ उसे न पाकर जब उसने महाश्वेता से उसके बारे में पूछा तो उसने रोते हुए बताया कि वह ब्रह्मण युवक आया था और वह हठपूर्वक मुझसे प्रणय निवेदन कर रहा

था। मेरे निषेध करने पर भी जब उसने अपनी रट नहीं छोड़ी तो मैने उसे शुक हो जाने का शाप दे दिया। वह निष्प्राण हो गिर पड़ा। बाद में मुझे ज्ञात हुआ कि वह आपका मित्र था। इतना सुनते ही चन्द्रापीड का हृदय विदीर्ण हो गया और वह भी निष्प्राण हो धराशायी हो गया।

उस समय कादम्बरी भी महाश्वेता क आश्रम पर पहुँच गयी ओर चन्द्रपीड को मरा देखकर व्याकुल हो विलाप करने लगी। उसी समय चन्द्रपीड के शरीर से एक ज्योति निकली और आकशवाणी हुई कि चन्द्रपीड का शरीर सुरक्षित रखना। उससे कादम्बरी का समाग्रम अवश्य होगा। तत्काल बाद पत्र-लेखा, इन्द्रायुध को लेकर अच्छोद सरोवर में कूद गयी। कुछ देर बाद अच्छोद सरोवर से कपिंजल निकल कर बाहर आया उसने महाश्वेता को चन्द्रमा और पुण्डरीक के शाप-प्रतिशाप की कथा बतायी। उसने यह भी बताया कि उस समय आकाशमार्ग से जाते हुये एक, क्रोधी वैमानिक का उल्लंघन कर दिया था तो उसने मुझे अश्वयोनि में जाने का शाप दे दिया। बाद में उसने मुझे बताया कि चन्द्रदेव ही तारापीड के पुत्र चन्द्रापीड होंगे और पुण्डरीक उनका मित्र वैशम्पायन होगा। तुम चन्द्रापीड का वाहन बनोगे और चन्द्रापीड की मृत्यु के पश्चात् जब तुम स्नान कर लोगों तो मेरे शाप से मुक्त होकर पुनः कपिंजल हो जाओगे। उसने प्रणय निवेदन करेन वाला वैशाम्पायन ही पुण्डरीक था-यह जानकर महाश्वेता विलाप करने लगी। कपिंजल ने उसे आश्वस्त किया तथा चन्द्रापीड, वैशम्पायन और पत्रलेखा के पुनर्जन्म का पता लगाने श्वेतकेतु मुनि ने यहां चला गया। दूतों से यह वृत्तान्त जानकर तारापीड अपने परिजनों के साथ अच्छोद सरोवर पर जा पहुँचे और चन्द्रापीड के सुरक्षित शरीर को देखकर आश्वस्त हुए। इतनी कथा सुनकर महर्षिजाबालि ने कहा कि महाश्वेता के शाप के कारण शुक-योनि में जन्मा यह शावक ही वैशम्पायन है। फिर शुक-शावक ने महाराज शूद्रक को बताया कि कपिंजल मुझे ढूँढता हुआ जाबालि-आश्रम में आया था और पिता श्वेतकेतु की कुशलता बता गया था, जब मैं उड़ने योग्य हो गया तो एक दिन उत्तर दिशा की ओर जाते हुए एक व्याध के जाल में फँस गया और आज स्वर्ण-पिंजरे में इस चाण्डाल कन्या ने मुझे श्रीमान् के चरणों में पहुँचा दिया है। शुक-शावक की बातें सुनकर महाराज शूद्रक ने चाण्डाल-कान्य को बुलवाया। उसने आकर कहा कि महाराज आपने इसके पूर्वजन्म का वृत्तान्त सुन ही लिया है। अब इसके शाप की निवृत्ति सन्निकट है। मैं ही इसकी माता लक्ष्मी हूँ। आप चन्द्रपीड हैं और यह वैशम्पायन अर्थात् पुण्डरीक है। अब शाप की समाप्ति के बाद आप दोनों सुखपूर्वक साथ-साथ रहेंगे। इतना कह क रवह आकाश में उड़ गयी। तब शूद्रक को भी अपने पूर्व-जन्म का स्मरण हो आया।

उधर महाश्वेता के आश्रम पर बसन्त के आगमन के साथ ही कादम्बरी ने चन्द्रपीड के शरीर को अलंकृत कर उसका आलिंगन किया। चन्द्रापीड जीवित हो गया। पुण्डरीक भी कपिंजल के साथ गगन तल से उतर आया। तारापीड, विलासवती, शुकनास, मनोरमा, चित्ररथ, हंस आदि सभी आनन्दित हो गये। कादम्बरी का चन्द्रपीडा के साथ और महाश्वेता का पुण्डरीक के साथ विवाह हो गया और सभी सुखपूर्वक रहने लगे।

कादम्बरी के पात्रों का परिचय—

शूद्रकः- संस्कृत वाङ्.मय में 'शूद्रक' एक बहुचर्चित नाम हैं। पुराणों से लेकर लौकिक संस्कृत-काव्यों से इसे अनेकत्र राजा के रूप में चित्रित किया गया है। इसे 'मृच्छकटिक' नामक रूपक का कर्त्ता भी कहा गया है। इसके नाम से अन्य रचनायें भी प्राप्त होती है। कादम्बरी-कथा का आरम्भ ही शूद्रक के उल्लेख (आसीत्.................राजा शूद्रकों नाम) से होता है। वह विदिशाका शासक और चन्द्रापीड का अवतार है। उसकी सभा शुकनास जैसे विशुद्ध आचरण वाले विद्वान ब्राह्मण मन्त्रियों से सुशोभित थी। वह अमित पराक्रमशाली और अप्रतिहत शक्तिसम्पन्न था। सभी राजा सिर झुका कर उसकी आज्ञा का पालन करते थे। जितेन्द्रिय था और सदाचार, धार्मिक तथा यज्ञों का अनुष्ठाता था। शास्त्रज्ञ और साथ ही काव्यज्ञ भी था। प्रजापालक और विद्वानों का समादरकर्ता था। वह गुणग्राही था। वैशम्पायन शुकशावक द्वारा उच्चारित आर्या-''स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपवर्ती हृदयशोकाग्नेः। चरति विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतों रिपुस्त्रीणाम्।''-सुनकर आश्चर्य चकित हो जाता है। प्रशंसा करता हुआ अपने मन्त्री कुमारपालित से कहता है-''श्रुता भवद्भिरस्य विहष्मस्य स्पष्टता वर्गोच्चारणे स्वरे च मधुरता।''

तारापीडः- तारापीड उज्जयिनी के सम्राट हैं । वे चन्द्रपीड के पुत्रवत्सल पिता और महारानीविलासवती के प्रणयी पति हैं । वे धर्म के अवतार और पमरेश्वर के प्रतिनिधि हैं । वे कामदेव के समान शोभासम्पन्न हैं। वे एक योग्य शासक के सभी गुणों से सम्पन्न हैं तथा कौटुम्बिक सम्बन्धों के प्रति भी अत्यन्त संवेदनशीलता हैं। विलासवती के साथ वे भी सन्तान सुख न पाने से दुःखी है तथा पत्नी का प्रसादन करते है। वे उसे कर्म और भाग्य का भरोसा दिलाकर आश्वस्त करते हैं तथा देव, गुरु और अतिथि के समाराधन सपर्या का सुझाव देते हैं। वे पुण्य और पाप को अच्छी तरह समझते हैं तथा अनजान में भी अपने द्वारा अपराध न होने देने के लिए सचेष्ट रहते हैं। तारापीड दैव के विधान से उद्विग्न नहीं होते। उनमें गाम्भीर्य, दृढ़ता और मृदुता, हृदय की विशालता और उदारता ये सब कुछ हैं आदर्शसम्राट के सभी गुणों उनमें मूर्तिमान है। वे अपने कर्तव्य का निर्वाह बड़ी कुशलता से करते हैं। उनका चरित्र अत्यन्त पवित्र और अनुकरणीय है।

चन्द्रापीडः- चन्द्रपीड कादम्बरी कथा का नायक है। वह धीरोदात्त का नायक है। लक्षण ग्रन्थों में इस कोटि में रखे गये नायक के जो गुण-महासत्त्व, अत्यन्त गम्भीर प्रकृति, क्षमावान्, आत्मश्लाघा से रहित, अचलबुद्धि, विनम्र, दृढ़संकल्पवान्-कहे गये हैं, वे सभी चन्द्रापीड में पाये जाते हैं। चन्द्रापीड चन्द्रदेव का अवतार है। उसने उच्च राजर्षिकुल में जन्म लिया है। वह मनोहर कलेवर, काला बुद्धिमान, स्नेही और पराक्रमी है। स्वाभाविक जिज्ञासा से भरा हुआ है। किन्नर युगल का पीछा करते हुए अच्छोद सरोवर तक पहुँच जाता है और फिर वहां शिवाराधन में तल्लीन वीणा वादिनी एकाकिनी कन्या को देखकर कुतूहल भरी जिज्ञासा होती है। बाल्यावस्था में उसने आचार्यों के चरणों में बैठकर अनेक शास्त्रों और विद्याओं का अध्ययन किया था। उसने व्याकरण, मीमांसा, तर्कशास्त्र, राजनीति, मल्लविद्या, नृत्यशास्त्र चित्रकर्म, आयुर्वेद, धनुर्वेद, वस्तुविद्या, नाटक, कथा,

आख्यायिका, काव्य आदि में अध्ययन एवं अभयास द्वारा कुशलता अर्जित की थी। वह अत्यनत धैर्यवान् है- 'अहों बालस्यापि सतः कठोरस्येव ते मह्दधैर्यम्।'' उसमें गुरुजनों के प्रति असाधरण श्रद्धा एवं भक्ति है। शुकनास का उपदेश पाकर वह अपने को धन्य मानता है।-''उपशान्त वचसि शुकनासे चन्द्रापीडस्ताभिरूपदेशवाग्भिः प्रक्षालित इव, उन्मीति इव, स्वच्छीकृत इव, निर्मष्ट इव, अभिषिक्त इव, अलंकृत इव, पवित्रीकृत इव, उद्भासित इव, प्रीतहृदयो मुहूर्त स्थित्वा स्वभवनमाजगाम।'' वह अपने गुरुजन का सम्मान करता है। माता-पिता की पाद वन्दना करता हैं मन्त्री शुकनास का अभिवादन करता है और उनके समक्ष भूमि पर बैठता है। शिष्टाचार का वह जंगम स्वरूप ही है। अपने परिजनों का भी यथोचित आदर करता है। इन्द्रायुध अश्व को देखकर उसके विस्मय की सीमा नहीं रहती। वह म नही मन कहता है-''महात्मन्! आप चाहे जो भी हों, मैं आपको प्रणाम करता हूँ। मेंरे आरोहण की धृष्टता को क्षमा कीजिए। अज्ञात देवता भी अनुचित अनादर के भाजन हो जाते हैं।'' वह दूसरों की इच्छाओं का सदैव ध्यान रखता है। महाष्वेता के आग्रह पर वह हेमकूट जाने के लिए तैयार हो जाता है। उधर से लौटकर आने पर पिता के बुलाने पर शीघ्रतापूर्वक उज्जयिनी के लिए प्रस्थान कर देता है। चन्द्रापीड परिहास कुशल भी है। कादम्बरी में उसके हास्य-व्यंग्य के अनेक प्रशंसा प्राप्त होते हैं। चन्द्रपीड एक आदर्श मित्र और सखा है। 'सुहृद्' शब्द की अन्वर्थकता उससे ही है। वह मैत्री के पवित्र सम्बन्ध का प्रयत्नपूर्वक निर्वाह करता है। महाश्वेता के साथ उसकी मैत्री अत्यन्त पवित्र है। महाश्वेता द्वारा यह बताने पर कि वैशम्पायन को उसने शुक होने का शाप दे दिया है, वह महाश्वेता को कुछ नहीं कहता। उज्जयिनी में यह संवाद पाते ही कि वैशम्पायन सेना के साथ नहीं है, पीछे छूट गया है; वह तुरन्त ही वैशम्पायन के ढूँढ निकालने के लिए चल पड़ता है। वैशम्पायन उसका बालसखा हैं महाश्वेता द्वारा शापग्रस्त होकर उसकी मृत्यु का संवाद सुनते ही उसका हृदय विदीर्ण हो गया और वह भी निष्प्राण हो गया। सच्ची मित्रता का यह अनुपम निदर्शन है।

चन्द्रपीड यथार्थतः प्रेमी है। वह कादम्बरी को हेमकूट में देखकर उसके प्रति आकृष्ट होता है। उसकी अनुरागमयी स्मृति अपने हृदय में सदैव बनाये रखता है। अभी वह हेमकूट से महाश्वेता के आश्रम में आया ही था कि कादम्बरी की अस्वस्थता का हाल जानकर पुनः अविलम्ब पत्रलेखा के साथ कादम्बरी को देखने जाता है और पत्रलेखा को कादम्बरी के पास ही छोड़ कर वापस होता है। कुलूतेश्वर की राजकन्या पत्रलेखा (नवयुवती सुन्दरी) विलासवती के द्वारा, चन्द्रापीडद्व नवयुवक राजकुमार की ताम्बूलरकवाहिनी बनायी गयी। वह चन्द्रापीड की अतिविश्वासपात्र हो गयी किन्तु कादम्बरी में कहीं भी चन्द्रापीड का उसके प्रति आकर्षण संकेतित नहीं है। इस पर कुछ समीक्षकों ने चन्द्रपीड को निष्ठुर और हृदयहीन कहा है। किन्तु चन्द्रापीड पर ऐसा आक्षेप करना उचित नहीं है वह एक आदर्श भारतीय युवक है और धर्माविरुद्ध काम की मर्यादा का पालन करने वाला है। इस प्रकार, चन्द्रापीड को बाणभट्ट ने इस महनीय कालजयी कथा के आदर्श नायक के रूप में प्रस्तुत किया है।

शुकनास:- सदाचारी ब्राह्मणों के कुल में उत्पन्न शुकनास, उज्जयिनी के सम्राट तारापीड का मन्त्री है। वह शास्त्रों का मर्मज्ञ वेत्ता है और नीतिशास्त्र के सम्यक् प्रयोग में अत्यन्त निपुण है। वह राजा का अत्यन्त विश्वास पात्र और सम्मान भाजन है। वह प्रजा के कल्याण के लिए सतत निरत रहता है। विपत्काल में भी उसकी प्रज्ञा तनिक भी मलिन नहीं होती और स्थिर चिन्तन में समर्थ रहती है। वह धैर्य का धाम, मर्यादा का स्थान, सत्य का दृढ़ सेतु, गुणों का गुरु और आचारों का आचार्य हैं चन्द्रापीड के यौवराज्याभिषेक के अवसर पर चन्द्रपीड को उसके द्वारा प्रदत्त उपदेश संस्कृत साहित्य की अनुपम अमूल्य निधि होने के साथ ही एक शासक के लिए उसके धर्म-कर्म की आदर्श आचार संहिता है। शुकनास परिस्थितियों का ठीक-ठीक आकलन करता है और कालोचित निर्णय लेता है। वह राजा को सदैव सत्यपरामर्शदेता है। शुकनास के विचार अत्यन्त पवित्र और दृष्टि सर्वथा निर्मल है। उसके लिए अपने-पराये में कोई भेद नहीं है। शुकनास एक योग्य शासक का सुयोग्य मन्त्री है।

वैशम्पाय:- वैशम्पायन पुण्डरीक का अवतार है जो महाश्वेता के शाप से शुक की योनि में उत्पन्न होता है जिसे उसकी माता लक्ष्मी, चाण्डालकन्या के रूप में स्वर्णपिंजर में लेकर शूद्रक की सेवा में उपस्थित होती है। वैशाम्पायन, पूर्व जन्म में महामुनि श्वेतकेनु का पुत्र होने के कारण सदाचार सम्पन्न संस्कारवान् और शास्त्रज्ञ है। शुकनासपुत्र वैशम्पायन के रूप में वह चन्द्रापीड का बाल सखा है और उसने उनके साथ ही विद्याध्ययन किया है। वह सदैव चन्द्रापीड का अनुगामी रहता है।

पुण्डरीक:- महामुनि श्वेतकेतु और लक्ष्मी का पुत्र मुनिकुमार पुण्डरीक है। मुनिवृत्ति के प्रतिकूल कामुकता इसके अन्दर भरी हुई है। यही कारण है कि महाश्वेता को देखते ही वह उस पर आसक्त हो जाता है और अपनी सुध-बुध खो बैठता है। उसका मित्र कपिञ्जल उसे लाख समझाता है किन्तु उसका कोई प्रभाव उस पर नहीं पड़ता, पलटे वह उसी पर खीझने लगता हैं पुण्डरीक की सुन्दरता अवर्णनीय है।

विलासवती:- उज्जयिनी-नरेश तारापीड की महारानी विलासवती है। वह निःसन्तानता की असह्य पीड़ा से अत्यन्त दुःखित होती है। अपने पति महाराज तारापीड के समझाने पर गुरुजनसेवा और देवाराधन में तत्पर होती है। फलतः उसे चन्द्रमा के समान सुन्दर पुत्र प्राप्त होता है। उसका नाम चन्द्रापीड रखा जाता है। पुत्र के प्रति जो स्वाभाविक वत्सलता माँ में होती है, विलासवती में उससे कहीं अधिक है क्योंकि अनेक व्रतानुष्ठानादि पुण्य उपायों से पुत्र-प्राप्ति हुई है। चन्द्रापीड विलासवती का एकमात्र पुत्र है। आचार्य कुल में चन्द्रापीड के भेजे जोने का वह भरसक प्रयत्न करती हैं। इस विषय में वह अपने पति को कठोर हृदय कहती है।विलासवती पति परायण का आदर्श भारतीय स्त्री है। लज्जा उसका सहज अलंकरण है। वह एक आज्ञाकारिणी भार्या है, पुत्रवत्सला माता है तथा उदार गृहिणी है।

महाश्वेता:- चन्द्रापीड ने अच्छोद सरोवर पर शिवायतन में वीणावादनपूर्वक भगवान् शिव की आराधन करती हुई जिस अनिन्द्य सुन्दरी कन्या को देखा था, उसका नाम ‘महाश्वेता’ है। महाश्वेता कठोर व्रत और तपश्चर्या का मनो जीवित विग्रह है। उसका चरित एवं चरित्र सर्वथा निर्मल

है। यथार्थनामा गौरवर्णा महाश्वेता के शरीर से चतुर्दिक प्रभामण्डल का विस्तार हो रहा है मानो सुदीर्घकाल से राशीभूत तपःप्रभा ही विकीर्ण हो रही है। समीपवर्ती वनप्रान्त को वह अपनी कान्ति से धवल बना रही है। वन्य पशु पक्षी भी उसके सान्निध्य से वीणा की स्वरलहरी का आनन्द ले रहे हैं। चन्द्रापीड महाश्वेता के दिव्य सौन्दर्य को देखकर विस्मित हो उठा। जिस तरह महाश्वेता का शरीर श्वेताभ है उसी तरह सका अन्तःकरण भी नितान्त निष्कलुषहै। वह निर्मत्सर, निरहंकार और विनय की पराकोटि में स्थित है। वह सदाचार की प्रतिमूर्ति है। चन्द्रापीड को देखते ही बोल पड़ती है- ''अतिथि का स्वागत है। महाभाग इस स्थान पर कैसे आ पहुँचे ? तो आइए। अतिथि सत्कार स्वीकार कीजिए।'' विनम्र और निश्छल व्यवहार से उसके हृदय की उदारता झलकती हैं अपरिचित पुरुष-अतिथि से भी वह इस प्रकार निवेदन करती है जैसे वह उससे चिरपरिचित हो। महानुभव चन्द्रपीड के द्वारा उसके विषय में पूछने पर वह रोने लगती है। उसका सन्ताप उसके कोमल हृदय को पिघला देता है। वह निःसंकोच अपना सारावृत्तान्त चन्द्रापीड से कह डालती है। पुण्डरीक नामक मुनिकुमार के दर्शनमात्र से ही वह उसे अपना हृदय दे देती हैं स्तम्भित सी, लिखित सी, उत्कीर्ण सी ऐसी अनिर्वचनीय दशा में पहुँची हुई वह बहुत देर तक अपलक पुण्डरीक को निहारती रहती है— **'तत्कालाविर्भूतेनावष्टम्भकेन अकथितषिक्षितेनानायेयेन, स्वसंवेद्येन, केवलं न विभाव्यते किं तद्रूपसम्पदा, किं मनसा, किं मनसिजेन, किमभिनवयौवनेन, किमनुरागेणैवोपदिष्यमानं, किमन्येनैव वा केनापि प्रकारेण, अहं न जानामि, कथं कथमिति तमतिचिरं व्यलोकयम्।'** पुण्डरीक भी काम के वशीभूत हो जाता है। महाश्वेता अपनी माँ के बुलाने पर किसी-किसी तरह अच्छोद सरोवर में स्नान करके उसके साथ वापस घर जाती है। कपिंजल, महाश्वेता के घर जाकर पुण्डरीक की विषमावस्था का वर्णन करता है। महाश्वेता पुण्डरीक से मिलने जाती है किन्तु उसके पहुँचने से पूर्व ही पुण्डरीक का प्राणान्त हो जाता है। महाश्वेता विलाप करने लगती है। दिव्य पुरुष के आश्वासन पर विश्वास करके वह पुण्डरीक से पुनः मिलने की आशा बाँधे तपश्चर्या करने लगती है। भारतीय नारी के निरवद्य प्रमिान के रूप में महाश्वेता हमारे समक्ष आती है। उसमें निश्चिल और निश्छल प्रेम की पराकाष्ठा दिखायी पड़ती है। एक बार पुण्डरीक को अपने हृदय में बैठा लेने पर फिर उससे मिलने की आषा में निरवधि प्रतीक्षा के कठिन व्रत का पालन करती है। दिव्य पुरुष के वचन ओर आकाशवाणी पर उसे पूर्ण विश्वास हैं चन्द्रापीड के साथ उसका सहज मैत्री भाव उसके हृदय की उदारता है। एकान्त शिवाराधन, ईश्वर के प्रति उसकी असीम श्रद्धा का परिचायक है। कादम्बरी उसकी अत्यन्त प्रिय सखी है। चन्द्रपीड, को साथ लेकर वह उसका हाल जानने उसके घर जाती है और चन्द्रापीड-कादम्बरी के मध्य प्रणय-सेतु का कार्य करती है।

पुण्डरीक के प्रति उसकी इतनी दृढ़ प्रीति है कि उसके अतिरिक्त वह किसी का नाम भी इस विषय में लेना पसन्द नहीं करती। वैशम्पायन उसे देखते ही उस पर आसक्त हो जाता है और बार-बार प्रणय याचन करता है। इस पर क्रुद्ध होकर वह उसे शुक योनि में जन्म लेने, का शाप दे देती है। बाद में यह जानकर कि यह चन्द्रापीड का मित्र था-पश्चाताप भी करती है। ये सारी चारित्रिक विशेषतायें महाश्वेता को अत्यन्त उच्च स्थान प्राप्त कराती हैं। महाष्वेता गम्भीर भाव और सरल वचन वाली है। वह उदारता, शुचिता त्याग, तपस्या ओर प्रीति की एकत्र भास्वर राशि है-

कादम्बरी:- कादम्बरी हेमकूट पर निवास करने वालो गन्धर्वराज चित्ररथ की पुत्री (कन्या) है। यह बाणविरचित 'कादम्बरी' कथा-ग्रन्थ की नायिका है। बाण ने अपनी नायिका के नाम पर ही इस कथाग्रन्थ का यथार्थ नामकरण कादम्बरी किया है—**'कादम्बरीरसभरेण समस्त एव मत्तो न किंचिदपि चेतयते जनोऽयम्।'** वस्तुतः नायिका कादम्बरी में जो रूपसौन्दर्य की मादकता और प्रीतिमाधुर्य का जो उल्लास है वह हूबहू कादम्बरी कथा में भी है। एक महाकवि की उदात्त कल्पना है और दूसरी उसकी आलंकारिक अभिव्यक्ति।

कादम्बरी कन्या मुग्धा, परकीया कोटि की नायिका है।। कथा में महाश्वेता-वृत्तान्त के पश्चात् कादम्बरी की कथा आती है। वह सहानुभूति और त्याग की प्रतिमूर्ति के रूप में पाठकों के सम्मुख प्रस्तु की जाती है। वह महाश्वेता की अतिप्रिय सखी है। उसने प्रतिज्ञा कर ली है कि जब तक महाश्वेता का मिलन 'पुण्डरीक' से नहीं हो जाता, वह अपना विवाह नहीं करेगी। महाश्वेता ने उसे समझाया भी किन्तु वह इस विषय में अविचलित रहती है।

नारी-सौन्दर्य का एक दिव्य परिवेश कादम्बरी से निसर्गतः सम्पृक्त है। उसमें प्रीति की अनुपम विच्छित्ति है, भावों की प्रौढि है, जीवन का आदर्श है, लौकिक व्यवहारों के प्रति नैष्ठिक चेतना है, मैत्रीनिर्वाह के लिए असीम धैर्य है, स्नेह की सरल तरलता है, तपश्चर्या की दृढ़ता है व मानवीय संवेदनाओं की मनोरम मूर्ति है। कादम्बरी का अनुभव प्रथम दर्शन में ही चन्द्रापीड को प्रभावित कर उस पर अमिट छाप छोड़ देता है।

चन्द्रापीड को देखकर कादम्बरी के मन में कामवेदना का संचार हो जाता है। जब वह ताम्बूल देने के लिए चन्द्रापीड की आगे अपना हाथ बढ़ाती है, तो साध्वसभाव के कारण उसके अंगों में कम्पन उत्पन्न हो जाता है। उसकी आँखों में आकुलता व्याप्त हो जाती है और सारा शरीर पसीने से नहीं उठता है। उसे पता भी नहीं चलता कि उसके हाथ से रत्न वलय गिर गया है। यद्यपि कादम्बरी ने यह प्रतिज्ञा की थी कि जब तक पुण्डरीक से महाश्वेता का मिलन नहीं हो जाता, वह अपना विवाह कथमपि नहीं करेगी किन्तु चन्द्रापीड को देखते ही वह कामदेव के बाणी से बिंध जाती है। चन्द्रापीड प्रथम दर्शन में ही उसके हृदयराज्य का अधिपति बन जाता है। महाश्वेता के पूछने पर कि चन्द्रापीड कहाँ ठहरेंगे? कादम्बरी कहती है कि जबसे इनके दर्शन हुए है तभी से परिजन और भवन की क्या बात, ये तो मेरे तन-मन के भी स्वामी हो गये है। आपको अथवा इनको जहाँ भी अच्छा लगे, वहीं

रहें। कादम्बरी मर्यादा का पालन करना अच्छी तरह जानती है। विनम्रता और लज्जा, उसका सहज गुण है। यद्यपि वह चन्द्रापीड की ओर आकृष्ट है फिर भी अपने इस आचरण से उसे क्षोभ है— **'अगणितसर्वषया तरलहृदयां दर्शयन्त्याद्य मया किं कृतमिदं मोहान्धया? तथा हि, अदृष्टपूर्वोऽयमिति साहसिकता मया न संचितम् लघुहृदयां मां कलयिष्यतीति निंझकया नाकलितम्। कास्य चित्तवृत्तिरिति मया न परीक्षितम्। दर्शनानुकूलाहमस्य नेति वा तरलया न कृतो विचारक्रमः।** गुरुजन के प्रति आदर एवं श्रद्धा तथा प्रियजन के प्रति स्नेह और सहानुभूति कादम्बर के चरित्र की विशेषता हैं वह अपनी सखी (अथवा सुहृद्) के दुःख और सुख से सुखी होती है। महाश्वेता के प्रति उसके हृदय में अगाध सम्मान और प्रीति है। बाण ने कादम्बारी को एक आदर्शसखी तथा प्रेमिका के रूप में चित्रित किया है।

पत्रलेखाः- पत्रलेखा 'कादम्बरी' की एक महत्वपूर्ण स्त्रीपात्र है। यह चन्द्रापीड की ताम्बूल करंकवाहिनी नियुक्त है। यह कुलूतेश्वर की पुत्री है जो महाराज उज्जयिनी नरेश के द्वारा कुलूत की राजधानी जीतकर इसे भी बन्दिनी बनाकर अन्तःपुर में रखा गया था। एक अनाथ राजदुहिता होने के कारण पत्रलेखा के प्रति महारानी विलासवती की अत्यन्त स्नेह हो गया और वे उसे अपनी कन्या के समान मान देने लगीं थी, जब चन्द्रापीड अध्ययन समाप्त कर राज भवन लौट और युवराज पद पर अभिषिक्त हुए, उसी बीच महारानी ने अपने प्रिय पुत्र की सेवा में अपनी दुहिता तुल्य पत्रलेखा को कंचुकी की साथ भेजा। चूँकि चन्द्रापीड पत्रलेखा के कुलशील से परिचित न था अतः महारानी ने पत्रलेखा के विशय में सविस्तार सन्देश चन्द्रापीड को दिया था।

पत्रलेखा राजकन्या होते हुए भी दुर्भाग्य से दासी बनी। वह अनिन्द्य सुन्दरी थी और चन्द्रापीड की रात दिन की संगिनी थी। वह चन्द्रापीड की प्रिय विश्वासप्रात्र थी किन्तु बाण ने कहीं भी इन दोनों के बीच काम विकास का संकेत भी नहीं किया है। कुछ समीक्षकों ने महाकवि बाण की अन्धदृष्टि की कटु आलोचना की है किन्तु बाण मार्यादित प्रेम का चित्रण करने वाले कवि है। उन्होंने परिचारिका के रूप में पत्रलेखा के उदात्त चरित्र का सुन्दर चित्रण किया है।

कादम्बरी का कला पक्ष—

वाण की कादम्बरी में प्रकृति के सौम्य तथा उग्र रूप का वर्णन जितना रोचक है, उतना ही रोचक है उसके नाना वस्तुओं का वर्णन है। वर्णनों को संश्लिष्ट तथा प्रभावोत्पदक बनाने के लिए, भावों में तीव्रता प्रदान करने के हेतु बाण ने उपमा, उत्प्रेक्षा, श्लेष, विरोधाभास आदि अलंकारों का बड़ा ही सुन्दर प्रयोग किया है, परन्तु 'परिसंख्या' अलंकार के तो वे सम्राट् प्रतीत होते हैं। बाण के समान किसी अन्य कवि ने 'श्लिष्ट परिसंख्या' का इतना चमत्कारी प्रयोग शायद ही किया हो। इन अलंकारों के प्रयोग ने बाण के गद्य में अपूर्व जीवनी-शक्ति डाल दी है। आदर्श गद्य के जिन गुणों का उल्लेख बाण ने हर्ष चरित में किया है वे उनके गद्य में विशदतया वर्तमान है—

नवोऽर्थो जातिग्राम्या श्लेषो स्फुटो रसः।
विकटारक्षरबन्धश्च कृत्स्नमेकत्र दुर्लभम्।।

अर्थ की नवीनता, स्वाभावोक्ति की नागरिकता, श्लेष की स्पष्टता, रस की स्फुटता, अक्षर की विकटबन्धता का एकत्र दुर्लभ सन्निवेश कादम्बरी को मंजुल रसपेशल बनाये हुए है। उनके श्लेश-प्रयोग जूही की माला में पिरोये गये चम्पक पुष्पों के समान मनमोह होते हैं-**निरन्तरश्लेशघनाः सुजातयो महास्रजश्चम्पककुड्मलैरिव।** 'रसनोपमा' का यह उदाहरण कितना मनोरम है-**क्रमेण च कृतं में वयुषि वसन्त इव मधुमासेन, मधुमास इव नवपल्लवेन, नवपल्लव इव कुसुमेन, कुसु इव मधुकरेण, मधुकरेण इव मदेन नवयौवनेन पदम्।**

कादम्बरी में हृदयपक्ष का प्राधान्य है। कवि अपने पात्रों के अन्तस्तल में प्रवेश करता है, उनकी अवस्था-विशेष में होनेवाली मानस वृत्तियों का विष्लेशण करता है तथा उचित पदन्यास के द्वारा उसकी अभिव्यक्ति करता है। पुण्डरीक के वियोग में महाश्वेता के हार्दिक भावों की रम्य अभिव्यक्ति बाण की ललित लेखनी का चत्मकार हैं चन्द्रापीड के जन्म के अवसर पर राजा तथा रानी के हृदयगत कोमल भावनाओं का चित्रण बड़ा ही रमणीय तथा तथ्यपूर्ण हुआ है। चन्द्रापीड के प्रथम दर्शन के अनन्तर स्वदेश लौट आने पर कादम्बरी के भावों का चित्रण कवि के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का सुन्दर निदर्शन है। बाण की दृष्टिमें प्रेम भौतिक सम्बन्ध का नामान्तर नहीं है, प्रत्युत वह जन्मान्तर में समुद्भूत आध्यात्मिक संबंध का परिचायक है। कादम्बरी 'जन्मान्तरसौहृदय' का सजीव चित्रण हैं विस्मृत अतीत था जीवित वर्तमान को स्मृति के द्वारा एक सूत्र में बाँधनेवाली यह प्रणयकथा हैं बाणभट्ट ने दिखलाया है कि सच्च प्रेम कुल और समाज की मर्यादा का उल्लंघन नहीं करता । वह संयत तथा निष्काम होता है । काल की कराल छाया न उसे आक्रान्त कर सकती है, न काल का प्रवाह उसकी स्मृति को मलिन और धुँधला बना सकता है। महाश्वेता तथा पुण्डरीक का, कादम्बरी तथा चन्द्रापीड का अनेक जन्मों में अपनी चरितार्थ तथा सिद्धि प्राप्त करनेवाला प्रेम इस आदर्श प्रणय का सच्चा निदर्शन है ।

3.5 सारांशः-

इस इकाई में आप काव्य प्रतिभा के धनी बाणभट्ट के गम्भीर अध्ययन का परिणाम उनकी कृतियों का सम्यक रूप में अध्ययन कर सकते हैं। बाणभट्ट की काव्य प्रतिभा एवं उनका गद्य वैशिष्ट्य तथा उनका प्रकृष्ट पाण्डित्य, उनकी कृतियों में वेद वेदांग, इतिहास, राजनीति, पुराण, आयुर्वेद, मीमांसा, न्याय, ज्योतिष, काव्यशास्त्र, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, कामशास्त्र, तथा अनेकों कलाओं का ज्ञान पद पद पर दिखाई देता है। अतः इनके विषय में कही गई उक्ति **''बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्''** सर्वथा उपयुक्त है। समस्त संस्कृत साहित्य उनके व्यक्तित्व को गरिमामय बनाता है। अपनी कृति कादम्बरी तथा हर्षचरित के द्वारा उन्होंने संस्कृत कथा एवं आख्यायिका दोनों साहित्यों में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त किया हैं । लौकिक संस्कृत गद्य का सर्वप्रथम दर्शन भी हमें बाणभट्ट की रचनाओं में मिलता है । अतः निश्चित ही ये गद्य-काव्य के चरमोत्कर्ष के प्रतीक हैं । जिसका बृहत् रूप आप अपनी मेधा द्वारा ग्रहण कर सकते है ।

इस इकाई में बाणभट्ट के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व उनका समय, उनके विविध रूपों को यथा स्थानवत रखा गया है जिसके अध्ययन से आप बाणभट्ट के विषय में समग्र जानकारी एक स्थान पर प्राप्त कर सकेगें।

3.6 शब्दावली:-

ब्राह्मणोचित्त	ब्राह्मण के अनुरूप
प्रगल्भता	वाक्य चातुर्य
भावानुरूप	भाव के अनुरूप
कुशस्थल	कानकुब्जय
कुतुहल	बेचैनी
संध्याकालिक	संध्या के समय
ताम्बूलकरंकवाहिनी	पान के डब्बा को लेकर चलने वाली

बोध प्रश्न:-

अभ्यास प्रश्न 2-

1. बहुविकल्पीय प्रश्न -

1. चण्डीशतक में श्लोको की संख्या क्या है ?

(क) 102 (ख) 99

(ग) 201 (घ) 120

2. कादम्बरी कथा का मूलस्रोत क्या है?

(क) दशकुमारचरितम् (ख) जातकथा

(ग) वृहद्कथा (घ) महाभारत

3. चन्द्रापीड राजकुमार था-

(क) विदिशा (ख) उज्जैनी

(ग) कन्नौज (घ) हस्तिनापुत्र

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

1. कादम्बरी गन्धर्वराज...की पुत्री थी।
2. बाण भट्ट के पिता का नाम...था।
3. हर्षचरित आठ.......................................में विभक्त है।

3. निम्नलिखित वाक्यों में सही वाक्य के समक्ष (√) का चिन्ह तथा गलत के समक्ष (×) का चिन्ह लगाये –

1. विलासवती तारापीड की पत्नी थी- ( )
2. चन्द्रापीड का विवाह महाश्वेता के साथ हुआ था- ( )
3. शूद्रक चन्द्रापीड का अवतार थे- ( )
4. शुकनास तारापीड के प्रधान आमात्य थे - ( )
5. कादम्बरी में चन्द्रापीड उज्जयिनी के राजा थे - ( )
6. शूद्रक का वर्णन कादम्बरी में हुआ है - ( )
7. इन्द्रायुध वैशम्पायन का अवतार था - ( )
8. कादम्बरी में वर्णित इन्द्रायुध घोड़ा था - ( )
9. कादम्बरी शब्द का अर्थ मदिरा है - ( )
10. बाणभट्ट की माता का नाम भीमादेवी था- ( )
11. शूद्रक प्रीतिकूट का राजा था- ( )
12. तारापीड उज्जैनी का राजा था- ( )

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर:-

अभ्यास प्रश्न 1-

(1) बहुविकल्पीय प्रश्न –

1- (घ) शैशवावस्था में

2- (क) चौदह वर्ष की अवस्था में

3- (क) हर्षचरित में

4- (ख) हर्षवर्धन के

5- (क) 606 ई0 से 648 ई0 तक

6- (ग) आख्यायिका

7- (क) एक कथा है

8- (ग) बाणभट्ट

9- (ख) कथा के माध्यम

10- (क) अपने वंश का वर्णन किया

11- (घ) तीन कृतियाँ

12- (घ) वासवदत्ता

13- (ग) चित्रभानु

14- (क) राजदेवी

(2) . 1सही .2 गलत .3 सही

(3).

1. शृंगार
2. गद्य
3. चन्द्रमा के
4. कादम्बरी
5. आख्यायिका
6. आठ
7. शुक
8. त्रिगुणमयपरब्रह्म
9. गुणाढ्य की बृहत्कथा

अभ्यास प्रश्न 2-

1. बहुविकल्पीय प्रश्न –

1. (क) 2. (ग) 3. (ख)

2. 1. चित्ररथ 2. चित्रभानु 3. उच्छवास

3.

1. सही	2. गलत	3. सही	4. सही
5. सही	6. सही	7. गलत	8. सही
9. सही	10. गलत	11. गलत	12. सही

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास - बलदेव उपाध्याय, प्रकाशक, शारदा निकेतन वी, कस्तुरवानगर,वाराणसी
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास- कन्हैया लाल पोद्दार
3. बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन- डा० अमरनाथ पाण्डेय,
4. कादम्बरी, बाणभट्ट, चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

3.9 उपयोगी पुस्तकें:-

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास, उमाशंकर शर्मा 'ऋषि'
2. साहित्यदर्पण, आचार्य विश्वनाथ

3. संस्कृत वांगमय का बृहद् इतिहास: डा० बलदेव उपाध्याय

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. बाणभट्ट के विषय में परिचय दीजिये ?
2. बाणभट्ट के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालिए ?
3. कादम्बरी एक कथा है सिद्ध कीजिए ?
4. बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्' इस कथन की विवेचना कीजिए ?

खण्ड–प्रथम, इकाई 4 – आचार्य दण्डी

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 आचार्य दण्डी का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व
4.3.1 आचार्य दण्डी का जीवन परिचय
4.3.2 आचार्य दण्डी का समय एवं स्थितिकाल
4.3.3 आचार्य दण्डी की भाषा शैली
4.3.4 आचार्य दण्डी का कर्तृत्व
4.4 आचार्य दण्डी की कृतियों का कथासार
4.5 सारांश
4.6 शब्दावली
4.7 बोधप्रश्नों के उत्तर
4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4. 9 उपयोगी पुस्तकें
4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1प्रस्तावना:-

प्रिय शिक्षार्थियो!

गद्य एवं पद्य काव्य से सम्बन्धित यह प्रथम खण्ड की चतुर्थ इकाई है। इससे पूर्व की इकाई में आपने संस्कृत गद्य काव्य की परम्परा, सुबन्धु एवं बाण के बारे में विस्तार पूर्वक अध्ययन किया। प्रस्तुत इकाई में आप आचार्य दण्डी के विषय में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

संस्कृत गद्यकाव्यकार आचार्य दण्डी का काल गद्य का समृद्ध काल माना जाता है। इन्होंने संस्कृत गद्य काव्य को अपनी उत्कृष्ट गद्यात्मक रचनाओं से चरम उन्नति प्रदान की। आचार्य दण्डी महाकवि भारवि के प्रपौत्र हैं। इसका उल्लेख उन्होंने अपने ग्रन्थ 'अवन्तिसुन्दरीकथा' में किया है। आचार्य दण्डी का काल आठवीं विक्रम शताब्दी में विद्वानों ने तय किया है। आचार्य भामह के बाद काव्यशास्त्र पर जिनका ग्रन्थ उपलब्ध है, वे हैं आचार्य दण्डी।

आचार्य दण्डी के तीन ग्रन्थ माने जाते हैं, जैसा कि 'शार्ङ्गधरपद्धति' में राजशेखर के एक श्लोक का उल्लेख मिलता है, जिसमें बताया गया है कि तीन अग्नि, तीन वेद, तीन देव और तीन गुणों के समान आचार्य दण्डी के तीन प्रबन्ध (ग्रन्थ) तीन लोकों में प्रसिद्ध हैं—

त्रायोऽग्न्यस्त्रायो वेदास्त्रयो देवास्त्रयो गुणाः।
त्रयोदण्डीप्रबन्धाश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुताः।।

आचार्य दण्डी के नाम से तीन रचनाएँ मिलती हैं- **''दशकुमारचरितम्'', ''काव्यादर्श'' एवं ''अवन्तिसुन्दरीकथा''** । आचार्य दण्डी ने 'दशकुमारचरितम्' के रूप में एक अद्भुत कथा-काव्य संस्कृत साहित्य को प्रदान किया है। अधिकांश विद्वान् छठी-शताब्दी में इनका काल निर्धारण करते हैं। 'दशकुमारचरितम्' आचार्य दण्डी की प्रामाणिक कृति है। इसके तीन भाग हैं- पूर्वपीठिका, मूलकथा एवं उत्तरपीठिका। पूर्वपीठिका पाँच उच्छवासों में है। मूल भाग में आठ कुमारों की कथा का वर्णन आठ उच्छवासों में है। उत्तरपीठिका में एक उच्छवास की कथा है। कुल चौदह उच्छवास है। तीनों भागों की शैली में थोड़ा भेद है।

दण्डी की सबसे बड़ी विशेषता सरल और व्यावहारिक किन्तु ललित पदों से युक्त गद्य लिखने में है। लम्बे समास, कठोर ध्वनि एवं शब्दाडम्बर से दूर रहना दण्डी की मुख्य विशेषता है। भाषा के प्रयोग में अपूर्व स्वाभाविकता है। दण्डी गद्य-कवियों में बेजोड़ हैं। रोमांचक घटनाएँ, विपुल वर्णन, सामान्य पात्र-चित्रण आदि इनकी मौलिक विशेषता है। सरल विषयों पर परिहास मुद्रा में तथा दुःखान्त एवं महत्वपूर्ण विषयों पर गम्भीर मुद्रा में ललित पद-विन्यास से प्रभावित होकर आलोचकों की यह उक्ति जगत्प्रसिद्ध है - **''दण्डिनः पदलालित्यम्।''**

अन्ततः हम कह सकते हैं कि गद्य-साहित्य में दण्डी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन्होंने 'दशकुमारचरितम्' नामक कथा-काव्य की रचना की। इसके अतिरिक्त काव्यादर्श नामक शास्त्रीय-ग्रन्थ एवं अवन्तिसुन्दरीकथा की भी रचना दण्डी ने की। इनका गद्य सरल एवं रोचक शैली में निबद्ध

है। 'दशकुमारचरितम्' की कथा रोमांचकारी उपन्यास की तरह चित्ताकर्षक है। निःसन्देह दण्डी एक सफल गद्य कवि हैं। इस इकाई के माध्यम से आचार्य दण्डी उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विषय में अत्यन्त सूक्ष्म द्रष्टि से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है जिसकी सहायता से दण्डी विषयक अनेक समस्याओं का समाधान बडी़ ही सरलता के साथ आप कर सकेंगे ऐसा मेरा विश्वास है।

4.2 उद्देश्य-:

इस इकाई के अध्ययन करने के उपरान्त आप—

- आचार्य दण्डी के विषय में कुशलता पूर्वक जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- आचार्य दण्डी के कर्तृत्व का परिचयात्मक अध्ययन कर सकेंगे।
- आचार्य दण्डी की भाषा शैली का अध्ययन कर सकेंगे।
- आचार्य दण्डी के व्यक्तित्व के विषय में आप अध्ययन करेंगे

4.3 आचार्य दण्डी का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व:-

आचार्य दण्डी 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्य के रचयिता भारवि के प्रपौत्र थे। दण्डी विदर्भ के निवासी थे और इन्हें नरसिंह वर्मा प्रथम का राज्याश्रय प्राप्त था। उनका स्थिति काल 700 ई0 के लगभग माना जाता है। राजशेखर के **'त्रयोदण्डि प्रबन्धाश्च त्रिषु लाकेषु विश्रुताः'** के अनुसार दण्डी की तीन रचनायें हैं। जिनमें 'काव्यादर्श' और 'दशकुमारचरित' निःसन्देह उनकी रचनायें हैं। तीसरी रचना के विषय में मतभेद है। 'अवन्तिसुन्दरीकथा' के प्रकाश में आ जाने से बहुत से लोग इसे ही दण्डी की तीसरी रचना मानते हैं।

'काव्यादर्श' अलंकारशास्त्र का अनुपम ग्रन्थ है। 'दशकुमारचरित' में दस राजकुमार अपने देश-देशान्तरों में भ्रमण तथा विचित्र अनुभवों का मनोरंजक वर्णन करते हैं। 'अवन्तिसुन्दरीकथा' में अवन्तीसुन्दरी की कथा है। दण्डी की काव्य-शैली पांचाली रीति है। अर्थ की स्पष्टता, रस की सुन्दर अभिव्यक्ति, कल्पना की सजीवता और शब्द का लालित्य ये दण्डी की शैली के विशेष गुण है। अतएव प्राचीन समीक्षकों ने कहा है - **''दण्डिनः पदलालित्यम्''** बड़े-बड़े जटिल समासों से दण्डी की शैली अधिकांशतः मुक्त है। डॉ0 कीथ ने उनकी मुख्य विशेषता उनका चरित्र-चित्रण माना है। दण्डी की काव्यात्मक विशेषताओं के कारण कतिपय आलोचक उन्हें वाल्मीकि और व्यास के बाद तीसरा कवि मानते हैं।

4.3.1 आचार्य दण्डी का जीवन परिचय:-

संस्कृत साहित्य की कवि परम्परा में प्राय: कवि अपने जीवन-चरित के सन्दर्भ में मौन ही हैं तथापि दण्डी के जीवन के सन्दर्भ में कुछ जानकारियाँ "अवन्तीसुन्दरी-कथा" में उपलब्ध होती हैं। यह दण्डी की ही रचना मानी जाती है। इसके अनुसार भारवि के तीन पुत्र थे, उनमें मध्यम पुत्र का नाम मनोरथ था। मनोरथ के चार पुत्र हुए जिनमें वीरदत्त सबसे छोटा था। वीरदत्त की पत्नी गौरी थी। उन्हीं वीरदत्त तथा गौरी के पुत्र थे महाकवि दण्डी। बाल्यकाल में ही दण्डी अनाथ हो गये थे। अनाथ होने पर ये काञ्ची (काञ्जीवरम्) में अकेले ही रहते थे। काञ्ची में विप्लव होने पर ये जंगलों में रहे तत्पश्चात् जब शहर में शान्ति हो गयी तब ये पल्लव नरेश की सभा में आये और वहीं रहने लगे। ऐसा माना जाता है कि पल्लव नरेश के पुत्र को शिक्षा देने के लिए ही दण्डी ने काव्यादर्श की रचना की थी।

भारवि और दण्डी के सम्भावित सन्बन्ध के विषय में अब सन्देह होने लगा है। जिस श्लोक के आधार पर भारवि के साथ दण्डी के प्रपितामह दामोदर की एकता मानी जाती थी उस श्लोक में नये पाठ भेद मिलने से इस मत का बदलना पड़ा है । नया पाठ नीचे दिया जाता है— **स मेधावीकविर्विद्वान भारविं प्रभवं गिराम् । अनुरूध्याकरोन्मन्त्री नरेन्द्रे विष्णुवर्धने ।।** पहला पाठ प्रथमान्त 'भारवि' था, जब उसके स्थान पर द्वितीयान्त 'भारविं' मिला है, जिससे यह अर्थ निकलता है कि भारवि की सहायता से दामोदर की मित्रता विष्णुवर्धन के साथ हो सकी। अतः दामोदर दण्डी के प्रपितामह थे, भारवि नहीं। इस वर्णन से दण्डी के अन्धकारमय जीवन पर प्रकाश की एक गाढ़ी किरण पड़ती है भारवि का सम्बन्ध उत्तरी भारत से न होकर दक्षिण भारत में था। हिन्दुओं की पवित्र नगरी कांची (आधुनिक कांजीवरम्) दण्डी की जन्मभूमि थी। इनका जन्म अत्यन्त शिक्षित ब्राह्मण कुल में हुआ था। भारवि की चौथी पीढ़ी में इनका जन्म होना ऊपर के वर्णन से बिल्कुल निश्चित है। कांची के पल्लवनरेश की छाया में इन्होंने अपने दिन सुखपूर्वक बिताए थे।

इस वर्णन से दक्षिण भारत की एक किंवदन्ती की भी यथेष्ट पुष्टि होती है। एम० रंगाचार्य ने एक किवदन्ती का उल्लेख किया है कि पल्लव राजा के पुत्र को शिक्षा देने के लिये ही दण्डी ने 'काव्यादर्श' की रचना की थी। काव्यादर्शन के प्राचीन टीकाकार तरूणवाचस्पति की सम्मति में दण्डी ने निम्नलिखित प्रहेलिका में कांची तथा वहां के शासक पल्लवनरेशों की ओर इगिंत किया है—**'नासिक्यमध्या परितष्चतुर्वर्णविभूषिता। अस्ति काचित् पुरी यस्यामष्टवर्णाहया नृपा' ।।** अतः एव दण्डी को कांची के पल्लवनरेशों के आश्रय में मानना इतिहास तथा किंवदन्ती दोनों से सिद्ध होता है। दण्डी ने अपने काव्यादर्श में दक्षिण प्रान्त के मलयानिल, काची, कावेरी और चोल स्थानों का वर्णन किया है। ऐसे ही आधारों पर दण्डी को दाक्षिणात्य कल्पना किया जाता है। संभव है यह कल्पना ठीक हो, जब कि दण्डी का वर्णन शैली भी वैदर्भी रीति प्रधान है जो काश्मीर प्रान्त के

साहित्यकों से प्रायः भिन्न प्रतीत होती है। **''जाते जागति बाल्मीकौ कविरित्यभिधा भवत्। कवी इति ततो व्यासे कवयस्त्वयि दण्डिनि।।''** साहित्य के उपलब्ध प्राचीन लक्षण- ग्रन्थों में भामह के बाद दण्डी का काव्यदर्श ही मिलता है।

जिस प्रकार रूद्रट, आनन्दवर्धनाचार्य और मम्मट जैसे लब्ध प्रतिष्ठत सुप्रसिद्ध साहित्याचार्यो ने भामह का नाम और उसका मत गौरव के साथ उल्लेख किया है, तादृश उल्लेख यद्यपि दण्डी के विषय में दृष्टिगत नहीं होता है, पर उसका यही कारण नहीं कि दण्डी के ग्रन्थ का महत्व भामह के सम-कक्ष नहीं, यदि तुलनात्मक दृष्टि से विचार किया जाय तो भामह का न्यायदोष प्रकरण यदि दण्डी से अधिक महत्वपूर्ण है, तो दण्डी की अलंकार, रीति और गुणों के विवेचन की मौलिकता भामह की अपेक्षा कही अधिक परिष्कृत और उपयोगी है। सुप्रसिद्ध प्राचीन साहित्याचार्यों द्वारा भामह के समान दण्डी का उल्लेख न किये जाने का एकमात्र कारण संभवतः यही है कि दण्डी दाक्षिणात्य थे और भामह काश्मीरी। साहित्य के प्राचीन प्रसिद्ध लेखक प्रायः काश्मीरी ही अधिक हुए हैं। इसी से उनके द्वारा भामह को इतना गौरव प्राप्त हो सका है और उस गौरव का मम्मट एवं रूप्यक के समय तक उसी प्रकार प्रभाव रहा है। किन्तु आचार्य मम्मट के काव्यप्रकाश की व्यापक और अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण विवेचना के प्रकाश ने केवल भामह के ग्रन्थ को ही नहीं, अपितु प्रायः सभी पूर्वा पर ग्रन्थों को निस्तेज कर दिया, फिर ऐसी अवस्था में दण्डी के ग्रन्थ का-जो स्वयं ही विकास था, अपनी पूर्वावस्था में रहना स्वाभाविक ही था । दण्डी ही ऐसे साहित्याचार्य है जिनमें अपने पूर्ववर्तियों से सबसे अधिक अलंकारों के उपभेदों का एवं गुण और रीति का विस्तृत निरूपण किया है। किन्तु उसके निरूपित अंलकारों के उपभेदों का अधिकांश में उसके परवर्ती आचार्यों के अनुसरण नहीं किया है ।

4.3.2 आचार्य दण्डी का समय एवं स्थिति काल:-

महाकवि दण्डी का स्थिति काल सप्तम शताब्दी का अन्त और अष्टम शताब्दी का आरम्भ माना जाता है। नवम शताब्दी के ग्रन्थों में दण्डी का नामोल्लेख पाये जाने से निश्चित है कि उनका समय उक्त शताब्दी से पीछे कदापि नहीं हो सकता। सिंघली भाषा के अंलाकारग्रन्थ 'सियलकरबस' स्वभाषालंकार की रचना काव्यादर्श के आधार पर की गई है। इसका रचयिता राजा सेन प्रथम महावंश के अनुसार 846-66 ई॰ तक राज्य करता था। इससे भी पहले के कन्नड़ भाषा के अलंकारग्रन्थ 'कविराजमार्ग' में काव्यादर्श की यथेष्ट॰ छाया देखी गई है। इसके उदाहरण या तो काव्यादर्श से पूर्णतः लिये गये या कहीं-कहीं कुछ परिवर्तित रूप में रखे गये है। हेतु अतिशंयोक्ति आदि अलंकारों के लक्षण तो दण्डी से अक्षरश: मिलते हैं। इसके लेखक 'अमोघवर्ष' का समय 815 ई के आसपास माना जाता है। अतएव काव्यादर्श की रचना नवीं शताब्दी के अनन्तर कदापि स्वीकृत नहीं की जा सकती है। यह तो दण्डी के काल की अन्तिम सीमा है। अब पूर्व की सीमा की

ओर ध्यान देना चाहिए। यह निर्विवाद है कि काव्यादर्श के समग्र पद्य दण्डी की ही मौलिक रचना नहीं है, उनमें प्राचीनों के भी पद्य सन्निविष्ट है। 'लक्ष्म लक्ष्मी तनोतीति प्रतीति- सुभग वच' में दण्डी के इति शब्द के स्पष्ट प्रयोग से यहां जाना जाता है कि कालिदास के प्रसिद्ध पद्यांश **'मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मी तनोति'** से उद्धरण दिया गया है। अतः इनके कालिदास के अनन्तर होने में तो संदेश का ध्यान नहीं है, परन्तु अन्य भाव-साम्य से ये बाणभट्ट के भी अन्तर प्रतीत होते हैं। **'अरत्नालोकसंहार्यमवार्य सूर्यरश्मिभिः। दृष्टिरोधंकरं यूना यौवनप्रभवं तमः'**।। काव्यादर्श इस पद्य में कादम्बरी में चन्द्रापीड के शुकनास द्वारा दिए गए उपदेश की स्पष्ट छाया दीख पड़ती है। दण्डी को बाणभट्ट (7 वीं सदी पूर्वार्द्ध) के अनन्तर मानने में कोई विप्रपत्ति नहीं जान पड़ती है। प्रो. पाठक की सम्मति में काव्यादर्श में निर्वत्य, विकार्य, तथा प्राप्य हेतु का विभाग वाक्यपदीय के कर्ता भर्तृहरि (650 ई०) के अनुसार किया गया है। काव्यादर्श के उल्लिखित राजवर्मा (रातवर्मा) को यदि हम नरसिंहवर्मा द्वितीय (जिसका विरूद अथवा उपनाम राजवर्मा था।) मान ले तो किसी प्रकार की अनुपत्ति उपस्थित नहीं होती। प्रो. आर. नरसिंहचार्य तथा डाक्टर बेलबल्कर ने भी इन दोनों की एकता मानकार दण्डी का समय सातवीं सदी क का उतरार्द्ध बतलाया है। शैव-धर्म उत्तेजक पल्लवराज नरसिंह वर्मा का समय 690-715 ई० माना जाता है। अतः इनके सभा कवि दण्डी का भी समय बाण के पश्चात् सप्तम शती के अन्त तथा अष्टम के आरम्भ में मानना उचित प्रतीत होता है। दण्डी का समय भी अत्यन्त सन्दिग्ध है। दण्डी की अन्तिम सीमा के लिये अन्य ग्रन्थों में निम्नलिखित आधार प्राप्त होते हैं—

(1) श्री अभिनवगुप्ताचार्य ने, जिनका समय लगभग दशम शताब्दी है धन्यालोक की व्याख्या लोचन में लिखा है- यथादण्डी-

(2) प्रतिहारेन्दुराज ने, जिसका समय लगभग ई0 सन् 925 है, उन्टाचार्य के काव्यलंकार सारसंग्रह की लघुवृति पृष्ट 28 में लिखा है- अतएव दण्डिना लिम्पीव इत्यादि।

(3) कनारी भाषा में 'कविराजमार्ग' नामक एक ग्रन्थ राष्ट्रकूट के राजकुमार अमोघवर्ष प्रणीत है। उसके सम्पादक श्री पाठक के कथानानुसार उस ग्रन्थ के साधारणोमा, असम्भवोपमा, सम्भवोपमा, विशेषोक्ति, और अतिशयोक्ति की परिभाषाएं दण्डी के काव्यदर्श से सर्वथा अनुवादित हैं। और अन्य भागों पर भी काव्यदर्श का पर्याप्त प्रभाव है। उस ग्रन्थ का निर्माणकाल शक 736 -797 (815-874ई०) है।

(4) सिंहली भाषा में एक 'सियाकसलकार (स्वभाषलंकार) नामक ग्रन्थ है। वह दण्डी के काव्यदर्श पर ही अवलम्बित हैं। उसमें काव्यदर्श का स्पष्टध नामोल्लेख भी है। महावंश के अनुसार इसका लेखक प्रथम राजा सेन का राज्यकाल सेन (846-866) है।

(5) वामन के काव्यलंकार सूत्र से दण्डी के काव्यादर्श के तुलनात्मक विवेचना द्वारा विदित होता है कि वामन से दण्डी प्राचीन है। दण्डी ने रीति-सिद्धान्त का जो महत्वपूर्ण विवेचन किया था, उसे वामन ने अन्तिम सीमा तक पहुँचा दिया है। दण्डी, वैदर्भ और गौड़ी दो ही मार्ग बतलाते है- तत्र वैदर्भ

गौडीयौ (1।40) किन्तु वामन उनमें एक पांचाली और बढ़कर तीन बतलाते है। जिनके द्वारा दण्डी का वामन से प्रथम होना प्रतीत होता वामन का समय आठवीं शताब्दी ईसवी का उत्तरार्द्ध है। इन आधारों पर दण्डी की अन्तिम सीमा सन् 800 ईसवी के लगभग हो सकती है। किन्तु एक और भी प्रमाण मिलता है। जिसके द्वारा यह सीमा भी पूर्व काल तक चली जाती है। शारंगधर पद्धति में (संख्या 180) विज्जिका नाम की एक स्त्री लेखिका का यह पद्य है —**'नीलोत्पलदलश्याशमां विज्जकां मामजानता । वृथैव दण्डिनाप्रोक्त सर्वशुक्ला सरस्वती'** ।। काव्यादर्श में दण्डी ने मंगलाचरण प्रथम पद्य में 'र्सव-शुक्लसरस्वती लिखा है । इस पर विज्जका का यह व्यप्रात्मक उपहास है विज्जका के अनेक पद आचार्य मम्मट आदि के ग्रन्थों में उदाहरण रूप में मिलते है इसके पद्य विजया, विज्जा के नाम से भी उदृत किया गये है।

इसके विषय में कल्हण की सूक्ति मुक्तावली (सख्या 184) में राजशेखर के नाम से- **'सरस्वतीव कार्णाटी विजया जयत्यसौ । या विदर्भगिरां वासः कालिदासनन्तरम्'।।** यह पद्य हैं। इसके द्वारा यह दक्षिण प्रान्त की विदित होती है। सभवतः विख्यात कार्णाटी वही भारिका विजिया है, जो चद्रादित्य की महारानी थी चन्द्रादित्यह द्वितीय पुलकेशिन का पुत्र था । इसका समय सन् 660 ई0 है । यदि विजिया का पिज्जिक से एकीकरण भ्रमात्मक न हो जैसा कि सम्भव भी नही है, क्योंकि जिसने स्वयं अपनी विद्वत्ता के गर्व पर दण्डी पर व्यंग्योरक्ति की है और जिसके विषय में राजशेखर जैसा विद्वान् द्वारा ऐस महत्वपूर्ण उल्लेख हो तो दण्डी की अन्तिम सीमा विज्जका के पूर्व लगभग सन् 600 ई0 है। इसके सिवा ईसवी सन् की छठी शताब्दी के सुबन्धु प्रणीत वासवदत्ता में - **यश्र छन्दोविचितिरिव कुसुमविचित्राभिः - छन्दो विचितिरिव मालिनासनाथा । 'छन्दो विचिमिव भ्राजमानतनुमध्याम्'** इस प्रकार तीन स्थन पर छन्दोंविचिति शब्द का प्रयोग मिलता है। कुछ विद्वानों का मत है कि दण्डी –**'छन्दो विचित्यां सकलस्तत्प्रपई को निदर्शितः'**। इस वाक्य में दण्डी ने अपने 'छन्दों विरचित' नामक अपनें छंद-ग्रंथ का नामोल्लेख किया है। उसी के विषय में उपर्युक्त वाक्य सुबन्ध के हैं। यदि वह कल्पना ठीक हो तो इसके द्वारा भी दण्डी का सुबन्धु के पूर्ववर्ती अर्थात् ईसवी की छठी शताब्दी में होना सिद्ध होता है। दण्डी का समय बहुत से ऐतिहासिक विद्वान् छठी शताब्दी में ही बतलाते है। जैसे- मेक्समूलर, मि.वेबर प्रोफेसर मेकडोनल और कर्नल जेकौबी आदि। किन्तु दण्डी की पूर्व सीमा के लिये जो अन्य आधार उपलब्ध होते हैं वे अधिक प्रबल हैं, और उनके द्वारा ऊपर की मान्यता पर आघात पहुंचता है। श्री महेशचन्द्र न्यायरत्न मि0 पीटरसन और जोकेवी का मत है कि दण्डी बाण की कादम्बरी का प्रतिबिम्ब हैं बाण का समय तो महाराज श्री हर्षवर्द्धन के समकालीन (606-647) ई॰ है। **'किरातार्जुनीयपंचदशसर्गादिकोंकारो दुर्विनीतनामधेयः।'** इस वाक्य द्वारा विदित होता है। अतएव भारवि का समय लगभग छठी शताब्दी के अन्तिम चरण से शताब्दी के प्रथम चरण तक माना जा सकता है। और अवन्तिसुन्दरीकथा के—

'मनोरथाव्हयस्तेषां मध्यमों वंशवर्द्धनः।

ततस्तनूजाश्चत्वार स्त्रटुर्वेदा इवा भवन्'।।
श्री वीरदत्त इत्येषां मध्यमों वंशवर्द्धनः।
यवीयानस्य च श्लासघ्याइ गौरी नामा भवत्प्रिया।।
ततः कथंचित्सा गौरी द्विजाधिपशिरोमणेः।
कुमार दण्डिना मानं व्यक्तशक्तिमजीजनत्।।

इन पद्यों से विदित होता है, कि भारवि का मध्यम पुत्र मनोरथ के चार पुत्रों में सबसे छोटा वीरदत्त था। वीरदत्त की पत्नी का नाम गौरी था। इन्ही वीरदत्त और गौरी देवी से दण्डी का जन्म हुआ है। इनकी जन्मभूमि कांची (आधुनिक कांजीवर) थी। इसके द्वारा दण्डी का दाक्षिणात्य होना भी सिद्ध है, जैसे कि अबतक विद्वानों की कल्पना है। यदि प्रत्येक पीढ़ी के लिये 20 वर्ष भी मान लिये जाय तो भी दण्डी का समय इस आधार पर सप्तम शताब्दी का अन्तिम चरण हो सकता है। इसके द्वारा भामह और दण्डी के पूर्वापर के सम्बन्ध में जो पहिले विवेचन किया गया है। उसकी पुष्टि भी होती है कि भामह का समय महाकवि बाण के पूर्ववर्ती सम्भवतःछठी शताब्दी है। और दण्डी का सप्तम शताब्दी का अन्तिम चरण ही माना जा सकता है।

4.3.3 आचार्य दण्डी की भाषा शैली:-

आचार्य दण्डी परिष्कृत गद्य शैली के जन्मदाता हैं। 'दशकुमारचरितम्' की शैली बहुत क्लिष्ट और समासबहुल है। वहीं काव्यादर्श की शैली सरल और समाम रहित है। 'काव्यादर्श' पद्य शैली में लिखा काव्यशास्त्र का ग्रन्थ है, जबकि 'दशकुमारचरितम्' गद्यशैली में लिखा कथाकाव्य है। आचार्य दण्डी स्वयं 'काव्यादर्श' में समासबहुल ओज को गद्य का जीवन मानते हैं।– **'ओजः समासभूयस्वमेतद्गद्यस्य जीवितम्'।** गद्य का क्या स्वरूप होना चाहिए, उसमें भावादि, रस, अलंकारों का किस प्रकार समन्वय प्रस्तुत करना चाहिए, इसका आदर्श उन्होंने दशकुमारचरित में प्रस्तुत किया है। वे वदैर्भी शैली के कवि हैं। उनकी भाषा में प्रसाद और माधुर्य गुणों की पराकाष्ठा है। उनमें भावों की अभिव्यंजना की शक्ति इतनी प्रबल है कि कठिन से कठिन राजनीति आदि के तत्वों को सरलता से भाषा में प्रस्तुत कर सकते हैं। भावानुकूल पदावली का संचयन उनकी प्रमुख विशेषता है। श्रृंगार, करुण आदि के वर्णनों में उनकी भाषा में प्रसाद और माधुर्य दृष्टीगोचर होता है। प्रकृति आदि वर्णन में समासयुक्त और सालंकार पदावली भी उनकी ही प्रौढ़ एवं परिष्कृत भाषा का रूप है।

दण्डी की काव्यशैली वैदर्भी रीति का अनुसरण करती है। अर्थ की स्पष्टता, रस की सुन्दर अभिव्यक्ति, कल्पना की सजीवता और शब्द का लालित्य ये दण्डी की शैली के विशेष गुण है इसलिए इनके बारे में कहा गया है । इनकी रचना में माधुर्य गुण विशेष रूप से पाया जाता है किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि इन्होंने ओज की तरफ ध्यान नहीं दिया। इन्होंने लम्बे व छोटे समस्त प्रकार के वाक्यों का प्रयोग किया है। दण्डी का दृष्टिकोण यथार्थवादी है। उन्होंने समाज के सभी पात्रों को लिया है। दण्डी आदर्शवादी न होकर यथार्थवादी और व्यवहारवादी हैं। उन्होंने केवल सैद्धान्तिक

शिक्षा न देकर व्यावहारिक शिक्षा भी दी है। व्यवहार कुशलता से जीवन सुखी बन सकता है यह दण्डी का लक्ष्य है। दण्डी निर्भीक, सुधारवादी, क्रान्तिकारी और व्यवहारकुशल कवि हैं।

दण्डी गद्य-कवियों में बेजोड़ हैं। रोमांचक घटनाएँ, विपुल वर्णन, सामान्य पात्र-चित्रण आदि इनकी मौलिक विशेषता है। सरल विषयों पर परिहास मुद्रा में तथा दुःखान्त एवं महत्वपूर्ण विषयों पर गम्भीर मुद्रा में ललित पद-विन्यास से प्रभावित होकर आलोचकों की यह उक्ति जगत्प्रसिद्ध है - **''दण्डिनः पदलालित्यम्।''**

4.3.4 आचार्य दण्डी का कर्तृत्व:-

दण्डी की रचनाओं को लेकर विद्वानों में मतभेद है। शारङ्गधरपद्धति में दण्डी की तीन रचनाओं का उल्लेख किया गया है। बहुधा विद्वानों ने दण्डी के द्वारा लिखित प्रबन्धों में काव्यादर्श को प्रथम स्थान पर, दूसरे स्थान पर दशकुमारचरित को और तीसरे स्थान पर अवन्तिसुन्दरीकथा को स्वीकार किया है। राजशेखर ने इस प्रख्यातय पद्य में दण्डी के तीन प्रबन्धों के अस्तित्व का स्पष्ट निर्देश किया है—

त्रयोअग्नयस्त्रयों देवास्त्रयों वेदास्त्रयों गुणाः।
त्रयो दण्डिप्रबन्धाश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुताः।।

काव्यदर्श—

दण्डी की इस विश्रुत प्रबन्धत्रयी में काव्यादर्श निःसंदेह अन्यतम रचना है। काव्यदर्श में तीन परिच्छेद हैं। प्रथम परिच्छेद में काव्य परिभाषा, काव्य भेद, महाकाव्य लक्षण, गद्य के प्रभेद, कथा, आख्यायिका, मिश्र-काव्य, भाषा-प्रभेद, वैदर्भ आदि मार्ग, अनुप्रास, गुण और काव्य-हेतु का विवेचन है। इसमें105 कारिकाएं हैं। द्वितीय परिच्छेद में 35 अर्थालंकार (संसृष्टि सहित) निरूपण किये गये हैं। इसमें 368 कारिकाएं हैं। तृतीय परिच्छेद में यमक, चित्रबन्ध काव्य, प्रहेलिका और काव्यदोषों का निरूपण है। इसमें 187 कारिकाएं हैं।

दशकुमारचरितम्—

दशकुमारचरित महाकवि दण्डी की गद्यरचना है। दशकुमारचरित के हस्तलिखित तथा प्रकाशित संस्करणों में प्रायः तीन भाग हैं- (1) पूर्व पीठिक (प्रथम भाग) (2) दशकुमारचरित (द्वितीय भाग) (3) उत्तरपीठिका (तृतीय भाग) । इनमें से मध्यवर्ती अष्टमोच्छवासात्मक अंश ही दण्डी की वास्तविक कृति मानी जाती है।

पूर्व पीठिका (प्रथम भाग)— पूर्व पीठिका पॉच उच्छवासों में विभक्त है।

1. प्रथम उच्छवास में राजवाहन का जन्म (कुमारोत्पत्ति) व उनकी शिक्षा का वर्णन है।

2. द्वितीय उच्छवास मन्त्री पुत्रों का जन्म (द्विजोपकृति), राजवाहन की पाताल यात्रा का वर्णन है।
3. तृतीय उच्छवास सोमदत्त की आपबीती (सोमदत्तचरितम्) का वर्णन है।
4. चतुर्थ उच्छवास पुष्पोद्भव की आपबीती एवं सोमदत्त एवं पुष्पोद्भव नामक दो कुमारों की कथा (पुष्पोद्भवचरितम्) का वर्णन है।
5. पंचम उच्छवास में राजवाहन का अवन्तिसुन्दरी से विवाह (अवन्तिसुन्दरी परिणय) आदि का वर्णन है।

दशकुमारचरित (द्वितीय भाग)—

सुबन्धु एवं बाण से भिन्न, दण्डी ने कथा में काव्य की अलंकृत चमत्कृति का प्रदर्शन करने में अत्यधिक प्रयत्न किया है। दण्डी के गद्यकाव्यों का मुख्य उद्देश्य जीवन तथा यथार्थता का चित्रण करना है जो अन्य गद्यकाव्य में कहीं-कहीं होता है। दशकुमारचरित (द्वितीय भाग) आठ उच्छवासों में विभक्त है। इसमें कुमारों का चरित्र चित्रण वर्णित है, जिसमें राजवाहन, अपहारवर्मा, उपहारवर्मा, अर्थपाल, प्रमति, मित्रगुप्त, मन्त्रगुप्त, एवं विश्रुत के चरित्र का वर्णन किया गया हैं। आठ उच्छवासों का कथानक इस प्रकार है।—

1. प्रथम उच्छवास (राजवाहनचरितम्) में राजवाहन को एक बन्दी के रूप में प्रस्तुत करते हुए दशकुमारचरित की कथा प्रारम्भ होती है। चम्पा के अभियान में राजवाहन को अपने सब मित्र मिलते हैं जो अपनी ‘साहसिक घटनाओं’ का वर्णन करते हैं।
2. द्वितीय उच्छवास (अपहारवर्माचरितम्) में समृद्ध घटनाओं एवं विविध पात्रों से युक्त अपहारवर्मा की कथा है। मारीचि नाम के ऋषि तथा वास्तु-पाल नाम के श्रेष्ठी का प्रवञ्चना बहुत रोचक है। नायक के द्यूतशाला में अनुभव तथा घरों में सेंध लगाना आदि हास्यपूर्ण घटनाएॅ हैं।
3. तृतीय उच्छवास (उपहारवर्माचरितम्) में उपहारवर्मा की कथा है। उसने राज्यापहारी के मन पर अधिकार करके अपनी अद्भुत सौन्दर्य देने की शक्ति के विषय में सुझाया। इस प्रकार सौन्दर्यशक्ति के बहाने से उनकी हत्या कर दी तथा अपने पिता के खोए हुए राज्य को वापस लिया।
4. चतुर्थ उच्छवास (अर्थपालचरितम्) में बतलाया गया है कि अर्थपाल ने अपने पिता के खोए मन्त्रिपद तथा मणिकार्णिका नामक राजकुमारी को प्राप्त किया।

5. पंचम उच्छवास (प्रमतिचरितम्) में प्रमति श्रावस्ती की राजकुमारी का पाणि-ग्रहण करता है। युवराज की यात्रा के वर्णन में ग्राम्य तथा नागरिक जीवन का अनेक प्रकार का उल्लेख प्राप्त होता है।
6. षष्ठ उच्छवास (मित्रगुप्तचरितम्) में मित्रगुप्त के द्वारा खुँह देश की राजकुमारी की प्राप्ति का वर्णन है। इसमें दण्डी ने समुद्र पर किये गये साहसों का वर्णन किया है।
7. सप्तम उच्छवास (मन्त्रगुप्तचरितम्) में मन्त्रगुप्त के अनुभवों का वर्णन है।
8. अष्टम उच्छवास (विश्रुतचरितम्) में विश्रुत के साहसिक कार्यों का वर्णन है जो विदर्भ देश के राजकुमार को उसका खोया हुआ राज्य दिलाता है।

उत्तरपीठिका (तृतीय भाग) —

उत्तरपीठिका दण्डी द्वारा छोड़ी गई कथा है जो एक उच्छवास में उपसंहार रूप में उपलब्ध होती है। दशकुमारचरित एक घटना प्रधान कथानक है। जिसमें द्यूतक्रीड़ा, सेंध लगाना, चालाकी, धूर्तता, प्रवञ्चना, हिंसा, हत्या, जालसाजी, अपहरण एवं अवैध प्रेम का वर्णन सामूहिक रूप में सब कथाओं में मिलता हैं। लेखक का समाज के प्रति व्यवहार अतीव सोपालम्भ है। परन्तु इनका उद्देश्य अनैतिकता का समर्थन करना नहीं है। लोगों की मिथ्या मान्यताओं का विश्लेषण करके समाज के सम्मुख प्रस्तुत करना ही इनका मुख्य उद्देश्य है।

अवन्तिसुन्दरीकथा—

अवन्तिसुन्दरीकथा तथा दशकुमारचरित के तुलनात्मक अनुशीलन से प्रतीत होता है कि कथा ही दण्डी की मौलिक रचना है। हस्तलेखों की पुष्पिका का प्रामाण्य तो है ही अप्पयदीक्षित (प्रसिद्ध वेदान्ती से भिन्न व्यक्ति) ने अपने 'नामसंग्रहमाला' नामक ग्रंथ में 'इत्यवन्तिसुन्दरीये दण्डिप्रयोगात्' लिखकर दण्डी को इस ग्रन्थ का प्रमाणिक रचयिता सिद्ध किया है। इस कथा में 'दशकुमारचरित' की पूर्वपीठिका में वर्णित वृत्त है। अतः अनुमान लगाना सहज है कि 'अवन्तिसुन्दरी' ही दण्डी की विश्रुत कथा है, जिसका सारांश किसी व्यक्ति ने दशकुमारचरित की पूर्वपीठिका के रूप में उपनिबद्ध किया। यह तथ्य ध्यातव्य है कि दशकुमारचरित का नाम न तो अलंकार के किसी ग्रन्थ में और न किसी व्याख्या ग्रन्थ में ही निर्दिष्ट किया गया है। इसकी सर्वाधिक प्राचीन टीका 'पदचन्द्रिका' कवीन्द्राचार्य सरस्वती की रचना है (पुष्पिका से प्रमाणित)। फलतः दशकुमारचरित की रचना का काल 17 वीं शती से कुछ प्राचीन अवन्तिसुंदरी बड़ी उदात्तशैली में विरचित कथा है। इसके आरम्भ में प्राचीन कविविषयक स्तुति-पद्यों के अनन्तर दण्डी तथा उनके पूर्व-पुरुषों का ऐतिहासिक वृत्त वर्णित है जो आरम्भ में दिया गया है और जिससे दण्डी के अविर्भाव

का काल सप्तम शती का अन्तिम अथवा अष्ट्म शती का प्रथम चरण सिद्ध होता है। अवन्तिसुन्दरी कथा ही निश्चयेन दण्डी का प्रख्यात गद्यकाव्य है। यह अधूरा ही उपलब्ध है। यदि यह पूर्णरूपेण उपलब्ध हो जाय, तो दशकुमारचित के साथ इसके सम्बन्ध की पूर्ण समीक्षा हो सके।

4.4 आचार्य दण्डी की कृतियों का कथासार:-

महाकवि दण्डी की तीन रचनाएँ मानी जाती हैं। दशकुमारचरित, काव्यादर्श और अवन्तीसुन्दरी, इनका संक्षिप्त कथासार इस प्रकार है। —

दशकुमारचरितम्—

पुष्पापुरी (पटना) का राजा राजहंस मालवेश्वर मानसार को परास्त करता है, परन्तु तपस्या के बल से प्रभावसम्पन्न होकर मानसार पाटलिपुत्र पर चढ़ाई करता है और राजा को युद्ध में हराता है। राजहंस जंगल में चला जाता है और वहीं राजवाहन नामक पुत्र उसे उत्पन्न होता है। उनके मन्त्रियों के भी पुत्र उत्पन्न होते हैं। ये बड़े होने पर यात्रा के निमित्त परदेश जाते है और भाग्य की विषमता के कारण अलग- अलग देशों में पहुँच जाते है तथा विचित्र संकटपूर्ण जीवन बिताते हैं। राजवाहन से पुनः भेंट होने पर वे आपबीती सुनाते हैं और इन्हीं साहसी कुमारों के साहसपूर्ण घटनाओं का आकर्षक वर्णन प्रस्तुत करने वाला आख्यान ग्रन्थ 'दशकुमार-चरित' कहलाता है।

दशकुमारचरित्र एक घटना-प्रधान कथानक है जिसमें नाना प्रकार की उल्लेखनीय रोमांचक घटनाएँ पाठकों के हृदय में कभी विस्मय की और कभी विषाद की रेखायें खींचने में नितान्त समर्थ होती हैं। कहीं पाठक भयानक अरण्यानी के बीच हिंसक पशुओं के चीत्कारों तथा दहाड़ों को सुनकर व्यग्र हो उठता है, तो कहीं वह समुद्र के बीच जहाज टूट जाने से अपने को पानी में काठ के सहारे तैरता हुआ पाता है। इन कहानियों का सम्बन्ध दोनों क्षेत्रों से है-स्थल-जगत् से तथा जल-जगत् से। मित्रगुप्त के जीवन में हमें तात्कालिक जलयात्रा का एक बड़ा ही रोचक चित्र मिलता है। मित्रगुप्त दामलिप्ति (ताम्रलिप्ति) नामक प्रख्यात बंगीय बन्दरगाह से किसी नवीन द्वीप में जहाज से जाता है। चट्टान की चोट पाकर जहाज टूट जाता है। बहुत देर तक तैरने के बाद संयोगवश उसे काष्ठ का एक तैरता हुआ टुकड़ा मिलता है। रात-दिन उसी के सहारे बिताने पर यवन नाविकों का एक जहाज दिखलाई पड़ता है जिसके कप्तान (नाविक नायक) का राम 'रामेषु' है। यवनों के ऊपर अन्य युद्धपोत (मद्गु) का आक्रमण होता है। यवन नाविक इस नवीन विपत्ति से विचलित हो उठते हैं। मित्रगुप्त जिसे जंजीरों से बांधा गया था मुक्त कर दिया जाता है। वह इस पोत के डाकूओं को अपनी वीरता से हराकर यवनों को बचाता है और उनसे पुरस्कृत होकर पुनः स्वदेश लौट आता है। इसी प्रकार की रोमांच तथा साहस से भरी हुई विस्मयावह घटनाओं से पूर्ण होने के कारण दशकुमार-चरित का वातावरण नितान्त भौतिक है।

अवन्तीसुन्दरीकथा—

महाकवि दण्डी की दो रचनाएँ निर्विवाद रूप से विद्वानों ने मानी हैं। तीसरी रचना कुछ विद्वान् “छन्दोविचिति" तथा कुछ 'अवन्तीसुन्दरीकथा' को मानते हैं। दशकुमारचरित की पूर्व पीठिका में मालव नरेश की पुत्री अवन्तीसुन्दरी का विवाह प्रसंग संक्षेप में वर्णित है, उसी का सविस्तर निरूपण इस अवन्तीसुन्दरीकथा में किया गया है।

काव्यादर्श—

यह आचार्य दण्डी के समस्त ग्रन्थों में श्रेष्ठ और संस्कृत काव्यशास्त्र के मान्य प्राचीन ग्रन्थों में अन्यतम है। परम्परा और ग्रन्थ की पुष्पिकायें इसके प्रसिद्ध नाम ‘काव्यादर्श’ को ही प्रख्यापित करती हैं। इसका यह नाम सम्भवतः इस ग्रन्थ के प्रथम परिच्छेद के पंचम श्लोक के आधार पर पड़ा हो सकता है, जिसमें लेखक ने काव्य को प्राचीन राजाओं के यशोबिम्ब के लिये ‘आदर्श’ बताया है। प्रस्तुत ग्रन्थ भी तो काव्य के लिये आदर्श ही है, क्योंकि काव्य अपने समस्त रूपों के साथ बिम्बित हो रहा है।

इस प्रसिद्ध नाम के साथ इसका एक और अप्रसिद्ध नाम ‘काव्यलक्षण’ भी है। इसके बौद्ध व्याख्याकार ‘रत्नश्रीज्ञान’ इसे इसी नाम से अभिहित करते है। अनन्तलाल ठाकुर और उपेन्द्र झा के सम्पादकत्व में इसका संस्करण भी ‘काव्यलक्षण’ नाम से निकला था। ग्रन्थ के इस नाम का आधार भी प्रथम परिच्छेद के द्वितीय श्लोक का ‘क्रियते काव्यलक्षणम्’ अंश है। इसके ‘काव्यलक्षणम्’ शब्द को ग्रन्थ का नाम भी माना जा सकता है और काव्य को लक्षित-निरूपित करने वाला सामान्य काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ भी। आचार्य कुन्तक ने अपने ‘वक्रोक्तिजीवित’ (3/33) में दण्डी को ‘लक्षणकार’ कहा है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि सम्भवतः अतीत में, कभी कुछ प्रदेशों में, यह ‘काव्यलक्षण’ के नाम से भी प्रसिद्ध रहा हो, किन्तु आज तो यह ‘काव्यादर्श के नाम से ही सर्वत्र प्रसिद्ध है।

वर्तमान में उपलब्ध ‘काव्यादर्श’ अधूरा प्रतीत होता है, क्योंकि प्रस्तुत ग्रन्थ (3/171) की ही ‘तस्याः कलापरिच्छेदे रूपममाविर्भविष्यति’ इस पंक्ति से लगता है कि इस ग्रन्थ में ‘कलापरिच्छेद’ के नाम से एक परिच्छेद और था, जिसमें उसके नाम के अनुसार ही सम्भवतः कलाओं (काव्य से सम्बद्ध नाट्य तथा तत्सदृश अन्य कलाओं) का विवेचन किया गया होगा। यह परिच्छेद ‘काव्यादर्श’ के किसी भी संस्करण में उपलब्ध नहीं होता, किन्तु अतीत में इसके अस्तित्व का प्रमाण मिलता है। ‘मालतीमाधव’ के व्याख्याकार जगद्धर ने ‘काव्यादर्श’ से छह पद्य / पद्यांश अपनी व्याख्या में उद्धृत किए हैं, किन्तु उनमें से केवल तीन ही वर्तमान ‘काव्यादर्श’ में अविकल उपलब्ध होते हैं। दो का किसी तरह कहीं न कहीं समावेश किया जा सकता है किन्तु नाट्य के ‘प्रकरण’ नामक भेद से सम्बद्ध एक उद्धरण का समावेश वर्तमान ‘काव्यादर्श’ के किसी भी परिच्छेद में नहीं किया जा

सकता है, क्योंकि उसमें नाट्य की चर्चा कहीं नहीं है। लगता है यह उद्धरण अधुना अनुपलब्ध कलापरिच्छेद का रहा होगा। इसी प्रकार वात्सायन के 'कामसूत्र' के व्याख्याकार यशोधर ने अपनी 'जयमश्ला' नामक व्याख्या में दुर्वाचक और काव्यमस्यपूरण इन दो कलाओं से सम्बन्धित जो दो श्लोक 'काव्यदर्श' का नाम लेकर उद्धृत किए हैं, वे वर्तमान 'काव्यादर्श' में उपलब्ध नहीं होते है। ये भी 'कलापरिच्छेद' के ही होंगे, ऐसा अनुमान किया जा सकता है। प्रतीत होता है कि उक्त दोनों व्याख्याकारों के समय (1200-1300ई०) 'काव्यादर्श' का उक्त परिच्छेद वर्तमान था तथा बाद में किन्हीं कारणों से नष्ट हो गया। इस तथ्य की पुष्टि 'काव्यादर्श' के टीकाकार 'रत्नश्रीज्ञान' के 'चतुर्थः कलापरिच्छेदोऽस्य दण्िनेऽस्ति, स त्विह न प्रवर्तते।' इस तथा दूसरे टीकाकार तरुणवाचस्पति के 'चतुषष्टिकलासंग्रहात्मकः काव्यदर्शस्य कश्चिदन्योऽपि परिचछेऽस्तीत्याहुः इस कथन से भी होती है। इससे यह भी प्रतीत होता है कि इन व्याख्याकारों के समय 'कलापरिच्छेद' का अस्तित्व कहीं न कहीं अवश्ये था, किन्तु ये लोग जहाँ रहते थे, वहाँ उसका प्रचलन नहीं था (स त्विह न प्रवर्तते)। इसीलिये उसकी व्याख्या भी नहीं की गई। कलापरिच्छेद के प्रचलन के न होने का कारण यही हो सकता है कि उसमें जिन कलाओं का विवेचन किया गया था, वे उस युग की दृष्टि में काव्य से सम्बद्ध नहीं रह गई होंगी, इसलिये काव्यशास्त्र के जिज्ञासुओं के लिए उनका कोई उपयोग नहीं रह गया था। परवर्ती काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में कलाओं के विवेचन का न होना इस तथ्य का पुष्ट प्रमाण है कि काव्यशास्त्र के आचार्यों की दृष्टि में काव्यशास्त्र का काव्येतर कलाओं से कोई सम्बन्ध नहीं रह गया था।

वर्तमान में प्रकाशित 'काव्यादर्श' के संस्करणों में तीन परिच्छेद उपलब्ध होते हैं, जिनमें कारिका (लक्षण श्लोक) और उदाहरण दोनों को मिलाकर कुल 660 श्लोक हैं। कहा जाता है कि ब्रह्मवादि मुद्रणालय, मद्रास से प्रकाशित इसके संस्करण में चार परिच्छेद हैं, न कि वर्तमान संस्करणों के समान तीन। इसमें तृतीय परिच्छेद की समाप्ति यमक-प्रहेलिक निरूपण के साथ हो जाती है। चतुर्थ परिच्छेद में केवल दोषों का विवेचन है। इधर डॉ० जयशंकर त्रिपाठी ने अपने शोधग्रन्थ 'आचार्य दण्डी और संस्कृत काव्यशास्त्र का इतिहास-दर्शन' में विभिन्न तर्को के आधार पर 'काव्यादर्श' के तृतीय परिच्छेद को अप्रामाणिक ठहरा कर केवल दो परिच्छेदों को मान्यता प्रदान की है। डॉ० धर्मेन्द्र कुमार गुप्त ने अपने धारदार एवं युक्तियुक्त तर्को से डॉ०त्रिपाठी की असंगत और अपारम्परिक मान्यता को निराधार सिद्ध कर इस क्षेत्र में पैर पसार रही बे सिर-पैर की आलोचना का जो समुचित उत्तर दिया है (दृ०काव्यादर्श, धर्मेन्द्र कुमार गुप्त भूमिका, पृ० 17-21), उसके लिए वे कोटिश: साधुवाद के पात्र हैं। वास्तव में 'काव्यादर्श' के तीसरे परिच्छेद को अप्रामाणिक ठहराने से पहले डॉ० त्रिपाठी को 'काव्यादर्श' का वह स्थल बताना चाहिए था, जहाँ दण्डी का प्रथम परिच्छेद के श्लोक 61 में यमक के सम्बन्ध में की गई— **'तनु नैकान्तमधुरमतः पश्चातद्विधास्येत।'** यह घोषणा कार्यान्वित की गई हो। दण्डी ने 'यमक' सदृश नैकान्तमधुर, सुकर-दुष्कर अलंकारों, चित्रकाव्य के विविध भेदों तथा दोषों के निरूपण के लिए तीसरे परिच्छेद की रचना की थी, यह निश्चय है। बिना तीसरे परिच्छेद के

वर्तमान -'काव्यादर्श' विकलांग-सा हो जायेगा, इसलिये उसके पृथक्करण के लिए कोई भी प्रयास करना उचित नहीं होगा।

'काव्यादर्श' के 'पूर्वशास्त्राणि संहत्य' (1/2), 'निबबन्धुः क्रियाविधिम्' (1/9), तैः शरीरच्च काव्यानामलंकाराश्च दर्शिताः (1/10) तथा किन्तु बीज विकल्पनां पूर्वाचार्यैः प्रदर्शितम्' 2/2 इन श्लोकांशों से सूचित होता है कि दण्डी के पहले काव्यशास्त्र के कई आचार्य हो चुके थे, जिन्होंने इस शास्त्र के नामकरण के साथ-साथ काव्य के शरीर, उसके शोभाधायक धर्म (गुण और अलंकार), विकल्पों (अलंकारों) के बीज तथा काव्य के लिए परिहार्य विविध दोषों के सम्बन्ध में अपनी-अपनी दृष्टि और सामर्थ्य के अनुसार विवेचन किया था। आचार्य दण्डी ने उनके ग्रन्थों का सूक्ष्म आलोचना करने तथा पूर्ववर्ती एवं समकालीन काव्यग्रन्थों का गहराई से अध्ययन के उपरान्त (प्रयोगानुपलक्ष्य च 1/2) उस समय तक स्थापित हो चुके काव्य के सिद्धान्तों का जो परिसंस्कार किया (तदेव परिसंस्कर्तुमयमस्मत्-परिश्रमः 2/2), उसी का मूर्त रूप यह 'काव्यादर्श' है। कहना न होता कि दण्डी ने इसमें अपने समय तक के काव्यसिद्धान्तों को संशोधित (परिवर्तित एवं परिवर्धित) करने के साथ-साथ, अपने भी कतिपय सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया होगा। 'काव्यादर्श में निरूपित काव्यसिद्धान्तों को परिच्छेदानुसार इस प्रकार देखा जा सकता है।

प्रथम परिच्छेद के द्वितीय श्लोक में सबसे पहले 'काव्यलक्षण' करने की प्रतिज्ञा करने के अनन्तर वाणी की प्रशंसा, काव्यवाणी की प्रशंसा, भाषा के सुप्रयोग और दुष्प्रयोग की फलश्रुति, काव्यदोषों की अनुपेक्षणीयता, काव्यगत गुण-दोषों के ज्ञान के लिए काव्यशास्त्र की आवश्यकता, सूरियों के द्वारा काव्यशास्त्र के निबन्धन के साथ-साथ काव्य शरीर और अलंकारों के निर्धारण की सूचना, काव्य (शरीर) की परिभाषा, छन्द के अनुसार काव्य का विभाजन और छन्दोविचिति में उसके विस्तृत विवेचन का संकेत, महाकाव्यका लक्षण, परम्परा की पृष्ठभूमि में कथा और आख्यायिका के लक्षण के उपरान्त दोनों को एक ही गद्यजाति की मान्यता, मिश्रकाव्य नाटकों के अन्यत्र विवेचन का संकेत, चम्पू की परिभाषा, भाषा के आधार पर काव्य के चार भेद, संस्कृत और भेदों सहित प्राकृत का उल्लेख, सेतुबन्ध की रचना के माध्यम से महाराष्ट्री की प्रशंसा, अन्य प्राकृतों का संकेत, भाषामूल काव्यों की अलग-अलग विशेषतायें, 'बृहत्कथा' के पैशाची में लिखे जाने का संकेत, दृष्यादि के आधार पर काव्य के प्रकारत्रयत्व का प्रतिपादन सूक्ष्म भेदों वाली वाणी के अनेक मार्गों की सूचना के बाद स्पष्ट अन्तर वाले वैदर्भ और गौडीय मार्ग के वर्णन की प्रतिज्ञा। दश गुणों के उद्देश्य-कथन के साथ उनके वैदर्भ मार्ग के प्राण और गौड मार्ग में विपर्ययत्व का प्रतिपादन, प्रत्येक गुण के लक्षणोदाहरण पूर्वक प्रतिपादन के साथ तत्तद् गुण के प्रति दोनों मार्गों के विशिष्ट दृष्टिकोण का निर्देश, गुण-निरूपण के मध्य ही प्रसंशा अग्राम्यत्व, अनेयत्व अनुप्रास, यमक तथा गौणवृत्ति के प्रति आचार्य की दृष्टि की सूचना, इक्षु और गुड आदि के दृष्टान्त से प्रति-कवि में स्थित मार्गभेद के प्रतिपादन में अपनी असमर्थता का प्रतिपादन करने के बाद अन्त में बताया गया है कि काव्य के यद्यपि प्रतिभा, श्रुत और अभियोग (अभ्यास) ये तीन कारण होते हैं, किन्तु अभ्यास

पूर्वक वाग्देवी की उपासना करने वाले कवि को प्रतिभा के न रहने पर भी विदग्ध-गोष्टी में विहार कराने योग्य काव्यनिर्माण की सामर्थ्य की प्राप्ति हो जाती है।

द्वितीय परिच्छेद में अलंकारों का निरूपण है। इसमें सबसे पहले अलंकार की परिभाषा के साथ यह बताया गया है कि अलंकारों की कल्पना आज भी हो रही हैं, इसलिये उसका पूर्ण रूप से निरूपण नहीं किया जा सकता। इसके बाद यह बताया गया है कि प्रत्येक अलंकार के मूलभूत तत्त्व का प्रदर्शन पूर्वाचार्य कर चुके हैं, दण्डी को अब उसका परिसंस्कार करना है। इसके पश्चात अलंकार के दोनों भेदों-मार्गविभाजक अलंकार गुण और साधारण अलंकार उपमादि-को पहली बार बताने के पश्चात साधारण अलंकारों के निरूपण का उपक्रम किया गया है। इसी क्रम में सबसे पहले स्वभावाख्यान (स्वभावोक्ति), उपमा, रूपक, दीपक आवृत्ति, आक्षेप, अर्थात्तरन्यास, व्यतिरेक, विभावना, समासोक्ति, अतिशयोक्ति, उत्प्रेक्षा, हेतु सूक्ष्म लव, क्रम, प्रेयस् रसवत्, ऊर्जास्विन्, पर्यायोक्त, समाहित, उदात्त, अपह्नुति, श्लेष, तुल्ययोगिता, विरोध, अप्रस्तुत-स्तोत्र (अप्रस्तुतप्रशंसा), व्याजस्तुति, निदर्शना, सहोक्ति, परिवृत्ति, आशीः, संसृष्टि और भाविक-इन 35 अर्थालंकारों का पूर्वसूरियों के नाम पर परिगणन किया गया है और उसके पश्चात् उपर्युक्त क्रम से ही प्रत्येक अलंकार का लक्षण, भेदोपभेद और उदाहरण के साथ विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया है। उसने अपने युग में स्वतन्त्र अलंकार के रूप में मान्य अनन्वय और ससन्देह को उपमा के भेदों, उपमारूपक को रूपक के भेदों में तथा उत्प्रेक्षावयव को उत्प्रेक्षा के भेदों में समाविष्ट कर दिया है। इसके अतिरिक्त उसने उपमेयोपमा नामक एक और अलंकार का ‘उपमा’ के अन्योन्योपमा नामक भेद के रूप में निरूपण किया है। इस प्रकार देखा जाए तो उसने कुल 40 अर्थालंकारों का निरूपण किया है।

दण्डी के अर्थालंकारों के इस विवेचन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि कुल विवेचित 35 स्वतन्त्र अलंकारों में 27 के भेदों की संख्या 190 है। केवल उपमा के ही 32 भेद है। उपमा के इन भेदों में से कोई ऐसे हैं, जो आगे चलकर स्वतन्त्र अलंकार के रूप में प्रतिष्ठित हुए। 10 या उससे अधिक भेद वाले अलंकार ये है-आक्षेप (24), रूपक (20), हेतु (16), दीपक(12), और व्यतिरेक (10)। अन्य विकल्पित अलंकार ये हैं- श्लेष (9), अर्थान्तरन्यास (8), रसवन् (8), विरोध (6), विशेषोक्ति (5), स्वभावोक्ति, समासोक्ति और लेश (प्रत्येक 4), आवृत्ति और आपह्नुति (प्रत्येक के तीन भेद), विभावना, अतिशयोक्ति, उत्प्रेक्षा, सूक्ष्म, लेश, प्रेयस् उदात्त, तुल्ययोगिता व्याजस्तुति सहोक्ति, संसृष्टि और निदर्शन (प्रत्येक के दो भेद)। जिनके एक से अधिक भेद नहीं हैं, ऐसे अलंकार ये है-यथासंख्या, ऊर्जास्वी, पर्यायोक्त, समाहित, अप्रस्तुत प्रशंसा, परिवृत्ति आशीः और भाविक।

दण्डी ने यमक का निरूपण बड़े मनोयोग से किया प्रतीत होता है यद्यपि ‘यमक’ उनके लिए ‘नैकान्तमधुर’ है, किन्तु जिस विशाल फलक पर उसका निरूपण हुआ है वह इस तथ्य को झुठलाता प्रतीत होता है। दण्डी ने उसके कुल 315 भेद माने हैं। सदृष्ट और समुद्गक आदि सात भेद इसके अतिरिक्त है। आचार्य ने इसके लगभग 50 भेदों के उदाहरण के लिए स्वरचित पद्यों का प्रयोग किया

है। विद्वानों की दृष्टि में 'दण्डी' का यमक निरूपण संस्कृत काव्यशास्त्र के इतिहास में परिपूर्ण तथा विशद निरूपण का अद्वितीय निदर्शन है। यमक के पश्चात अन्य शब्दालंकारों में गोमूत्रिका, अर्धभ्रम, सर्वतोभद्र, स्वरनियम स्थाननियम, वर्णनियम तथा प्रहेलिका का निरूपण है। इनमें स्वरनियम, स्थाननियम तथा वर्णनियम में से प्रत्येक के चार-चार भेद तथा प्रहेलिका के 16 भेद है। यमक को छोड़कर शेष सभी अलंकार की दृष्टि में चित्र हैं।

तृतीय परिच्छेद के अन्तिम विवेचनीय विषय के रूप में दण्डी ने दोषों को लिया है। ये दोष संख्या में दस हैं, जैसे-अपार्थ, व्यर्थ, एकार्थ, ससंशय, अपक्रम, शब्दहीन, मतिभ्रष्ट, भिन्नवृत्त, देशकाल, कलालोकन्यायागम विरोध। भामह के द्वारा विवेचित 'प्रतिज्ञाहेतुदृष्टान्तहानि' रूप दोष का उन्होंने 'विचार कर्मशप्रायस्तेनालीढेन किं फलम्' कहकर काव्य में विचार करने का विरोध किया है। दसों दोषों का यह विवेचन अत्यन्त प्रशस्त शैली में लभगण साठ श्लोकों में सम्पन्न हुआ है।

इस प्रकार 'काव्यादर्श के वर्ण्यविषय का परिचय देने के पश्चात् अब हम उसकी उन विशेषताओं के सरलता से रेखांकित कर सकते हैं, जिन्हें उसकी संस्कृत काव्यशास्त्र के लिए देनामाना जा सकता है-काव्यशास्त्र की आदिम कालीन मान्यता के अनुसार काव्य के केवल शरीर पक्ष पर ध्यान देते हुए भी दण्डी, ने काव्य की जो 'शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली' के रूप में परिभाषा दी उसके 'इष्टार्थ' में वह 'आत्मतत्त्व' भी विद्यमान है, जो बाद में 'रस' के रूप में काव्यात्मा माना गया। इसकी इसी विशेषता के कारण पण्डितराज जगन्नाथ जैसे रसवादी कवि और आचार्य ने इसके प्रभाव में अपनी काव्य-परिभाषा दी।

काव्यशरीर के अलंकरण के लिए जिस 'अलंकार' तत्त्व की उद्भावना की गई, उसमें उन्होंने प्रसिद्ध 'अलंकार' के साथ ही 'गुण' को भी सम्मिलित करके दोनों को समान महत्व दिया। यद्यपि इससे दोनों की स्पष्ट न हो सकने वाली भिन्नता परवर्ती वामनाचार्य के द्वारा ही स्पष्ट की जा सकी, तथापि दोनों को समान स्तर प्रदान करने का श्रेय तो दण्डी को मिलना ही चाहिए।

दण्डी पहले काव्याचार्य हैं, जिसने प्रतीकविभिन्न काव्यामार्ग को पहचान तथा स्पष्ट अन्तरों वाले दो वैदर्भ और गौडीय मार्गों और उनके नियामक तत्त्वों के रूप में दस गुणों का सयुक्तिक और सबल प्रतिपादित किया। यद्यपि उसके इस प्रतिपादन में कुछ त्रुटियाँ हैं, तथापि उसके ही सैद्धान्तिक आधार पर आगे बढ़कर वामन ने रीति के नाम पर मार्गों की संख्या, मध्यवर्ती रीति पांचाली की मान्यता के साथ, तीन की तथा रीति का स्तर इस सीमा तक विकसित किया कि उसे काव्य की 'आत्मा' माने जाने का सौभाग्य मिला। उसके इस सौभाग्य में दण्डी का ही योगदान है।

दण्डी ने महाकाव्य की जो परिभाषा दी वह काव्यशास्त्र के प्रारम्भिक आचार्यो। में सर्वश्रेष्ठ, तथा उसी में कुछ परिवर्तन-परिवर्धन कर विश्वनाथ ने उसे लगभग पूर्ण और युगानुकूल बनाया। कथा और आख्यायिका को एक ही गद्यजाति मानकर, दोनों में एकता प्रतिपादन कर दण्डी ने परम्परा से टक्कर लेने के साथ ही अपने स्वतन्त्र दृष्टिकोण का परिचय दिया है, यद्यपि सभी गद्यजातियों को एक मानने का उनका सिद्धान्त गले नहीं उतरता। दण्डी ने अपने गुण-विवेचन की कमी को दोष-विवेचन

में दूर कर दिया है। उन्होंने दस दोषों का निरूपण बड़ी ही वैज्ञानिक दृष्टि से किया है। यद्यपि दण्डी ने गुण के समान दोष की भी कोई सामान्य परिभाषा नहीं दी, तथापि उनके दोषों के विश्लेषण से पता चलता है कि वे दोष को भावात्मक तत्त्व मानते हैं। दण्डी के उदाहरण प्रायः स्वरचित हैं और उनमें निबद्ध विषय-वस्तु जीवन के सभी क्षेत्रों से ली गई हैं। उनमें कुछेक स्थलों को छोड़कर, अपने लक्षण से सर्वथा संगति मिलती है।

दण्डी आचार्य के साथ-साथ प्रतिभाशाली कवि भी है। अत्यन्त दुरूह शास्त्रीय विषय को अत्यन्त सरस और ललित भाषा में प्रस्तुत करने में उनकी कोई तुलना नहीं। दण्डी की इन विशेषताओं के प्रकाश में संस्कृत काव्यशास्त्र में उनके योगदान का अनुमान सहज ही किया जा सकता है। यदि किसी काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ की लोकप्रियता के मूल में उसका वह महत्व होता जो उसने अपने क्षेत्र में अपने विशिष्ट योगदान के द्वारा उपार्जित किया होता है, तो 'काव्यादर्श' संस्कृत काव्यशास्त्र का सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ प्रमाणित होता है, क्योंकि जो लोकप्रियता, विशेषकर भारत के संस्कृतेतर तथा देशान्तरीय क्षेत्रों में, इसको मिली किसी अन्य ग्रन्थ को नहीं मिल सकी। इसकी इस लोकप्रियता का आकलन दो प्रकार से किया जा सकता है-1.अपने समकालीन और परवर्ती काव्यशास्त्रीय साहित्य पर इसके प्रभाव की दृष्टि से और 2. उसके सिद्धान्तों को समझाने के लिए उसके ऊपर की गई व्याख्याओं की दृष्टि से। पहले साहित्य-शास्त्र पर इसके प्रभाव को लेते हैं।

संस्कृत साहित्य के परवर्ती आचार्यों पर 'काव्यादर्श' का व्यापक प्रभाव पड़ा है, विशेषकर मध्यकालीन उत्तरभारतीय आचार्यों पर। भोज के दोनों ग्रन्थों- सरस्वतीकण्ठाभरण और श्रृंगारप्रकाश- में इसके व्यापक प्रभाव का कई रूपों में साक्षात्कार किया जा सकता है। कई स्थलों पर तो भोज ने बिना किसी परिवर्तन के ही काव्यादर्श के श्लोकों-कारिका और उदाहरण दोनों-को उद्धृत किया है और कहीं-कहीं कुछ परिवर्तन के साथ। 'अग्निपुराण' के काव्यशास्त्रीय भाग की भी वही स्थिति हैं वामन की रीति और उसके आधारस्तम्भ के विवेचन में 'काव्यादर्श' का ही प्रभाव काम कर रहा है, इसे सभी स्वीकार करते हैं। उत्तरकाल में अलंकारों की संख्या में जो भूयसी वृद्धि हुई, उसके भी मूल में दण्डी के अलंकार भेद ही है। कुछ अलंकार-भेद तो ज्यों के त्यों स्वतन्त्र अलंकार के रूप में गृहीत हो गए है। दण्डी की न केवल काव्यपरिभाषा ने अपितु उनके स्वरचित लालित्य उदाहरणों ने भी काव्यशास्त्र के अन्तिम दिग्गज आचार्य जगन्नाथ पण्डित तक को प्रभावित किया है। 'कामसूत्र' के व्याख्याकार और 'मालतीमाधव' के व्याख्याकार जगद्धर ने कुछ विषयों की पुष्टि के लिए 'काव्यादर्श' को उद्धत किया है, यह देखा जा चुका है। इसकी तुलना में अधिकांश कश्मीरी आचार्य और उनसे प्रभावित उत्तर भारतीय-विश्वनाथ आदि-दण्डी के प्रति अवश्य ही उदासीन रहे हैं। उनकी तुलना में उन्होंने उनके प्रतिद्वन्द्वी भामह को अधिक मान-सम्मान दिया हैं। इसका एक कारण भामह का कश्मीरी होना भी हो सकता है। किन्तु संस्कृत साहित्यशास्त्र के बाहर, अन्य भाषायी काव्यशास्त्रों पर जब दण्डी के प्रभाव को देखते है। तो संस्कृत का बड़े से बड़ा काव्यशास्त्री भी उन्के सामने तुच्छ सा दिखाई देने लगता है। इतिहास बताता है कि तमिल, कन्नड़ और सिंहली भाषा के काव्यशास्त्र पर

काव्यादर्श का व्यापक प्रभाव पड़ा है। अपनी रचना के डेढ़ दो शतक पश्चात् ही यह ग्रन्थ कन्नड़ भाषा के 'कविराजमार्ग' सिघली भाषा के 'विसवसलंकार' (स्वभाषालंकार) पर विभिन्न रूपों में अपना प्रभाव छोड़ने में सफल रहा है। इसी प्रकार ग्यारहवीं शती के मध्यभाग में बुद्धमित्र की तमिल रचना 'वीरचोरियम्' के अलंकार प्रकरण पर तथा लगभग 1140 में लिखित अज्ञात लेखक की तमिल रचना 'दण्डियलंकारम्' (दण्ड्यलंकारम्) हिन्दी के प्रसिद्ध रीतिकालिन कवि केशवदास की - कविप्रिया' (1601) पर इसका व्यापक प्रभाव देखा जा सकता है। भारत के पड़ोसी देशों, जहाँ संस्कृत ही नहीं भारत की किसी भी भाषा का कोई काव्यशास्त्री नहीं पहुँचा सका, में भी दण्डी का व्यापक प्रभाव पड़ने की सूचना हैं सिंघली भाषा में रचित 'सियवलसलकर' लंका में वहाँ के राजा शीलवर्ण मेघसेन के द्वारा लिखा गया। 'काव्यादर्श' का प्राचीन तथा विश्रृत बौद्ध व्याख्याकार रत्नश्रोज्ञान लंका का ही निवासी था। (अन्य किसी भी काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ का व्याख्याकार कोई बौद्ध भी हुआ है, ऐसा सुना नहीं गया) 12 वीं शतीं के एक अन्य सिंघली लेखक संघरिक्खत का पालि भाषा में लिखित अलंकार गन्थ स्रबोधालंकार 'काव्यदार्श' पर आधारित है। इसके कई पद्य 'काव्यादर्श' के पद्यों के अनुवादमात्र है। तिब्बत भी दण्डी के प्रभाव से अछूता नहीं रहा। वहीं की भोंट भाषा में 'काव्यादर्श' का एक अनुवाद किया गया था, जिसका सम्पादन डॉ॰ अनुकूल चन्द्र बनर्जी ने किया है। इसके अतिरिक्त तेरहवीं शताब्दी में तिब्बती भाषा में लिखित 'काव्यादर्श' की एक टीका मिलती है।

4.5 सारांशः

इस इकाई के माध्यम से आप आचार्य दण्डी की कृतियों का सम्यक् रूप में अध्ययन कर सकते हैं। संस्कृत गद्य साहित्य में दण्डी का शीर्षस्थ स्थान है। संस्कृत गद्य काव्य के लेखकों में आचार्य दण्डी की कृति आज भी अक्षुण्य है जिस गद्य शैली को बाण ने अपने मनोरम कादम्बरी के द्वारा प्रशस्थ किया उसी शैली को दण्डी ने अपने सरल, सुगम, दशकुमारचरित के द्वारा उज्जवल बनाते हुए चमत्कृत किया है। इनके द्वारा लिखा हुआ लक्षण ग्रन्थ काव्यादर्श अलंकारशास्त्र के अत्यन्त ही महत्वपूर्ण ग्रन्थ के रूप में विद्वानों द्वारा स्वीकार किया गया है। जिसका अध्ययन आप इस इकाई के माध्यम से बड़े ही सरलता पूर्वक कर सकते है।

इस इकाई में आचार्य दण्डी के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व उनका समय, उनके विविध काव्यत्व के अध्ययन से आचार्य दण्डी के विषय में समग्र जानकारी एक स्थान पर प्राप्त कर सकेंगे।

4.6 शब्दावली:-

कथानक - संक्षिप्त कथा, कथासार।

किंवदन्ती	-	प्रसिद्ध।
सन्निविष्ट	-	मिला हुआ।
निर्दिष्ट	-	बतलाया गया।
पूर्ववर्ती	-	पहले से स्थित।
प्रतिबिम्बित	-	चित्रित।
वंशनाली	-	बांस की चोंगा।
अविश्वसनीय	-	जिस पर विश्वास न किया जा सके।

बोध प्रश्नः-

अभ्यास प्रश्न 1-

(1) बहुविकल्पीय प्रश्नः-

1. ‘राजवाहन’ नामक राजकुमार का वर्णन है-
   (क) दशकुमारचरित (ख) मृच्छकटिक
   (ग) रत्नावली (घ) वेणीसंहार
2. काव्यादर्श में परिच्छेद है ?
   (क) 6 (ख) 3
   (ग) 9 (घ) 10
3. दण्डी की कितनी रचनाएं हैं ?
   (क) तीन (ख) चार
   (ग) पांच (घ) आठ
4. ‘दण्डिनः पदलालित्यम्’ यह उक्ति किस कवि के लिए कही गई है ?
   (क) आचार्य दण्डी (ख) सुबन्धु
   (ग) वाण (घ) अम्बिकादत्त व्यास
5. (ब) आचार्य दण्डी के पिता का नाम था।
   (क) वीरदत्त (ख) चित्रभानु
   (ग) वाचस्पति (घ) राघव
6. दशकुमारचरित के अनुसार राजहंस की राजधानी थी-
   (क) कुसुमपुर (ख) उज्जयिनी
   (ग) पुष्पपुरी (घ) विदिशा
7. रोमांचक घटनाओं का वर्णन किस काव्य में है-

(क) हर्षचरित (ख) दशकुमारचरित

(ग) कादम्बरी (घ) वासवदत्ता

8. (स) काव्यादर्श में अंलकारों की संख्या है।

(क) 30 (ख) 62

(ग) 35 (घ) 45

9. दशकुमारचरितम् में दण्डी ने किस रीति का प्रयोग किया-

(क) गौणी (ख) वैदर्भी

(ग) पांचाली (घ) अवन्ती

(2) निम्न वाक्यों में सही के सामने (√) और गलत के सामने (×) का चिह्न लगायें-

1. दशकुमार चरित के रचनाकार आचार्य दण्डी है। ( )
2. दण्डी ने गौणी रीति का प्रयोग किया है। ( )
3. दण्डी ने दश गुणों का निरूपण किया है। ( )
4. दण्डी ने अर्थालंकारों का वर्णन किया है। ( )
5. दशकुमारचरित में आठ उच्छवास हैं। ( )
6. 'राजवाहन' नामक राजकुमार का वर्णन दशकुमारचरित में है। ( )
7. दशकुमारचरित में दण्डी ने वैदर्भी रीति का प्रयोग किया। ( )
8. दण्डी रचित गद्यकाव्य कादम्बरी है। ( )

(3) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. आचार्य दण्डी के माता का नाम....................................है।
2. काव्यादर्श.. में विभक्त है।
3. दण्डी का जन्मस्थान...है।

4.7 बोध प्रश्नों के उत्तर:-

(1)

1. क 2. ख 3. क 4. क 5. क

6. ग 7. ख 8. ग 9. ख

(2)

1. सही 2. गलत 3. गलत 4.सही

5. सही 6. सही 7. सही 8.गलत

(3)

1. गौरी 2. परिच्छेद 3.कांची

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास- उमाशंकरशर्मा 'ऋषि'
2. संस्कृत वाड्मय का वृहद् इतिहास- पं॰ बलदेव उपाध्याय

4.9 उपयोगी ग्रन्थ:-

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास - कन्हैया लाल पोद्दार
2. दशकुमारचरित - आचार्य दण्डी
3. काव्यादर्श- आचार्य दण्डी

4.10 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. महाकवि दण्डी का काल निर्धारण कीजिए।
2. काव्यादर्श लक्षण ग्रन्थ है इसे सिद्ध कीजिए।
3. दण्डी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर टिप्पणी लिखिए।
4. दण्डी के शैलीगत वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालिए।

तृतीय सेमेस्टर/SEMESTER-III
खण्ड-द्वितीय
दशकुमारचरितम्

खण्ड-द्वितीय, इकाई-प्रथम
दशकुमारचरितम् का रचनाविधान एवं वैशिष्ट्य

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 दशकुमारचरितम् का रचनाविधान एवं वैशिष्ट्य
  1.3.1 महाकवि दण्डी का व्यक्तित्त्व एवं कृतित्त्व
  1.3.2 महाकवि दण्डी का जन्मस्थान, वंश परिचय एवं समय
  1.3.3 महाकवि दण्डी की भाषा शैली
  1.3.4 महाकवि दण्डी की रचनाओं का संक्षिप्त परिचय
  1.3.5 दशकुमारचरितम् की कथावस्तु
  1.3.6 दशकुमारचरितम् का वैशिष्ट्य
1.4 सारांश
1.5 शब्दावली
1.6 बोध प्रश्न
1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.8 अन्य सहायक पुस्तकें
1.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना:-

प्रिय शिक्षार्थियो !

गद्य एवं पद्य काव्य से सम्बन्धित यह द्वितीय खण्ड की प्रथम इकाई है। इससे पूर्व प्रथम खण्ड में आपने गद्य काव्यकार दण्डी, सुबन्धु और बाण के बारे में अध्ययन किया। प्रस्तुत इकाई में आप **"दशकुमारचरितम् का रचनाविधान एवं वैशिष्ट्य"** के विषय में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

वस्तुतः संस्कृतसाहित्य में गद्य का प्रयोग अत्यधिक प्राचीन काल से होता आया है। प्राचीनकाल में पद्य की अपेक्षा गद्य को अत्यधिक सम्मान प्राप्त था। कालान्तर में धीरे-धीरे वेद, पुराण, दर्शन, ज्योतिष, व्याकरण, आदि की सहायता से गद्य पूर्ण विकसित रूप में स्थापित हो गया। मध्य काल में संस्कृत गद्य साहित्य का जो रूप विकसित हुआ उसे देख कर इतिहासकारों ने कहा है- वैदिक काल सें आरम्भ कर मध्यकाल तक गद्य को विकसित होने का इतिहास बड़ा ही मनोरम है। गद्य के दो रूप वैदिककाल का सीधा - साधा बोल - चाल का गद्य एवं लौकिक संस्कृत का प्रौढ़ समास बहुल गाढ़बन्ध वाला गद्य। इस प्रकार कें मध्यकालिन संस्कृत साहित्य में अपना योगदान जिस रूप में दण्डी ने दिया है वह अद्वितीय है।

इस इकाई के माध्यम से आचार्य दण्डी उनके व्यक्तित्त्व, कृतित्त्व एवं दशकुमारचरितम् के रचनाविधान एवं वैशिष्टय को अत्यन्त ही सूक्ष्म दृष्टि प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। जिसकी सहायता से दण्डी विषयक अनेक समस्याओं का समाधान बड़ी ही सरलता के साथ आप कर सकेंगे ।

1.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप—

- ❖ महाकवि दण्डी से सम्बन्धित महत्त्व पूर्ण बातों का अध्ययन करेंगे।
- ❖ महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् का रचनाविधान का अध्ययन करेंगे।
- ❖ महाकवि दण्डी के व्यक्तित्त्व के विषय में आप अध्ययन करेंगे।
- ❖ दण्डी के कृतियों के विषय में आप अध्ययन करेंगे।
- ❖ संस्कृत गद्य साहित्य में दशकुमारचरित का स्थान एवं महत्त्व के विषय में आप अध्ययन करेंगे।
- ❖ महाकवि दण्डी के दशकुमारचरित का वैशिष्टय को जान सकेंगे।

1.3 दशकुमारचरितम् का रचनाविधान एवं वैशिष्टय:-

प्रिय शिक्षार्थियो ! संस्कृत गद्य साहित्य के इतिहास में दशकुमारचरितम् दण्डी की एक सशक्त रचना है। संस्कृत भाषा के साहित्य में ही नहीं विश्व की अन्य भाषाओं के साहित्य में भी पद्य का ही पहला स्थान हमें देखने को मिलता है। संस्कृत वांग्मय में तो विश्व में सर्वसम्मत प्राचीन ग्रन्थ ऋग्वेद से लेकर वाक्यपदीय आदि व्याकरणग्रन्थ, ज्योतिष, आयुर्वेद, इतिहास पुराण, काव्य आदि अनेक शास्त्रग्रन्थ हम पद्य में ही पाते हैं। इस प्रकार संस्कृत वांग्मय में पद्य की प्रचुरता उपलब्ध होती है। संस्कृत साहित्य के कथारूप दशकुमारचरितम् के कर्ता अलंकारशास्त्रीय आचार्य दण्डी हैं। अब हम "दशकुमारचरितम् का रचनाविधान एवं वैशिष्टय" के विषय में विस्तार पूर्वक सम्यक अध्ययन करेंगे।

1.3.1 महाकवि दण्डी का व्यक्तित्त्व एवं कृतित्त्व:-

संस्कृत के कवि यद्यपि अपने जीवन-चरित के सन्दर्भ में मौन ही हैं तथापि दण्डी के जीवन के सन्दर्भ में कुछ जानकारियाँ "अवन्तिसुन्दरी-कथा" में उपलब्ध होती है। यह दण्डी की ही रचना मानी जाती है। इसके अनुसार भारवि के तीन पुत्र थे, उनमें मध्यम पुत्र का नाम मनोरथ था। मनोरथ के चार पुत्र हुए जिनमें वीरदत्त सबसे छोटा था। वीरदत्त की पत्नी गौरी थी। उन्हीं वीरदत्त तथा गौरी के पुत्र थे महाकवि दण्डी। बाल्यकाल में ही दण्डी अनाथ हो गये थे। अनाथ होने पर ये काञ्ची (काञ्जीवरम्) में अकेले ही रहते थे। काञ्ची में विप्लव होने पर ये जंगलों में रहे तत्पश्चात जब शहर में शान्ति हो गयी तब ये पल्लव नरेश की सभा में आये और वहीं रहने लगे। ऐसा माना जाता है कि पल्लव नरेश के पुत्र को शिक्षा देने के लिए ही दण्डी ने काव्यादर्श की रचना की थी।

राजशेखर के ग्रन्थ से उद्धृत एक श्लोक के अनुसार दण्डी ने तीन ग्रन्थों की रचना की है। इनमें से दो दशकुमारचरित और काव्यदर्श हैं। तीसरे ग्रन्थ के विषय में बहुत अधिक मतभेद विद्यमान हैं। पिशेल मृच्छकटिक को दण्डी की कृति मानते हैं परन्तु इसमें कोई प्रमाण नहीं। इसी प्रकार छन्दोविरचित तथा कलापरिच्छेद भी दण्डी के ग्रन्थ नहीं माने जा सकते क्योंकि छन्दोविरचित में केवल मात्रा छन्दों का ही निर्देश है और कलापरिच्छेद सम्भवतः काव्यादर्श का ही एक अध्याय था। पो0. काणे के अनुसार अवन्तिसुन्दरी दण्डी की तीसरी कृति मानी जा सकती है। अगाशे ने काव्यादर्श के लेखक का गद्यकार दण्डी से तादात्म्य स्वीकार नहीं किया। यह सम्भव है कि काव्यशास्त्री दण्डी, गद्यकार दण्डी से भिन्न रहा हो। परन्तु यह बात भी असम्भव नहीं है कि एक उसके यौवन की रचना हो और दूसरी प्रौढ़ावस्था की।

दण्डी के नाम से 'दशकुमारचरित' नामक रोमाचंक आख्यानों तथा कौतूहल से परिपूर्ण ग्रन्थ पर्याप्तरूपेण प्रख्यात है। यह तीन खण्डों में विभाजित है। पूर्वपीठिका, दशकुमारचरित और उत्तरपीठिका। दशकुमारचरित चौदह उच्छवासों में विभक्त है। पर्वू पीठिका में पाँच, दशकुमारचरित में आठ तथा उत्तरपीठिका में एक उच्छवास है। पूर्वपीठिका के पाँच उच्छवासों में अवन्तिसुन्दरी की

कथावस्तु वर्णित की गई है। मध्यभाग के आठ उच्छवासों में आठ राजकुमारों का चरित्र वर्णन प्राप्त है और उत्तरपीठिका में दो कुमारों का वर्णन प्राप्त है।

1.3.2 महाकवि दण्डी का जन्मस्थान, वंश परिचय एवं समय:-

''वाणी वाणी बभूव'' यद्यपि दण्डी के जीवन के विषय में उपलब्ध प्रामाणिक सामाग्री अपर्याप्त है तथापि निःसन्देह दण्डी को लेखक के रूप में पर्याप्त यश की उपलब्धि हुई। कहा गया है—

जाते जगति वाल्मीकि कविरित्यभिधाभवत्।
कवीति ततो व्यासे कवयः त्रायी दण्डिनी।।

अर्थात् वाल्मीकि के उत्पन्न होने पर 'कवि' शब्द उपाधि रूप में संसार में प्रचलित हुआ। व्यास के होने पर 'दो कवि' और दण्डी के होने पर 'तीन कवि' हो गए।

दण्डी के सम्बन्ध में कवि परम्परा में किंवदन्ती है कि एक बार कवियों में विवाद हुआ कि कौन श्रेष्ठ है । दण्डी ने अपना निर्णायक भगवती को बनाया । भगवती के मन्दिर में कवियों ने अपनी-अपनी रचना रख दी और मन्दिर के कपाट बन्द कर दिए गए ।कुछ समय के पश्चात् मन्दिर में यह स्वर गूँजा— **'कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशय:'** अर्थात् कवि तो केवल दण्डी हैं इसमें कोई सन्देह नहीं है। इसीलिए अर्वाचीन कवियों की आचार्यदण्डी के पक्ष में प्रशस्ति है कि— **'उपमा कालिदासस्य भारवेर्थगौरवम्। दण्डिन: पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणा:'**।। अर्थात् मान्य कविगणों में आचार्य दण्डी का भी एक सुप्रतिष्ठत स्थान है।

बाण और सुबन्धु की अपेक्षा दण्डी की सरल शैली होने के कारण दण्डी को पूर्ववर्ती कहा जाता है। नवीं शताब्दी के अन्त तक लेखक के रूप में दण्डी के यश की स्थिरता उपलब्ध होती है क्योंकि शारंगधर पद्यति एवं सुक्तिमुक्तावली में उद्धृत राजशेखर की दण्डी - सम्बद्ध उल्लिखित प्रशस्ति इस प्रकार है—

त्रायोऽग्न्यस्त्रायो वेदास्त्रयो देवास्त्रयो गुणाः।
त्रयोदण्डीप्रबन्धश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुताः।।

दण्डी के व्यक्तिगत जीवन के सम्बन्ध में अवन्तिसुन्दरी के प्राप्त होने के पूर्व बहुत कम ज्ञात था। यद्यपि अवन्तिसुन्दरी के कर्ता के विषय में मतैक्य नहीं है तथापि पांडुरंग वामन काणे तथा वी. राघवन जैसे- विद्वानों के अनुसार यह दण्डी की ही कृति है। अवन्तिसुन्दरी कथा की भूमिका भाग के

अनुसार दण्डी के पितामह दामोदर प्रसिद्ध कवि भारवि के मित्र थे जिन्होंने उसका परिचय चालुक्य सम्राट विष्णुवर्धन (615-635 ई.) से करवाया था। हमें ज्ञात है कि दामोदर गंगराज दुर्विनीत के मित्र थे जिनका काल (605-650 ई.) माना जाता है। क्योंकि दण्डी दामोदर के पौत्र थे, अतः उनका काल 50 वर्ष बाद (665-683 ई.) में होने की सम्भावना है। यही काल दूसरे ज्ञात तथ्यों से भी साम्य रखता है। अवन्तिसुन्दरी में वाकाटक नरेश प्रवरसेन, कालिदास, सुबन्धु, बाण एवं मयूर का उल्लेख है जिससे सिद्ध होता है कि दण्डी का काल 650 ई. के पश्चात् रहा होगा। इससे दण्डी के काल के बाद की सीमा निर्धरित होती है। इनकी सीमा का निर्धारण काव्यादर्श पर आधरित नृपतुंग के कन्नड ग्रन्थ 'कविराज मार्ग' (815-875 ई.) के आधर पर किया जा सकता है। पुनश्च, विज्जिका नाम की कवयित्री प्रायः उद्धृत निम्नलिखित श्लाकों में दण्डी का उल्लेख करती है।—

नीलोत्पलदलश्यामां विज्जिकां मामजानता।
वृथैव दण्डिना प्रोक्तं सर्वशुक्ला सरस्वती।।

विज्जिका, पुलकेशिन् द्वितीय के ज्येष्ठ पुत्र महाराज चन्दादित्य की महारानी मानी जाती है और उसका उल्लेख शक संवत (581-879) के नेरूर ताम्रलेख में मिलता है। यदि यह सत्य है तो दण्डी विज्जिका के कुछ पूर्व ही हुए। इससे सिद्ध होता है कि दण्डी की रचनाओं का काल लगभग (660-680) ई0 में रहा होगा। 815 ई० के आस-पास हुए कन्नड़ कवि अमोघ वर्ष के अलंकारग्रन्थ "कविराजमार्ग" में काव्यादर्श के कई उदाहरण अक्षरशः उद्धृत हैं। अतः दण्डी का समय इससे पूर्व माना जाता है। दण्डी के काव्यादर्श का निम्न पद्य बाणभट्ट की कादम्बरी के शुकनासोपदेश से प्रभावित प्रतीत होता है।

पद्य इस प्रकार है- **अरत्नालोक संहार्यमवार्यं सूर्यरश्मिभिः। दृष्टिरोधकरं यूनां यौवनप्रभवं तमः।।** दण्डी के उपर्युक्त पद्य पर बाण भट्ट की कादम्बरी की निम्न पंक्तियों का प्रभाव है- **केवलं च निसर्गतः एवाभानु अष्टम् भेद्यमरनालोकोच्छेद्यम् - प्रदीपप्रभापनेयमतिगहनं तमो यौवनप्रभवम्।"** बाणभट्ट जी का काल 650 ई० के आस-पास निश्चित रूप से माना जाता है। अतः दण्डी सप्तम शताब्दी के अन्त तथा सप्तम के आरम्भ में प्रादुर्भूत हुए माने जाते हैं।

1.3.3 महाकवि दण्डी की भाषा शैली:-

राजशेखर के **'त्रयोदण्डि प्रबन्धाश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुताः'** के अनुसार दण्डी की तीन रचनायें प्रणीत हैं। जिनमें 'काव्यादर्श', 'दशकुमारचरित' और 'अवन्तिसुन्दरीकथा' है। 'काव्यादर्श' काव्यशास्त्र से सम्बन्धित रचना है। 'दशकुमारचरित' में दश राजकुमार अपने देश-देशान्तरों में भ्रमण तथा विचित्र अनुभवों का मनोरंजक वर्णन करते हैं। 'अवन्तिसुन्दरीकथा' में अवन्तिसुन्दरी की कथा है।

इनकी शैली सुबन्धु की वासवदत्ता के समान श्लेष बहुल और गौड़ी रीति में निबद्ध नहीं है और न बाणभट्ट की कादम्बरी के सदृश वर्णन में बिस्तर है । इनमें कहीं-कहीं च्युतसंस्कृति दोष की स्थिति होने पर भी इन की कथाएं अद्भुत, चित्र आकर्षक और शिक्षाप्रद हैं। स्थान-स्थान पर अनुप्रास की प्रचुरता ग्रन्थ को अलंकृत कर रही है। इसमें स्थान-स्थान पर श्रृंगार, करुण, वीर रस आदि का आस्वादन मिलता है। कादम्बरी और वासवदत्ता के सामान कथा इसमें नहीं है। इसमें व्यवहारनय और राजनय का मनोहर संकलन किया गया है। कामशास्त्र और चौर्यकला की भी अनूठी बातों का सन्निवेश है तथा यत्र-तत्र, सुख-दुख, कौतुक, हास, परिहास का भी पाठकों के हृदय में स्थान करने वाला है। इसमें प्रसाद गुण अधिक मात्रा में चित्त को प्रसन्न करने वाला है, वैदर्भी रीति और कहीं-कहीं गौड़ी रीति का भी सन्निवेश है। दण्डी की काव्य-शैली पांचाली रीति है। अर्थ की स्पष्टता, रस की सुन्दर अभिव्यक्ति, कल्पना की सजीवता और शब्द का लालित्य ये दण्डी की शैली के विशेष गुण है। अतएव प्राचीन समीक्षकों ने कहा है - ‘‘दण्डिनः पदलालित्यम्’’ बड़े-बड़े जटिल समासों से दण्डी की शैली अधिकांशतः मुक्त है। डॉ0 कीथ ने उनकी मुख्य विशेषता उनका चरित्र-चित्रण माना है। दण्डी की काव्यात्मक विशेषताओं के कारण कतिपय आलोचक उन्हें वाल्मीकि और व्यास के बाद तीसरा कवि मानते हैं।

1.3.4 महाकवि दण्डी की रचनाओं का संक्षिप्त परिचयः-

महाकवि दण्डी की तीन रचनाएँ मानी जाती हैं। इस तथ्य का समर्थन कविवर राजशेखर ने अपनी शार्ङ्गधरपद्धति में स्पष्ट रूप से किया है। यथा- **योग्नयस्त्रयो वेदास्त्रयो देवास्त्रयो गुणाः। त्रयो दण्डिप्रबन्धाश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुताः॥** जो दशकुमारचरित, काव्यादर्श और अवन्तीसुन्दरी कथा मानी जाती हैं। कतिपय विद्वान् अवन्तीसुन्दरीकथा के स्थान पर "छन्दोविचिति" को इनकी तीसरी रचना मानते रहे हैं क्योंकि इसका वर्णन काव्यादर्श में आता है तथापि विद्वानों ने प्रमाणपुरःसर इसका खण्डन किया है। इनकी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है।—

1. दशकुमारचरित—

दशकुमारचरित महाकवि दण्डी की गद्यरचना है। महाकवि लालित्यपूर्ण गद्य लिखने के लिए विख्यात हैं। इनका दशकुमारचरित उनके इस गुण को प्रकट करने में समर्थ है। इस काव्य का कथानक इस प्रकार है।—

दशकुमारचरित इस नाम से ही स्पष्ट है कि इस काव्य का विषय दश कुमारों के चरित्र का वर्णन करना है। यह गद्यकाव्य पूर्वपीठिका, उत्तरपीठिका और उपसंहार इन तीन भागों में विभक्त है। इसका अवान्तर वर्गीकरण उच्छवासों में हुआ है। पूर्वपीठिका में पाँच उच्छवास हैं। उत्तरपीठिका में आठ उच्छवास और उपसंहार भाग का कोई वर्गीकरण नहीं है। पूर्वपीठिका में दो राजकुमारों सोमदत्त और पुष्पोद्भव के चरित्र वर्णित हैं। उत्तरपीठिका में राजवाहन, अपहारवर्मा, उपहारवर्मा, अर्थपाल, प्रमति,

मित्रगुप्त, मन्त्रगुप्त और सुश्रुत इन आठ राजकुमारों के चरित वर्णित हैं। उपसंहार में विश्रुत का चरित्र वर्णित है। मगध के राजा राजहंस मालवनरेश से पराजित होकर वन में चले जाते हैं। वहाँ उनकी रानी राजकुमार राजवाहन को जन्म देती है। इसी समय सम्राट राजहंस के चार मन्त्री भी एक-एक पुत्ररत्न को प्राप्त करते हैं। कालान्तर में अन्य पाँच राजकुमार भी वन में राजा राजहंस के पास लाए जाते हैं और इन सभी दसों कुमारों का पालन-पोषण तथा प्रशिक्षण एकसाथ किया जाता है। वयस्क होने पर राजवाहन अपने साथियों के साथ दिग्विजय हेतु प्रस्थान करते हैं। भाग्यवशात् ये सभी अलग-अलग दिशाओं में चले जाते हैं। दैवयोग से ही पुनः इनका मिलन होता है और ये सभी अपने साथ बीती घटनाओं को सुनाते है। इन्हीं आपबीती घटनाओं का वर्णन दशकुमारचरित का वर्ण्य विषय है।

2. काव्यादर्श—

महाकवि दण्डी की द्वितीय रचना काव्यादर्श है। यह अलंकारशास्त्र से अर्थात् काव्यशास्त्र से सम्बन्धित रचना है। काव्यशास्त्र से सम्बन्धित रचनाओं से अभिप्राय उन रचनाओं से है, जो काव्यरचना के प्रयोजन उसके लक्षण, भेदोपभेदों, गुण, दोष, रस, अलंकार आदि विषयों की विवेचना करती है। भरतनाट्यशास्त्र, काव्यालंकार, साहित्यदर्पण, काव्यप्रकाश तथा काव्यादर्श आदि ग्रन्थ इसी विधा के ग्रन्थ हैं। महाकवि दण्डी रीति सम्प्रदाय के उद्भावक माने जाते हैं। इसलिए रीतियों का वर्णन तथा स्थापना काव्यादर्श की विषय-वस्तु का वैशिष्ट्य है।

काव्यादर्श तीन परिच्छेदों में विभक्त है। तीनों परिच्छेदों में 660 पद्य हैं। इसमें काव्यशास्त्रीय परिभाषाएँ तथा नियमोपनियम पद्यों में दिये गये हैं। इस ग्रन्थ की लोकप्रियता का पता इस बात से भी चलता है कि यह ग्रन्थ कई भाषाओं में अनुदित हो चुका है। कन्नड़ भाषा में काव्यादर्श का अनुवाद "कविराजमार्ग" के नाम से सिंहली में 'सिय-बस लकर' (स्वभाषालंकार) के नाम से और तिब्बती में भी इसका अनुवाद उपलब्ध है। काव्य में तीन गुणों की अपेक्षा दस गुण मानना और वैदर्भी तथा गौडीरीति का भेद स्पष्ट करना दण्डी के काव्यादर्श की उल्लेखनीय विशेषताएँ हैं।

3. अवन्तीसुन्दरीकथा—

महाकवि दण्डी के ये दो रचनाएँ निर्विवाद रूप से विद्वानों ने मानी हैं। तीसरी रचना कुछ विद्वान् ‘‘छन्दोविचिति" तथा कुछ 'अवन्तीसुन्दरीकथा' को मानते हैं। ‘अवन्तिसुन्दरीकथा’ में अवन्ती सुन्दरी की कथा है।

1.3.5 दशकुमारचरितम् की कथावस्तुः-

‘‘दण्डिनः पदलालित्यम्’’ दशकुमारचरित महाकवि दण्डी की गद्यरचना है। दण्डी लालित्यपूर्ण गद्य लिखने के लिए विख्यात हैं। दशकुमारचरित उनके इस गुण को प्रकट करने में समर्थ है। इस काव्य का कथानक इस प्रकार है।—

दशकुमारचरित इस नाम से ही स्पष्ट है कि इस काव्य का विषय दश कुमारों के चरित्र का वर्णन करना है। यह गद्यकाव्य तीन भागों में विभक्त है। इसका अवान्तर वर्गीकरण उच्छवासों हुआ है। पूर्वपीठिका में पाँच उच्छवास हैं। उत्तरपीठिका में आठ उच्छवास और उपसंहार भाग का कोई वर्गीकरण नहीं है। काव्य का आरम्भ इस प्रकार होता है कि पुष्पपुरी (आधुनिक पटना) का राजा राजहंस मालवेश्वर मानसार को पराजित करता है परन्तु तपस्या के प्रभाव से सम्पन्न होने के कारण मानसार पाटलिपुत्र (पटना) पर चढ़ाई कर देता है और राजहंस को युद्ध में परास्त कर देता है। परास्त होकर राजा राजहंस सपरिवार जंगल में चला जाता है। वहीं पर उनकी रानी के पुत्र उत्पन्न होता है, जिसका नाम राजवाहन रखा जाता है। राजहंस के मन्त्रियों के भी पुत्र होते हैं। जब राजकुमार और मन्त्रियों के पुत्र बड़े हो जाते हैं; तब वे सब यात्रा पर चले जाते हैं। दुर्भाग्य से वे सब एक-दूसरे से बिछुड़ जाते हैं और अलग-अलग स्थानों पर जाकर संकटपूर्ण तथा विचित्र जीवन यापन करते हैं। पुनः वे एक-एक करके राजवाहन से मिलते हैं और अपने-अपने जीवन यापन की विचित्र घटनाएँ राजवाहन को सुनाते हैं। इनके ये वृत्तान्त ही दशकुमारचरित में क्रमश: वर्णित हैं।

दशकुमार के पूर्वपीठिका का कथानक—

दशकुमार के पूर्वपीठिका में मगधनरेश राजहंस का मालवनरेश मानसार से युद्ध, पराजित होकर राजहंस का विन्ध्यावटी में निवास, वहीं पर उनके पुत्र राजवाहन की उत्पत्ति राजहंस के मित्र मिथिलानरेश प्रहारवर्मा के दो पुत्रों की तथा अन्य सात मन्त्री कुमारों की भी प्राप्ति। उनके यौवन होने पर उन सबको राजहंस की आज्ञा से दिग्विजय के लिए प्रस्थान, मार्ग में किरातों के साथ रहे हुए मातंग नाम के ब्राह्मण की सहायता के लिए रात में गुप्त रूप से राजवाहन का उनके साथ पाताल गमन, राजवाहन की सहायता से मातंग को पाताल का राज्य और दैत्य राजकुमारी की प्राप्ति और मातंग से राजवाहन की भूख और प्यास को मिटाने वाली मणि की प्राप्ति का वर्णन है। प्रातः काल राजवाहन को ने देखकर उनके मित्रों का उन्हें ढूंढने के लिए भिन्न-भिन्न स्थानों में प्रस्थान राजवाहन के साथ सोमदत्त और पुष्पोद्भव का समागम उन दोनों का राजवाहन को अपना चरित्र सुनाना, ऐन्द्रजालिक ब्राह्मण विघ्नेश्वर के द्वारा राजवाहन का मानसार, नन्दिनी अवन्तिसुन्दरी के इन्द्रजाल के प्रयोग से विवाह का वर्णन वर्णित है।

1.3.6 दशकुमारचरितम् का वैशिष्ट्य:-

गद्यकवि दण्डी द्वारा रचित दशकुमारचरित रोमांचक आख्यानों वाला एक गद्यकाव्य है। यह घटनाप्रधान काव्य है। इसमें दस राजकुमार अपने उल्लास, रोमांच, देश-देशान्तरों में भ्रमण तथा विचित्र अनुभवों का मनोरंजक और विषाद से पूर्ण घटनाओं का वर्णन करते हैं। छल-कपट, सचझूठ, आदि से ओत-प्रोत यह एक अत्यन्त सजीव रचना है।

इसमें तत्कालीन समाज और धार्मिक दशा का वर्णन बड़ी सजीवता के साथ किया गया है। दशकुमारचरित में प्रयुक्त गद्यशैली बड़ी सुबोध, सरल और प्रवाहमयी है। दशकुमारचरित के गद्य न तो श्लेष से बोझिल हैं और न ही समासों से प्रताड़ित हैं। अलंकारों के आडम्बर से सर्वत्र बचा गया है तथा सर्वत्र ललित पदावली का प्रयोग किया गया है। दशकुमार चरित संस्कृतसाहित्य की गौरवमयी रचना है तथा इसकी गणना गद्यकाव्यत्रयी में की जाती है।

साहित्यिक दृष्टि से दशकुमारचरित एक श्लाघनीय रचना है। यह आख्यानकाव्य का उज्ज्वल दृष्टान्त है। इसके पात्र जीते-जागते जगत के प्राणी हैं जिनका चित्रण शिष्ट, हास्य तथा मधुर व्यंग्य का आश्रय लेकर किया गया है। कुमारों के वर्णन में आयी अवान्तर कथाएँ भी मुख्य कथा में किसी प्रकार का अवरोध उत्पन्न नहीं करती हैं। यह न तो सुबन्धु के गद्य के समान प्रत्यक्षर श्लेषमय है और न ही बाण के गद्य के समान समासों से बोझिल है। गद्य के सरल, सरस और प्राञ्जल होने के कारण ही विद्वानों में दण्डी के विषय में **"दण्डिनः पदलालित्यम्"** यह आभाणक प्रचलित है।

1.4 सारांश:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान चुके हैं कि आचार्य दण्डी का समय विद्वानों ने कब स्वीकार किया है। उन्होंने अपनी प्रतिभा से दशकुमारचरितम् नामक ग्रन्थ की रचना कर संस्कृत साहित्य को समृद्ध किया। संस्कृत गद्यकाव्य के लेखकों में आचार्य दण्डी की रचना आज भी आक्षुण्य है । इनके द्वारा लिखा हुआ लक्षण ग्रन्थ काव्यादर्श अलंकारशास्त्र के अत्यन्त ही महत्वपूर्ण ग्रन्थ के रूप में विद्वानों द्वारा स्वीकार किया गया है। जिस गद्य शैली को बाण ने अपने मनोरम कादम्बरी के द्वारा प्रसक्त किया। उसी शैली को दण्डी ने अपने सरल, सुगम, दशकुमारचरितम् के द्वारा उज्जवल बनाते हुए चमत्कृत किया है। जिसका अध्ययन आप इस इकाई के माध्यम से बड़े ही सरलता पूर्वक कर सकते है।

1.5 शब्दावली:-

वंशनाली	-	बांस की चोंगा
अविश्वसनीय	-	जिस पर विश्वास न किया जा सके।
किवंदन्ती	-	प्रसिद्ध
सन्निविष्ट	-	मिला हुआ।
निर्दिष्ट	-	बतलाया गया।
प्रतिबिम्बित	-	चित्रित।

1.6 बोध प्रश्न:-

अभ्यास प्रश्न:

(1). बहुविकल्पीय प्रश्न

1. दशकुमारचरितम् किस प्रकार का काव्य है।

(क) गद्य काव्य (ख) पद्य काव्य

(ग) चम्पू काव्य (घ) महाकाव्य

2. दशकुमारचरितम् कितने भागों में विभक्त है।

(क) दो भागों में (ख) तीन भागों में

(ग) चार भागों में (घ) एक भाग में

3. दशकुमारचरितम् के विभक्त भागों को किस नाम से जाना जाता है।

(क) पूर्वपीठिका (ख) चरितम्

(ग) उत्तरपीठिका (घ) उक्त सभी

4. महाकवि दण्डी के कितने ग्रन्थ प्राप्त होते हैं।

(क) चार ग्रन्थ (ख) दो ग्रन्थ

(ग) तीन ग्रन्थ (घ) एक ग्रन्थ

5. दशकुमारचरितम् की कथा किस नगर से प्रारम्भ होती है।

(क) पुष्पपुरी (ख) अवन्तिपुरी

(ग) मगध (घ) मिथिलेश

6. काव्यादर्श में परिच्छेद है।

(क) 6 (ख) 3

(ग) 9 (घ) 10

7. आचार्य दण्डी के पिता का नाम था।

(क) वीरदत्त (ख) चित्रभानु

(ग) वाचस्पति (घ) राघव

8. काव्यादर्श में अंलकारों की संख्या है।

(क) 30 (ख) 62

(ग) 35 (घ) 45

9. दशकुमारचरितम् के रचयिता का क्या नाम है।

(क) आचार्य दण्डी (ख) सुबन्धु

(ग) बाण (घ) कालिदास

10. दशकुमारचरितम् में कितने कुमारों की कथा है।

(क) चार (ख) छ:

(ग) दश (घ) चौदह

11. महाकवि दण्डी का समय किस शताब्दी में माना जाता है।
(क) सातवीं शताब्दी (ख) आठवीं शताब्दी
(ग) दसवीं शताब्दी (घ) षष्ठ शताब्दी
12. महाकवि दण्डी की तीसरी रचना का क्या नाम है।
(क) दशकुमारचरितम् (ख) काव्यादर्श
(ग) छन्दोविचिति (घ) अवन्तीसुन्दरीकथा
13. दशकुमारचरित कितने उच्छवासों में विभक्त है।
(क) चौदह (ख)
(ग) आठ (घ) पांच
14. पूर्वपीठिका के पाँच उच्छवासों में किसकी कथावस्तु वर्णित की गई है।
(क) शकुन्तला (ख) अवन्तिसुन्दरी
(ग) यक्षी (घ) इनमें से कोई नहीं
15. मध्यभाग के आठ उच्छवासों में कितने राजकुमारों का चरित्र वर्णित किया गया है।
(क) पांच राजकुमारों (ख) दो राजकुमारों
(ग) आठ राजकुमारों (घ) दस राजकुमारों
16.उत्तरपीठिका में कितने कुमारों का वर्णन प्राप्त होता है।
(क) आठ कुमारों (ख) पांच कुमारों
(ग) तीन कुमारों (घ) दो कुमारों
17. कन्नड़ कवि अमोघवर्ष के अलंकारग्रन्थ का क्या नाम है।
(क) कविराजमार्ग (ख) काव्यादर्श
(ग) शुकनासोपदेश (घ) दशकुमारचरित
18. विज्जिका कौन है।
(क) कवयित्री (ख) महारानी
(ग) क एवं ख दोनों (घ) इनमें से कोई नहीं

(2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

(क) आचार्य दण्डी के माता का नाम..है।
(ख) काव्यादर्श... में विभक्त है।
(ग) दण्डी का जन्मस्थान...है।
(घ) दण्डिनः... ।
(ड) महाकवि दण्डी की द्वितीय रचना .... है।
(च) .... पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणा:।
(छ) कवीति ततो व्यासे कवयः .... ।

(ज) त्रयोदण्डीप्रबन्धश्च .... विश्रुताः।

(3) निम्न वाक्यों में सही के सामने (√) और गलत के सामने (×) का चिन्ह लगायें:-

(क) दशकुमारचरित के रचनाकार आचार्य दण्डी है ( )

(ख) दण्डी ने गौणी रीति का प्रयोग किया है ( )

(ग) दण्डी ने दश गुणों का निरूपण किया है ( )

(घ) दण्डी ने अर्थालंकारों का वर्णन किया है ( )

(ड़) गद्य काव्य के कथा व आख्यायिका दो भेद है। ( )

(च) दण्डी के पितामह का नाम मनोरथ है। ( )

(छ) दण्डी की माता का नाम पौरी देवी था। ( )

(ज) महाकवि दण्डी भारवी के परममित्र दामोदर के प्रपौत्र थे। ( )

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. उमाशंकरशर्मा 'ऋषि'- संस्कृत साहित्य का इतिहास

2. पं० बलदेव उपाध्याय- संस्कृत वांगमय का वृहद् इतिहास

1.8 अन्य सहायक पुस्तकें:-

1. कन्हैया लाल पोद्दार-संस्कृत साहित्य का इतिहास

2. आचार्य दण्डी-दशकुमारचरित

3. आचार्य दण्डी-काव्यादर्श

1.9 बोध प्रश्नों के उत्तर:-

1. बहुविकल्पीय प्रश्न

1. क	2.ख	3.घ	4.ग	5. क
6. ख	7. क	8. ग	9.क	10. ग
11. क	12. घ	13. क	14. ख	15. ग
16. घ	17. क	18. ग		

(2).

(क) गौरी

(ख) परिच्छेद

(ग) कांची

(घ) पदलालित्यम्
(ङ) काव्यादर्श
(च) दण्डिन:
(छ) त्रायी दण्डिनी
(ज) त्रिषु लोकेषु

(3).

(क) (√)	(ख) (×)	(ग) (×)	(घ) (√)
(ड़) (√)	(च) (√)	(छ) (√)	(ज) (√)

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. महाकवि दण्डी का काल निर्धारण कीजिए।
2. काव्यादर्श लक्षण ग्रन्थ है इसे सिद्ध कीजिए।
3. 'दण्डिन: पदलालित्यम्' को सिद्ध कीजिए।
4. दशकुमारचरितम् के कर्ता का जीवन परिचय लिखिए।

खण्ड-द्वितीय, इकाई-2
प्रथम उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 प्रथम उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)
2.4 सारांश
2.5 शब्दावली
2.6 बोध प्रश्न
2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.8 अन्य सहायक पुस्तकें
2.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना:-

प्रिय शिक्षार्थियो !

स्नातकोत्तर तृतीय सेमेस्टर, द्वितीय प्रश्न पत्र, गद्य एवं पद्य काव्य से सम्बन्धित यह द्वितीय खण्ड की द्वितीय इकाई है। इससे पूर्व की इकाई में आपने महाकवि दण्डी एवं उनके दशकुमारचरितम् का अध्ययन किया। संस्कृत साहित्य के इतिहास में आचार्य दण्डी का महत्वपूर्ण स्थान है, यद्यपि दण्डी की तीन रचनाओं का वर्णन मिलता है। यहां हम उनकी प्रसिद्ध रचना दशकुमारचरितम् का अध्ययन करेंगे। संस्कृत साहित्य की गद्य परम्परा में इसका प्रमुख स्थान है। जो तीन भागों में विभक्त है। यहां हम दशकुमारचरितम् (पूर्वपीठिका) के प्रारम्भ से प्रथम उच्छवास (कुमारोत्पत्तिनाम) पर्यन्त तक का अध्ययन करने जा रहे हैं। जिसमें आप मगधराज राजहंस का वर्णन–रानी वसुमती का वर्णन–उनके मन्त्रीयों का वर्णन–राजहंस का युद्ध–रानी वसुमती का गर्भधारण करना–राजा राजहंस की हार और वनगमन–राजहंस का वामदेव से वार्ता–दसों कुमारों के जन्मोंत्पत्ति, उनकी शिक्षा, लालन – पालन उनके देशाटन का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप आचार्य दण्डी की भाषा शैली एवं वैशिष्टय का सम्यक रूप से विश्लेषण कर सकेंगे।

2.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात आप—

- ❖ राजकुमारों के जन्मोत्पत्ति एवं उनसे सम्बन्धित वर्ण्य विषय से भलीभांति परिचित हो सकेंगे।
- ❖ मगधराज राजहंस के बारे में परिचित हो सकेंगे ।
- ❖ रानी वसुमती के बारे में जान पाएंगे ।
- ❖ राजहंस के मन्त्रियों के बारे में परिचित हो सकेंगे ।
- ❖ राजवाहन आदि राजकुमारों की जन्म, लालन-पालन शिक्षा के बारे में परिचित हो सकेंगे ।

2.3 प्रथम उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)

ब्रह्माण्डच्छत्रदण्डः शतधृतिभुवनाम्भोरुहो नालदण्डः
क्षोणीनौकूपदण्डः क्षरदमरसरित्पट्टिकाकेतुदण्डः।
ज्योतिश्चक्राक्षदण्डस्त्रिभुवनविजयस्तम्भदण्डोङ्घ्रिदण्डः
श्रेयस्त्रैविक्रमस्ते वितरतु विबुधद्वेषिणां कालदण्डः।।

अन्वयः- ब्रह्माण्डच्छत्रदण्डः, शतधृतिभवनाम्भोरुहो नालदण्डः क्षोणीनौकूपदण्डः, क्षरदमरसरित्पट्टिकाकेतुदण्डः, ज्योतिश्चक्राक्षदण्डः, त्रिभुवनविजयस्तम्भदण्डः, विबुधद्वेषिणां कालदण्डः, त्रैविक्रम, अङ्घ्रिदण्डः, ते श्रेय: वितरतु।

प्रसंगः- प्रस्तुत श्लोक में आचार्य दण्डी ने मंगलाचरण के माध्यम से इस गद्यमय काव्यग्रन्थ के आरम्भ में भगवान् वामन के चरणारविन्द की वन्दना करते हुए उनके विभिन्न स्वरूपों का वर्णन किया है। क्योंकि इस विश्व में कार्य और कारण दोनों का सम्बन्ध नियत है । कारण के बिना कोई कार्य सम्भव नहीं हो सकता । कारण रहने पर भी कभी-कभी कार्य नहीं हो पाता है, क्योंकि दैवात् उसका कोई प्रतिबन्धक उपस्थित हो जाता है। उस कार्यप्रतिबन्ध को दूर करने के लिए ही दैवी शक्ति की आराधना, स्मरण, नमस्कार आदि किया जाता है। परिणाम स्वरूप इष्ट देवता की अनुकम्पा से कार्य प्रतिबन्धक के दूर हो जाने पर कार्यसिद्धि अवश्य हो जाती है। इसी भावमय अभिप्राय से प्रेरित होकर लेखक अपने ग्रन्थों के आरम्भ में मंगलाचरण किया करते हैं।

व्याख्याः- ब्रह्माण्डम् = विश्वम् (भुवनम्) एव छत्रम् = आतपत्रम् तस्य, दण्डः = आधारस्तम्भ, शतधृतिभवनाऽम्भोरुहः = शतधृतेः = (ब्रह्मणः), भवनम् = (गृहं, वासस्थानमुत्पस्थानं वा) तदेव यत् अम्भोरुहं = (कमलम्), तस्य नालदण्डः = नालरूपा यष्टिः, क्षोणीनौकूपदण्डः = क्षोणी = (पृथिवी) एव नौः = (तरणिः), तस्याः कूपदण्डः = (गुणवृक्षकः), क्षरन्ती = प्रवहमाना, (प्रस्रवन्ती) वा अमरसरित् = आकाशगंगा, (सुरनिम्नगा गङ्गेति भावः) सा एव पट्टिका = (पताका), तस्याः केतुदण्डः = (ध्वजदण्डरूपः), 'गङ्गा विष्णुपदी जह्नुतनया सुरनिम्नगा' इत्यमरः। ज्योतिश्चक्राऽक्षदण्डः = ज्योतिश्चक्रस्य = (ग्रहनक्षत्रादिमण्डलस्य), तस्यअक्षदण्डः = (नाभिरूप काष्ठदण्डविशेष), त्रिभुवनविजयस्य = (त्रैलोक्यजयस्य), स्तम्भदण्डः = स्थूणादण्डः, विजयसूचक इति भावः, विबुधद्वेषिणां = दैत्यानां (देववैरिणाम्), विबुधान् = (देववान्), द्विषन्ति = (विरुध्यन्ति) तच्छीला इति विबुधद्वेषिणः, कालदण्डः = यमदण्डः, मृत्युकारक इति भावः। तादृशः त्रैविक्रमः = वामनसम्बन्धी, त्रिविक्रमस्याऽयम्, अङ्घ्रिदण्डः = चरणदण्डः, अङ्घ्रिः = (चरणः) दण्ड इव, ते = तुभ्यं, श्रेयः = कल्याणं मंगलं वा, वितरतु = ददातु।

भावार्थः- भगवान् वामन (त्रिविक्रम) का वह चरणकमलदण्ड आपका कल्याण करें, जो ब्रह्माण्ड रूपी छाते के दण्ड के समान है, अथवा ब्रह्माजी के उत्पत्ति के स्थान (कमल) के नालदण्ड के समान है, या पृथ्वीरूपी नौका के कूपदण्ड (मस्तक, गुनरखा), के समान है, अथवा स्वर्ग से झरती हुई आकाशगङ्गारूपी पताका के केतुदण्ड (ध्वजदण्ड) के समान है, ज्योतिश्चक्र (ग्रहनक्षत्रादिमण्डल) का अक्षदण्ड (पहिये की धुरी) के समान है, त्रिभुवन विजय का स्तम्भ दण्ड, देवताओं से द्वेष करने वाले दैत्य और राक्षस आदि कों कालदण्ड (यमदण्ड) के समान है, ऐसे त्रैविक्रम अर्थात् त्रिविक्रम (भगवान् वामन) का चरणदण्ड तुम्हें कल्याण प्रदान करें॥1॥

अलङ्कार:- संसृष्टिअलङ्कारः,

अत्रब्रह्माण्ड-क्षोण्यमरसरित्सुछत्र-नौ-पट्टिकानामारोपो भगद्वामनच्चरणे दण्ड-दण्डकुपदण्ड-केतुदण्डत्वारोपे हेतुरिति अश्लिष्टशब्दनिबन्धनं परम्परितरूपकम् ''ज्योति-श्चक्राऽक्षदण्ड'' इत्यत्र तु चक्रशब्दस्य श्लिष्टत्वाच्छिष्टशब्दनिबन्धनं 'रूपकम्' अन्यत्र तु केवलं निरङ्गरूपकम्। एतेषां मिथोऽनपेक्षययां स्थितेः संसृष्टिअलङ्कारः। त्रयाणां भुवनानां समाहारः त्रिभुवनं, 'तद्धिताऽर्थोपदे समाहारे च'' इति समासस्य 'संख्यापूर्वो द्विगुः'' इति द्विगुसंज्ञा। 'स नपुंसकम्'' इति नपुंसकत्वम्। 'उपमितं व्याघ्रादिभिः सामान्याऽप्रयोग'' इत्युपमितसमासः।

छन्द:- स्रग्धरा छन्द,

लक्षण:-'म्रभ्नैर्याणां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्त्रग्धरा कीर्तितेयम्' ॥

विशेष:- प्रस्तुत मंगलाचरण में आठ बार दण्ड शब्द का प्रयोग है और आरम्भ के तीन पदों में आदि से पाँचवे अक्षर के बाद छठा दण्ड शब्द आया है, किन्तु चतुर्थ पाद में पाँच अक्षरों के पश्चात दण्ड शब्द नहीं है, सात जगह दण्ड है पर तृतीय पाद में अड्घ्री के पूर्व दण्डो होने के स्वरूपकक्रमभंग दोष आ गया है। भगवान् वामन के चरण कमल को दण्ड स्वरूप मानकर सात रूपों में उसे व्यक्त करने का प्रयास है, जिससे यहां रूपक अलंकार बन गया है । ब्रह्माण्डच्छत्रदण्डः, क्षोणीनौकूपदण्डः, क्षरदमरसरित्पट्टिकाकेतुदण्डः, इन तीनों जगह अश्लिष्ट पारम्परिक रूपक है। ज्योतिश्चक्राक्षदण्ड: में श्लिष्ट रुपक है, तथा अन्य शेष स्थलों में साधारण है।

एक पौराणिक आख्यान भी इस सन्दर्भ में आया है। जब दैत्यराज बलि यशद्वारा प्राप्त विशिष्ट शक्ति से सम्पन्न हो देवताओं के परास्त करने के बाद इन्द्र को हटाकर स्वयं स्वर्गाधिपति बन बैठा। अनन्तर देवमाता अदिति ने कश्यप जी से प्रार्थना की कि हमारे पुत्र देवता गण दु:खी हैं । कृपया आप इनके दु:ख को दूर करने का प्रयास करें तदनुसार कश्यप जी भगवान विष्णु की शरण में गये, अदिति ने व्रत- उपवास किया, उनकी आराधना से प्रसन्न होकर भगवान विष्णु स्वयं उनके पुत्र रूप में अपतीर्ण हुए जो, जो वामनावतार कहे जाते हैं । बटुक वेश में भगवान् वामन, राजा बलि के पास उपस्थित हो गये, जहाँ शुक्राचार्य जी बली का अश्वमेध यज्ञ करा रहे थे। यज्ञ में दीक्षित दैत्यराज बलि ने उसी तेजस्वी वामन बटु के अपूर्व रूप को देखकर आश्चर्यचकित हो उनका यथावत सत्कार किया। और अभीष्ट वस्तु माँगने का अनुरोध किया। फलत: वामन बटु ने उससे केवल तीन पैर पृथ्वी की याचना की। शुक्राचार्य के मना करने पर भी बड़ी प्रसन्नता से अपने को धन्य मानते हुए उसने उनकी याचना के अनुसार तीन पैर जमीन देने का संकल्प कर ही लिया। अनन्तर छद्मवेषधारी उस वामन बटु ने देवताओं की कार्य सिद्धि के निमित्त तीनों लोकों को नापने के लिए अपने पैरों को दण्ड बनाकर

आकाश तक लम्बायमान कर दिया था। उस समय भगवान् वामन का वह चरण जैसा प्रतीत होता था, उसी का वर्णन इस मंगलाचरण श्लोक में कविवर आचार्य दण्डी द्वारा किया गया है।

1. अस्ति समस्तनगरीनिकषायमाणा शश्वदगण्यपण्यविस्तारितमणि-गणादिवस्तुजातव्याख्यातर-त्नाकरमाहात्म्या मगधदेशशेखरीभूता पुष्पपुरी नाम नगरी।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने पुष्पपुरी का वर्णन किया है।

व्याख्या:- समस्तानां = सर्वासाम् (निखिलानाम्), नगरीणां = (पुरीणाम्), निकषायमाणा = सर्वश्रेष्ठत्वकषणोपलभूता (निकषवदाचरन्ती) यथा निकषः सुवर्णस्य तारतम्यं (न्यूनाऽधिकभावम्) परीक्षते तथैव समस्तपुरीणां परीक्षामाचरन्तीति भावः। समस्तनगरीषु श्रेष्ठेति भावः इत्यमरः। शश्वत् = निरन्तरम्। अगण्यानि = (असंख्यानि) यानि पण्यानि = (विक्रेयवस्तूनि) तेषु विस्तारितानि = (प्रसारितानि) यानि मणिगणादीनि = (रत्नसमूहादीनि) वस्तुजातानि = (पदार्थसमूहाः) तै व्याख्यातं = (प्रतिपादितम्) रत्नाकरस्य = (समुद्रस्य), महात्म्यं = (महत्त्वम्) यया सा, मगधदेशस्य = (कीकटविषयस्य) शेखरीभूता = (शिरोभूषणीभूता) पुष्पपुरीनाम = कुसुमपुरं पाटलिपुत्रम् नाम प्रसिद्ध इति, नगरी = पुरी, अस्ति = विद्यते ।।1।।

भावार्थ:- पुष्पपुरी का वर्णन करते हुए कहा गया है कि- संसार की समस्त नगरियों को जाँचने की कसौटी तथा असंख्य दुकानों में फैलाकर रखे हुए मणि आदि के द्वारा रत्नाकर (समुद्र) के रत्नों की महिमा को प्रकाशित करने वाली मगध देश की शिरोभूषण पुष्पपुरी नाम की नगरी थी।

2. तत्र वीरभपटलोत्तङ्गतुरङ्गकुंजरमकरभीषणसकलरिपुगणकटक- जलनिधिमथनमन्दरा-यमाणसमुद्दण्डःभुजदण्डः, पुरन्दरपुराङ्गणवनविहरणपरायणतरुणगणिकागणजेगीयमानयातिमानया शरदिन्दुकुन्दघनसारनीहारहारमृणालमरालसुरगजनीरक्षीरगिरिशाट्टहासकैलासकाशनीकाश-मूर्त्या रचित-दिगन्तराल- पूर्त्या कीर्त्याऽभितः, सुरभितः, स्वर्लोकशिखररोरुरुचिररत्नाकरवेला-मेखलायितधरणीरमणीसौभाग्यभोगभाग्यवान्, अनवरतयागदक्षिणारक्षितशिष्ट-विशिष्टविद्यासम्भारभासुर-भूसुरनिकरः विरचितारातिसंतापेन प्रतापेन सततुलितवियन्मध्यहंसः, राजहंसो नाम घनदर्पकन्दर्पसौन्दर्यसोदर्यहृद्यनिरवद्यरूपो भूपो बभूव।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने पुष्पपुरी के राजा राजहंस का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तत्र = पुष्पपुर्यां नगर्याम्, बीराणां = (शूराणाम्), भटानां = (योद्धानाम्), पटलेन = (समूहेन), उत्तरा: =उन्नता: , तुरङ्गाः = (अश्वाः), कुञ्जराः = गजा: (हस्तिनाः), एव मकराः = नक्रा: (ग्राहाः) तैः भीषणः = (भयङ्करः), सकलानां = (समस्तानाम्), रिपुगणानां = (शत्रुसमूहानाम्) कटकं = (सैन्यम्), एव जलनिधिः = (समुद्रः), तस्य मथने = (विलोडने) मन्दरायमाणः = (मन्द्राचल इवाचरन्) भुजदण्डः= (वाहुदण्डः) यस्य सः, 'राजहंस' इत्यस्य 'विशेषणम्' एवं परत्राऽपि। रूपकाऽलङ्कारः। पुरन्दरपुरस्य = इन्द्रनगरस्य, (पुरं तस्य पुरन्दरपुरस्य अमरावत्या: इत्यमर:), अङ्गणवने = (चत्वरोद्याने), विहरणपरायणाः = (विहारतत्पराः) य तरुणगणिकागणाः = युवतीनाम् (वयःस्थाऽप्सरसमूहाः) तैः जेगीयमानया = (वारं वारं कीत्र्यमानया), अतिमानया = अतिशयपरिमाणयुक्तया, अपरिमितयेति भावः। शरदिन्दुः = (शरद कालीकन: चन्द्रः) कुन्दं = (माध्यपुष्पम्) घनसारः = (कर्पूरश्च), नीहारः = हिमश्च (अवश्यायः) हारः = (मुक्तामाला) मृणालं = (बिसश्च) मरालः = (हंसश्च) सुरगजः = इन्द्र वाहनमैरावतश्च (देवहस्ती, ऐरावत इति भावः) नीर = (जलम्) क्षीरं = (दुग्धम्) गिरिशस्य = (शिवस्य) अट्टहासः = (उच्चैर्हासः) कैलासः = रजतगिरिश्च (शिवपर्वतः) काशः = (पोटगलपुष्पम्, तैः सदृशी = (नीकाशा) मूर्तिः = (शरीरम्) यस्यास्तया, रचिता = कृता, दिगन्तरालानां = (दिगभ्यन्तराणाम्) पूर्तिः = (पूरणम्) यथा, तथा, तादृश्या कीर्त्या = यशसा, अभितः = समन्तात्, सुरभितः = सुगन्धितः, मनोहर इति भावः। सुरभिः = (सुगन्धः) स्वः = (स्वर्गः) लोकः = (आश्रयः) येषां ते स्वर्लोकाः = देवाः तेषां, शिखरेषु = (शिरःसु) ऊरूणि = (महान्ति), रुचिराणि = (सुन्दराणि), रत्नानि = (मणयः, धारणीया इति शेषः) यस्य सः, तादृशो यो रत्नाकरः = (समुद्रः) तस्य वेलया = (मेखलायिता (मेखलावदाचरिता) या धरणी = (पृथिवी) सा एव रमणी = (कामिनी) तस्याः सौभाग्यस्य = (सौन्दर्यस्य) यो भोगः = (उपभोगः) तेन भाग्यवान् = भाग्यसम्पन्नः।

अनवरतं = (निरन्तरम्) ये यागाः यज्ञाः = (अनुष्ठीयमाना इति शेषः। तेषु दक्षिणाभिः = (देयद्रव्यैः) रक्षितः = (पालितः) शिष्टेषु = (सदाचारपरायणानाम्) विशिष्टाः = (असाधारणाः), एवं च विद्यानाम् = (आन्वीक्षिक्यादिशास्त्राणां) सभारेण = (समुच्चयेन) भासुराः = (दीप्यमानाः) ये भूसुराः = (ब्राह्मणाः) तेषां निकरः = (समूहः) येन सः। विरचितः = (विहित), अरातीनां = (शत्रूणाम्), सन्तापः = (मनोदाहः) येन सः, तादृशेन प्रतापेन त्र कोषदण्डजतेजसा, सततं = (निरन्तरं, यथा तथा) तुलितः = (उपमितः) वियन्मध्ये = (आकाशान्तरे स्थित इति शेषः) हंसः = (सूर्यः) येन सः। तादृशो राजहंसो नाम त्र नाम्ना राजहंस इति, घनः = (निबिडः) दर्पः = (अभिमानः) यस्य सः, तादृशो यः कन्दर्पः = (कामदेवः) तस्य यत् सौन्दर्य = (मनोज्ञता) तस्य सोदर्यं = (समानोदरत्वं,

सदृशमिति भावः) हृद्यं = (प्रियम्) हृदस्य प्रियम् इति ''हृदस्य प्रिय'' इति यत् ''हृदयस्य हृल्लेखदणलासेषु'' इति हृदयस्य हृद्भावः। निरवद्यम् = (अनिन्द्यम्) रूपं = (स्वरूपम्) यस्य सः। तादृशो भूपः = भूपतिः(राजा), राजेति भावः। बभूव = अभवत् ।।2।।

भावार्थः- यहाँ पुष्पपुरी नगरी के राजा राजहंस का वर्णन करते हुए कहा गया है कि- उस पुष्पपुरी नगरी में वीर योद्धाओं के समूह से तरङ्गित, घोड़े और हाथी ही मकर, उनसे भयङ्कर, समस्त शत्रुओं की सेनारूप समुद्र के मंथन में मन्दार पर्वत के समान समुद्धृत बाहुदण्डों वाले। इन्द्र की नगरी (अमरावती) के आंगन में स्थित उपवन में विहार, तत्पर तरुण-गण्किा समूह से बारबार गाई जाने वाली, अपरिमित, शरद् ऋतु के चन्द्रमा, कुन्दपुष्प, कर्पूर, बर्फ, हार (मोतियों की माला, कमलदण्ड, हंस, देवगज (ऐरावत हाथी), जल, दूध, महादेवका अट्टहास, कैलास और काशपुष्प, इनकी सदृश मूर्तिवाली, समस्त दिङ्, मण्डल की पूर्ति करने वाली, ऐसी (सफेद) कीर्ति से चारों ओर सुगन्धित अर्थात् प्रसिद्ध स्वर्ग में रहने वाले देवताओं के शिर में रहने वाले रत्नों के आधारभूत समुद्रकी तीरभूमिरूप मेखला (करधनी) वाली भूमिरूप कामिनी के सौभाग्यके भोग से भाग्यवान्, निरन्तर किये गये यज्ञों की दक्षिणा से शिष्टों में विशिष्ट और विद्या-समूह से प्रकाश सम्पन्न ब्राह्मण समूह की रक्षा करने वाले, शत्रुओं में सन्ताप उत्पन्न करने वाले प्रतापसे निरन्तर आकाश के मध्यवर्ती सूर्य से उपमित, दृढ़ अभिमान वाले कामदेवके सौन्दर्य में भ्रातृत्व (सादृश्य) से प्रिय और अनिन्द्य रूपवाले राजहंस नामक राजा हुए ।।2।।

3. तस्य वसुमती नाम सुमतिलीलावतीकुलशेखरमणी रमणी बभूव।

प्रसंगः- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृत साहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में पुष्पपुरी के राजा राजहंस की पत्नी वसुमती का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्याः- तस्य = राजहंसस्य, सुमतिः = शोभना, मतिः = (बुद्धिः) यस्याःसा। लीलावतीनां = कामिनीनाम् (विलासवतीनां नारीयाम्) यत् कुलं = मण्डलस्य (समूहः) तस्य शेखरमणी = रत्नरूपा (शिरोभूषणरत्नस्वरूपा), वसुमती नाम = वसुमतीनाम्नी, रमणी = पत्नीति भावः, बभूवः = अभवत् (आसीत्) ।।3।।

भावार्थः- यहाँ पुष्पपुरी नगरी के राजा राजहंस की पत्नी वसुमती का वर्णन करते हुए कहा गया है कि उन राजहंस की उत्तम बुद्धिवाली, विलासवती स्त्रियों के समूह में शिरोभूषण मणि के समान "वसुमती" नाम की पत्नी हुई ।।3।।

4. रोषरूक्षेण निटिलाक्षैण भस्मीकृतचेतने मकरकेतने तदा भयेनानवद्या वनितेति मत्वा तस्य रोलम्बावली केशजालम्, प्रेमाकरो रजनीकरो विजितारविन्दं वदनम्, जयध्वजायमानो मीनो जायायुतोऽक्षियुगलम्, सकलसैनिकाङ्गवीरो मलयसमीरो निःश्वासः, पथिकहृद्दलनकरवालः प्रवालश्चधरबि बम्, जयशङ्खो बन्धुरा लावण्यधरा कन्धरा पूर्णकुम्भौ चक्रवाकानुकारौ पयोधरो, ज्यायमाने मार्दवासमाने बिसलते च बाहू, ईषदुत्फुल्ललीलावतंसकह्लारकोरको गङ्गावर्तसनाभिर्नाभिः दूरीकृतयोगिमनोरथो जैत्ररथोऽतिघनं जघनम्, जयस्तम्भभूते सौन्दर्यभूते विघ्नितयतिजनारम्भे रम्भे चोरुयुगम्, आतपत्रसहस्रपत्रं पादद्वयम्, अस्त्रभूतानि प्रसूनानि तानीतराण्यङ्गानि च ससभूवन्निव।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने वसुमति के सौन्दर्य का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- रोषेण = तपोभंगजनितेनक्रोधेन, रूक्षेण = निष्ठुरेण (कठोरेण), तेन = तथाभूतेन, निटिलाक्षेण = महादेवेन, निटिले = भाले (ललाटे) अक्षि यस्य तेन। 'सप्तमी विशेषणो बहुव्रीहौ' इति सप्तमीतिपदज्ञापितो व्यधिकरणबहुव्रीहिः। मकरकेतने = कामदेवेन, मकरः = (नक्रः), केतनं = (चिह्नम्) यस्य, तेन।

तदा = तस्मिन्समये, भयेन = सहसा (भीत्या) हेतुना, वनिता = कामिनी (स्त्री), अनवद्या = निर्दोषा (अनिन्द्या), निर्दोषेति भावः। इति = एवं, मत्वा = ज्ञात्वा, केशजालं = कुन्तलसमूहः, वसुमत्या इति शेषः। तस्य = मकरकेशनस्य, रोलम्बाबली = भ्रमरपङ्क्ति। तस्या विजितारविन्दं = पराजितकमलं, विजितम् अरविन्दं येन तत्, सौन्दर्यसौरभाऽतिशयेनेति भावः। वदनं = मुखं, प्रेमाकरः = प्रणयखनिरूपः, रजनीकरः = चन्द्रः, कामसचिव इति भावः। तस्या अक्षियुगलं = नेत्रद्वयम्। जयध्वजायमानः = जयध्वजवत् (चिजयपताकावत्) आचरति (व्यवहरति) इति, तादृशः, जायायुतः = पत्नीसमेतः, मीनः = कामकेतनरूपो मत्स्यः। तस्या निःश्वासः = मुखवातः, सकलेत्यादिः = सकलवैनिकानाम् (समस्तसैन्यानाम्) अङ्गवीरः = (प्रधानशूरः) मदनसहचरो मलयसमीरः = मलयपर्वतवातः। तस्या अधरबिम्बम् = ओष्ठबिम्बम्, पथिकानां= (पान्थानाम्) हृदयस्य दलने = भेदने (हृदयपाटने), करवालः = (खड्गसदृशः), प्रवालः = नूतनपल्लव: (विद्रुमः), बन्धुरा = उन्नतानता, लावण्यधरा = सौन्दर्यधारिणी, तस्याः कन्धरा = ग्रीवा, चक्रवाकाऽनुकारौ = कोकपक्षिसदृशौ, चक्रवाकम् अनुकुरुत इति, 'कर्मण्यण् इत्यणप्रत्ययः, उपपदसमासः। तस्याः पयोधरौ = कुचै (स्तनौ), मदनस्य पूर्णकुम्भौ = जलपूरितकलशौ। तस्या बाहू = भुजौ, ज्यायमाने =

मौर्वीसमाने, ज्यावत् आचरन्त्यौ। मार्दवाऽसमाने = मार्दवे (मृदुत्वे) असमाने (सादृश्य-रहिते) विजयवाद्यकम्बु तस्य बिसलते = मुणालवल्लयौ। गङ्गावर्तेत्यादिः = गङ्गायाः भागीरथ्याः) आवर्तेन (जलभ्रमेण) सनाभिः (सदृशः), नाभिः = उदरावयवः। ईषदुफुल्लः = (स्तोकविकसितः) लीलाऽवतंसः = (कामविलासभूषणभूतः), कह्लारकोरकः = (सौगन्धिककलिका)। दूरीकृतः = (अपनीतः) योगिमनोरथः = (योगाभ्यासिकामः) येन सः, तादृशः, कामदेवस्य, जैत्ररथः = जयशीलस्यन्दनः, तस्याःजघनं = कटिपुरो भागः, जयस्तम्भभूते = विजयस्थूणाभूते, सौन्दर्यभूते = लावण्यरूपे, विघ्नितः = (संजातविघ्नः) यतिजनानाम् = (जितेन्द्रियलोकानाम्) आरम्भः = (कर्म) याभ्यां ते, तादृश्यौ, मकरकेतनस्य, रम्भे = कदल्यौ, माङ्गलिकपदार्थौ, तस्या ऊरुयुगं = सक्थियुगम्, मदनस्य आतपत्रसहस्रपत्रं = छत्ररूपकमलम्, तस्याः पादद्वयं = चरणद्वितयम्, मकरकेतनस्य = कामस्य अस्त्रभूतानि = आयुधभूतानि, तानि = प्रसिद्धानि, प्रसूनानि = पुष्पाणि, तस्या इतराणि = अन्यानि अङ्गानि = देहाऽवयवाः, समभूवन् इव = संजातानिव। अत्रउत्प्रेक्षाऽलङ्कारः। तल्लक्षणं यथा- “ भवेत्संभावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना।” ।।4।।

भावार्थ:- यहाँ राजा राजहंस की पत्नी वसुमती के सैन्दर्य का वर्णन करते हुए कहा गया है कि क्रोध से कठोर महादेवके कामदेवको भस्मीभूत करने पर उस समय भयसे ‘ये अनिन्द्य सुन्दरी है’ ऐसा विचार कर कामदेवके समस्त पदार्थों ने वसुमती का आश्रय लिया, जैसे कि-कामदेवकी भ्रमरपङ्क्ति वसुमतीके केशस्वरूप, प्रणयका आकर (खान) रूप कामका सचिव चन्द्र, कमलको जीतने वाला वसुमतीका मुख हुआ। कामका विजयपताकास्वरूप भार्यायुक्त मत्स्य (मछली) वसुमतीका नेत्रयुगल रूप हुआ। काम के समस्त सैनिकों में मुख्य वीर मलयपर्वतका समीर (हवा) वसुमती का निःश्वासरूप हुआ। पर्थिकोंके हृदयका विदारण करने में खड्गस्वरूप पल्लव, वसुमतीका अधरबिम्ब हुआ। कामदेवका विजयसूचक शङ्ख निम्नोन्नतरूप सौन्दर्यका धारण करने वाला ग्रीवारूप हो गया। चक्रवाकोंके सदृश कामदेवके जलपूर्ण कलश, वसुमतीके स्तनरूप हुए। कामकी प्रत्यंचाके सदृश कामलता में बेजोड़ मृणाल लताएँ, वसुमती के बाहुरूप हुए। कुछ खिला हुआ विलासके भूषणरूप सौगन्धिक कमलकी कली वसुमती की गङ्गा के भँवरे के सदृश नाभि हुई। योगिजनों के अभिलाषको दूर करने वाला कामदेवके जयशील रथ वसुमतीका अत्यन्त निबिड कटिका पूर्वभाग हो गया। कामदेवका विजय स्तम्भरूप सौन्दर्य स्वरूप समस्त जितेन्द्रिय जनों के कर्म में विघ्न करने वाली कदलियाँ वसुमती के ऊरुगुग्मरूप हुई। कामदेव के छत्त्रस्वरूप कमल वसुमती के चरणयुग्मस्वरूप हो गया। कामदेव के अस्त्रभूत प्रसिद्ध पुष्पसमूह, वसुमती के अन्य अङ्ग हो गये हैं क्या ? ऐसी प्रतीति होती थी ।।4।।

5. विजितामरपुरे पुष्पपुरे निवसता साऽनन्तभोगलालिता वसुमती वसुमतीव मगधराजेन यथासुखमन्वभावि।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने मगधराज राजहंस के वैभव का वर्णन किया है।

व्याख्या:- विजिताम् = समृद्धया तिरस्कृतम् (पराजितम्) अमरपुरं = इन्द्रपुरं स्वर्ग येन तत् देवनगरम्) येन, तस्मिन्, सौन्दर्याऽतिशयेनेति शेषः। तादृशे पुष्पपुरे = परटलपुित्रनगरे (मगधनगरे), निवसता = निवासं कुर्वता, मगधराजेन = मगधाऽधिपतिना राजहंसेनेति भावः। अनन्ताः = (अन्तरहिताः अपरिमिता इति भावः) ये भोगाः (सुखाऽनुभवाः) तैर्लालिता = (सस्नेहपालिता), वसुमती = वसुमतीनाम्नी देवी (राजमहिषी), वसुमती = पृथिवी, इव = यथा, सुखं = सुखपूर्वकम्, अन्वभावि = अनुभूता, भावः।

वसुमत्याः= (पृथिव्याः) अनन्तस्य = (शेषनागस्य) यो भोगः (शरीरम्) तस्मिन् लालिता वसुमती = पृथिवीं। अत्र श्लेष उपमयोरङ्गङ्गाङ्गिभावने सङ्करः ॥5॥

भावार्थ:- देवताओं के पुर (नगर) को जीतने वाले पुष्पपुर में निवास करनेवाले मगधराज (राजहंस) ने असंख्य भोग से स्नेह पूर्वक पाली गई, वसुमती का (पृथ्वी के पक्ष में- अनन्त (शेषनाथ) के भोग (शरीर) में पाली हुई पृथिवी के समान सुखपूर्वक उपभोग किया ॥5॥

6. तस्य राज्ञः परमविधेया धर्मपालपद्मोद्भवसितवर्मनामधेया धीरधिषणावधीरितविबुधाचार्यविचार्यकार्यसाहित्याः कुलामात्यास्त्रयोऽभूवन्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजहंस के मन्त्रियों का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तस्य = मगधराजस्य (पूर्वोक्तस्य), राज्ञः = नृपस्य, राजहंसस्य इत्यर्थः। परमविधेयाः = अत्यन्तं वचनस्थिताः, धर्मपालश्च सितवर्मा च, नामधेयं (नाम) येषां ते। धीरा = (गम्भीरा), धिषणा = (बुद्धिभिः) अवधीरितानि = (तिरस्कृतानि), विबुधाचार्यस्य = (देवगुरोः, बृहस्पतेरिति भावः) विचार्याणां = (विचारणीयानाम्) कार्याणां = (कर्मणाम्) साहित्यानि = (समूहाः) यैस्ते अतिशय राज कार्य प्रवीणा इति भावः। त्रयः = त्रिसंख्यकाः। कुलाऽमात्याः = वंशपरम्परायातमन्त्रिणः, अभूवन् = अभवन् ॥6॥

भावार्थ:- उस राजा राजहंस के अत्यन्त आज्ञाकारी धर्मपाल, पद्मोद्भव और सितवर्मा नाम के गम्भीर बुद्धि से देवताओं के आचार्य बृहस्पति के विचारणीय कार्यों से समूह का भी तिरस्कार करने वाले वंश परंपरा में आए हुए तीन मन्त्री हुए।

7. तेषां सितवर्मणः सुमतिसत्यवर्माणौ, धर्मपालस्य सुमन्त्रसुमित्र-कामपालाः, पद्मोद्भवस्य सुश्रुतरत्नोद्भवावितिः तनयाः समभूवन्।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में राजहंस के मन्त्रियों के पुत्रों का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- तेषां = वंशपरम्परागतमन्त्रिणाम् (कुलाऽमात्यानां), मध्ये, सितवर्मणः = सितवर्मनामधेयस्य मन्त्रिण: (तन्नामककुलाऽमात्यस्य), सुमतिसत्यवर्माणौ = सुमतिसत्यवर्मनामकौ दौ तनयौ समभूताम्, धर्मपालस्य = धर्मापाल नामधेयस्य मन्त्रिण: (तन्नाम्नः), कुलाऽमात्यस्य। सुमन्त्रसुमित्रकामपालनामानः = सुमन्त्र सुमित्र कामपाल नामाका: तनया: अभूवन् , पद्मोद्भवस्य = तन्नाम्नः कुलामात्यस्य, सुश्रुतरत्नोद्भवनामकौ = सुश्रुत रत्नोद्भवौ द्वौ तनयों, इति = एवं, तनयाः = पुत्राः, समभूवन् = संभूताः।।7।।

भावार्थ:- यहाँ राजा राजहंस के मन्त्रीयों के पुत्रों का वर्णन किया गया है, उनमें सितवर्मा के सुमति और सत्यवर्मा, धर्मपाल के सुमन्त्र, सुमित्र और कामपाल और पद्मोद्भव के सुश्रुत और रत्नोद्भव नाम के पुत्र हुए ।।7।।

8. तेषु धर्मशीलः सत्यवर्मा संसारासारतां बुद्ध्वा तीर्थयात्राभिलाषी देशान्तरमगमत्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने सत्यवर्मा के तीर्थाटन यात्रा का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- तेषु = सप्तसु अमात्यपुत्रेषु (कुलाऽमात्यतनयेषु), धर्मशीलः = धर्मात्मा सत्यवर्मा सितवर्मणो द्वितीय पुत्र, (पुण्यस्वभावः)। सत्यवर्मा = तन्नामकः, संसारस्य = जगत: (भवस्य), असारतां = नश्वरता तुच्छताम् (साररहिताम्) बद्ध्वा = ज्ञात्वा, तीर्थयात्रायां = (पुण्यक्षेत्रप्रस्थाने) अभिलाषी = (मनोरथयुक्तः) सन्, देशान्तरम् = अन्यजनपदम्, अगमत् = अगच्छत् ।।8।।

भावार्थ:- यहाँ सत्यवर्मा की तीर्थाटन गमन का वर्णन किया गया है, धर्मयुक्त स्वभाववाला सत्यवर्मा संसार की असारता जानकर तीर्थयात्रा का अभिलाषी होकर दूसरे देशमें चला गया ।।8।।

9. विटनटवारनारीपरायणो दुर्विनीतः कामपालो जनकाग्रजन्मनोः शासन-मतिक्रम्य भुवं बभ्राम।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने कामपाल के दुर्व्यसनों का वर्णन किया है।

व्याख्या:- विट = धूर्तः, नट = शैलूष, वारनारी = वेश्या, परायणः = तत्परः आसक्त, (कामुकाऽनुचरशैलूषवेश्यातत्परः) दुर्विनीतः = अशिष्टः, (धर्मपालस्य तृतीय: पुत्र: कामपाल) जनकाऽग्रजन्मनोः = पितृज्येष्ठभ्रात्रोः, शासनम् = आज्ञाम्, अतिक्रम्य = उल्लङ्घय, भुवं = भूमिं, बभ्राम = सञ्चचार (भ्रान्तवान्) ।।9।।

भावार्थ:- धूर्तो, नटों और वेश्याओं के सम्पर्क में आकर, अशिष्ट कामपाल पिता और ज्येष्ठ भ्राता की आज्ञा का उल्लंघन कर पृथ्वी पर भ्रमण करने लगा ।।9।।

10. रत्नोद्भवोऽपि वाणिज्यनिपुणतया पारावारतरणमकरोत्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने रत्नोद्भव का व्यापार हेतु देशान्तर गमन वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- रत्नोद्भवोऽपि = पद्मोद्भवस्य द्वितीय कनिष्ठपुत्रोऽपि, वाणिज्यनिपुणतया = व्यापारक्ष्मतया, (वाणिज्य-प्रवीणत्वेन), पाराऽवारतरण = समुद्रपारगमनम्, अकरोत् = कृतवान् ।।10।।

भावार्थ:- रत्नोद्भव भी वाणिज्य में निपुण होने से समुद्र पार कर द्वीपान्तर में चला गया ।।10।।

11. इतरे मन्त्रिसूनवः पुरन्दरपुरातिथिषु पितृषु यथापूर्वमन्वतिष्ठन्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने सुमति, सुमन्त्र, सुमित्र तथा सुश्रुत का वर्णन किया है।

व्याख्या:- इतरे = अन्ये चत्वारः, मन्त्रिसूनवः = अमात्यपुत्राः, पितृषु = जनकेषु, पुरन्दरपुरस्य = (इन्द्रनगरस्य), अतिथिषु = (प्राधुणिकेषु) सत्सु यथापूर्वकुलपरम्पराक्रमेण, अन्वतिष्ठन् = स्वस्य व्यापारानुष्ठितवन्तः ।।11।।

भावार्थ:- सुमति, सुमन्त्र, सुमित्र तथा सुश्रुत ये चार मन्त्रिपुत्र अपने-अपने पिताओं के स्वर्गवासी होने पर अपने पिता का कार्य सँभालने लगे ।।11।।

12. ततः कदाचिन्नानाविधमहदायुधनैपुण्यरचितागण्यजन्यराजन्यमौलि- पालिनिहितनिशितसायको मगधनायको मालवेश्वरं प्रत्यग्रसङ्ग्रामघस्मर समुत्कटमानसारं मानसारं प्रति सहेलं

न्यक्कृतजलधिनिर्घोषहङ्का रेण भेरीझङ्कारेण हठिकाकर्णनाक्रान्तभयचण्डिमानं दिग्दन्तावलवलयं विघूर्णयन्निजभरनमन्मेदिनी- भरेणायस्तभुजगराजमस्तकबलेन चतुरङ्गबलेन संयुत सङ्ग्रामाभिलाषेण रोषेण महताविष्टो निर्ययौ।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने मगधाधिपति एवं मालवेश्वर के युद्ध का वर्णन किया है।

व्याख्याः- ततः = अनन्तरं, कदाचित् = जातुचित्, नानाविधानि = (अनेकप्रकाराणि), महतां = (महापुरुषाणाम्), यानि आयुधानि = (अस्त्राणि), तेषां नैपुण्येन = (प्रयोगप्रावीण्येन), अगण्यानि = (अगणनीयानि) जन्यानि = (युद्धानि) तेषु, राजन्यानां = (क्षत्रियाणाम्) मौलिपालिषु = (किरीटप्रान्तभागेषु) निहिताः = (स्थापिताः, प्रहता इति भावः) निशिताः = (तीक्ष्णाः) सायकाः = (बाणाः) येन। तादृशो मगधनायकः = मगधाऽधिपतिः, राजहंस इति भावः। प्रत्यग्रः = (नूतनः) यः सग्रामः = (युद्धम्) तस्य घस्मरः= (भक्षकः) घसतीति घस्मरः, शत्रुनाशक इति भावः। समुत्कटः = (अतिशयतीव्रः) मानः = (अभिमानः) एव सारः = (स्थिरांऽशः) यस्य सः। तादृशं मालवेश्वरं = मालवदेशाऽधिपतिं, मानसारं, प्रतियोगे 'अभितः परितः समया निकषाहाप्रतियोगेऽपि' इति द्वितीया। सहेलम् = अवज्ञापूर्वकमिति भावः। न्यक्कृतः = (तिरस्कृतः) जलधिनिर्घोषस्य = (सागरध्वनेः) अहङ्कारः = (अभिमानः) येन। तादृशेन भेर्याझङ्कारेण = दुन्दुभिमहाध्वनिना। हठिकं = (बलात्कारसम्बन्धि) यत् आकर्णनं = (महाध्वनिश्रवणम्) तेन आक्रान्तः = (प्राप्तः) भयेन = (भीत्या) चण्डिमा = (अत्यन्तकोपनत्वम्) यस्य, तम्। दिगन्तावलानाम् = (दिग्गजानाम्) वलयं = (मण्डलम्), विघूर्णयन् = चालयान्। हठः= (बलात्कारः) अस्याऽस्तीति हठिकं, हठशब्दात् "अत इनिठनौ।" इति ठप्रत्ययः, ठस्येकः। तेन = आक्रान्तः, भयेन चण्डिमा = चण्डत्वम्) यस्य तम् चण्डस्य भावश्चण्डिमा, "पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा" इति इमनिच्प्रत्ययः। "वलयः कण्ठरोगे ना कटके पुंनपुंसकम्।" इति मेदिनी। निजमरेण = (स्वभारेण) नमन्ती = (अधोगच्छती) या मेदिनी = (पृथ्वी) तस्या भरेण = (भारेण) करणेन। आयस्तं = (पीडितम्) भुजगराजस्य = (सर्पराजस्य, शेषस्ययेति भावः) मस्तकबलं = (शिरोधारणशक्तिः) येन। चतुरङ्गबलेन = चत्वारि (चतुः संख्यानि, हस्त्यश्वरथपादातिरूपाणीति भावः) अङ्गानि = (अवयवाः) यस्य, तेन, तादृशेन बलेन (सैन्येन) संयुतः = सहितः। संग्रामाऽभिलाषेण = युद्धमनोरथेन, महता = प्रचुरेण, रोषेण = क्रोधेन; निर्ययौ = निर्जगाम ।।12।।

भावार्थः- यहाँ राजा राजहंस के युद्ध गमन का वर्णन किया गया है, अनेक शास्त्रों की कलाओं में निपुण राजा राजहंस किसी समय बड़े वीरों से धारण किये जाने वाले हथियारों के चलाने की

निपुणता से अगणित युद्धोंमें राजाओं के शिर में तीक्ष्ण बाण छोड़ने वाले, मगधेश्वर राजहंस ने नये संग्राम में शत्रुओं को नष्ट करने वाले, उत्कट अभिमानरूप सारवाले मानसार के प्रति तिरस्कार पूर्वक समुद्र को आवाज का तिरस्कार करनेवाले भेरी के शब्द से बलात्कार पूर्वक हुए महाध्वनि के श्रवण से प्राप्त भय से अत्यन्त क्रुद्ध दिग्गजसमूह को कम्पित करते हुए अपने भार से झुकती हुई पृथ्वी के भार से शेषनाग के शिरों के धारण करने के बल को पीड़ित करने वाली चतुरंगिणी सेना (हाथी, घोड़ा, रथ और पैदल) से युक्त होकर युद्ध के अभिलाषा से बड़े क्रोध से आविष्ट होकर युद्ध के लिए निकले ।।12।।

13. मालवनाथोऽप्यनेकानेकपयूथसनाथो विग्रहः सविग्रह इव साग्रहोऽभिमुखीभूय भूयो निर्जगाम।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में मानसार की सेना का वर्णन प्रतिपादित किया गया है

। **व्याख्या:-** मालवनाथ = मालवेश्वरः, मानसार इति भावः। अपि, अनेके = (बहवः) ये अनेकान् = (द्विपाः, हस्तिन इति भावः) तेषां यूथं = (समूहः) तेन सनाथः = (युक्तः) सविग्रहः = शरीरधारी, विग्रहः = (कलहः), इव "विग्रहो युधि विस्तारे प्रविभागशरीरयोः।" इति हेमः। उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः, साग्रहः = आग्रहयुक्तः, अभिमुखीभूय = सम्मुखो भूत्वा, भूयः = पुनरपि एतेन पुराऽपि राजहंसमानसारयोर्युद्धमभूदिति गम्यते। निर्जगाम = निर्ययौ।।13।।

भावार्थ:- मालवेश्वर मानसार भी अनेक हाथियों के झुण्ड से युक्त होकर शरीरधारी युद्ध के समान आग्रह के साथ सम्मुख होकर फिर भी अपने नगरसे निकल पड़ा ।।13।।

14. तयोरथ रथतुरगखुरक्षुण्णक्षोणीसमुद्भूते करिघटाकटस्रवन्मदधाराधौतमूले नव्यवल्लभवरणागतदिव्यकन्याजनजवनिकापटमण्डप इव वियत्तलव्याकुले धूलीपटले दिविषदध्वनि धिक्कृतान्यध्वनिपटहध्वानबधिरिताशेषदिगन्तरालं शस्त्रांशस्त्रि हस्ताहस्ति परस्पराभिहतसैन्यं जन्यमजनि।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने मगधाधिपति एवं मालवेश्वर के युद्धक्षेत्र का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- अथ = अनर्गमनाऽनन्तरं, तयोः = राजहंसमानसारयोः, रथेः = (स्यन्दनचक्रैः) ततुरगखुरैः = (अश्वशफैः) क्षुण्णा = (चूर्णिता) या क्षोणी = (पृथिवी) तस्याः, समुद्भूतम् = (उत्पन्नम्), तस्मिन्।

करिघटानां = (हस्तिसमूहानाम्) ये कटाः = (गण्डाः) तेभ्यः स्रवन्त्यः = (क्षरन्त्यः) या मदधाराः = (दानजलासाराः) ताभ्यो धौतं = (प्रक्षालितम्) मूलं = (मूलप्रदेशः) यस्य तस्मिन्), नव्यवल्लभस्य = (नूतनवरस्य) वरणं = (पतित्वेन स्वीकरणम्) तदर्थमागतः = (आयातः) यो दिव्यकन्याजनः = (अप्सरोवर्गः) तस्य जवनिकया = (तिरस्करिण्या) युक्तो यः पटमण्डपः = (वस्त्रगृहम्), वियत्तलव्याकुले = आकाशतलव्याप्ते, धूलीपटले = रेणुसमूहे, दिविषदाम् = (देवानाम्) अध्वनि = (मार्गे) आकाश इति भावः। धिक्कृताः = (न्यक्कृताः) अन्यध्वनयः = (अपरशब्दाः) ये तादृशा ये पहटध्वानाः = (आनकध्वनयः), तैर्वधिरितं = (वधिरीकृतम्) अशेषं = (समस्तम्) दिगन्तरालम् = (आशामण्डलम्) येन तस्मिन्। शस्त्राशस्त्रि = शस्त्रैश्च शस्त्रैश्च प्रहृत्येदं युद्धं प्रवृत्तम्, हस्ताहस्ति = हस्ताभ्यां हस्ताभ्यां प्रहृत्येदं युद्धं प्रवृत्तमिति, परस्परस्य = (अन्योन्यस्य) अभिहतं = (ताडितम्) सैन्यं = (सैना) यस्मिस्तत्। तादृशं जरू = युद्धम्। अजनि = आरब्धम् जातं, ।।14।।

भावार्थ:- तब उन दोनों के रथोंकी पहियों से घोड़ों के खुरों से चूर्ण की गई पृथ्वी से उत्पन्न तथा हाथियों के झुण्ड के कपोलों से बहती हुई मदधारा से मूल भाग में धोये गये, नये वरका वरण करनेके लिए आई देवकन्याओं के लिए परदेसे मुक्त तम्बू के समान धूलीसमूहके आकाशमें व्याप्त होने पर, देवमार्ग (आकाश) में अन्यध्वनियोंको धिकार (मात) करनेवाले नगाड़ोंकी आवाजसे समस्त दिग्मण्डलको बहरा करनेवाला, शस्त्र शस्त्रसे हाथ हाथसे परस्परमें विरोधी सैन्यको प्रहार करने वाला युद्ध होने लगा।।14।।

15. तत्र मगधराजः प्रक्षीणसकलसैन्यमण्डलं मालवराजं जीवग्राहमभिगृह्य कृपालुतया पुनरपि स्वराज्ये प्रतिष्ठापयामास।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने राजहंस की मानसार पर विजय का वर्णन प्रस्तुत किया है।

व्याख्या:- तत्र = तस्मिन् युद्धे, जन्ये मगधराजः = राजा राजहंस: (मगधेश्वरः), प्रक्षीणं = (दृढविध्वस्तम्) सकलं = (समस्तम्) सैन्यमण्डलं = (सैनिकचक्रवालम्) यस्य तं, तादृशं मालवराजं = मानसारं, जीवग्राहम् अभिगृह्य = जीवन्तं गृहीत्वा, कृपालुतया = दयालुत्वेन; पुनरपि = भूयोऽपि, स्वराष्ट्रे = निजराजे, प्रतिष्ठापयामास = प्रतिष्ठितं चकारेति भावः, मानसारमिति शेषः।।15।।

भावार्थ:- उस युद्धमें मानसारके सम्पूर्ण सैन्यमण्डलको क्षीण कर मगधराज राजहंसने मालवराज मानसारको जीते-जी पकड़ कर भी दयालु होनेसे उन्हें फिर भी अपने राज्य में प्रतिष्ठित किया।।15।।

16. ततः स रत्नाकरमेखलामिलामनन्यशासनां शासदनपत्यतया नारायण सकललोकैककारणं निरन्तरमर्चयामास।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजहंस को सन्तति प्राप्त हेतु नारायण आराधना का वर्णन किया है।

व्याख्या:- ततः = मानसारपराजयाऽन्तरं, सः = राजहंसः, रत्नाकरः = (समुद्रः) मेखला = (कांची) यस्याः, ताम्। समुद्रपरिवेष्टितामिति भावः। अनन्यशासनाम् = अविद्यमानम् अन्यस्य = (अपरस्य) शासनं = (शिष्टिः) यस्याः, शासत् = शासनं कुर्वत्, अनपत्यतया = सन्तानरहितत्वेन। सकललोकानाम् = (समस्तभुवनानाम्) एकं = (मुख्यम्) कारणं = (हेतुभूतम्) नारायणं = भगवन्तं विष्णुम्, निरन्तरं = सततम्, अर्चयामांस = पूजयामास ।।16।।

भावार्थ:- तब समुद्रसे परिवेष्टित और किसी दूसरेके शासनमें नहीं रही हुई पृथ्वीका शासन कर राजहंस, सन्तानके न होनेसे समस्त लोकोंके एकमात्र कारण भगवान् नारायणकी निरन्तर पूजा करने लगे ।।16।।

17. अथ कदाचित्तदग्रमहिषी 'देवि! देवेन कल्पवल्लीफलमाप्नुहि' इति प्रभातसमये सुस्वप्नमवलोकितवती।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में वसुमती के स्वप्न फल में सन्तति लाभ का दर्शन वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- अथ = नारायणस्यार्चाऽनन्तरं, कदाचित् = जातुचित्, तस्य = मगधाधिपस्य राजहंसस्य, अग्रमहिषी = पट्टरानी (कृताऽभिषेका राज्ञी), देवि = हे कृताऽभिषेके राज्ञि! देवेन = राज्ञा, राजहंसेन सह। कल्पवल्लीफलं = कल्पलताफलम्, आप्नुहि = लभस्व इति (प्राप्नुहि), भक्षणार्थमिति भावः इति, प्रभातसमये = प्रातःकाले, सुस्वप्नं = सुन्दरस्वप्नम्, अवलोकितवती = दृष्टवती ।।17।।

भावार्थ:- तब किसी समय राजहंसकी महारानीने- 'हे देवि! महाराजके साथ इस कल्पलताके फलको आप ग्रहण करें" ऐसा उत्तम स्वप्न देखा ।।17।।

18. सा तदा दयितमनोरथपुष्पभूतं गर्भमधत्त।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने वसुमती का गर्भाधान संस्कार वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- सा = वसुमती, तदा = तस्मिन्समये, दयितमनोरथस्य = (प्रियाऽभिलाषफलस्य) पुष्पभूतम् = (कुसुमभूतम्), गर्भं = भ्रूणम्, अधूत्त = धृतवती॥18॥

भावार्थ:- उन्होंने उसी समय अपने प्रिय (पति) के अभिलाषरूप फलके पुष्पके समान गर्भको धारण किया ॥18॥

19. राजापि सम्पन्न्यक्कृताखण्डलः सुहृन्नृपमण्डल समाहूय निजसम्पन्मनोरथानुरूप देव्याः सीमन्तोत्सवं व्यधत्त।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने वसुमति का सीमन्तोन्नयन संस्कार वर्णन प्रस्तुत किया है ।

व्याख्या:- राजऽपि = राजहंसोऽपि, सम्पदा= समृद्धया (सम्पत्त्या), न्यक्कृतः = (तिरस्कृतः) आखण्डलः = (इन्द्रः) येन सः, इन्द्रदप्यधिकसम्पत्तिशालीति भावः। राजाऽपि = राजहंसोऽपि। सुहृदः = (मित्राणि) च ते नृपाः (राजानः) तेषां मण्डलम् (समूहम्), समाहूय = समाकार्य, निजसम्पदां = (स्वसम्पत्तीनाम्) मनोरथस्य = (अभिलाषस्य) च अनुरूपं = (सदृशम्) देव्याः = महाराज्ञया, वसुमत्याः; सीमन्तोत्सवं = षष्ठे अष्टमे वा मासि क्रियमाणं गर्भसंस्काराम् व्यधत्त = विहितवान्॥19॥

भावार्थ:- अपनी सम्पत्तिसे इन्द्रका तिरस्कार करने वाले राजा ने अपने मित्र राजसमूहको बुलाकर अपनी सम्पत्ति और अभिलाषके योग्य महारानी का सीमन्तोत्सवका विधान किया॥19॥

20. एकदा हितैः सुहृन्मन्त्रिपुरोहितैः सभायां सिंहासनासीनो गुणैरहीनो ललाटतटन्यस्तांजलिना द्वारपालेन व्यज्ञापि- 'देव! देवसन्दर्शनलालसमानसः कोऽकपि देवेन विरच्यार्चनार्हो यतिर्द्वारदेशमध्यास्ते- इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजहंस के दरबार में सन्यासी का दर्शनार्थ उपस्थित होने का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- एकदा = एकस्मिन्दिने, हितैः = हितकारकैः, सुहृद्भि = (मित्रैः) मन्त्रिभिः = (धीसचिवैः), पुरोहितैः = (पुरोधाभिश्च) । गुणैः = दयादाक्षिण्यादिभिः, अहीनः = अरहितः, युक्त इति भावः। सभायां = परिषदि, सिंहासनासीनः = राज्यासनोपविष्टः, राजवाहन इति शेषः। ललाटे = (भाले), न्यस्तः = (स्थापितः), अंजलिः = (हस्तसम्पुटः) येन, तेन द्वारपालेन = प्रतीहारेण, व्यज्ञापि

= विज्ञापितः, देव = महाराज, देवस्य = (भवतः) सन्दर्शने = (अवलोकने) लालसम् = (अतिशयाऽभिलाषयुक्तम्) मानसं = मनो यस्य स: (वित्तम्) यस्य सः देवेन = भवता, विरच्या = (विरचगीया कर्तव्येति भावः) या अर्चना = (पूजा) ताम् अर्हतीति, भवताऽपि पूजनीय इति भावः। तादृशः कोऽपि = अज्ञातः, यतिः = संयमी, द्वारदेशः = प्रतीहारदेशम्, अध्यास्ते = अलङ्करोति (अधितिष्ठति) ॥20॥

भावार्थः- एक दिन अपने शभेच्छु मन्त्री और पुरोहितों के साथ सभा में सिंहासन पर बैठे हुए, गुणोंसे पूर्ण महाराज राजवाहन को ललाट में अंजलि बाँधकर द्वारपालने निवेदन किया-''महाराज! आपके दर्शन में अत्युत्कट अभिलाषवाले तथा आपसे पूजाके योग्य कोई संन्यासी द्वार प्रदेश में उपस्थित है॥20॥

21. तदनुज्ञातेन तेन स संयमी नुपसमीपमनायि।

प्रसंगः- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने सन्यासी का राजसभा में प्रवेश वर्णन को प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- तदनुज्ञातेन = तेन (राजा), अनुज्ञातेन = (आदिष्टेन) तेन = (द्वारपालेन), सः = सन्यासी (पूर्वोक्तः), संयमी = यतिः, नृपसमीपं = राजनिकटम्, अनायि = प्रपितः, ॥21॥

भावार्थः- राजा से आज्ञा पाकर द्वारपाल उस संन्यासी को राजा के पास ले आया ॥21॥

22. भूपतिरायान्तं तं विलोक्य सम्यगज्ञाततदीयगूढचारभावो निखिलमनुचरनिकरं विसृज्य मन्त्रिजनसमेतः प्रणतमेनं मन्दहासमभाषत-'ननु तापस! देशं सापदेशं भ्रमन्भवांस्तत्र तत्र भवदभिज्ञातं कथयतु' इति।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजहंस व सन्यासी (गुप्तचर) का संवाद वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्याः- भूपतिः = राजाराजहंस, आयान्तम् = आगच्छन्तं, तं = संयमिनम् (यतिं), विलोक्य = दृष्ट्वा। सम्यक् = सुष्ठु, ज्ञातः = (विदितः) तदीयः = (तत्सम्बन्धी) गूढः = (प्रच्छन्नः) चारभावः = चारत्व परस्परभाव: (प्रणिधित्वम्) येन सः। निखिलं = समस्तम्, अनुचरनिकरम् = अनुयायिवर्गम्। विसृज्य = त्यक्त्वा, बहिर्गमनार्थमादिश्येति भावः। मन्त्रिजनसमेतः = धीसचिवजनेनसहितः सन्, प्रणतं = कृतप्रणामम्। एनम् = इमम्। मन्दहासम् = ईषद्धास्यपूर्वकं, अभाषत = भाषितवान्। तापस

= हे तपस्विन्!, देशं = देशान् (जनपदं), साऽपदेशं = सव्याज, भ्रमन् = पर्यटन्, भवान्, तत्र तत्र = तस्मिन् तस्मिन् स्थाने। भवदभिज्ञात = भवता (त्वया) अभिज्ञातम् = (अवगतम्), कथयतु = वदतु ।।22।।

भावार्थ:- राजा ने भी आये हुए उस संन्यासी को देखकर अच्छी तरह से उसके गुप्तचर भाव को समझकर समस्त अनुचरों को रुखसतकर मन्त्रियों के साथ रहकर प्रणाम करने वाले उस सन्यासी को मुसकुराकर कहा- हे तपस्विन्! तपस्वी का बहाना कर देश में भ्रमण करते हुए आपने जो कुछ देखा सुना। हो, उसे बताने का कष्ट करें ।।22।।

23. तेनाभाषि भूभ्रमणबलिना प्रांजलिना-"देव! शिरसि देवस्याज्ञामादायेनं निर्दोषं वेष स्वीकृत्य मालवेन्द्रनगरं प्रविश्य तत्र गूढतरं वर्तमानस्तस्य राज्ञः समस्तमुदन्तजातं विदित्वा प्रत्यागमम्।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में गुप्तचर द्वारा मानसार के नगर के गुप्त समाचारों का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- भूभ्रमणबलिना - भूभ्रमणे = (पृथ्वीपर्यटने), बलिना = (बलवता, समर्थेनेति भावः), प्रांजलिना = कृतहस्तपुटेन, तेन = यतिना, अभाषि = कथितम् (भाषितं), देव = राजन्!, देवस्य = भवतः, आज्ञाम् = आदेशम्, आदाय गृहीत्वा, एनं, निर्दोषं = दोषरहित, वेषं = नेपथ्यं, यतिरूपमिति भावः। स्वीकृत्य = अंङ्गीकृत्य, मालवेन्द्रनगरं मानसारपुरं, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, तत्र = मालवेन्द्रनगरे, गूढतरं = अतिशयगुप्तं यथा तथा, वर्तमानः = विद्यमानः। तस्य = पूर्वोक्तस्य, राज्ञः = भूपस्य, मानसारस्येति भावः। समस्तं = सकलम्, उदन्तजातं = वृत्तान्तसमूहं, विदित्वा = ज्ञात्वा, प्रत्यागमं = प्रतिनिवृत्तः, ।।23।।

भावार्थ:- देश में भ्रमण करने में समर्थ उस संन्यासी ने प्रणाम कर भाषण किया- महाराज! आपकी आज्ञा को शिरपर धारण कर इस निर्दोष वेषको लेकर मानसार के नगरमें प्रवेश कर वहाँ गुप्त रूप से रहता हुआ मैं उस राजाके समस्त वृत्तान्तों को जान कर लौटा हुआ हूँ ।।23।।

24. मानी मानसारः स्वसैनिकायुष्मत्तान्तराये संपराये भवतः पराजयमनुभूय वैलक्ष्यलक्ष्यहृदयो वीतदयो महाकालनिवासिनं कालीविलासिनमनश्वर महेश्वरं समाराध्य तपःप्रभा-वसंतुष्टादस्मादेकवीरारातिघ्नीं भयदां गदां लब्ध्वात्मानमप्रतिभअं मन्यमानो महाभिमानो भवन्तमभियोक्तुमुद्युङ्क्ते। तत परं देव एव प्रमाणम्' इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने मानसार को भगवान शिव की आराधना से प्राप्त अमोघ शक्ति (गदा) का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- मानी = अभिमानी; मानसारः = मालवेन्द्र (मालवेश), स्वस्य = (आत्मनः), ये सैनिकाः = (सैन्याः) तेषां या आयुष्मत्ता = (प्रचुरायुर्युक्तता, जीवनमर्यादेति भावः) तस्या अन्तराये = (विघ्नस्वरूपे) संपराये = युद्धे, भवतः त्वत्, पराजयं = रणे भङ्गम्, अनुभूय = अनुभवं कृत्वा। वैलक्ष्यस्य = (लज्जायुक्तत्वस्य) लक्ष्यं = (विषयीभूतम्) हृदयं = (चित्तम्) यस्य सः। अत एव वीतदयः = निर्दयः सन्। महाकाले = (उज्जयिनीस्थिते स्थानविशेषे) निवासिनम् = (निवासकारिणम् कालीविलासिनं = पार्वतीविलासशीलम्, अनश्वरम् = नाशरहितं, महेश्वरं = महादेव, समाराध्य = संसेव्य, तपःप्रभावेण = (तपस्यामाहात्म्येन) सन्तुष्टात् = (संप्रीतात्), अस्मात् = महेश्वरात्, एकवीरः = (मुखशूरः) यः अरातिः = (शत्रुः) तं हन्ति = (व्यापादयति) इति, भयदां = भीतिकारिणीं; गदां = कासूम्, आयुधविशेषम्। लब्ध्वा = प्राप्य, आत्मान स्वम्, अप्रतिभटं = प्रतिकूलभटरहितम् अप्रतिद्वन्द्वमिति भावः। मन्यमानः = जानन्। महाऽभिमानः = महाऽहङ्कारः सन्। भवन्तं = त्वाम्, अभियोक्तुम् = अभिषेणयितुम्, उद्युङ्क्ते = उद्यतो भवति। ततः = तस्मात्, परम् = अनन्तरं, देवः = भवान्; एव; प्रमाणं = कार्य निर्णय इति भावः।।24।।

भावार्थ:- अभिमानी राजा मानसार अपने सैनिकों के आयुर्धारण में विघ्नरूप युद्ध में आप से पराजय का अनुभव कर लज्जितचित और निर्दय होकर महाकाल में निवास और काली से विलास करने वाले अविनाशी महेश्वर की आराधना कर तपस्या के प्रभाव से सन्तुष्ट उनसे एक वीर शत्रु को मारनेवाली भयप्रद गदा को पाकर अपने को अप्रतिभट (अप्रतिद्वन्द्वी योद्धा) समझ कर बड़ा अभिमान वाला होकर आप पर आक्रमण करने का उद्योग कर रहा है। अब क्या करना चाहिये ? आप ही प्रमाण है ।।24।।

25. तदालोच्य निश्चिततत्कुत्यैरमात्यै राजा विज्ञापितोऽभूत्-‘देव! निरुपायेन देवसहायेन योद्धुमरातिरायाति। तस्मादस्माकं युद्धं सांप्रतमसांप्रतम्। सहसा दुर्गसंश्रयः कार्यः’ इति।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने मंत्रियों का विचार विमर्श का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तत् = गूढचारवाक्यम्, आलोच्य = आलोचनां कृत्वाः, नितिश्चितं = (निर्णीतम्) तस्य = (मानसारस्य) कृत्यम् = (कार्यम्) यैस्तैः। अमात्यैः = मन्त्रिभिः, राजा = राजहंसः, विज्ञापितः =

निवेदितः, अभूत् = अभवत्। देव = महाराज। अरातिः = शत्रुः, मानसारः, निरुपायेन = उपायरहितेन, निर्गत उपायः = (प्रतीकारः) यस्य, तेन। देवसहायेन = सुरसाहाय्येन, योद्धुं = युद्धं कर्तुम्, आयाति = आगच्छति। तस्मात् = कारणात्, साम्प्रतम् = इदानीम्, युद्धम् = विग्रहः, असाम्प्रतम् = अयुक्तम्। सहसा = अतर्कित एव, दुर्गसंश्रयः = कोट्टाश्रयः, कार्यः = कर्तव्यः ।।25।।

भावार्थः- उस वृत्तान्त की आलोचना कर शत्रुकार्य को निश्चय करने वाले मन्त्रियों ने राजा को निवेदन किया- महाराज ! शत्रु (मानसार) निरुपाय होकर देवता की सहायता से युद्ध करने के लिए आ रहा है। इस कारण हम लोगों को इस समय युद्ध नहीं करना चाहिए। अतः दुर्ग (किले) का आश्रय करना उचित है ।।25।।

26. तैर्बहुधा विज्ञापितोऽप्यखर्वेण गर्वेण विराजमानो राजा तद्वाक्यमकृत्यमित्यनादृत्य प्रतियोद्धुमना बभूव।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजा के पराक्रम का वर्णन किया है।

व्याख्याः- तैः = अमात्यैः, बहुधा = बहुभिः प्रकारैः, विज्ञापितोऽपि = निवेदितोऽपि। अखर्वेण = खर्वरहितेन, उन्नतेनेति भावः। गर्वेण = अभिमानेन, विराजमानः = शोभमानः, राजा = राजवाहनः, तद्वाक्यम् = अमात्यवचनम्, अकृत्यम् = अकरणीयम्, अनादृत्य = अस्वीकृत्य (अनादरं कृत्वा)। प्रतियोद्धुमनाः = प्रतियोद्धुम् (प्रतिकूलयुद्धम) मनः = (चित्तम्) यस्य सः, बभूवः = अभवत् ।।26।।

भावार्थः- इस प्रकार मन्त्रियों के अनेक प्रकार से निवेदन करने पर भी उन्नत गर्व से विराजमान राजा उसके वाक्यों को न माना और शत्रु का मुकाबला करने के लिए चित्त में सोचने लगे ।।26।।

27. शितिकण्ठदत्तशक्तिसारो मानसारो योद्धुमनसामग्रीभूय सामग्रीसमेतोऽक्लेशं मगधदेशं प्रविवेश।

प्रसंगः- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में मानसार का मगधदेश में प्रवेश का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्याः- शितकण्ठेन = शिवेन (नीलकण्ठेन) महेश्वरेणेति भावः, दत्ता = (वितीर्णा) शक्तिः = (गदारूपसामर्थ्यम्) एव सारः = (बलम्) यस्य सः। मानसारः = मालवेश्वरः। यौद्धुमनसां = योद्धुं (युद्धं कर्तुम्) मनः = (चित्तम्) येषां, अग्रीभूय = पुरो भूत्वा। सामग्रीसमेतः = सामग्र्या

(युद्धोपकरणेन) समेतः = (युक्तः) सन्। मगधदेशं = राजवाहनजनपदम्, अक्लेशं = दुखः रहितं यथा तथा। प्रविवेश = (प्रविष्ट) प्रवेशं चकार ।।27।।

भावार्थः- महादेव से दिया गया शक्ति रूप सार से युक्त होकर मानसार लड़ने के लिए तत्पर सैनिकों के अग्रगामी होकर युद्ध की सामग्री के साथ अनायास हो मगधदेश में प्रवेश कर लिया ।।27।।

28. तदा तदाकर्ण्य मन्त्रिणो भूमहेन्द्रं कथंचिदनुनीय रिपुभिरसाध्ये विन्ध्याटवीमध्येऽवरोधान्मूलबलरक्षितान्निवेशयामासुः।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने राजमहल की रानियों को संरक्षणता हेतु विन्ध्याचल वनगमन का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- तदा = (मानसार गमन् अन्तरम्) तस्मिन् समये, तत् = वृत्तम्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, मन्त्रिणः = धीसचिवाः। भूमहेन्द्रं = भुवि महेन्द्रम् (पृथिवीन्द्रं), मगधेन्द्रं = मगधराजं, राजहंसम्, कथंचित् = केनाऽपि प्रकारेण, अनुनीय = अनुनय कृत्वा, रिपुभिः = शत्रुभिः, असाध्ये = असाधनीये, दुष्प्रवेशनीय इति भावः।

विन्ध्याऽटवीमध्ये = विन्ध्यवनाऽन्तरे, अवरोधान् = मगधराजाऽन्धः पुराणि, अन्तः पुरस्त्रिय इति भावः, लक्षणयाऽयमर्थः, मूलबलेन = (प्रधानसैन्येन) रक्षितान् = (गुप्तान्) कृत्वेति शेषः, निवेशयामासुः = स्थापितवन्तः।।28।।

भावार्थः- उस समय उस खबर को सुनकर मन्त्रियों ने पृथिवी के इस मगधेन्द्र (राजहंस) को किसी प्रकार मनाकर शत्रुओं से अगम्य विन्ध्यपर्वत के वन के मध्य भाग में प्रधान सैनिकों से रक्षित राजा के अन्तःपुर की रानियों को प्रविष्ट कराया ।।28।।

29. राजहंसस्तु प्रशस्तवीतदैन्यसैन्यसमेतस्तीव्रगत्या निर्गत्याधिकरूपं द्विषं रुरोध।

प्रसंगः- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने राजहंस की सेना द्वारा मानसार के घेराव का वर्णन किया है।

व्याख्याः- राजहंसस्तु = मगधाधिपस्तु , प्रशस्तं = (सत्कृतम्) वीतदैन्यं = (दीनतारहितम्) यत् सैन्य = (सेना) तेन समवेतः = (युक्तः) तीव्रगत्या = वेगाऽतिशयेनेति भावः। निर्गत्य = निर्गमं कृत्वा, अधिकरुषं = तीव्रकोपम्, द्विष = शत्रुं, मानसारमित्यर्थः। रुरोध = रुद्धवान् ।।29।।

भावार्थ:- राजहंस ने सत्कृत और दीनता से रहित सैनिकों के साथ होकर तीव्र गति से बाहर निकल कर अत्यन्त क्रुद्ध शत्रु (मानसार) को घेर लिया ॥29॥

30. परस्परबद्धवैरयोरेतेयोः शूरयोस्तदा तदालोकनकुतूहलागतगगनचराश्चर्यकारणे रणे वर्तमाने जयाकाङ्क्षी मालवदेशरक्षी विविधायुधस्थैर्यचर्याञ्चितसमरतुलितामरेश्वरस्य मगधेश्वरस्य तस्योपरि पुरा पुरारातिदत्तां गदां प्राहिणोत्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजहंस पर अमोघ शक्ति के प्रहार का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- तदा = तस्मिन् समये, परस्परम् = (अन्योन्यम्) यथा तथा, बद्धं = (कृतम्) वैरं = (विरोधः), एतयोः = एनयोः, शूरयोः = वीरयोः, राजहंसमानसारयोरिति भावः। तस्य = (रणस्य) आलोकने = (दर्शने) यत् कुतूहलम् = (कौतुकम्), तदर्थमागताः = (आयाताः) ये गगनचराः = (आकाशचारिणो देवगन्धर्वादय इति भावः) आश्चर्यकारणे = (विस्मयहेतुभूते), रणे = युद्धे, वर्तमाने = विद्यमाने, जयाकाङ्क्षी = विजयाऽभिलाषी, मालवदेशरक्षी = मालवजनपदरक्षिता, मानसार इति भावः। विविधानि = (अनेकप्रकाराणि) यानि आयुधानि = (प्रहरणानि) तेषां स्थैर्येण = (स्थिरत्वेन) या चर्या = (आचरणं, प्रयोग इति भावः)। तथा अंचिते = (पूजिते, सत्कृत इति भावः) समरे = (युद्धे) तुलितः = (उपमितः) अमरेश्वरः = (देवाऽधिपः, इन्द्रः इत्यर्थः) येन, तस्य, मगधेश्वरस्य = राजवाहनस्य, उपरि = ऊर्ध्वभागे, पुरा = पूर्वकाले, पुरारातिदत्तां = पुरारातिना (महेश्वरेण) दत्ता = (वितीर्णाम्) गदां = कासूं, प्राहिणोत् = प्रेरितवान्, ॥30॥

भावार्थ:- उस समय परस्पर दुश्मनी करनेवाले उन दोनों वीरोंके अवलोकनकी उत्कण्ठासे आये हुए आकाशचारी देव और गन्धर्व आदियोंके आश्चर्यके कारणभूत युद्धके छिड़ने पर विजयकी इच्छा करनेवाले मालवदेशके स्वामी (मानसार) ने अनेकों अस्त्रोंकी स्थिरता के प्रयोगसे प्रशंसित युद्धमें इन्द्र के समान मगधेश्वर (राजहंस) के ऊपर पहले महेश्वरसे दी गई उस गदाको छोड़ दिया॥30॥

31. निशितशरनिकरशकलीकृतापि सा पशुपतिशासनस्याबन्ध्यतया सूतं निहस्य रथस्थं राजानं मूर्छितमकार्षीत्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने अमोघ शक्ति का प्रभाव व राजहंस की मुर्छना का वर्णन किया है।

व्याख्या:- निशिताः = (तीक्ष्णाः) ये शरो = (बाणाः) तेषां निकरः = (समूहः) तेन शकलीकृता = (खण्डीकृता) अपि, सा = गदा, पशुपतिशासन्सय = महेश्वराज्ञायाः, अवन्ध्यतया = सकलत्वेनेति भावः। सूतं = सारथिं, निहत्य = व्यापाद्य। रथस्थं = स्यन्दन्स्थितं, राजानं = भूपं, राजवाहनं मूर्छितम = संजातमूर्च्छम्, कार्षीत् = कृतवती, ।।31।।

भावार्थ:- तीखे बाणसमूहसे खण्डित की जानेपर भी महेश्वरकी आज्ञाके अव्यर्थ होनेसे उस गदाने सारथिको मारकर रथस्थित राजाको मूर्छित कर डाला ।।31।।

32. ततो वीतप्रग्रहा अक्षतविग्रहा वाहा रथमादाय दैवगत्यान्तःपुरशरण्यं महारण्यं प्राविशन्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजा का अन्तपुर में प्रवेश वर्णन को प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- ततः = तदनन्तरं, वीतप्रग्रहाः = अपगतरश्मयः, अक्षतः = (अनष्टः) विग्रहः = (शरीरम्) वाहाः = अश्वाः। रथं = स्यन्दनम्, आदाय = नीत्वा, दैवगत्या = भाग्यगत्या, अन्तःपुरस्य = (अन्तःपुरस्थस्त्रीवर्गस्य), शरण्यं = (शरणे साधु), महारण्यम् = अरण्यानीम्, प्राविशन् = प्रविष्टाः।।32।।

भावार्थ:- तब सारथि के मारे जाने से बे-लगाम और अक्षत शरीरवाले घोड़ोंने रथको लेकर दैवगतिसे राजाके अन्तःपुरकी स्त्रियोंके आश्रयभूत महावनमें प्रवेश किया ।।32।।

33. मालवनाथो जयलक्ष्मीसनाथो मगधराज्यं प्राज्यं समाक्रम्य पुष्पपुरमध्यतिष्ठत्।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में मानसार ने विजयलक्ष्मी को प्राप्त कर उसके राज्यशासन का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- मालवनाथः = मानसारः, जयलक्ष्म्या = (विजयश्रिया) सनाथ = (युक्तः) सन्। प्राज्यं = प्रचुरं, मगधराज्यं = मगधराष्ट्रं, समाक्रम्य = समाक्रमणं कृत्वा। पुष्पपुरं = मगधराजधानीम्, अध्यतिष्ठत् = अध्यास्त ।।33।।

भावार्थ:- मालवनाथ (मानसार) ने जयलक्ष्मी से युक्त होकर प्रचुर मगध राज्यपर आक्रमण कर पुष्पपुरमें निवास किया।।33।।

34. तत्र हेतिततिहतिश्रान्ता अमात्या दैवगत्यानुत्क्रान्तजीविता निशान्तवातलब्धसंज्ञाः कथंचिदाश्वस्य राजानं समन्तादन्वीक्ष्यानवलोकितवन्तो दैन्यवन्तो देवीमवापुः।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने मंत्रीगण द्वारा राजहंस को खोजने का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- तत्र = विन्ध्यवने। हेतितति: = (आयुधपङ्क्तिः) तया हतिः = (ताडनम्) तया हेतुना श्रान्ताः = (क्लान्ताः), अमात्याः = मन्त्रिणः, दैवगत्या = भाग्यगत्या, अनुत्क्रान्तम् = (अनिर्गतम्), जीवितं = (जीवनम्) येषां ते। निशान्तस्य = (रात्र्यवसानस्य, प्रभातस्येति भावः) यो वातः = (वायुः) तेन लब्धा = (प्राप्ता) संज्ञा = (चेतना) यैस्ते। कथंचित् = केनाऽपि प्रकारेण, महताऽऽयासेनेति भावः। आश्वस्य = आश्वस्तीभूप, राजानं = भूपं, राजहंस, समन्तात् = इतस्ततः अन्वीक्ष्य = अन्वीक्षणं कृत्वा। अनवलोकितवन्तः = अदृष्टवन्तः, अत एव दैन्यवन्तः = दीनाः सन्तः, देवी = महाराज्ञीं वसुमतीम्, अवापुः, अत एव दैन्यवन्तः = दीनाः सन्तः, देवी = महाराज्ञीं वसुमतीम्, अवापुः = प्रापुः ।।34।।

भावार्थ:- वन में बाणों के आघात से परिश्रान्त मन्त्रिगण दैवगतिसे जीवित होकर रात्रिके अन्तमें हवाके चलनेसे होशमें आकर किसी तरह आश्वस्त होकर चारों ओर राजाको ढूँढकर नहीं देखते हुए दीनतापूर्वक महारानीके पास पहुँचे ।।34।।

35. वसुमती तु तेभ्यो निखिलसैन्यक्षतिं राज्ञोऽदृश्यत्वं चाकर्ण्योद्विग्ना शोकसागरमग्ना रमणानुगमने मत्रि व्यधत्त।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने राजा की अदृष्यता का वर्णन सुनकर वसुमति का शोकसन्तप्त होने का वर्णन किया है ।

व्याख्या:- वसुमती = महाराज्ञी, तुतेभ्यः = अमात्येभ्यः, निखिलसैन्यानां = (समस्तवैनिकानाम्) क्षतिं = (नाशम्), राज्ञः = राजहंसस्य, अदृश्यत्वम् = प्रदर्शनीयत्वं, च आकर्ण् = श्रुत्वा, उद्विग्ना = खिन्ना, शोकः = (मन्युः) एव सागरः = (समुद्रः) तस्मिन् मग्ना = (ब्रुडिता) रमणाऽनुगमनेरमणस्य = (पत्युः) अनुगमने = (अनुमरण इति भावः) मतिं = बुद्धिं, व्यधत्त = विहितवती ।।35।।

भावार्थ:- वसुमती ने उन (मन्त्रियों) से समस्त सेनाओंका विनाश और राजाके लापता होने का वृत्तान्त सुनकर उद्विग्न होकर शोकसमुद्रमें डुबकर खिन्न होकर पतिके अनुगमन (अनुमरण) का विचार किया।।35।।

36. कल्याणि! भूरमणमरणमनिश्चितम्। किञ्च दैवज्ञकथितो मथितोद्धतारातिः सार्वभौमोऽभिरामो भविता सुकुमारः कुमारस्त्वदुदरे वसति। तस्मादद्य तव मरणमनुचितम् 'इति भूषितभाषितैरमात्यपुरोहितैरनुनीयमानया तया क्षणं क्षणहीनया तूष्णीमस्थायि।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने ज्योतिषियों की उद्घोषणा, वसुमती के गर्भ में चक्रवर्ती कुमार के होने का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- कल्याणि = हे कल्याणलक्षणयुक्ते!, भूरमणस्य = (भूपतेः राजहंसस्य), मरणम् = (मृत्युः), अनिश्चितम् = अनिर्णीतम्। किं चेति। किं च = अपि च। दैवज्ञेन = (भाग्याऽभिज्ञेन, ज्यौतिषिकेणेति भावः) कथितः = (प्रतिपादितः) मथिताः = (मथिष्यमाणाः), उद्धताः = (धृष्टाः), अरातयः = (शत्रवः), येन सः, सार्वभौमः = चक्रवर्ती, सर्वभूमेरीश्वरः विदितो वा सार्वभौमः, इत्यमरः भविता = भावी, सुकुमारः = पेशलः, कुमारः = भर्तृदारकः। तव = (भवत्याः) उदरे = (कुक्षौ), वसति = वासं करोति। तस्मात् = कारणात्, गर्भयुक्तत्वादिति भावः। अद्य = अधुना। तव = भवत्याः मरणं = मृत्युः, अनुचित्तम् = अयुक्तम्। इति = एवम्। भूषितम् = (अलङ्कतम्) भाषितं = (भाषणम्) येषां तेः तादृशैः अमात्यपुरोहितैः = मंत्रिपुरोधोभिः। अनुनीयमानया = प्रार्थमानया, क्षणं = कंचित्कालं यावत्, क्षणहीनया = उत्सवरहितया तया = वसुमत्या, तूष्णीं = मौनं, इत्यमरः। अस्थायि = स्थितम् ।।36।।

भावार्थ:- 'कल्याणि! भूपति (राजा) का मरण निश्चित नहीं है। और भी, ज्योतिषियों से कहे गये उद्धत शत्रुओंका मंथन करनेवाले सुन्दर चक्रवर्ती होने वाला सुकुमार कुमार आपके गभ्ज्र्रमें निवास कर रहा है। उस कारणसे आज आपका मरण अनुचित है।" इस प्रकार अलंकत भाषणवाले मन्त्रियों और पुरोहितोंसे मनाई गई कुछ समय तक उत्सवरहित होकर महारानी चुप हो कर स्थित हुई।।36।।

37. अथार्धरात्रे निद्रानिलीननेत्रे परिजने विजने शोकपारावारमपारमुत्तर्तुमशक्नुवती सेनानिवेशदेशं निःशब्दलेशं शनैरतिक्रम्य यस्मिन्रथस्य संसक्ततया तदानयनपलायनश्रान्ता गन्तुमक्षमाः क्षमापतिरथ्याः पथ्याकुलाः पूर्वमतिष्ठंस्तस्य निकटवटतरोः शाखायां मृतिरेखायामिव क्वचिदुत्तरीयार्धेन बन्धनं मृतिसाधनं विरच्य मर्तुकामाभिरामा वाङ्माधुरीविरसीकृतकलकण्ठा साश्रुकण्ठा व्यलपत्-'लावण्योपमितपुष्पसायक! भूनायक! भवानेव भाविन्यपि जन्मनि वल्लभो भवतु 'इति।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में वसुमति का रात्रि में उस एकांत वन में प्रवेश करने का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- अथ = अनन्तरम्, अर्धरात्रे = निशीथे, परिजने = परिवारे, निद्रया = संवेशेन, निलीने = (निमीलिते), नेत्रे = (नयने) यस्य, तस्मिन्। तादृशे सति, अपारं = पाररहितं, शोकपारावारं =

मन्युसमुद्रम्; उत्तर्तुम् = उत्तरणं कर्तुं, अशक्नुवती = असमर्था भवन्ती। निर्गतः = (निर्यातः), शब्दलेशः = (स्वनलवः) यस्मिंस्तं, तादृशं, सेनायाः = (चम्पाः), निवेशः = (स्थानं) शिबिरमिति भावः, तस्य देशं = (प्रदेशम्), शनैः = मन्दम्। अतिक्रम्य = उल्लङ्घ्य, यस्मिन् = निकटवटतरौ, रथस्य = स्यन्दनस्य, संसक्ततया = सम्बद्धत्वेन। तस्य = (राज्ञः), आनयने = (वहने), पलायनेन = (शीघ्रगत्या) श्रान्ताः = (परिश्रान्ताः), अत एव, गन्तुं = यातुम्, अक्षमाः = असमर्थाः, क्षमापतिरथ्याः = राजवाहका अश्वाः, क्षमायाः = (पृथिव्याः) पतिः = (स्वामी, राजा राजहंस इति भावः) रथं वहन्तीति रथ्याः = अश्वाः, पथि = मार्गे, आकुलाः = क्लान्ताः सत्वरगमनेनेति शेषः।

पूर्वं = पुरा, अतिष्ठन् = स्थिता, तस्य = पूर्वोक्तस्य, निकटवटतरोः = समीपस्थन्यग्रोधवृक्षस्य। मृतेः = (मरणस्य), रेखायाम् = (लेखायाम्, चिह्नभूतायाम् इति भावः) इव, क्वचित् = कस्यांचित्, शाखायां = लतायाम्, उत्तरीयाद्र्धेन, संव्यानाद्र्धेन, मृतिसाधनं = मरणसाधकं, बन्धनं = पाशं, विरच्य = रचयित्वा, मर्तुं = (प्राणांस्त्यक्तुम्) कामः = (अभिलाषः) अभिरामा = सुन्दरी, वसुमतीति भावः। वाचः = (वचनस्य) या माधुरी = (मधुरता), तथा विरसीकृतः = (नीरसीकृतः) कलकण्ठः = (कोकिलः) मया सा। साऽश्रुः = (अश्रुसहितः) कण्ठः= (गलः) यस्याः सा, गद्गदाक्षरयुक्ता सतीति भावः। व्यलपत् = विलापम् अकरोत्, लावण्येन = (सौन्दर्येण हेतुना) उपमितः = (उपमाविषयीकृतः, तुलित इति भावः) पुष्पसायकः = (कुसुमेषुः काम इत्यर्थः) येन तत्सम्बुद्धौ। हे भूनायक = हे भूपते!, भवान् एव, भाविनि = भविष्यति, जन्मनि = जनने, वल्लभः = प्रियः, पतिरिति भावः। भवतु = अस्तु। इति।।37।।

भावार्थः- तब आधीरातमें सब परिजनोंके निद्रासे आँखोंको मूंदनेपर एकान्तमें महारानी वसुमती अपार शोक समुद्रको पार करनेमें असमर्थ होती हुई शब्दके लेशसे भी रहित सेनाओंके पड़ावके स्थानको धीरे-धीरे पार कर रथमें सम्बद्ध होनेसे जहाँपर रथ को लाने और भागनेसे श्रान्त होनेसे राजाके रथके घोड़े चलनेमें असमर्थ और मार्गमें व्याकुल होकर पहले ठहरे हुए थे, उसके निकट मरणकी रेखाकी समान बरगदकी किसी शाखामें दुपट्टेके आधे भागसे मृत्युका साधन बन्धन (पाश) बनाकर मरनेकी इच्छा कर वचन की माधुरी (मिठास) से कोयलके कण्ठको मात कर रुँधे हुए गलेसे विलाप करने लगी-सौन्दर्यसे कामदेवसे उपमित हे राजन्! आप ही मेरे दूसरे जन्ममें भी पति हों"।।37।।

38. तदाकर्ण्य नीहारककिरणनिकरसंपर्कलब्धावबोधो मागधोऽगाधरुधिरविक्षरणनष्टचष्टो देवीवाक्यमेव निश्चिन्वानत्तन्वानः प्रियवचनानि शनैस्तामाह्वयत्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने वसुमति का राजा राजहंस के स्वर सुनई देने का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- तदाकर्ण्य = नीहाराः = (हिमानि), कराः = (किरणाः) यस्य सः नीहारकः = (चन्द्रः) तस्य किरणनिकरः = (मयूखसमूहः) तस्य सम्पर्केश = (सम्बन्धेन) लब्धः = (प्राप्तः) अवबोधः = (चैतन्यम्) येन सः। मागधः = मगधराजो राजहंसः। अगाधम् = (तलस्पर्शरहितं, प्रचुरमिति भावः) तादृशं यद् रुधिरं = (रक्तम्) तस्य क्षरणेन = (सचलनेन) हेतुना नष्टा = (अपगता) चेष्टा = (शरीरव्यापारः) यस्य सः, तादृशः सन्, देवीवाक्यं = राज्ञीवचनम्, एव। निश्चिन्वानः = निश्चयं कुर्वन्, प्रियवचनानि = अभीष्टवचांसि। तन्वानः = विस्तारयन्। शनैः = मन्दं मन्द, तां = देवीं, वसुमतीम्, आह्वयत् = आहूतवान् ।।38।।

भावार्थ:- यह सुनकर चन्द्रकिरणके समूहके सम्पर्कसे होश पाकर पगधेश्वरने अगाध रुधिरके बहनेसे चेष्टाहीन होकर ”यह महारानीका ही वाक्य है” ऐसा निश्चय कर प्रियवचनोंका उच्चारण कर धीरे-धीरे उन (महारानी) को बुलाया।।38।।

39. सा ससभ्रममागत्यामन्दहृदयानन्दसंफुल्लवदनारविन्दा तमुपोषिताभ्यामिवानिमिषताभ्यां लोचनाभ्यां पिबन्ती विकस्वरेण स्वरेण पुरोहितामात्यजनमुच्चैराहूय तेभ्यस्तमदर्शयत्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने राजहंस को पुरोहित एवं मंत्री गणों के दर्शन का वर्णन किया है।

व्याख्या:- सा = वसुमती, ससंभ्रमं = मत्वरम्, । आगत्य = आगमनं कृत्वा। अमन्दः = (प्रचुरः) यो हृदयानन्दः = (चित्तहर्ष) तेन सफुल्लं = (विकसितम्) वदनाऽरविन्दं = (मुखकमलम्) यस्याः सा। तं = पतिं राजहंसम्, उपोषिताभ्यां = कृतोपवासाभ्याम्, अत्युत्कण्ठिताभ्याम्, इव अनिमिषिताभ्यां = निमेषव्यापाररहिताभ्यां, लोचनाभ्यां = नेत्राभ्यां, पिबन्ती = धयन्ती प्रणयाऽतिशयेन पश्यन्तीति भावः। विकस्वरेण = विकासशीलेन विक्रसतीति विकस्वरस्तेन, स्वरेण = ऊर्ध्वशब्देन, पुरोहिताऽमात्यजनं = पुरोधोमन्त्रिलोकम्, आहूय = आकार्य, तेभ्यः = पुरोहितामात्यजनेभ्यः, तं = राजानम्, अदर्शयत् = दर्शितवती ।।39।।

भावार्थ:- महारानीने भी शीघ्र आकर प्रचुर हृदयके आनन्दसे विकसित मुखकमलवाली होकर पलक भी न मारकर उपवास किये हुएके समान नेत्रोंसे उन (राजा) को पान करती हुई व्यक्त ऊँचे स्वरसे पुरोहित और मन्त्रियोंको बुलाकर उन्हें राजाका दर्शन कराया।।39।।

40. राजा निटिलतटचुम्बितनिजचरणाम्बुजैः प्रशंसितदैवमाहात्म्यैरमात्यैरभाणि- ‘देव, रथ्यचयः सारथ्यपगमे रथं रभसादरण्यमनयत् इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजा के अभिवादन का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- राजा = राजहंसः , निटिलतटेन = (भालभागेन), चुम्बित = (संयुक्तम्), निजचरणाऽम्बुज = (स्वपादकमलम्) यैस्तै, प्रशंसितं = (संस्तुतम्), दैवमाहात्म्यं = (भाग्यमहिमा) यैस्तैः, अमात्यैः = मन्त्रिभिः, राजा = राजहंसः, अभाणि = भणितः। देव = हे राजन्! रथ्यचयः = रथवाहकहयसमूहः, सारथ्यपगमे = सूतनाशे इति, रथं = स्यन्दनं, मुख्यकर्मैतत्। रभसात् = वेगात्, अरण्यं = वनम्, अनयत् = नीतवान् इति ।।40।।

भावार्थ:- राजा को अपने ललाट तट से उनके चरणकमलों को प्रणाम कर भाग्यके माहात्म्य की प्रशंसा कर मन्त्रियोंने कहा- ''महाराज! रथके घोड़े सारथि के अभाव होनेसे वेगसे रथको जंगलमें ले आये ।।40।।

41. 'तत्र निहतसैनिकग्रामे संग्रामे मालवपतिनाराधितपुरारातिना प्रहितया गदया दयाहीनेन ताडितो मूर्छामागत्यात्र वने निशान्तपवनेन बोधितोऽभवम्' इति महीपतिरकथयत्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने राजा राजहंस की आपबीती का वर्णन किया है।

व्याख्या:- महीपतिः = भूपतिः, राजहंसः। निहतः = (निःशेषं व्यापादितः), सैनिकग्रामः = (सैन्यसमूहः) यस्मिन्। तादृशे संग्रामे = युद्ध, आराधितः = (सेविताः), पुरारातिः = (त्रिपुरशत्रुः, महेश्वर इति भावः) येन, तेन, दयाहीनेन = निर्दयेन, मालवपतिनः = मानसारेण, प्रहितया = प्रेरितया, गदया = कास्वा, अस्त्रविशेषेण, ताडितः = आहतः, सन्। मूर्छा = मोहम्, आगत्य = प्राप्य, अत्र = अस्मिन्, वने = अरण्ये। निशान्तपवनेन = रात्र्यवसानवातेन, बोधितः = प्राप्तचेतनः, अभवम् = अभूवम्। इति = एवम्। अकथयत् = कथितवान् ।।41।।

भावार्थ:- राजाने कहा-''युद्धमें सैनिकोंके मारे जाने पर महादेवकी आराधना किये हुए मानवराज (मानसार) ने निर्दय होकर प्रहार की गई गदासे ताड़ित हो नम्र मूर्च्छित होकर इस वनमें पहुँचकर प्रातःकालकी हवासे मैं होशमें आ गया।।41।।

42. ततो विरचितमहेन मन्त्रिनिवहेन विरचितदैवानुकूल्येन कालेन शिविरमानीयापनीताशेषशल्यो विकसितनिजाननारविन्दो राजा सहसा विरोपितव्रणोऽकारि।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजा की प्राण रक्षा के निमित्त देव आराधना का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- ततः = अनन्तरं, विरचितः = (कृतः) महः = (उत्सवः) येन, तेन। मन्त्रिनिवहेन = अमात्यसमूहेन। विरचितं = (कृतम्) दैवाऽनुकूल्यं = (भाग्यऽनुकूलता) येन। शुभलग्नयुक्तेनेति भावः। तादृशेन कालेन = समयेन, शिविरं = स्कन्धावारं, सैनिकावासमिति भावः, आनीय = प्रापप्य, अपनीतानि = (उद्धृतानि) अशेषाणि = (समस्तानि) शल्यानि = (बाणाऽग्राणि) विकसितं = (विकासयुक्तं, प्रसन्नमिति भावः) निजम् = (स्वीयम्) आननाऽरविन्दं = (मुखकमलम्) यस्य सः, तादृशो राजा = राजहंसः, सहसा = अतर्किते, विरोपिता = (चिकित्सिताः) व्रणाः = (ईर्मणि) यस्य सः तादृशः अकारि = कृतः ।।42।।

भावार्थः- तब उत्सव कर मन्त्रियोंने भाग्यके अनुकूल लग्नमें राजाको सैन्यावास (शिविर) में लाकर शरीरमें चुभे हुए बाणोंकी नोकोंको निकालकर विकसित मुखकमल वाले उनके व्रणोंकी चिकित्सा की।।42।।

43. विरोधिदैवधिक्कृतपुरुषकारो दैन्यव्याप्ताकारो मगधाधिपतिरधिकाधिरमात्यसमत्या मृदुभाषितया तया वसुमत्या मत्या कलितया समबोधि।

प्रसंगः- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में राजा एवं मंत्रियों की मंत्रणा का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्याः- विरोधि = (विद्वेषयुक्तं, प्रतिकूलमिति भावः) यद्दैवं = (भाग्यम्) तेन धिक्कृतः = (निन्दितः) पुरुषकारः = (पुरुषचेष्टितम्) यस्य सः। दैन्येत्यादिः = दैन्येन (दीनतया) व्याप्तः = (आक्रान्तः) आकारः = (आकृतिः) यस्य सः। अधिकः = (अतिशयितः), आधिः = (मनोव्यथा) तादृशो मगधाऽधिपतिः = राजहंसः, अमात्यवसमत्याः = मन्त्र्यनुमत्याः, मत्या = बुद्ध्या, कलितया = युक्तया, वसुमत्या = राज्ञ्या, समबोधि = सम्बोधितः ।।43।।

भावार्थः- विरोधी भाग्यके पुरुषार्थका धिक्कार कर लेनेसे दीनतासे व्याप्त आकारवाले अधिक मनोव्यथासे युक्त राजाको मन्त्रियोंकी सम्मतिसेकोमल भाषणवाली बुद्धिमती वसुमतीने समझाया ।।43।।

44. 'देव! सकलस्य भूपालकुलस्य मध्ये तेजोवरिष्ठो गरिष्ठो भवानद्य विन्ध्यवनमध्यं निवसतीति जलबुद्बुदसमाना विराजमाना संपत्तडिल्लतेव सहसैवोदेति नश्यति च। तन्निखिलं दैवायत्तमेवावधार्य कार्यम्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने विंध्यांचल के वन में निवास का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- देव = महाराज!, सकलस्य = सम्पूर्णस्य, भूपालकुलस्य = राजसमूहस्य, मध्ये = अन्तरे, तेजसा = (प्रतापेन), वरिष्ठः = (गुरुतमः) गरिष्ठः = अतिशयेन गुरुः, भवानद्य = अस्मिन्दिने, विन्ध्यवनस्य = (विन्ध्यपर्वताऽरण्यस्य), जलस्य = (सलिलस्य), बुद्बुदेन = (विकारेण), समाना = (तुल्या), सम्पत् = श्रीः, तडिल्लता = विद्युद्वल्ली इव, सहसा = अतर्कितः, एव, उदेति = आविर्भवति। नश्यति = नाश प्राप्नोति च। तत् = तस्मात् कारणात्, निखिलं = समस्तं, वस्तु। दैवायत्तं = भाग्याऽधीनम् एव। अवधार्य = निर्णेतव्यं, कार्यं = कर्तव्यं च ।।44।।

भावार्थ:- महाराज! समस्त राजकुलके मध्यमें तेज और गुरुतासे श्रेष्ठ आप आज विन्ध्यपर्वतके वनके मध्यमें निवास कर रहे हैं, इस कारणसे जलके बुद्बुदेके समान विद्यमान सम्पत्ति विजलीकी तरह सहसा ही उदित होती है ऐसा निश्चय कर कार्य करना चाहिये ।।44।।

45. किञ्चपुरा हरिश्चन्द्ररामचन्द्रमुख्या असंख्या महीन्द्रा ऐश्वर्योपमितमहेन्द्रा दैवतन्त्रं दुःखयन्त्रं सम्यगनुभूय पश्चादनेककालं निजराज्यमकुर्वन्, तद्वदेव भवान्भविष्यति। कंचन कालं विरचितदैवसमाधिर्गलिताधिस्तिष्ठतु तावत्' इति।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने देवाराधना व भाग्योदय की प्रतीक्षा का वर्णन किया है।

व्याख्या:- किं च = अपि च। पुरा = पूर्वकाले, हरिश्चन्द्ररामचन्द्रौ, मुख्यौ = (प्रधाने) येषां ते, ऐश्वर्येण = (विभवेन), उपभितः = (तुलितः), इन्द्रः = (देवराजः) यैस्ते, असंख्याः = अपरिमिताः; महीन्द्राः = पृथिवीपतयः, राजान इति भावः। दैवतन्त्रं = भाग्यप्रधानं, दुःखयन्त्रं = क्लेशचक्रं; सम्यक् = सम्पूर्णरूपम्, अनुभूय = अनुभवं कृत्वा। पश्चात् = अनन्तरं, अनेककालं = बहुसमयपर्यन्तं, निजराज्यं = स्वाधिपत्यम्, अकुर्वन् = कृतवन्तः। तद्वत् = तेन (प्रकारेण) तुल्यम्, एव, भवान्। भविष्यति = भविता, कंचन कालं = कमपि समयं, विरचितः = (कृतः) समाधिः = (नियमः, स्वराज्यप्राप्ताविति शेषः)। येन सः तावत् तत्कालपर्यन्तं, गलिताधिः = गतमनोदुःखः। तिष्ठतु = अवस्थानं करोतु इति।।45।।

भावार्थ:- पहले भी हरिश्चन्द्र और रामचन्द्र आदि ऐश्वर्यसे महेन्द्र उपमित होकर भी प्रधान असंख्य राजाओंने भाग्यके अधीन दुःखयन्त्रका भाली-भाँति अनुभव कर पीछे अनेक काल तक अपना राज्य किया। उसी तरह आप भी होंगे। कुछ समय तक आप देवताकी आराधना कर मनका दुःख हटाकर रहें ।।45।।

46. ततः सकलसैनयमन्वितो राजहंसस्तपोविभ्राजमानं वामदेवनामानं तपोधनं निजाभिलाषावाप्तिसाधनं जगाम।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने तपस्वी महर्षि वामदेव का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- ततः = अनन्तरं, सकलसैन्येः = (समस्त सैनिकैः), समन्वितः = (युक्तः)। राजहंस = मगधेश्वरः, तपसा = (नियमविशेषेण), विभ्राजमानं = (विशेषेण शोभमानम्), निजः = (स्वकीयः) योऽभिलाषः = (मनोरथः) तस्य अवाप्तिः = (प्राप्तिः) तस्याः साधनम् = (हेतु-भूतम्)। वामदेवनामानं = वामदेवाख्यं, तपोधन = तपस्विनं, जगाम = गतः, ॥46॥

भावार्थ:- तब समस्त सैन्योंसे युक्त होकर राजहंस अपने अभिलाषकी पूर्तिके साधन, तपस्यासे शोभित होते हुए वामदेव नामके तपस्वीके पास चले गये ॥46॥

47. तं प्रणम्य तेन कृतातिथ्यस्तस्मं कथितकथ्यस्तदाश्रमे दूरीकृतश्रमे कचनकालमुषित्वानिजराज्याभिलाषीमितभाषीसोमकुलावतंसो राजहंसो मुनिमभाषत- 'भगवन्! मानसारः प्रबलेनदैवबलेव मां निर्जित्य मद्भोग्य राज्यमनुभवति। तद्वदहमप्युग्रं तपो विरच्य तमरातिमुन्मूलयिष्यामि लोकशरण्येन भवत्कारुण्येनेति नियमवन्तं भवन्तं प्राप्नुवम्' इति।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में वामदेव जी के आश्रम का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- तं = वामदेवं, प्रणम्य = नमस्कृत्य, तेन = वामदेवेन, कृतम = (विहितम्), आतिथ्यम् = (अतिथिसत्कारः) यस्य सः। तस्मै = वामदेवाय, कथितम् = (उक्तम्) कथ्य कथयितुं योग्यं वृत्तम्) येन सः। दूरीकृतः = (निवारितः), श्रमः = (आयासः)। तदाश्रमे = वामदेवाश्रमे, कंचन, काल = समयम्, उषित्वा = वासं कृत्वा, निजराज्या= स्वस्य राजयस्य, अभिलाषी = निजरान्याभिलाषी, मितभाषी = अलपंवक्तुं, सोमकुलस्य = (चन्द्रवंशस्य), अवतंसः = (भूषणभूतः), राजहंस = मागधः, मुनिं = तपोधनम्, अभाषत = भाषितवान्। भगवन् = ऐश्वर्यसम्पन्न!, मानसारः = मालवेशः, प्रबलेन = शक्तिसम्पन्नेन, दैवबलेन = देवशकत्या, मां, निर्जित्य = पराजित्य, मद्भोग्यं = मया भोग्यं (भोक्तव्यम्), राज्यं = राष्ट्रम्, अनुभवति = उपभुङ्क्ते। तद्वत् = तेन मानसारेण तुल्यम् = (सदृशम्), उग्रं = कठोरं, तपः = नियमाचरणं, विरच्य = कृत्वा, तं = पूर्वोक्तम्, अरातिं = शत्रुं, मानसारमित्यर्थः।

लोकानां = (जनानाम्), शरण्यं = (शरणे साधु) तेन। भवतः = (तव) कारुण्येन = (करुणया)। करुणस्य भावः कारुण्यम्, उन्मूलयिष्यामि = उन्मूलित करिष्यामि। इति = अनेन कारणेन, नियमवन्तं = नियमयुक्तं, व्रतिनमित्यर्थः। त्वां, प्राप्नुवं = प्राप्तवान् ।।47।।

भावार्थ:- उनको प्रणामकर उनके आतिथ्यको स्वीकार कर उनको कहने योग्य बात कह कर उनके आश्रममें अपने परिश्रमका निवारण कर कुछ समयतक ठहर कर अपने राज्यको पाने का अभिलाषा करने वाले अल्पभाषी चन्द्रवंशके भूषणस्वरूप राजहंसने मुनि को कहा-"भगवन्! मानसार जबर्दस्त भाग्यबलसे मुझे जीत कर मेरे भोगयोग्य राज्यका अनुभव कर रहा है। वैसे ही मैं भी लोकको शरण देने योग्य आपकी करुणासे कठोर तपस्या कर उस शत्रुका उन्मूलन कर लूंगा इस आशासे नियमवाले आपके पास आया हूँ" ।।47।।

48. ततस्त्रिकालज्ञस्तपोधनो राजानमवोचत् 'सखे! शरीरकाशर्यकारिणा तपसालम् वसुमतीगर्भस्थः सकलरिपुकुलमर्दनो राजनन्दनो नूनं संभविष्यति, कंचन कालं तूष्णीमास्स्व इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने राजहंस का वामदेव को समझाने का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- ततः = अनन्तरं, राजहंसप्रार्थनाऽनन्तरम्। त्रिकालज्ञः = कालत्रयचरित्राऽभिज्ञः, त्रयाणां कालानां ज्ञः, तपोधनः = तापसः, वामदेवः। राजानं = भूपं, राजहंसम्। अवोचत् = उक्तवान्। सखे = मित्र! शरीरकाश्र्यकारिणा = देहकृशत्वकरणशीलेन, शरीरस्य = (देहस्य) काश्र्यं = (कृशत्वम्) तत्करोति = तच्छीलं, तेन। तादृशेन तपसा = नियमाचरणेन, अलं = पर्याप्तम्। तपसा साध्य नाऽस्तीत्यर्थः।

वसुमतीगर्भस्थः = वसुमतीभ्रणस्थितः, सकलं = (समग्रम्) यत् रिपुकुलं = (शत्रुवंशः) तत् मर्दयति = (चूर्णयति) इति, तादृशौ राजनन्दनः = भूपपुत्रः, नूनं = निश्चितं यथा तथा। संभविष्यति = उत्पत्स्यते, कंचन, कालं = समयम्। तूर्णीं = तूर्णीकाम्। आस्स्व = निष्ठेत्यर्थ इति ।।48।।

भावार्थ:- तब त्रिकालज्ञ तपस्वी (वामदेव) ने राजाको कहा- मित्र! शरीरको कृश करने वाली तपस्याको रहने दें। वसुमतीके गर्भस्थित संपूर्ण शत्रुवंशका मर्दन करने वाला आपका पुत्र उत्पन्न होगा। कुछ काल तक चुपचाप रहें ।।48।।

49. गननचारिण्वापि वाण्या 'सत्यमेतत्' इति तदेवावोचि । राजापि मुनिवाक्यमङ्गीकृत्यातिष्ठत्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने आकाशवाणी का वर्णन किया है।

व्याख्या:- गगनचारिण्या = आकाशचारिण्या, वाण्या = वाचा, एतत् = इदम्, पुराभिहितमिति भावः। सत्यं = तथ्यम्। इति, तदेव = पूर्वोक्तमेव। अवोचि = उक्तम्। राजाऽपि = राजहंसोऽपि। मुनिवाक्यं = वामदेववचनम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य, अतिष्ठत् = स्थितः।।49

भावार्थ:- आकाशचारिणी वाणीने भी ''यह सत्य है'' कह कर उस वाक्यका समर्थन किया। राजा भी मुनिवाक्यको अङ्गीकार कर अवस्थित हुए।।49।।

50. ततः सम्पूर्णगर्भदिवसा वसुमती सुमुहूर्ते सकललक्षणलक्षितं सुतमसूत। ब्रह्मवर्चसेन तुलितवेधसं पुरोधर्स पुरस्कृत्य कृत्यविन्महीपतिः कुमार सुकुमारं जातसंस्कारेण बालार्लकारेण च। विराजमानं राजवाहननामान व्यधत्त।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजवाहन के जन्म का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- ततः = अनन्तरम्। संपूर्णाः = (परिपूर्णाः) गर्भदिवसाः = (भ्रणदिनानि) यस्याःसा। तादृशी वसुमती = राजहंसमहिषी, सुमुहूर्ते = शोभनलग्ने। सकलानि = (समस्तानि) यानि लक्षणानि = (शुभचिह्नानि, रेखाकारध्वजकुलिशादीनीति भावः) तैर्लक्षितम् = (युक्तम्)। तादृशं सुतं = पुत्रम्, असूत = उत्पादितवती। ब्रह्मवर्चसेन = व्रताऽध्ययनसम्पत्येति भावः,तुलितवेधसम् = उपमितब्रह्माणां, तुलितो वेधा येन, पुरोधसं = पुरोहितं, पुरस्कृत्य = अग्रे कृत्वा, सत्कृत्येति वा। कृत्यवित् = कार्यवेत्ता। महीपतिः = राजा। जातसंस्कारेण = जातकर्मसंस्कारेण, बालाऽलङ्कारेण = शिशुयोग्यभूषणेन, च। विराजमानं = विशेषतः शोभमानं, सुकुमार = कोमल, कुमारं = शिशुं राजवाहननामानं = राजवाहनाख्यं, राजवाहनो नाम यस्य तम्। व्यधत्त = विहितवान्।।50।।

भावार्थ:- तब गर्भ-दिनोंके पूर्ण होनेपर वसुमतीने शुभ मुहूर्तमें समस्त लक्षणोंसे लक्षित पुत्र को उत्पन्न किया। व्रत और अध्ययनतम्पत्तिसे ब्रह्माजीके समान पुरोहितका सत्कार कर कार्य जानने वाले राजा राजहंसने जातकर्म संस्कारसे और बालकोंके अलंकार से विराजमान सुकुमार कुमारका ''राजवाहन'' नाम रक्खा।।50।।

51. तस्मिन्नेव काले सुमतिसुमित्रसुमन्त्रसुश्रुतानां मन्त्रिणां प्रमतिमित्रगुप्तमन्त्रगुप्तविश्रुताख्या महाभिख्याः सुनवो नवोद्यदिन्दुरुचश्चिरायुष समजायन्त। राजवाहनो मन्त्रिपुत्रैरात्ममित्रैः सह बालकेलीरनुभवन्नवर्धत।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने राजहंस के चारों अमात्यों के पुत्र प्रमति, मित्रगुप्त, मन्त्रगुप्ता, विश्रुत के जन्म का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तस्मिन्नेव काले = राजवाहनोत्पत्तिसमय एव, सुमत्यादीनां मन्त्रिणाम् = अमात्यानां, प्रमतीत्यादिनामधेयाः। महती = (प्रचुरा), अभिख्या = (शोभा) येषां ते, नवः = (नूतनः) उद्यन् = (उद्गच्छन्) य इन्दुः = (चन्द्रः) तस्येव रुक् = (कान्तिः) येषां ते। चिरायुषः = दीर्धजीविनः। सूनवः = पुत्रा, समजायन्त संजाताः। राजवाहनः, आत्ममित्रैः = स्वसुहृद्भिः, मन्त्रिपुत्रैः = अमात्यतनयैः, सह = समं, बालकेलीः = शिशुक्रीड़ाः, अनुभवन् = उपलम्भमानः, अवर्धत = ऐधत ।।51।।

भावार्थ:- उसी समयमें सुमति, सुमित्र, सुमन्त्र और सुश्रुत नामके मन्त्रियोंके क्रमके अनुसार प्रमति, मित्रगुप्त; मन्त्रगुप्त और विश्रुत नामके उत्तमशोभासे सम्पन्न और नये उगे हुए चन्द्रमाके समान कान्तिसे युक्त दीर्घायु पुत्र उत्पन्न हुए। राजवाहन अपने मित्र मन्त्रिपुत्रोंके साथ बालक्रीड़ाका अनुभव करते हुए बढ़ने लगे ।।51।।

52. अथ कदाचिदेकेन तापसेन रसेन राजलक्षणविराजित कश्चिन्नयनानन्दकरं सुकुमारं कुमारं राज्ञे समपर्यावाचि भूवल्लभ! कुशसमिधानयनाय वन गतेन मया काचिदशरण्या व्यक्तकार्पण्याश्रु मुञ्चन्ती वनिता विलोकिता।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने तपस्वी द्वारा सुकुमार बालक (उपहारवर्मा) को राजा राजहंस को समर्पित करने का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- अथ = अनन्तरं, कदाचित् = जातुचित्। एकेन = एककेन, तापसेन = तपस्विना, रसेन = अनरागेण समं, राजलक्षणैः = (नृपचिह्नैः), विराजितं = (शोभितम्), नयनानन्दकरं = नेत्रहर्षोत्पादकं, सुकुमारं = कोमलं, कंचित् अज्ञातपरिचयं, कुमारं =शिशुं, राज्ञे = राजहंसाय, समपर्य = दत्त्वा, अवोचि = उक्तम्, भूवल्लभ = हे पृथिवीप्रिय, राजन्निति भावः। कुशाश्च = (दर्भाश्च) समिधश्च = (इन्धनानि च), तासाम् आनयनाय = (आदानाय), वनम् = अरण्यं, गतेन = यातेन, मया, काचित् = अज्ञातपरिचया, अशरण्या = रक्षकरहिता, अविद्यमानः शरण्यः = (रक्षणसाधुः) यस्याः सा। व्यक्तकार्पण्या = स्फुटदीनभावा, व्यक्तं कार्पण्यं यस्याः सा। अश्रु = नयनजलं, मुंचन्ती = त्यजन्ती। वनिता = नारी, विलोकिता = दृष्टा ।।52।।

भावार्थ:-तब किसी समय एक तपस्वीने अनुरागके साथ राजाके लक्षणोंसे शोभित, नेत्रोंको आनन्दित करने वाले किसी सुकुमार कुमारकी राजाको सौंपकर कहा-"हे राजन्! कुश और समिधाओंको लाने के लिए वनमें गये हुए मैंने रअकसे रहित स्पष्ट दीनतासे युक्त आँसू बहाती हुई किसी स्त्रीको देखा।।52।।

53. 'निर्जने वने किंनिमित्तं रुद्यतेत्वया' इति पृष्ठा सा करसरोरुहैरश्रु प्रमृज्यसगद्गदं मामवोचत्-'मुने! लावण्यजितपुष्पसायके मिथिलानायके कीर्तिव्याप्तसुधर्मणि निजसुहृदो मगधराजस्य सीमन्तिनीसीमन्तमहोत्सवाय पुत्रदारसमन्विते पुष्पुरमुपेत्य कञ्चन कालमधिवसति समाराधितगिरीशो मालवाधीशो मगधराजं योद्धुमभ्यगात्।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में प्रहारवर्मा का वृतांत प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- निर्जने = जनसंचाररहिते, वने = अरण्ये, त्यया = भवत्या। किं निमित्तं = किं कारणं, रुद्यते = अश्रुपातःक्रियते, इति = एवं, पृष्टा = अनुयुक्ता, सा = वनिता, करसरोरहैः = हस्तरूपकासारोत्पन्नैः, कररुहैरित्यर्थः। करौ = (हस्तौ) एव सरसी = (कासारौ) तयो रोहन्तीति करसरोरुहाः, अश्रु = नयनजलं, प्रमृज्य = शोधयित्वा। दूरीकृत्यति भावः। सगद्गदं = गद्गदस्वरपूर्वकं, माम्, अवोचत् = उक्तवती। मुने = हे तपस्विन्!, लावण्येन = (सौन्दयौऽतिशयेन) जितः = (पराजितः) पुष्पसायकः = (कुसुमेषुः, कामदेवः) येन तस्मिन्। कीर्ति = (यशसा) व्यापृता = (नियोजिता), व्याप्ता = परिपूरितेत्यर्थः। तादृशी सुधर्मा = (देवसभा) येन तस्मिन्। शोभनो धर्मो यस्यां सा, पुत्रदारसमन्विते = तनयपत्नीयुक्ते, मिथिलानायके = विदेहेश्वरे, प्रहारवर्मणि, इति भावः। निजसुहृदः = स्वमित्रस्य, मगधराजस्य = राजहंसस्य, सीमन्तिन्याः = (विध्वाः, वसुमत्या इति भावः) सीमन्तमहोत्सवाय = सीमन्तोन्नयनमहाक्षणाय। पुष्पपुरं = मगधराजधानीम्। उपेत्य = संप्राप्य, कंचन, कालं = समयम् , अधिवसति = अधितिष्ठति, समाराधितः = (संसेवितः), गिरीशः = (महेश्वरः) येन सः। मालवाऽधीशः = मानसारः मगधराजं = राजहंसं, योद्धुं = युद्धं कर्तुम्, अभ्यागात् = अभिगतः।।53।।

भावार्थ:- 'निर्जन वनमें किस कारणसे तुम रो रही हो' हो मेरे ऐसा पूछनेपर उसने लम्बे-लम्बे हाथोंके नाखूनोंसे आँसू पोंछ कर गद्गद स्वरसे मुझे कहा-'हे मुनिजी! सौन्दर्यसे कामदेवको जीतनेवाले तथा देवसभा (सुधर्मा) में कीर्ति फैलानेवाले मिथिलानरेशके अपने मित्र राजहंसकी पत्नी वसुमतीके वीमन्तोन्नयन उत्सव मनानेके लिए पुष्पपुरमें आकर कुछ समयतक रहनेपर महोदवकी आराधना करनेवाले मालवेश्वर मानसार राजहंससे लड़नेके लिए आ गये।।53।।

54. तत्र प्रख्यातयोएतयोरसंख्ये संख्य वर्तमाने सुहृत्साहाय्यकं कुर्वाणो निजबले सति विदेहे विदेहेश्वरः प्रहारवर्मा जयवता रिपुणाभिगृह्य कारुण्येन पुण्येन विसृष्टो हतावशेषेण शून्येन सैन्येन सह स्वपुरगमनमकरोत्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने मिथिलेश प्रहारवर्मा के पुण्य बल का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- तत्र = पुष्पपुरे, प्रख्यातयोः = प्रसिद्धयोः, एतयोः = मानसार-राजहंसयोः, असंख्ये = अगणिते, संख्ये = युद्धे। वर्तमाने = विद्यमाने, सुहृत्साहाय्यकं = मित्रसहायं, कुर्वाणः = विदधत्। विदेहेश्वरः = मिथिलाऽधिपतिः, प्रहारवर्मा, निजबले = स्वसैन्ये, विदेहे = मृते सति, जयवता = विजयिना, रिपुणा = वैरिणा, मानसारेणेति भावः। अभिगृह्य =आक्रम्य, पुण्यने = धर्मेण हेतुना। विसृष्टः = परित्यक्तः सन्। हतेभ्यः = (व्यापादिनेभ्यः), अवशेषम् = (अवशिष्टम्), तेन। शून्येन = रहितेन, सैन्येन = सेनया, सह = समं, स्त्रपुरगमनं = निजनगरप्रयाणम्, अकरोत् = कृतवान्।।54।।

भावार्थ:- वहाँ पर प्रख्यात इन दोनोंके असंख्या युद्ध होनेपर मित्रकी सहायता करते हुए मिथिलेश्वर प्रहारवर्मा अपनी सेनाके मारे जाने पर जयशाली शत्रु मानसारसे पकड़े गये, परन्तु पवित्र करुणासे शत्रुसे छोड़े जानेपर अस्त्रहीन अपनी सेनाके साथ अपने नगरमें जाने लगे।।54।।

55. ततो वनमार्गेण दुर्गेण गच्छन्नधिकबलेन शबरबलेन रभसादभि हन्यमानो मूलबलाभिरक्षितावरोधः स महानिरोधः पलायिष्ट। तदीयार्भकयोर्यमयोर्धात्रीभावेन परिकल्पिताहं मद्दुहितापि तीव्रगतिं भूपतिमनुगन्तुमक्षमे अभूव। तत्र विवृतवदनः कोऽपि रूपी कोप इव व्याघ्रः शीघ्रं मामाघ्रातुमागतवान्। भीताहमुदग्रग्राव्णि स्खलन्ती पर्यपतम्। मदीयपाणिभ्रष्टो बालकः कस्यापि कपिलाशवस्य क्रोडमभ्यलीयत।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने प्रहारवर्मा के साथ घटित वृतांत का वर्णन किया है।

व्याख्या:- ततः = अनन्तरं, दुर्गेण = दुर्गमेन, वनमार्गेण = अरण्याऽध्वना, गच्छन् = व्रजन्, अधिकबलेन = प्रचुरसामर्थ्येन, शबरबलेन = म्लेच्छविशेषसैन्येन, रभसात् = वेगात्। अभिहन्यमानः = आक्रम्यमाणः। मूलबलेन = (प्रधानसैन्येन) अभिरक्षितः = (संत्रातः) अवरोधः = (अन्तःपुर-नारीगणः) यस्य सः। महान् = (प्रचुरः), निरोधः = (यात्राप्रतिबन्धः) यस्य सः, तादृशः सन्, पलायिष्ट = पलायितवान्। परोपसर्गपूर्वकात्, तदीयाऽर्भकयोः = तदीयौ, (तत्सम्बन्धिनौ), प्रहारवर्मसम्बन्धिनाविति भावः यौ अर्भकौ = (बालौ) तयोः। यमयोः = यमलयोः। धात्रीभावेन = उपमातृत्वने, परिकल्पिता = परिनियुक्ता, अहं, मद्दुहिता = मत्पुत्री, अपि, तीव्रगतिं = वेगगमनं, भूपतिं = राजानम्, अनुगन्तुम = अनुसर्तुम्, अक्षमे = असमर्थे, अभूव = अभवाव। इत्य= प्रगृह्य त्वान्न सन्धिः। तत्र = तस्मिन् वने। विवृतं = (व्यात्तम्) वदनं = (मुखम्) यस्य सः। कोऽपि = कश्चित्, रूपी = रूपधारौ, मूर्त इत्यर्थः। कोपः = क्रोधः, इव, उत्प्रेक्षा। व्याघ्रः = शार्दूलः शीघ्रं = सत्वरं,

माम्, आघ्रातुं = घ्राणगोचरीकर्तुम् व्यापादयितुमिति भावः। आगतवान् = आगतः। भीता = त्रस्ता, अहम्, उदग्रग्राव्णि = उन्ननपाषाणे, स्खलन्तीं = संचलन्ती, पर्यपतम् = परिपतिता। मदीयपाणेः = (मद्धस्तात्), भ्रष्टः = च्युतः, बालकः = अर्भकः। कस्य अपि, कपिलायाः = (गोविशेषस्य), शवस्य = (कुणपस्य), क्रोडं = भुजाऽन्तरम्, अभ्यलीयत = अभिलीनोऽभवत्।।55।।

भावार्थः- तब दुर्गम वनमार्ग से जाते हुए राजा प्रहार वर्माने अधिक शक्तिशाली शबरसेनासे वेगपूर्वक आक्रमण करने पर मुख्य सेनासे अन्तःपुरकी रानियोंकी रक्षा कर यात्रामें अधिक, प्रतिबन्ध होनेपर भी पलायन किया। राजाके जुड़वें पुत्रोंकी धात्री मैं मेरी पुत्री दोनों तीव्र गतिवाले राजाका अनुसरण करने में असमर्थ हो गई। मार्गमें मुँह खुला कर रूप धारण करनेवाले क्रोध के समान कोई बाघ मुझे मारनेके लिए आ गया। डरी हुई मैं ऊँचे पत्थरपर फिसलती हुई गिर पड़ी। मेरे हाथसे गिरा हुआ बालक किसी कपिला गायके शवके भीतर छिप गया।।55।।

56. तच्छवाकर्षिणोऽमर्षिणो व्याघ्रस्य प्राणान्बाणो बाणासनयन्त्रमुक्तोऽपाहरत्। लोलालको बालकोऽपि शबरैरादाय कुत्रचिदुपानीयत। कुमारमपरमुद्वहन्ती मद्दुहिता कुत्र गता न जाने। साहं मोहं गता केनापि कृपालुना वृष्णिपालेन स्वकुटीरमावेश्य विरोपितव्रणाभवम्। ततः स्वस्थीभूय भूयः क्ष्माभर्तरन्तिकमुपतिष्ठासुरसहायतया दुहितुरनभिज्ञाततया च व्याकुलीभवामि 'इत्यभिदधाना 'एकाकिन्यपि स्वाभिनं गमिष्यामि' इति सा तदैव निरगात्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने व्याघ्र, कपिलगौ, बालक का वर्णन प्रतिपादित किया है ।

व्याख्याः- तच्छवम् = (कपिलाकुणपम्), आकर्षति = (आहरति), तच्छीलः = तस्य भावः, तस्य। अमर्षिणः = कुपितस्य, व्याघ्रस्य = शार्दूलस्य, प्राणान् = असून्, बाणासनं यन्त्रं = (धनुः), तस्मान्मुक्तः = (प्रहितः), बाणः = शरः। अपाहरन् = अपहतवान्। विलोलाः = (चंचलाः) अलकाः = (चूर्णकुन्तलाः) यस्य सः। बालकोऽपि = अर्भकोऽपि। शबरैः = म्लेच्छविशेषैः, आदाय = गृहीत्वा, कुत्रचित् = कस्मिंश्चिस्थाने, उपानीयत = प्रापितः। अपरम् = अन्यं, कुमारं = दारकम्, उद्वकम्, उद्वहन्ती = धरयन्ती, मद्दुहिता = मत्पुत्री, कुत्र = कस्मिन्स्थाने, गता = याता, इति, न जाने = नो जानामि। सा = तादृशी, अहं, मोहं = मूर्छां, गता = प्राप्ता, केनाऽपि = अज्ञातेन, कृपालुना = दयालुना, वृष्णिपालेन = मेषपालकेन, (मेषम्) पालयतीति वृष्णिपालः, तेन, स्वकुटीरं = निजाम् अल्पां कुटीम्। आवेश्य = प्रवेश्य। विरोपितव्रणा = चिकित्सतेर्मा, औषधादिनेति शेषः। अभवम् = अभूवम्। ततः = अनन्तर, स्वस्थीभूय = स्वस्था भूत्वा, भूयः = पुनः, क्ष्माभर्तुः = भूपतेः, प्रहारवर्मणः, अन्तिकं = समीपम्, उपतिष्ठासुः = उपस्थातुम् इच्छुः। असहायतया = सहायाभावेन,

दुहितुः = पुत्र्याः, अनभिज्ञाततया = अविदितत्वेन, च, व्याकुलीभवामि = व्यस्तीभवामि; इति एवम्, अभिदधाना = कथयन्ती, एकाकिनी = एकाकिका, अपि, स्वामिनं = प्रभुं, राजानम् गमिष्यामि यास्यामि, इति = एवं, सा = वनिता, तदैव = तस्मिन् समय एव, निरगात् = निर्गता।।56।।

भावार्थः- उस शवको खींचने वाले क्रोधी बाघके प्राणोंका धनुषयन्त्रसे छूटे हुएउ बाणने हरण कर डाला। चंचल केशोंवाला बालक भी शबरोंसे लेकर कहींपर पहुँचाया गया। दूसरे बालकको ढोती हुई मेरी पुत्री कहाँ गई? नहीं जानती हूँ। मूर्छित मुझे किसी दयालु भेड़के चरवाहेने अपनी कुटीरमें पहुँचाकर मेरे व्रणोंकी दवाई की। तब स्वस्थ होकर फिर राजाके समीप जानेकी इच्छा कर असहाय होनेसे एवम् अपनी पुत्री का पता न पानेसे भी व्याकुल हो रही हूँ।" ऐसा कहती हुई-अकेली होकर भी मालिकके पास जाऊँगी "ऐसा कह कर वह स्त्री उसी समय निकल गई।।56।।

57. अहमपि भवन्मित्रस्य विदेहनाथस्य विपन्निमितं विषादमनुभवंस्तदन्वयाङ्कुरं कुमारमन्विष्यंस्तदैकं चण्डिकामन्दिर सुन्दरं प्रागाम्।

प्रसंगः- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में उस नवजात शिशु को खोजने का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्याः- अहमपि = वक्ता तापसोऽपि, भवन्मित्रस्य = भवत्सुहृदः, विदेहनाथस्य = मिथिलेश्वरस्य, प्रहारवर्मणः। विपन्निमित्तम् = आपत्तिकारणं, विपत् निमित्तं यस्य तम् तादृशं, विषादं = खेदन्, अनुभवन् = अनुभूमिविषयं कुर्वन्। तस्य (विदेहनाथस्य), अन्वयस्य = (वंशस्य) अङ्कुरम् = (प्ररोहम्), कुमारं = बालकम् अन्विष्यन् = अन्वेषणं कुर्वन्, तदा = तस्मिन् समये, एकं, सुन्दरं मनोहरं, चण्डिकामन्दिरं = दुर्गाप्रासादं, प्रागाम् = प्रागच्छम्।।57।।

भावार्थः- मैं भी आपके मित्र मिथिलापति प्रहारवर्माकी विपत्तिके कारणभूत खेदका अनुभव करता हुआ उनके वंशके अङ्कुरस्वरूप कुमारका अन्वेषण करता हुआ उस समय एक सुन्दर दुर्गामन्दिरमें चला गया।।57।।

58. तत्र संततमेवंविधविजयसिद्धये कुमारं देवतोपहारं करिष्यन्तः किराताः महीरुहशाखावलम्बितमेनमसिलतया वा सैकतलले खननिक्षिप्तचरणं लक्षीकृत्य शितशरनिकरेण वा अनेकचरणैः पलायमानं कुक्कुरबालकैर्वा दंशयित्वा संहनिष्यामः'इति भाषमाणा मया समभ्यभाष्यन्त-'ननु किरातोत्तमाः। घोरप्रचारे कान्तारे स्खलितपथः स्थविरभूसुरोहं मम पुत्रकं क्वचिच्छायायां निक्षिप्य मार्गान्वेषणाय किंचिदन्तरमन्वगच्छम्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने बालक के साथ घटित घटनाओं का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- तत्र = तस्मिन् चण्डिकामन्दिरे, सन्ततं = निरन्तरम्, एवंविधस्य = (एतादृशस्य), विजयस्य = (अभ्युदयस्य), सिद्धये = (सफलतायै), कुमारं = बालकं, देवतोपहारं = चण्डिकोपायनं, करिष्यन्तः = विधास्यन्तः, किराताः = पर्यन्तदेशवासिनः, महीरुहशाखायाम = (वृक्षलतायाम्) अवलम्बितम् = (अवस्रंसितम्) एनं = कुमारम्, असिलतया = खड्गवल्या, वा = अथवा। सैकततले = सिकताप्रचुरस्थाने, खननेन = (अवदारणेन), निक्षिप्तौ = (भूमौ कीलितौ) चरणौ पादौ) यस्य, तं तादृशं कुमारं, लक्ष्यीकृत्य = शरव्यीकृत्य, शितशराणां = (तीक्ष्णबाणानाम्), निकरेण = (समूहेन) वा = अथवा, पलायमानं = पलायनं कुर्वन्तम्, एनं = कुमारम्, अनेकचरणैः = बहुरादैः, कुक्कुरबालकैः = सारमेयशावकैः, दंशयित्वा = दंशनं कारयित्वा। संहनिष्यामः = व्यापादयिष्यामः। इति = एवं, भाषमाणाः = वदन्तः, किराता। मया, समभ्यभाषन्तः = समभिभाषिताः, उक्ताः। किरातोत्तमाः = हे किरातश्रेष्ठाः!, अहं, घोरः = (भयङ्करः) प्रचारः = (संचारः) यस्य तस्मिन्। कान्तारे = महारण्ये दुर्गममार्गे वा, स्खलितपथः = भ्रष्टमार्ग, स्खलितः पन्था यस्य सः, स्थविरभूसुरः = वृद्धब्राह्मणः, मम, पुत्रकम् = अनुकम्पितं पुत्रम्, क्वचित् = कुत्रचित्, शाखायां = वृक्षलतायां, निक्षिप्य = निधाय, मार्गाऽन्वेषणाय = वत्र्मगवेषणाय, किंचित् = स्तोकम्, अन्तरम् = अवकाशम्, अगच्छम् = गतः।।58।।

भावार्थ:- वहाँ पर निरन्तर ऐसी विजयकी सिद्धिके लिए किरातलोगोंने कुमारको देवताका उपहार करनेकी इच्छा करते हुए ’’पेड़की डालपर लटकाये गये इस (बालक) को तलवारसे वा बालूके भीतर खोदकर पैर रक्खे गये इसको तीखे बाणसमूहसे निशाना बनाकर अथवा अनेक पैरोंवाले कुत्तेके बच्चोंसे भगाये गये इसको नुचवाकर मरवावे’’ ऐसा भाषण करनेवाले उनको मैंने कहा- हे किरातश्रेष्ठो! भयंकर संचारवाले इस महावनमें मार्ग को भूलकर मैं बूढ़ा ब्राह्मण मेरे प्यारे पुत्रको किसी छाया में रखकर मार्ग ढूंढनेके लिए कुछ दूर गया था।।58।।

59. स कुत्र गतः? केन वा गृहीतः? परीक्ष्यापि न वीक्ष्यते तन्मुखावलोकनेन विनानेकान्यहान्यतीतानि। किं करोमि, क्व यामि, भवद्भिर्न किमदर्शि‘? इति।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने बालक के विलाप का वर्णन किया है।

व्याख्या:- स = मम पुत्रकः, कुत्र = क्व, गतः = यातः, वा = अथ वा, केन = जनेन, गृहीतः = आत्तः, परीक्ष्य = परीक्षणं कृत्वा अपि, न दीक्ष्यते = न अवलोक्यते। तन्मुखस्य = (मत्पुत्रकवदनस्य), अवलोकनेन = (दर्शनेन), विना = ऋते, अनेकानि बहूनि, अहानि = दिनानि, अतीतानि = गतानि। किं करोमि = विदधामि, क्व = कुत्र, यामि = गच्छामि, भवद्भिः = युष्माभिः, न अदर्शि = नो दृष्टः, किम् ?, ॥59॥

भावार्थ:- यह (बालक) कहाँ गया? अथवा किससे लिया गया? ढूँढने पर भी नहीं देखा जा रहा है। उसके मुखको देखे बिना कई दिन बीत गये। क्या करूँ? कहाँ जाऊँ? उसे आपलोगोंने तो नहीं देखा?"॥59॥

60. 'द्विजोत्तम्! कश्चिदत्र तिष्ठति। किमेष तव नन्दनः सत्यमेव। तदेनं गृहाण' इत्युक्त्वा दैवानुकल्येन मह्यं तं व्यतरन्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने बालक के प्राप्त होने का वृतांत प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- द्विजोत्तम = हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! अत्र = अस्मिन् स्थाने, कश्चित् = कोऽपि, अज्ञातो बाल इति भावः, तिष्ठति = विद्यते, एषः = समीपतरवर्ती बालकः। किं, तव = भवतः, नन्दनः = पुत्रः, सत्यम् एव = तथ्यम् एव। तत् = तस्मात् कारणात्, एन = बालक, गृहाण = स्वीकुरु। इति = एवम्, उक्त्वा = अभिधाय, दैवाऽऽनुकूलतया, तं = कुमार, मह्यं, व्यतरन् = दत्तवन्तः, किराता इति शेषः॥60॥

भावार्थ:- तब उन्होंने-हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! कोई (लड़का) यहाँ है, क्या यह आपका पुत्र है? सच ही? तो उसे लेलें" ऐसा कहकर भाग्यकी अनुकूलतासे उन्होंने उस बालकको मुझे दे दिया॥60॥

61. तेभ्यो दत्ताशीरहं बालकमङ्गीकृत्य शिशिरोदकादिनोपचारेणाश्वास्य निःशङ्कं भवदङ्क समानीतवानस्मि। एनमानुष्मन्तं पितृरूपो भवानभिरक्षतात्' इति।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने राजहंस का उस बालक को शरण में लेने का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तेभ्यः = किरातेभ्यः, दत्ता = (वितीर्णा), आशीः = (हिताशसा) येन, अहं, भवदङ्कं = त्वदुत्सङ्गं, निःशङ्कं = शङ्कारहितं तथा यथा। समानीतवान् = संप्रापितवान्, अस्मि = भवामि,

विदेहेश्वरपुत्रमिति शेषः। एनम् = इमम्, आयुष्मन्त = जैवातृकं, प्रहारवर्मकुमारमिति भावः। भवान्, अभिरक्षतात् = अभिरक्ष्यात्। इति।।61।।

भावार्थ:- उन लोगोंको आशीर्वाद देकर मैं बालकको स्वीकार कर ठण्डे जल आदि उपचारसे उसे आश्वस्त कर निःशंक आपकी गोदमें ले आया हूँ। इस चिरंजीवको पितृस्वरूप आप रक्षा करें।।61।।

62. राजा सुहृदापन्निमित्तं शोक तन्नन्दनविलोकनसुखेन किंचिदधरीकृत्य तमुपहारवर्मनाम्नाहूय राजवाहनमिव पुपोष।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने उस बालक का नाम उपहारवर्मा रखकर उसके पालन पोषण करने का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- राजा = भूपो राजहंसः। सुहृदः = (मित्रस्य, प्रहारवर्मणः), आपत् = (विपत्), निमित्तं = (हेतुः), यस्य तम्। शोर्कं = मन्युं, तन्नन्दनस्य = (तत्पुत्रस्य), विलोकनात् = (दर्शनात्), सुखेन = (आनन्देन), किंचित् = ईषत्, अधरीकृत्य = तनूकृत्य, तं = कुमारम्, उपहारवर्मनाम्ना = उपहारवर्माख्यया, आहूय = आकार्य, राजवाहनं = स्वपुत्रम्, इव पुपोष = संवर्द्धयामास ।।62।।

भावार्थ:- राजाने भी मित्रकी आपत्ति से उत्पन्न शोकको उनके पुत्रको देखनेके सुखसे कुछ कम कर उसे "उपहारवर्मा" इस नामसे बुलाकर राजवाहनके समान उसका पोषण किया ।।62।।

63. जनपतिरेकस्मिन्पुण्यदिवसे तीर्थस्नानाय पक्वणनिकटमार्गेण गच्छन्नबलया कदाचिदुपलालितमनुपमशरीरं कुमारं कञ्चिदवलोक्यकुतूहलाकुलस्तामपृच्छत् 'भामिनि! रुचिरमूर्तिः स राजगुणसपूर्तिरसावर्भको भवदन्वयसभवो न भवति कस्य नयनानन्दनः? निमित्तेन केन भवदधीनो जातः कथ्यतां यथातथ्येन त्वया' इति।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में तीर्थस्थान पर जाते समय राजहंस को एक अनुपम सुन्दर बालक (उपहारवर्मा) का दर्शन करने का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- जनपतिः = राजा, राजहंसः। एकस्मिन् पुण्यदिवसे = पवित्रदिने, पर्थणीति भावः। तीर्थे = (ऋषिजुष्टजले), स्नानाय = (मज्जनाय), पक्वणस्य = (शबरालयस्य), निकटे = (समीपे), यो मार्गः = (पन्थाः) तेन, गच्छन् = व्रजन्। कदाचित् = अज्ञातया, अबलया = स्त्रिया, उपलालितं = स्नेहपालितम्, अनुपमम् = (उपमारहितम्, असाधारणमिति भावः), शरीरं = (देहः) यस्य, तम्।

कंचित् = अज्ञातं, कुमारं = बालकम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, कुतूहलाकुलः = कौतुकव्यस्तः ताम् = अबलाम्, अपृच्छत् = पृष्ठवान्। भामिनि = हे कामिनि!, अत्र कोपकारणाऽभावात्, रुचिरा = (मनोहरा), मूर्तिः = (शरीरम्) यस्य सः। राजगुणानां = (भूपलक्षणानाम्), संपूर्तिः = (संपूरणम्) सः = तादृशः, असौ = अयम् अर्भकः = बालकः। भवत्याः = (तव), अन्वयात् = (वंशात्), संभवः = (उत्पत्तिः) यस्य सः। न भवति = न संभवति, अतः कस्य = जनस्य, नयनानन्दनः = नेत्रानन्दकारकः, पुत्र इति भावः। केन, निमित्तेन = कारणने भवदधीनः = त्वदायत्तः, जातः = संभूतः। त्वयः = भवत्या याथातथ्येन = तत्त्वेन, कथ्यताम् = उच्यताम्। इति ॥63॥

भावार्थः- राजा (राजहंस) एक पुण्य दिनमें तीर्थ स्नानके लिए शबरोकी बस्तीके निकट मार्गसे जाते हुए किसी स्त्रीसे लाड़प्यार किये गये अनुपम (बेजोड़) शरीरवाले किसी कुमारको देखकर कुतूहलसे आकुल होकर उसे पूछने लगे- ''हे सुन्दरि! सुन्दर शरीरवाली राजगुणोंकी पूर्तिसे युक्त यह बालक तुम्हारे वंशमें उत्पन्न नहीं संभव होता है, यह किसके नयनोंको आनन्दित करनेवाला है ? किस कारणसे तुम्हारे अधीन हुआ है ? ठीक-ठीक कहो।" ॥63॥

64. प्रणतया तया शबर्या सलीलमलापि-'राजन्! आत्मपल्लीसमीपे पदव्यां वर्तमानस्य शक्रसमानस्य मिथिलेश्वरस्य सर्वस्वमपहरति शबरसैन्ये मद्दयितेनापहृत्य कुमार एष मह्यमर्पितो व्यवर्धत' इति।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने शवरी व राजहंस की वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- प्रणतया = कृतप्रणामया, तया = पूर्वोक्तया, शबर्या = शबरपत्न्या, सलीलं = विलासपूर्वकम्, अलापि = अभाषि। राजन् = हे देव!, आत्मनः = (स्वस्याः) पल्याः= (अल्पग्रामस्य), समीपे = (निकटे), पदव्यां = मार्गे, वर्तमानस्य = विद्यमानस्य; शक्रसमानस्य = इन्द्रतुल्यस्य, मिथिलेश्वरस्य = विदेहाऽधिपतेः प्रहारवर्मणः, सर्वस्वं = सकलधनं, शबरसैन्ये = म्लेच्छजातिसेनायाम्, अपहरति = स्वाधीनं कुर्वति सति, मद्दयितेन = मत्प्रियेण, अपहृत्य = अपहरणं कृत्वा, एषः = समीपतरवर्ती, कुमार = बालकः, मह्यम्, अर्पितः = दत्तः, सन्। व्यवर्द्धत = वृद्धिं प्राप्तः ॥64॥

भावार्थः- प्रणाम कर उस शबरीने विलासके साथ कहा- ''राजन्! अपने गाँवके समीप राहमें रहे हुए इन्द्रके सामन मिथिलाके राजाके सर्वस्वका शबरोंके अपहरण करने पर मेरे पति ने अपहरणकर इस कुमारको मुझे सौंपा और यहीं बढ़ गया है।" ॥64॥

65. तदवधार्य कार्यज्ञो राजा मुनिकथितं द्वितीयं राजकुमारमेव निश्चित्य सामदानाभ्यां तामतुतीयापहारवर्मेत्याख्याय देव्यै 'वर्धय'' इति समर्पितवान्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने उस बालक का नाम अपहारवर्मा रखकर रानी वसुमती को समर्पित करने का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तद् = वचनम्, अवधार्य = विमृश्येत्यर्थः। कार्यज्ञः = कृत्यवित्, राजा। मुनिकथित = तापसप्रतिपादितं बालं, द्वितीयं = द्वयोः पूरणं, राजकुमारम् एव = भूपपुत्रम् एव प्रहारवर्मसुतमिति भावः। निश्चित्य = निर्णीय, सामदानाभ्यां = सान्तववितरणाभ्यां, तां = शबरीम्, अनुनीय = सन्तोष्य। अपहारवर्मेति आख्याय = तस्य कुमारस्य देव्यै = वसुमत्यै, वर्धय = पालय, इति = एवम्, उक्त्वेति शेषः। समर्पितवान् = दत्तवान् ।।65।।

भावार्थ:- उस वचन का निश्चयकर कार्यके जानकार राजाने, उस बालकको ''तपस्वीसे कहा गया दूसरा राजकुमार ही है'' ऐसा निश्चय कर साम और दानसे उस शबरीको सन्तुष्ट कर ''अपहारवर्मा'' नाम रख कर उस बालकको ''पोषण करो'' ऐसा कह कर महारानी वसुमतीको सौंप दिया।।65।।

66. कदाचिद्वामदेवशिष्यः सोमदेवशर्मा नाम कञ्चिदेकं बालकं राज्ञः पुरो निक्षिप्पभाषत- 'देव! रामतीर्थे स्नात्वा प्रत्यागच्छता मया काननावनौ वनितया कयापि धार्यमाणमेतमुज्ज्वलाकारं कुमारं विलोक्य सादरमभाणि-'स्थविरे! का त्वम्? एतस्मिन्नटवीमध्ये बालकमुद्वहन्ती किमर्थपायासेन भ्रमसि' इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने वामदेव ऋषि के शिष्य सोमदेवशर्मा व राजहंस का वर्णन एवं पुष्पोद्भव की उत्पत्ति को प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- कदाचित् = जातुचित्। सोमदेवशर्मा नाम = नाम्ना सोमदेवशर्मा, वामदेवशिष्यः = वामदेवाऽन्तेवासी। कंचित् = अज्ञातपरिचयम्, एकं बालकं = दारकं, राज्ञः = राजहंसस्य, पुरः = अग्रे, निक्षिप्य = निर्धाय। अभाषत = भाषितवान्। राजन्! रामतीर्थे, स्नात्वा = स्नानं कृत्वा। प्रत्यागच्छता = प्रतिनिवर्तमानेन, मया, माननाऽवनौ = वनभूमौ, कयाऽपि, वनितया = स्त्रिया, धायंमाणम् = गृह्यमाणम्, उज्ज्वलः = (दीप्तियुक्तः), आकारः = (आकृतिः) यस्य, तम्। एनम् = इमं; कुमारं = दारकं, दृष्ट्वा, सादरम् = आदरपूर्वकम्, अभाणि = भणिता। स्थविरे = वृद्धे, त्वं, का

असीति शेषः। एतस्मिन् = अस्मिन्, अटवीमध्ये = बनान्तरे, बालकं = माणवकम्, उद्वहन्ती = धारयन्ती, आयासेन = परिश्रमेण, किमर्थं = किंप्रयोजनं, भ्रमसि = भ्रमणं करोषि, इति ।।66।।

भावार्थः- किसी समय सोमदेवशर्मा नामके वामदेवके शिष्यने किसी एक बालकको राजाके सामने रख कर कहा, ''महाराज! रामतीर्थमें स्नान कर लौटते हुए मैंने जंगलकी जमीनमें किसी स्त्रीसे ढोये गये उज्ज्वल आकारवाले एक बालकको देखकर आदरके साथ कहा- ''बुढ़िया! तुम कौन हो ? इस जंगलके बीचमें बालकको लेती हुई क्यों परिश्रमके साथ घूम रही हो ?''।।66।।

67. वृद्धयाप्यभाषि-'मुनिवर! कालयवननाम्नि द्वीपे कालगुप्तो नाम धनाढ्योवैश्यवरः कश्चिदस्ति। तन्नन्दिनीं नयनानन्दकारिणींसुवृत्तां नामै तस्माद्द्वोपादागतोमगधनाथमन्त्रिसभवो रत्नोद्भवो नाम रमणीयगुणालयो भ्रान्तभूवलयो मनोहारीव्यवहार्युपयम्य सुवस्तुसपम्दा श्वशुरेण सम्मानितोऽभूत्। कालक्रमेण नताङ्गी गर्भिणी जाता।

प्रसंगः- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में रत्नोद्भव के विवाह का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्याः- वृद्धया = स्थविरया, अपि, अभाषि = भाषितम्। मुनिवर = तापसश्रेष्ठ, कालयवननाम्नि = कालयवननामके, द्वीपे = अन्तरीपे, कालगुप्तो नाम = नाम्ना कालगुप्त इति, कश्चित् = कोपित, धनाढ्यः = अर्थसम्पन्नः, वैश्य-वरः = अर्थश्रेष्ठः। अस्ति = विद्यते। नयनानन्दकरीं = नेत्रसुखकारिणीं, सुवृत्तां नाम = नाम्ना सुवृत्तां, तस्य = (कालगुप्तस्य), नन्दिनीम् = (दुहितरम्), एतस्मात् = अस्मात्। द्वीपात् = अन्तरीपात्, आगतः = आयातः, मगधनाथस्य = (मगधराजस्य, राजहंसस्येति भावः), मन्त्रिसंभवः= (अमात्यपुत्रः), रमणीयाः = (मनोहराः) ये गुणाः = (दयादाक्षिण्यादयः) तेषाम् आलयः = (गृहम्, आधार इति भावः), भ्रान्तं = (भ्रमणविषयीकृतम्), भूवलयं = (पृथ्वीमण्डलम्) येन सः।

मनोहारी = मनोहरणशीलः, सुन्दर इति भावः। व्यवहारी = व्यवहारशीलः वणिगिति भावः। रत्नोद्भवो नाम = नाम्ना रत्नोद्भवः। उपयम्य = विवाह कृत्वा, विवाहोपययौ समौ। तथा परिणयोद्वाहोपयामाः पाणिपीडनम्।'' इत्यमरः। श्वशुरेण = पत्नीपित्रा कालगुप्तेन। सुवस्तुसम्पदा = उत्तमपदार्थसमृद्ध्यः। संमानितः = सत्कृतः, अभूत् = अभवत्। कालक्रमेण = समयक्रमेण, नताङ्गी = अवनतदेहाऽवयवा, सुवृत्तैतिभावः। गर्भिणी = अन्तर्वत्नी, जाता = सम्पन्ना।।67।।

भावार्थ:- तब उस बुढ़ियोने भी कहा-‘‘मुनिवर! कालयवन नामके द्वीप (टापू) में कालगुप्त नामक कोई धनसंपन्न वैश्य हैं। नेत्रोंको आनन्द देनेवाली ‘‘सुवृत्ता‘‘ नामकी उनकी पुत्रीसे इस द्वीपसे आये हुए मनोहर गुणोंके आधार, भूमण्डलका भ्रमण किये हुए, वाणिज्य करने वाले सुन्दर मगधराजके मन्त्रिपुत्र रत्नोद्भव विवाह कर श्वसुर से सम्मानित हुए। कालक्रमसे अवनत अंगवाली वह (सुवृत्ता) गर्भिणी हुई।।67।।

68. ततः सादरविलोकनकौतूहलेन रत्नोद्भवः कथचिच्छयशुरमनुनीय चपललोचनया सह प्रवहणमारुह्य पुष्पुरमभिप्रतस्थे कल्लोलमालिकाभिहतः पोतः समुद्राम्भस्यमज्जत्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने रत्नोद्भव की नौका का समुद्र में डूबने का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- ततः = अनन्तरं, रत्नोद्भवः, सोदरस्य = (सहोदरभ्रातुः), विलोकने = (दर्शने) यत् कुतूहलं = (कौतुकम्), तेन। कर्थचित् = केनाऽपि प्रकारेण, श्वशुरं = कालगुप्तम्, अनुनीय = अनुनयं कृत्वा, चपललोचनया = चंचलनयनया, सुवृत्तया इति भावः। सह = समम्। चपले लोचने यस्यास्तया। प्रवहणं = नौकाम्, आरुह्य = आरोहण कृत्वा। पुष्पपुरं = पाटलिपुत्रम्, अभिप्रतस्थे = अभिप्रस्थित। कल्लोलानां = (महातरङ्गाणाम्), मालिकाः = (परम्पराः), ताभिःअभिहतः = (ताडितः) पोतः = नौका, समुद्राऽम्भसि = सागरजले, अमज्जत् = निमग्नः, ।।68।।

भावार्थ:- तब रत्नोद्भवने भाईयोंको देखनेके कुतूहलसे किसी प्रकार ससुर को मनाकर चचंल नेत्रोंवाली सुवृत्ताके साथ नौकापर सवार होकर पुष्पपुरकी ओर प्रस्थान किया। बड़े-बड़े तरंगोंसे ताड़ित होकर नौका समुद्रके जलमें डूब गई।।68।।

69. गर्भभरालसां तां ललनां धात्रीभावेन कल्पिताहं कराभ्यामुद्वहन्ती फलकमेकमधिरुह्य दैवगत्या तीरभूमिमगमम्। सुहृज्जनपरिवृतो रत्नोद्भवस्तत्र निमग्नो वा केनोपायेन तीरमगमद्वा न जानामि। क्लेशस्य पराकाष्ठामधिगतासुवृत्तास्मिन्नटवीमध्येऽद्य सुतमसूत। प्रसववेदनयाविचेतना सा प्रच्छायशीतले तरुतले निवसति। विजने वने स्थातुमशक्यतया जनपदगामिनं मार्गमन्वेष्टमुद्युक्तया मया विवशायास्तस्यासः समीपे बालकं निक्षिप्य गन्तुमनुचितमिति कुमारोऽप्यनायि’ इति।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने सुवृता के पुत्र को जन्म देने का वृतांत वर्णन किया है ।

व्याख्या:- गर्भभरेण = (भ्रूणभारेण), अलसाम् = (आलस्ययुक्तां, जडामिति भावः) तां = पूर्वोक्तां, ललनां = कामिनीं, सुवृत्तामिति भावः। धात्रीभावेन = उपमातृत्वेन, कल्पिता = नियुक्ता अहं, कराभ्यां = हस्ताभ्यां, उद्वहन्ती = धारयन्ती सती। एकं, फलकं = काष्ठखण्डम, अधिरुह्य = आरुह्य, दैवगत्या = भाग्यगत्या, तीरभूमिं = तटभुवम्। अगमं = गता। सुहृज्जनैः = (मित्रलोकैः) परिवृतः = (परिवेष्टितः), रत्नोद्भवः, तत्र = समुद्राऽम्भसि, निमग्नः = अमज्जत्, वा = अथवा, केन = केनापि, उपायेन = साधनेन, तीरं = तटम्, अगमत् = गतः, न जानाभि = नो बुध्ये। क्लेशस्य = कष्टस्य, पनरां = परमां, काष्ठां = स्थितिं, अधिगता = प्राप्ता, सुवृत्ता, अद्य = अस्मिन्दिने, अस्मिन् = एतस्मिन्, अटवीमध्ये = वनाऽन्तरे, सुतं = पुत्रम्, असूत = उत्पादितवती, प्रसववेदनया = प्रसवसमयपीडया। विचेतना = संज्ञारहिता, सः = सुवृत्ता, प्रच्छाये = (प्रचुरच्छायायुक्ते) अत एव शीतले = (शीते), तरुतले = वृक्षाऽधोभागे, निवसति = निवासं कुर्वती अस्ति। विजने = जनरहिते, वने = अरण्ये, स्थातुम् = स्थितिं कर्तुम्, अशक्यतया = शक्तिक्षियरहिततया, जनपदगामिनं = देशगमनशील, देशगमनोचितमिति भावः।

मार्गं = पन्थानम्, अन्वेष्टुम् = अन्वेषणं कर्तुम्, उद्युक्तया = उद्योगयुक्तया, तत्परयेति भावः। मया, विवशायाः = विह्वलायाः, तस्याः = सुवृत्तायाः, समीपे = सविधे, बालकं = शिशु, निक्षिप्य = निक्षेपं कृत्वा, स्थापयित्वेति भावः। गन्तुं = गमनं कर्तुम् अनुचित = अयोग्यम्, इति = एवं, विचर्येति शेषः। कुमारोऽपि = बालकोऽपि, अनामि = आनीत, ॥69॥

भावार्थ:- सुवृत्ता की धाय का कार्य करने वाली मैं गर्भ के भारसे अलसाई हुई उसको दोनों हाथोंसे पकड़ कर एक काष्ठफलकपर चढ़कर भग्यगतिसे तीर भूमि में गई। मित्रगणसे घिरे गये रत्नोद्भव समुद्रमें डूब गये वा किसी उपायसे तीरभूमिमें गये यह मैं नहीं जानती हूँ। कष्टकी परम सीमामें पहुँची हुई सुवृत्ताने जंगलके बीच आज पुत्र को उत्पन्न किया। प्रसव की वेदनासे अचेत होकर वह पर्याप्त छायासे शीतल पेड़के नीचे निवास कर रही है। निर्जन वनमें रहना अशक्य होनेसे देशमें जानेके लिए अनुकूल मार्ग ढूँढनेमें तत्पर मैं सुवृत्ता के समीपमें बालकको रखकर जाना अनुचित समझकर कुमारको भी लाई हूँ"॥69॥

70. तस्मिन्नेव क्षणे वन्यो वारणः कश्चिददृश्यत। तं विलोक्य भीता सा बालकं निपात्य प्राद्रवत। अहं समीपलतागुल्मके प्रविश्य परीक्षमाणोऽतिष्ठम्, निपतितं बालकं पल्लवकवमिवाददति गजपतौ कण्ठीरवो महाग्रहेण न्यपतत् भयाकुलेन दन्तावलेन झटिति वियति समुत्पात्यमानो बालको न्यपतत्।

चिरायुष्मत्तया स चोन्नततरुशाखासमासीनेन वानरेण केनचित्पक्वफलबुद्धा परिगृह्य फलेतरतया विततस्कन्धमूले निक्षिप्तोऽभूत्। सोऽपि मर्कटः क्वचिदगात्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने सुवृता के बालक के वृतांत का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तस्मिन्नेव, क्षणे = काले, कश्चित् = कोऽपि, वन्यः = आरण्यकः, वारणः = हस्ती, अदृश्यत = दृष्टः, तं = वारणं, विलोक्य = दृष्ट्वा, भीता = त्रस्ता, सा = स्थविरा, बालकं = कुमारं, निपात्य = पातयित्वा, स्वप्राणरक्षाऽर्थमिति भावः। प्राद्रवत् = प्रद्रुता, पलायितेति भावः। अहं = सोमदेवशर्मा, समीपे = (निकटे), लतागुल्मके = (वल्लीस्तम्बे), स्वाऽर्थे = (प्रकृत्यर्थे) , प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, परितः = (सर्वतः) ईक्षमार्थेः = (पश्यन्) परिपूर्वकात् अतिष्ठम् = स्थितः। निपतितं = हस्ताच्युतं, बालक = कुमारं, पल्लवकवलं = किसलयग्रासम्, गजपतौ = हस्तिनि, आददति = गृह्णति सति, भीमरवः = भयङ्करध्वनिः, भीमः = (भयङ्करः), ध्वनिः = (ध्वानः) यस्य सः। कण्ठीरवः = सिंहः। महाऽऽग्रहेण = महता अशिनिवेशेन, न्यपतत् = आक्रान्तवान्। भयाकुलेन = भीतिव्याकुलेन, दन्तावलेन = हस्तिनः। झटिति = शीघ्रं, दियति = आकाशे, समुत्पात्यमानः = उत्क्षिप्यमाणः, बालकः = अर्भकः, न्यपतत् = निपतितः।

चिरायुख्मत्तया = दीर्घायुर्युक्तत्वेन, चिरंजीवत्वेनेति भावः। सः = बालकः, उन्नतः = (उच्छ्रितः), यस्तरुः = (वृक्षः), तस्य शाखायां = (लतायाम्), समासीनेन = (समुपविष्टेन), केनचित्, वानरेण = मर्कटेन, पक्वफलबुद्ध्या = परिणतसस्यमत्या, भ्रमेणेति शेषः। परिगृह्य = गृहीत्वा, फलात् = (सस्यात्), इतरः = (अन्यः) ,तस्य भावस्तत्ता तया। बालकस्येति शेषः वितते = (विस्तृते), स्कन्धमूले = (प्रकाण्डमूले), निक्षिप्तः = स्थापितः, अभूत् = अभवत्। सोऽपि = पूर्वोक्तोऽपि, मर्कटः = वानरः; क्वचित् = कुंत्रचित्, अगात् = गतः।।70।।

भावार्थ:- उसी समय एक जंगली हाथी देखा गया। उसको देखकर डरी हुई वह (स्त्री) बालकाको फेंक कर दौड़ गई। मै। निकटके लताकुंजमें प्रवेश कर परखता हुआ रहा। हाथीके उस स्त्रीसे फेंके गये बालकको पल्लवके समान लेने पर भयंकर शब्द करता हुआ (दहाड़ता हुआ) सिंह बड़े आवेशसे झपटा। डरसे व्याकुल हाथी से झटपट ऊपर उछाला जाता हुआ वह बालक गिर पड़ा। दीर्घ आयु होनेसे उसकी ऊँचे पेड़की डालपर बैठे हुए किसी बन्दरने पका हुआ फल समझकर ले लिया पर फल न होनेसे विस्तृत प्रकाण्डके मूलमें रख दिया। वह बन्दर भी कहीं चला गया।।70।।

71. बालकेन सत्त्वसम्पन्नतया सकलक्लेशसहेनाभावि। केसरिणा करिणं निहत्य कुत्रचिदगामि। लतागृहान्निर्गतोऽहमपि तेजःपुञ्जं बालकं शनैरवनीरुहादवतार्य वनान्तरे वनितामन्विष्याविलोक्यैनमानीय गुरवे निवेद्य तन्निदेशेन भवन्निकटमानीतवानस्मि' इति।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने बालक व वृद्ध का वर्णन किया है।

व्याख्या:- बालकेन = कुमारेण; सत्त्वसम्पन्नतया = बलयुक्तत्वेन; सकलक्लेशसहेत = समस्तदुःखसहिष्णुता, अभावि = भूतम्। केसरिणा = सिंहेन, करिणं = हस्तिनं, निहत्य = व्यापाद्य, कुत्रचित् = कस्मिश्चित्, स्थान इति शेषः। अगामि = गतम्, लतागृहात् = कुंजात्, निर्गतः = निःसृतः, अहमपि = सोमदेवशर्माऽपि, तेजःपुंजं = तेजस्विनं, बालकं = कुमारं, शनैः = मन्दम्, अवनीरुहात् = वृक्षात्, अवतार्य = अवतीर्णं कारयित्वा, वनान्तरे = अरण्यमध्ये, वनितां = स्त्रिय, बालकस्य = धात्रीमिति भावः। अन्विष्य = अन्वेषणं कृत्वा। अविलोक्य = अदृष्ट्वा, तामिति शेषः। एनं = बालकम्, आनीय = आनयनं कृत्वा, गुरवे = आचार्याय, वामदेवायेति भावः। निवेद्य = विज्ञाप्य, तन्निदेशेन = तदाज्ञया, भवन्निकटं = भवत्समीपम्, आनीतवान् = प्रापितवान्, अस्मि, ।।71।।

भावार्थ:- बलसम्पन्न होनेसे बालक समस्त क्लेश सहनेमें समर्थ हुआ। सिंह भी हाथीको मार कर कहीं चल पड़ा। लतागृहसे निकल कर मैंने भी उस तेजस्वी बालकको धीरेसे पेड़से उतार कर वनके भीतर उस स्त्रीको ढूँढ कर भी न पाकर इसको लेकर गुरुजीको निवेदन किया। उनकी आज्ञासे उसे आपके समीप लाया हूँ।"।।71।।

72. सर्वेषां सुहृदामेकदैवानुकूलदैवाभावेन महदाश्चर्यं बिभ्राणो राजा 'रत्नोद्भवः कथमभवत्' इति चिन्तयंस्तन्नन्दनं पुष्पोद्भवनामधेयं विधाय तदुदन्तं व्याख्याय सुश्रुताय विषादसन्तोषावनुभवंस्तदनुजतनयं समर्पितवान्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने उस बालक का नाम पुष्पोद्भव रखने का वर्णन एवं उसके छोटे भाई सुश्रुत को सौंपने का वृतांत प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- सर्वेषां = समेषां, सुहृदां = मित्राणान्, एकदा एव = युगपत्, अनुकूलदैवाऽभावने = अनुगुणभाग्यराहित्येन, भाग्यस्य प्रातिकूल्येनेति भावः। महत् = अधिकम्, आश्चर्यं = विस्मयं, बिभ्राणः = धारयन्; राजा = भूपतिःराजहंस इत्यर्थः। रत्नोद्भवः, कथं = केन प्रकारेण, अभवत् =

अभूत्, ''रत्नोद्भवस्य कीदृशी दशा जातेति भावः, इति = एवं, चिन्तयन् = ध्यायन्। तन्नन्दनं = रत्नोद्भवपुत्रं, पुष्पोद्भवनामधेयं = पुष्पोद्भवनामकं, नाम एव नामधेयं, विधाय = कृत्वा, विषादसन्तोषौ = खेदसंप्रीतौ, पुष्पोद्भवदशाऽपरिज्ञानात्खेदः, तत्पुत्रस्य प्राप्तेः सन्तोष इति यथायथं ज्ञेयम्। अनुभवन् = उपलभमानः, तदुदन्तं = तद्वृत्तान्तं, व्याख्याय = कथयित्वा, सुश्रुताय = पुष्पोद्भवाऽग्रजाय, तदनुजतनयं = तदनुजस्य (तदवरजस्य, पुष्पोद्भवस्येति भावः तनयं (पुत्रम्) समर्पितवान् = दत्तवान्॥72॥

भावार्थः- सब मित्रोंका एक बार ही भाग्यके अनुकूल न होनेसे बहुत आश्चर्य मानते हुए राजाने ''रत्नोद्भवका क्या हुआ?'' ऐसी चिन्ता करते हुए उनके पुत्रका ''पुष्पोद्भव'' नाम रखकर उस वृत्तान्तको सुश्रुतको बतलाकर खेद और सन्तोषका अनुभव कर उनके भाईके पुत्र (पुष्पोद्भव) को सौंपा।॥72॥

73. अन्येद्युः कञ्चन बालकमुरसि दधती वासुमती वल्लभमभिगता। तेन 'कुत्रत्योऽयम्' इति पृष्ठा समभाषत-'राजन्! अतीतायां रात्रौ काचन दिव्यवनिता मत्पुरतः कुमारमेनं संस्थाप्य निद्रामुद्रितां मां विबोध्य विनीताब्रवीत्-'देवि! त्वन्मन्त्रिणो धर्मपालनन्दनस्य कामपालस्य वल्लभा यक्षकन्याहं तारावलीनाम, नन्दिनी मणिभद्रस्यायक्षेश्वरानुमत्या मदात्मजमेतं भवत्तनूजस्या-म्भोनिधिवलयवेष्टितक्षोणीमण्डलेश्वरस्य भाविनो विशुद्धयशोनिधेराजवाहनस्य परिचर्याकरणायानीतवत्यस्मि त्वमेनं मनोजसन्निभमभिवर्धय' इति विस्मयविकासतनयनया मया सविनयं सत्कृता स्वक्षी यक्षी साप्यदृश्यतामयासीत्' इति।

प्रसंगः- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में धर्मपाल के पुत्र कामपाल की पत्नी (तारावती) का वृतांत एवं अर्थपाल की उत्पत्ति को प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्याः- अन्येद्युः = अपरेद्युः। कंचन, बालकं = माणवकम्, उरसि = वक्षसि। दधाना = धारयन्ती। वसुमती, वल्लभं = प्रियं, राजहंसम्, अभिगता = सम्मुख प्राप्ता। तेन = राजहंसेन, अयं = माणवकः, कुत्रत्यः = क्वत्यः, इति = एवं, पृष्टा = अनुयुक्ता, सती, समभाषत = समवदत्। राजन् = हे भूपते! अनीतायां = गतायां, रात्रौ = रजन्याम्। काचन = काऽपि, दिव्यवनिता = स्वर्गमहिला, मत्पुरतः = मदग्रे एमं, कुमारं = माणवकं, संस्थाप्य = निधाय, निद्रया = (स्वापेन हेतुना), मुद्रितां = (विमीलितनयनाम्), बिबोध्य = जागरितां कृत्वा, विनीता = नम्रा सती, अब्रवीत् = अगदत्।

हे देवि! = हे राज्ञि!, त्वन्मन्त्रिणः = त्वदमात्यस्य, धर्मपालनन्दनस्य = धर्मपालपुत्रस्य, कामपालस्य, वल्लभा = प्रिया, यक्षकन्या = देवविशेषकुमारी, अहं, तारावली नाम = नाम्ना तारावली, मणिभद्रस्य = तन्नामकस्य यक्षस्य, नन्दिनी = पुत्री, अस्मीति शेषः।

यक्षेश्वरस्य = (कुबेरस्य), अनुमत्या = (अनुज्ञया), मम = (तारावल्याः), आत्मजम् = (पुत्रम्), एतं = समीपतरवर्तिनम्। भाविनः = भविष्यतः, अम्भोनिधिः = (समुद्रः), एव वलयः = (कटकः), तेन वेष्टितम् = (आवृत्तम्), यत् क्षोणीमण्डलं = (भूचक्रवालम्), तस्य, ईश्वरस्य = (पत्युः)। विशुद्धम् = (समुज्ज्वलम्), यत् यशः = (कीर्तिः), तस्य निधेः = (आकरस्य, आधारभूतस्येति भावः), भवत्याः = (तव), तनूजस्य = (पुत्रस्य), राजवाहनस्य। परिचर्याकरणाय = सेवाविधानाय। आनीतवती = प्रापितवती, अस्मि = भवामि। त्वम्, मनोजसन्निभ = कामदेवसदृशं, सौन्दर्येणेति भावः। एत = माणवकम्, अभिवर्द्धय = संवर्द्धनं कुरु, इति।

विस्मयेन = (आश्चर्येण), विकसिते = (प्रफुल्ले), नयने = (नेत्रे) यस्याः, तया। मया = वसुमत्या, सविनयं = नम्रतापूर्वकं, सत्कृता = सम्मानिता, स्वक्षी = शोभने (सुन्दरे), अक्षिणी = (नेत्रे) यस्याः सा। सुलोचनेति भावः। सा = पूर्वोक्ता, यक्षी = यक्षपत्नी, अपि, अदृश्यताम् = अदर्शयनीयताम्, अयासीत् = अगात्॥73॥

भावार्थः- दूसरे दिन किसी बालकको छातीमें रख राजहंसके पास गई हुई वसुमतीको राजाके "यह कहाँका है" ऐसा पूछने पर उन्होंने कहा-राजन्! गत रात्रिमें किसी दिव्य स्त्रीने मेरे सामने एक कुमारको रखकर नींदमें आँखोंको मूँदी हुई मुझे जगाकर नम्रतापूर्वक कहा- देवि! आपके मन्त्री धर्मपालके पुत्र कामपालकी पत्नी; मणिभद्रकी पुत्री तारावली नामकी मैं यक्षकन्या हूँ। कुबेरकी आज्ञासे इस मेरे पुत्रको मैं आपके पुत्र तथा पीछे समुद्रझरूप कंकणसे वेष्टित पृथ्वीमण्डलके राजा तथा विशुद्ध यशके आश्रय होनेवाले राजवाहनकी सेवा करनेके लिए लाई हूँ। आप कामदेवके समान इस कुमारका संवर्द्धन कीजिए। आश्चर्यसे विकसित नेत्रोंवाली मुझसे नम्रतापूर्वक सत्कार की जाती हुई सुलोचना वह यक्षी अदृश्य हो गई॥73॥

74. कामपालस्य यक्षकन्यासङ्गमे विस्मयमानमानसो राजहंसो रञ्जितमित्रं सुमित्रं मन्त्रिणमाहूय तदीयभ्रातृपुत्रमर्थपाल विधाय तस्मै सर्वं वार्तादिकं व्याख्यायादात्।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने कामपाल का विवाह वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- कामपालस्य = सुमित्राऽवरजस्य, यक्षकन्यायाः = (यक्षकुमार्याः), संगमे = (समागमे), विस्मयमानमानसस्य - विस्मयमानं = (विस्मयं कुर्वत्)। मानसं = (चित्तम्) यस्य सः, राजहंसः, रंजितमित्रं = रंजितानि (सानुरागीकृतानि), मित्राणि = (सुहृदः) येन, तम्। सुमित्रं = तन्नामकं, मन्त्रिणं

= सचिवम्; आहूय = आकार्य, तदीयभ्रातृपुत्रं = तदीयभ्रातुः (तत्सोदरस्य), पुत्रम् = (आत्मजम्) अर्थपालम् = अर्थपालनामकं, विधाय = कृत्वा, तस्मै = सुमित्राय, सर्वं = सकलं, वार्तादिकं = वृत्तान्तप्रभृतिं, व्याख्याय = कथयित्वा, अदात् = दत्तवान्।।74।।

भावार्थः- कामपालके यक्षकन्याके साथ समागम होनेसे आश्चर्ययुक्त चित्तवाले राजहंसने मित्रोंको अनुरागयुक्त करनेवाले सुमित्र नामके मन्त्रीको बुलाकर उनके भाईके पुत्र उस कुमारका ”अर्थपाल” नाम रखकर सब वृत्तान्त बतलाकर उन्हें उस कुमारको दे दिया।।74।।

75. ततः परिस्मिन्दवसे वामदेवान्तेवासी तदाश्रमवासी समाराधितदेवकीर्तिं निर्भत्र्सितमारमूर्तिं कुसुमसुकुमारं कुमारमेकमवगमय्यनरपतिमवादीत्-‘देव! तीर्थयात्राप्रसङ्गेन काबेरीतीरमागतोऽहं विलोलालकं बालकं निजोत्सङ्गतले निधाय रुदतीं स्थविरामेकां विलोक्यावोचम्-‘स्थविरे! का त्वम्? अयमर्भकः कस्य नयनानन्दकरः? कान्तारं किमर्थमागता? शोककारणं किम् ? इति।

प्रसंगः- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में वामदेव मुनि के आश्रम का वर्णन एवं सोमदत्त की उत्पत्ति का वर्णन किया है।

व्याख्याः- ततः = अनन्तर, परस्मिन् = अन्यस्मिन्, दिवसे = वासरे, वामदेवाऽन्तेवासी = वामदेवस्य (तन्नाम्नो मुनेः), अन्तेवासी = (शष्यः), अन्ते = (गुरोः समीपे) तदाश्रम वासी = तस्य (वामदेवस्य) आश्रमे = (तपोवनावासे), वसतीति निर्भत्र्सिता = (सतर्जिता), मारमूर्तिः = (कामशरीरम्) येन तम्, सौन्दर्यधिक्येनेति भावः। कुसुमसुकुमारं = कुसुमम् (पुष्पम्) इव सुकुमारम् = (कोमलम्), एकम् = एककं, कुमारं = बालकम्, अवगमय्य = प्रापय्य, नरपतिं = राजानम्, अवादीत् = उक्तवान्।

देव = हे राजन्! तीर्थयात्राप्रसङ्गेन = गङ्गादितीर्थगमनाऽवसरेण, कावेरी = (दक्षिणदेशभवा काचिन्नदी) तस्याः तीरम् = (तटम्), आगतः = आयातः, अहं = वामदेवशिष्यः, विलोलाऽलकं = चंचलचूर्णकुन्तलं, विलोलाः = (चंचलाः), अलकाः = (चूर्णकुन्तलाः) यस्य, तं, बालकं = माणवकं, निजोत्सङ्गतले = स्वाऽङ्कभागे, निधाय = स्थापयित्वा, रुदतीम् = अश्रु, मंचन्तीम्, एकां, स्थविरां = वृद्धां स्त्रियं, विलोक्य = दृष्ट्वा। अवोचम् = उक्तवान्।

स्थविरे = वृद्धे! त्वं, का ? अयं = सन्निकृष्टस्थः, अर्भकः = बालकः। कस्य = जनस्य, जनकस्येति भावः। नयनानन्दकरः = नयनयोः। (नेत्रयोः), आनन्दकरः = (हर्षोत्पादकः), किमर्थं = कस्मै प्रयोजनाय, कान्तारं = दुर्गमं वर्त्म, आगता = आयाता। शोककारण = मन्युहेतुः, किम् ? ।।75।।

भावार्थ:- तब दूसरे दिन गुरुके आश्रममें रहने वाले वामदेवके शिष्यने देवताके समान कीर्तिमान् होनेवाले कामदेवके शरीरको सौन्दर्यसे मात करने वाले फूलके समान सुकुमार एक कुमारको लाकर राजासे कहा-''महाराज! तीर्थयात्राके प्रसंगसे काबेरी नदीके तीरसे आकर चंचल अलक वाले बालकको अपने गोदमें रखकर रोती हुई एक बुढ़ियाको देखकर मैंने कहा-'बुढ़िया! तुम कौन हो? यह बालक किसके नेत्रोंको आनन्द करने वाला है? तुम इस वनमें क्यों आई हो ? और शोकका कारण क्या है ?॥75॥

76. सा करयुगेन बाष्पजलमुन्मृज्य निजशोकशङ्कूत्पाटनक्षममिव मामवलोक्य शोकहेतुमवोचत्- 'द्विजात्मज! राजहंसमन्त्रिणः सितवर्मणः कनीयानात्मजः सत्यवर्मा तीर्थयात्रामिषेण देशेमेनमागच्छत्। स कस्मिंश्चिदग्रहारे कालीनाम कस्यचिद् भूसुरस्य नन्दिनीं विवाह्य तस्या अनपत्यतया गौरीं नाम तद्भगिनीं काञ्चन कान्तिं परिणाय तस्यामेकं तनयमलभताकाली सासूयमेकदा धात्र्या मयासह बालमेनमेकेन मिषेणानीय तटिन्यामेतस्यामक्षिपत्। करेणैकेन बालमुद्धृत्यापरेण प्लवमाना नदीवेगागतस्य कस्यचित्तरोःशाखामवलम्ब्य तत्र शिशुं निधाय नदीवेगेनोह्यमाना केनचित्तरुलग्नेन कालभोगिनाहमर्दशि। मदवलम्बीभूतो भूरुहोऽयस्मिन् देशे तीरमगमत्। गरलस्योद्दीपनतया मयि मृतायामरण्ये कश्चन शरण्यो नास्तींति मया शोच्यते' इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजहंस के मंत्री सितवर्मा का छोटा भाई सत्यवर्मा के तीर्थाटन का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- सा = स्थविरा, करयुगेन = हस्तयुगलेन, बाष्पजलम् = अश्रु, उन्मृज्य = संशोध्य, मां, निजः = (स्वकीयः) यः शोकः = (मन्युः) स एव शङ्कु = (शल्यम्) तस्य उत्पाटने = (उन्मूलने) क्षमम् = (समर्थम्) इव, माम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, शोकहेतुं = मन्युकारणम्, अवोचत् = उक्तवती। द्विजात्मज = हे ब्राह्मणपुत्र!, राजहंसमन्त्रिणः = मगधेश्वराऽमात्यस्य, सितवर्मणः, कनीयान् = यवीयान्, आत्मजः = पुत्रः। सत्यवर्मा, तीर्थयात्रामिषेण = तीर्थप्रयाणव्याजेन, एनम् = इमं, देशं = जनपदम्, आगच्छत् = आगतः। सः = सत्यवर्मा। कस्मिंश्चत् = अनिर्दिष्टनामधेये, अग्रहारे = देवाद्यर्थमृत्सृष्टग्राम, कस्यचित्, भूसुरस्य = ब्राह्मणस्य। काली नाम = नाम्ना काली, नन्दिनीं = पुत्रीं, विवाह्य = परिणीय, तस्याः = काल्याः, अनपत्यतया = सन्तानरहितत्वेन, गौरीं नाम = नाम्ना गौरीं, कांचनकान्तिं = कांचनस्य (सुवर्णस्य) इव कान्तिः = (शोभा) यस्याः, ताम्। तद्भगिनीं = कालीस्वसारं गौरीं, परिणीय = विवाह्य, तस्यां = गौर्याम्, एकं, तनयं = पुत्रम्, अलभत् = लब्धवान्।

काली = सत्यवर्मप्रथमपत्नी, एकदा = एकस्मिन्दिने, धात्र्या = उपमात्रा, मया, सह = समम्, एनम् = इमं, बालम् = अर्भकम्, एकेन, मिषेण = व्याजेन, आनीय = आनयनं कृत्वा, साऽसूयम = ईर्ष्यापूर्वकम्, एतस्याम् = अस्यां, तटिन्यां = नद्याम्।

अक्षिपत् = प्रेरितवती। एकेन, करेण = हस्तेन; बालम् = उद्धृत्य अपरेण = अन्येन करेण, प्लवमाना = तरन्ती; नदीवेगेन = (सरिज्जवेन), आगतस्य = (आयातस्य), कस्यचित्, तरोः = वृक्षस्य; शाखां = लताम्। अवलम्ब्य = आश्रित्य, तत्र = तस्यां, शाखायामिति भावः। शिशुं = बालं; निधाय = स्थापयित्वा, नदीवेगेन = सरिज्जवेन; उह्यमाना = नीयमाना, कालभोगिनः = कृष्णसर्पेण; अशंशि = दष्टा, मदेत्यादिः = मम (स्थविरायाः), अवलम्बीभूतः = (आश्रयीभूतः), अयं, भूरुह = वृक्षः, अस्मिन्, देशे = जनपदे। तीरं = तटम्, अगमत् = गतः।

गरलस्य = विषस्य, उद्दीपनतया = प्रबलत्वेन, मयि = धात्र्यां, मृतयाम् = उपरतायाम्। अरण्ये = वने, कश्चन = कोऽपि; शरण्यः = रक्षणसमर्थः शिशोरिति शेषः। न अस्ति = नो विद्यते, इति = हेतुना, मया = धात्र्या, शोच्यते = शोकः क्रियते। इति।।76।।

भावार्थः- वह (बुढ़िया) दोनों हाथोंसे आँसू पोंछकर मुझे अपने शोकरूप कीलकको उखाड़नेमें समर्थके समान देखकर शोकका कारण कहने लगी-'ब्राह्मणपुत्र! राजहंसके मन्त्री सितवर्माके छोटे पुत्र सत्यवर्मा तीर्थयात्राके बहानेसे इस देशमें आये। उन्होंने किसी अग्रहार (देवता आदिके लिए समर्पित ग्राम) में काली नामकी किसी ब्राह्मणपुत्रीसे विवाह कर उससे सन्तान न होनेसे सोनेके समान कान्तिवाली गौरी नामकी उसकी बहनसे विवाह कर उसने एक पुत्र को प्राप्त किया। एक दिन कालीने गौरीके पुत्रकी धाय मेरे साथ इस बालक को किसी बहानेसे लाकर ईर्ष्यासे इस नदीमें फेंक दिया। एक हाथसक बालकको उठाकर दूसरे हाथसे तैरती हुई नदीके वेगसे आये हुए किसी पेड़की शाखा (डाल) का सहारा लेकर वहाँ बालकको रखकर नदीके वेगसे ले आई गई मुझे किसी पेड़में स्थित काल सर्पने डस लिया। मेरा सहारा वह पेड़ इस स्थानमें तीरपर आ गया। विषके उद्दीपन होनेसे मेरे मरनेपर जंगलमें (इस बालकका) कोई रक्षण करनेमें समर्थ नहीं है इसलिए मैं शोक करती हूँ।।।76।।

77. ततो विषमविषज्वालावलीढावयवा सा धरणीतले न्यपतत्। दयाविष्टहृदयोऽहं मन्त्रबलेन विषव्यथामपनेतुमक्षमः समीपकुञ्जेष्वौषणिविशेषमन्त्रिष्य प्रत्यागतो व्युत्क्रान्तजीवितां तां व्यलोकयम्।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में सत्यवर्मा के द्वितीय विवाह से उत्पन्न पुत्र का वृतांत वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- ततः = अनन्तरं, विषमं = (दारुणम्) यद् विषं = (गरलम्), तस्य या ज्वाला = (सन्तापः) तया अवलीढाः = (व्याप्ताः), अबयवाः = (अङ्गानि) यस्याः सा। सा = स्थविरा, धरणीतले = भूतले, न्यपतत् = निपतिता।

दयया = (करुणया) आविष्टम् = (आक्रान्तम्), हृदयं = (चित्तम्), यस्य सः। तादृशः अहं, मन्त्रबलेन = मन्त्रशक्त्या, विषव्यथाम् = गरलपीडाम्, अपनेतुं = दूरीकर्तुम्, अक्षमः = असमर्थः सन्। समीपकुंजेषु = निकटवर्तिलतागृहेषु, ओषधिवशिषं = भेषजविशेषम्। अन्विष्य = अन्वेषणं कृत्वा, प्रत्यागताः = निवृत्तः सन्, तां = स्थविरां व्युत्क्रान्तजीवितां = व्युत्क्रान्तं = (निष्क्रान्तम्), जीविनं = (जीवनम्) यस्याः, ताम्। व्यलोकयम् = अपश्यम्।।77।।

भावार्थ:- इसके बाद उत्कट विषकी ज्वालासे व्याप्त शरीर होनेसे वह धरतीपरप गिर पड़ी। दयासे व्याप्त चित्तवाला होकर भी मन्त्रशक्तिसे विषकी पीड़ा हटानेमें असमर्थ होकर समीपके लतागृहोंमें औषधविशेषका अन्वेषण कर लौट कर मैंने उस बुढ़ियाको प्राणशून्य देखा।।77।।

78. तदनु तस्याः पावकसंस्कारं विरच्य शोकाकुलचेता बालमेनमगतिमादाय सत्यवर्मवृत्तान्तवेलायां तन्निवासाप्रहारनामधेयस्याश्रुततया तदन्वेषणमशक्यमित्यालोच्य भवदमात्यतनयस्य भवानेवाभिरक्षितेति भवन्तमेनमनयम्' इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने सत्यवर्मा के चरित्र श्रवण वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- तदनु = तदनन्तरं, तस्याः = स्थविरायाः, पावकसंस्कारम्, अग्निसंस्कृतिं, दाहकोंति भावः। विरच्य = विरचय्य, कृत्वेति भावः। शोकाकुलचेताः - शोकेन = (शुचा), आकुलं = (व्याप्तम्), चेतः = (चित्तम्) यस्य सः। तादृशः सन्, अगतिम् = अनाथं, रक्षकरहितमिति भावः। एनं; बालं = माणवकम्; आदाय = गृहीत्वा। सत्यवर्मणः = (सुमत्यनुजस्य) वृत्तान्तस्य = (उदन्तस्य) श्रवणवेलायाम् = (आकर्णनसमये)। तन्निवासः = (सत्यवर्मवासस्थानम्) योऽग्रहारः = (देवाद्यर्थमुत्सृष्टग्रामः) तस्य नामधेयस्य = (अभिधानस्य), अश्रुतया = अनाकर्णितत्वेन, तदन्वेषणं = सत्यवर्मगवेषणम्। अशक्यम् = अशक्तिविषयम्। इति = एवम्, आलोच्य = विचार्य।

भवदमात्यतनयस्य = भवन्मन्त्रिपुत्रस्य, भवान् = देवः, एव; अभिरक्षिता = अभिरक्षकः, इति = अस्माद्धेतोः, एनं = माणवकं, भबन्तं = देवम्, अनयं = प्रापितवान्, अहमिति शेषः।।78।।

भावार्थः- इसके बाद उसका अग्निसंस्कार करके शोकसे आकुलचित्त होकर आश्रयहीन इस बालकको लेकर सत्यवर्माका वृत्तान्त सुननेके समय उनके निवासस्थान ग्रामका नाम न सुननेके कारण उनका अन्वेषण अशक्य विचार कर "आपके मन्त्रीके पुत्रके आप ही रक्षक हैं।" ऐसा सोचकर इसे आपके पास ले आया हूँ।।78।।

79. तन्निशम्य सत्यवर्मस्थितेः सम्यगनिश्चिततया खिन्नमानसो नरपतिः सुमतये मन्त्रिणे सोमदत्तं नाम तदनुजतनयमर्पितवान्। सोऽपि सोदरमागतमिव मन्यमानो विशेषेण पुपोष।

प्रसंगः- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में सत्यवर्मा द्वारा उस बालक का नाम सोमदत्त रखने और उसके पालन पोषण का वर्णन किया है।

व्याख्याः- तद् = वामदेवशिष्यकथितं वाक्यजातं, निशम्य = श्रुत्वा, नरपतिः = राजा, सत्यवर्मस्थितेः = सत्यवर्मस्य (तन्नाम्नः स्वमन्त्रिपुत्रस्य), स्थिते = (अवस्थानस्य), सम्यक् = यथार्थरूपेण, अनिश्चिततया = अनिर्णीतत्वेन, खिन्नमानसः - खिन्नं = (विषणम्), मानसं = (चित्तम्) यस्य सः। नरपतिः = राजा, राजहंस इत्यर्थः। सुमतये = तन्नाम्ने, मन्त्रिणे = अमात्याय, सोमदत्तं नाम = नाम्ना सोमदत्तं, तदनुजतनयं = तदनुजस्य (तदवरजस्य सत्यवर्मण इति भावः) तनयम् = (पुत्रम्) अर्पितवान् = दत्तवान्।

सोऽपि = सुमतिरपि, आगतम् = आयातं, सोदरं = सहोदरं, भ्रातरं सत्यवर्माणम्, इव, मन्यमानः = जानानः, विशेषेण = अधिकप्रकारेण; पुपोष = उपचितवान् ।।79।।

भावार्थः- यह सुनकर सत्यवर्माकी स्थिति पूर्ण रूपसे अनिश्चित होनेसे खिन्नचित्त होनेसे राजाने सुमति नामके मन्त्रीको उनके भाई के पुत्र उस बालकको सौंपा ।।79।।

80. एवं मिलितेन कुमारमण्डलेन सह बालकेलीरनुभवन्नधिरूढानेकवाहनो राजवाहनोऽनुक्रमेण चैलोपनयनादिसंस्कारजातमलभत। ततः सकललिपिज्ञानं निखिलदेशीयभाषापाण्डित्यं षडङ्गसहितवेदसमुदायकोविदत्व व्यनाटकाख्यानकाख्यायिकेतिहासचित्रकथासहितपुराणगणनैपुण्यं धर्मशब्द- ज्योतिस्तर्कमीमांसादिसमस्तशास्त्रनिकरचातुर्यंकौटिल्यकामन्दकीयादिनीतिपटलकौशलं वीणाद्यशेषवाद्यदाक्ष्यं संगीतसाहित्यहारित्वं मणिमन्त्रौषधादिमायाप्रंचचुंचुत्वं

मातङ्गतुरङ्गादिवाहनारोहणपाटब विविधायुधप्रयोगचणत्वं चैर्यदुरोदरादिकपटकलाप्रौढत्वं च तत्तदाचार्येभ्यः सम्यग्लब्ध्वा यौवनेन विलसन्तं कृत्येष्वनलसं तं कुमारनिकरं निरीक्ष्य महीवल्लभः सः 'अहं शत्रुजनदुर्लभः' इति परमानन्दमविन्दत।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने दसों राजकुमारों के संस्कारादि अन्य गतिविधियों का विस्तार से वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- एवम् = इत्थं, मिलितेन = एकत्र समापतितेन, कुमारमण्डलेन = बालकसमूहेन, सह। बालकेलीः = शिशुक्रीडाः, अनुभवन् = विदधत्, अधिरूढानि = (आरूढानि), अनेकानि = (बहूनि) वाहनानि = (यानानि, अश्वगजादीनीतिभावः) येन सः। राजवाहनः = राजहंसपुत्रः। अनुक्रमेण = क्रमाऽनुसारं, चैलम् = (चूडाकर्म), उपनयनं = (व्रतबन्धः), तदादयः = (तत्प्रभृतयः) ये संस्काराः = (संस्कृतयः) तेषां जातम् = (समूहम्) अलभत् = प्राप्तवान्।

ततः = अनन्तरं, सकलानां = (समस्तानाम्), लिपीनां = (लिबीनाम्), ज्ञार्न = (बोधम्), निखिलाः = (समस्ताः), देशीयाः = (देशभवाः) भाषाः = (संस्कृतादयः), तासु पाण्डित्यं = (प्रवीणत्वम्) षडङ्गसहिताः = (शिक्षा-कल्प-व्याकरण-निरुक्त-छन्दो-ज्यौतिषयुक्ताः) ये वेदाः = (श्रुतयः, ऋग्यजुःसामाऽथर्वाख्या इति भावः) तेषां समुदायः = (समूहः) तस्मिन् कोविदत्वम् = (पाण्डित्यम्), काव्यं = (वाल्मीकिरामायणादिः) नाटकं = (दृश्यकाव्यम्) आख्यानकं = (कथानकं, नलोपाख्यानादिकम्), आख्यायिका = (गद्यकाव्यविशेषः), इतिहासः = (पुरावृत्तं, महाभारतादिकम्), चित्रकथा = रमणीयकथा, (बृहत्कथादिः) ताभिः सहितो यः पुराणगणः = (पंचलक्षणसमूहः, ब्राह्मादिपुराणसमूह इति भावः), तस्मिन् नैपुण्यं = (प्रवीणत्वम्), धर्मः = (धर्मशास्त्रं, मन्वादिप्रणीतम्) शब्दः = (शब्दशास्त्रं, पाणिन्यादिप्रणीतं व्याकरणम्) ज्योतिः = (ज्योतिषशास्त्रं पितामहादिप्रणीतं, शब्दज्योतिःशास्त्रयोः, वेदाङ्गान्तर्भूतत्वेपि, तत्र वैशिष्ट्यबोधाऽर्थं पुनरुपादानम्), तर्कः = (न्यायशास्त्रम्), मीमांसा = (पूर्वमीमांसा = जैमिनीया, उत्तरमीमांसा = वैयासकी), तदादीनि यानि समस्तशास्त्राणि = (सकलविद्याः) तेषां निकरः = (समूहः) तस्मिन् चातुर्यं = (प्रावीण्यम्), कौटिल्येत्यादिः =कौटिल्यकामन्दकीयादि (कौटिल्यकामन्दकर्तृं कप्रभृति) यद् नीतिपटलं = (नयसमूहः) तस्मिन् कौशल = (निपुणताम्), वीणादीनि = (वल्लकीप्रभृतीनि) यानि अशेषाणि = (समस्तानि) वाद्यानि = (वादित्राणि) तेषु दाक्ष्यं = (पटुत्वम्) संगीतं = (गीतावाद्यनृत्यरूपम्) साहित्यं = (काव्यं) तत्र हारित्वम् = (मनोहारित्वम्), मणिमन्त्रौषधादिभिः = (रत्नमनुभेषजप्रभृतिभिः) यो मायाप्रपंचः = (कपटविस्तारः), तैर्वित्तत्वम् = (प्रसिद्धत्वम्), मातङ्गतुरङ्गादीनि =

(हस्त्यश्वप्रभृतीनि) यानि वाहनानि = (यानानि), तेषामारोहणम् = (अधिरोहणम्), आयुधानि तस्मिन् पाटवं = (कुशलताम्)। विविधानि = (अनेकप्रकारणि), आयुधानि = (प्रहरणानि) तेषां प्रयोगः = (प्रहारः), चैर्य = (स्तेयम्) दुरोदरं = (द्युतम्) तदादिषु = (तत्प्रभृतिषु) या कपटकला = (छलशिल्पम्) तत्र प्रौढत्वम् = (प्रौढिम्), तत्तदाचार्येभ्यः = तत्तच्छिक्षकेभ्यः, सम्यक् = समीचीन यथा तथा, लब्ध्वा = प्राप्य, यौवनेन = तारुणेन, विलसन्तं = शोभमानं, कृत्येषु = कार्येषु, अनलसम् = आलस्यरहितं, तं पूर्वोक्तं, कुमारनिकरं = कुमारसमूहं, निरीक्ष्य = दृष्ट्वा, सः, महीवल्लभः = राजा, राजहंसः, अहं, शत्रुजनदुर्लभः = वैरिलोकदुर्धर्षः इति त्र एवं, विचार्य अमन्दम् = अनल्पं, परमानन्दम् = उत्कृष्टहर्षम्, अविन्दत = लब्धवान् ।।80।।

भावार्थः- इस प्रकार इकट्ठे हुए कुमारसमूहके साथ बलक्रीड़ाओंका अनुभव करते हुए अनेक वाहनोंकी सवारी किये हुए राजवाहनने क्रमपूर्वक चूड़ाकर्म और उपनयन आदि संस्कारोंको प्राप्त किया। तब समस्त लिपियों का ज्ञान, समस्त देशोंकी भाषाओं में पाण्डित्य, छःअंगोंके साथ वेदोंके समूहमें पाण्डित्य, काव्य, नाटक, आख्यानक, आख्यायिका, इतिहास, विचित्र कथा, अथवा चित्र और कथा इनके साथ पुराण समूहोंमें प्रवीणता, धर्मशास्त्र, शब्द (व्याकरणशास्त्र), ज्योतिशास्त्र, तर्क (न्यायशास्त्र), मीसांसा (पूर्वमीसांसा और उत्तरमीसांसा), इत्यादि संपूर्णशास्त्र-समूहमें चतुरता, कौटिल्य और कामन्दक आदिसे रचित नीतिसमूहमें कुशलता, बीन आदि सम्पूर्ण वाद्योंके बजानेमें निपुणता, संगीत और साहित्यसे मनोहारित्व, मणि, मन्त्र और औषध आदि मायाविस्तारमें प्रसिद्धि, हाथी और घोड़ा आदि वाहनोंकी सवारीमें कुशलता, अनेक प्रकार के हथियारोंके चलानेमें ख्याति, चोरी और जूआ आदि कपट-कलाओंमें प्रौढ़ि, इन सब विषयोंका विशेषज्ञ आचार्योंसे अच्छे प्रकार से प्राप्त कर जवानीसे शोभित होते हुए और कार्यों में आलस्य न करनेवाले उस कुमारसमूहको देखकर राजा राजहंसने ”शत्रुजन मुझे नहीं पा सकते हैं” ऐसा सोचकर अतिशय उत्कृष्ट आनन्दको प्राप्त किया ।।80।।

2.4 सारांशः-

इस इकाई में दशकुमारचरितम् के प्रथम उच्छ्वास में वर्णित कथा प्रसंग से आप जान चुके हैं कि दण्डी की गद्य रचना बहुल समाज शैली से युक्त है, दण्डी ने गौड़ी रीति का अधिक प्रयोग किया है । इसमें नायक राजवाहन आदि दशकुमार हैं । राजवाहान धीरोदात्त नायक है । अवन्तिसुन्दरी स्वकीया मध्या नायिका है । ये दोनों आलम्बन विभाव हैं। बसन्तऋतु, चन्द्र आदि उद्दीपन विभाव हैं। निर्वेद आदि व्यभिचारी भाव है । रति स्थाई भाव है । संयोग श्रृंगार प्रधान रस है, वीर आदि रस अंगी

हैं, रीति प्राय: वैदर्भी है, गुण प्रसाद है। साथ ही प्रथम उच्छवास में वर्णित वृतान्त का सम्यक रूप से विवेचन किया गया है।

2.5 शब्दावली:-

त्रिविक्रम	=	भगवान वामन को कहते हैं।
स्रग्धरा	=	छन्द का एक भेद।
रत्नाकर	=	समुद्र
समीर	=	हवा
देवमार्ग	=	आकाश
मगधेश्वर	=	राजा राजहंस
मालवनाथ	=	मानसार
उन्मूलन	=	जड़ से

2.6 बोध प्रश्न:-

अभ्यास प्रश्न 1-

(1) बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1. दशकुमारचरितम् की पूर्वपीठिका में कितने उच्छवासों में विभक्त किया गया है

(क) तीन उच्छवास (ख) चार उच्छवास

(ग) आठ उच्छवास (घ) पांच उच्छवास

2. दशकुमारचरितम् के मंगलाचरण में किसकी स्तुति की गई है।

(क) गणेश (ख) विष्णु

(ग) भगवान त्रिविक्रम (घ) इनमें से कोई नहीं

3. पुष्पपुरी नामक नगर किस देश में स्थित है।

(क) मगधदेश (ख) नालन्दा

(ग) मालवदेश (घ) इनमें से कोई नहीं

4. पुष्पपुरी के राजा का क्या नाम है।

(क) मानसार (ख) राजवाहन

(ग) राजा राजहंस (घ) पुष्पोद्भव

5. राजा राजहंस की पत्नी का क्या नाम है।

(क) चन्द्रवदना (ख) वसुमती

(ग) बालचन्द्रिका (घ) शकुन्तला

6. राजहंस के कितने अमात्य है।

(क) तीन (ख) चार

(ग) दो (घ) आठ

7. सितवर्मा के पुत्र का क्या नाम है। सुमति सत्य वर्मा को को दोनों इनमें से कोई नहीं

(क) सत्यवर्मा (ख) सुमति

(ग) क एवं ख दोनों (घ) इनमें से कोई नहीं

8. धर्मपाल के कितने पुत्र हैं।

(क) तीन पुत्र (ख) चार पुत्र

(ग) एक (घ) इनमें से कोई नहीं

9. पद्मोद्भव के कितने पुत्र हैं।

(क) तीन पुत्र (ख) चार पुत्र

(ग) दो पुत्र (घ) इनमें से कोई नहीं

10. सत्यवर्मा किस लिए देशान्तर पर गए।

(क) तीर्थयात्रा हेतु (ख) देशाटन हेतु

(ग) व्यापार हेतु (घ) इनमें से कोई नहीं

11. रत्नोद्भव किस विधा में निपुण हैं।

(क) वाणिज्य में (ख) कला में

(ग) देशाटन में (घ) इनमें से कोई नहीं

12. मालवेश्वर का क्या नाम है।

(क) मानसार (ख) राजहंस

(ग) प्रहारवर्मा (घ) इनमें से कोई नहीं

13. मगधनायक ने किस पर आक्रमण किया।

(क) प्रहारवर्मा (ख) राजहंस

(ग) मालवेश्वर मानसार (घ) इनमें से कोई नहीं

14. राजहंस का जन्म किस वंश में हुआ।

(क) सूर्यवंश (ख) सोमवंश

(ग) चन्द्र वंश (घ) इनमें से कोई नहीं

15. राजा राजहंस के पुत्र का क्या नाम था। राज वाहन

(क) राजवाहन (ख) सुमित्र

(ग) मानसार (घ) इनमें से कोई नहीं

16. सुमित्र के पुत्र का क्या नाम है। मित्र गुप्त

(क) मित्रगुप्त (ख) राजवाहन

(ग) मानसार (घ) विश्रुत

17. सुश्रुत के पुत्र का क्या नाम है।

(क) मित्रगुप्त (ख) राजवाहन

(ग) मानसार (घ) विश्रुत

18. मिथिलेश्वर का क्या नाम है।

(क) प्रहारवर्मा (ख) राजवाहन

(ग) मानसार (घ) विश्रुत

19. प्रथम उच्छवास का क्या नाम है।

(क) कुमारोत्पत्तिर्नाम (ख) द्विजोपकृतिर्नाम

(ग) सोमदत्तचरित (घ) इनमें से कोई नहीं

20. दशकुमारचरितम् के मंगलाचरण में कौन सा छन्द है।

(क) आर्या (ख) उपजाति

(ग) इन्द्रवज्रा (घ) स्रग्धरा

(2) निम्न वाक्यों में सही के सामने (√) और गलत के सामने (×) का चिन्ह लगायें:-

1. धर्मपाल, पद्मोद्भव,सितवर्मा ये राजा राजहंस के अमासत्य हैं। ( )
2. सुमन्त्र, सुमित्र, कामपाल ये पद्मोद्भव के तीन पुत्र हैं। ( )
3. सुश्रुत, रत्नोंद्भव ये धर्मपाल के दो पुत्र हैं। ( )
4. सत्यवर्मा धर्मशील स्वभाव के अमात्य हैं। ( )
5. राजहंस के साथ मानसार को युद्ध में पराजय प्राप्त हुई। ( )
6. सुमति, सुमित्र, सुमन्त्र, सुश्रुत ये राजहंस के चार मंत्री हैं। ( )
7. सुमन्त्र, सुमित्र, कामपाल ये धर्मपाल के तीन पुत्र हैं। ( )
8. सुश्रुत, रत्नोंद्भव ये पद्मोद्भव के दो पुत्र हैं। ( )
9. त्रियाणां भुवनानां समाहार: त्रिभुवनं ( )

10. दशकुमारचरितम् के मंगलाचरण में दण्ड शब्द दस बार आया है। ( )

(3) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. ब्रह्माण्डच्छत्रदण्डः शतधृतिभवनाम्भोरुहो ....।
2. संख्यापूर्वे...।
3. तस्य .... सुमतिलीलावतीकुलशेखरमणी रमणी बभूव।
4. .... प्रकृतस्य परात्मना इति।
5. .... वाणिज्यनिपुणतया पारावारतरणमकरोत्।

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास - उमाशंकरशर्मा 'ऋषि'।
2. संस्कृत वांगमय का वृहद् इतिहास - पं० बलदेव उपाध्याय।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास - कन्हैया लाल पोद्दार।
4. संस्कृत साहित्य का इतिहास - पद्मभूषण आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
5. संस्कृत साहित्य का आधुनिक इतिहास - डा0 राधावल्लभ त्रिपाठी, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी।

2.8 अन्य सहायक पुस्तकें:-

1. दशकुमारचरितम् - महाकवि दण्डी, नारायण राम आचार्य, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
2. दशकुमारचरितम् - आचार्य शेशराज शर्मा, 'रेग्मी' चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी।
3. दशकुमारचरितम् - महाकवि दण्डी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।
4. दशकुमारचरित - आचार्य दण्डी।
5. संस्कृतसुकवि - आचार्य बलदेव उपाध्याय।

2.9 बोध प्रश्नों के उत्तर:-

(1) बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1. (क)	2. (ग)	3. (क)	4. (ग)	5. (ख)
6. (क)	7. (ख)	8. (क)	9. (ग)	10. (क)
11. (क)	12. (क)	13. (ग)	14. (ख)	15. (क)
16. (क)	17. (घ)	18. (क)	19. (क)	20. (घ)

(2).

1. सही	2. गलत	3. गलत	4. सही	5. सही
6. गलत	7. सही	8. सही	9. सही	10. गलत

(3).

1. नालदण्डः 2. द्विगु 3. वसुमती नाम 4. भवेत्संभावनोत्प्रेक्षा

5. रत्नोद्भवोऽपि

2.10 निबन्धात्मक प्रश्नः-

1. दशकुमारचरितम् के प्रथम उच्छवास का कथासार लिखिए।
2. राजा राजहंस एवं वसुमती का परिचय दीजिए।
3. दशकुमारचरितम् के मंगलाचरण की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

खण्ड-द्वितीय, इकाई-3
द्वितीय उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 द्वितीय उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)
3.4 सारांश
3.5 शब्दावली
3.6 बोध प्रश्न
3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.8 अन्य सहायक पुस्तकें
3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावनाः-

प्रिय शिक्षार्थियो !

स्नातकोत्तर द्वितीय प्रश्नपत्र, गद्य एवं पद्य काव्य से सम्बन्धित यह द्वितीय खण्ड की तृतीय इकाई है। दशकुमारचरितम् संस्कृत वाड्मय की अनुपम निधि है। आचार्य दण्डी की यह एक सशक्त रचना है। इससे पूर्व की इकाई में आपने दसों कुमारों की जन्म, उनकी शिक्षा आदि के बारे में अध्ययन किया। इस इकाई में आप राजहंस को वामदेव का सुझाव–राजकुमारों की दिग्विजय यात्रा–ब्राह्मण मातंग का वर्णन–राजवाहन का मित्रों को छोड़कर जाना–कुमारों का राजवाहन को खोजने का वर्णन–राजवाहन और मातंग की यात्रा – उनके विक्षोभ एवं पुनर्मिलन के वर्ण्य विषय के बारे में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

3.2 उद्देश्यः-

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप—

- ❖ कुमारों के दिग्विजय यात्रा के बारे में जान पाएंगे।
- ❖ राजवाहन का अपने कुमार मित्रों से विक्षोप प्रसंग को जान पाएंगे।
- ❖ राजवाहन और मातंग की यात्रा के बारे में जान पाएंगे।
- ❖ राजवाहन एवं सोमदत्त के वार्ता प्रसंग को जान पाएंगे।

3.3 द्वितीय उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)

1. अथैकदा वामदेवः सकलकलाकुशलेन कुसुमसायकसंशयितसौन्दर्येण कल्पितसौदर्येण साहसापहसितकुमारेण सुकुमारेण जयध्वजातपवारणकुलिशाङ्कितकरेण कुमारनिकरेण परिवेष्टितं राजानमानतशिरसं समभिगम्य तेन तां कृतां परिचर्यामङ्गीकृत्य निजचरणकमलयुगलमिलन्मधुकरायमाणकाकपक्षं विदलिष्यमाणविपक्षं कुमारचयं गाढमालिङ्ग्य मितसत्यवाक्येन विहिताशीरभ्यभाषत।

प्रसंगः- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने वामदेव ऋषि का सौन्दर्य वर्णन एवं राजहंस से वार्ता का वर्णन किया है।

व्याख्याः- अथ = अनन्तरम्, एकदा = एकस्मिन्, समये, वामदेवः = तन्नामा तपोनिधिः, सकलकलासु = (समस्तनृत्यगीतादिशिल्पेषु), कुशलेन = (निपुणेन), कुसुमसायके = (कुसुमेषौ,

कामदेव इति भावः) संशयित = (सन्दिग्धम्), सौन्दर्यं = (शोभनत्वम्) यस्य, तेन। यस्य सौन्दर्यं दृष्ट्वाऽयं कामदेव इति सन्देहो भवतीति भावः। कल्पितं = (कल्पनाविषयीकृतम्), सौदर्यं = (सहोदर, भ्रातृत्वम्) येन, तेन। साहसेन = (पराक्रमेण) अपहसितः = (हास्यविषयीकृतः), कुमारः = (कार्तिकेयः) येन, तेन, कुमारादप्यधिकसाहसयुक्तेनेति भावः।

सुकुमारेण = कोमलेन, जयध्वजः = (विजयपताका) आतपवारणम् = (आतपत्रं, छत्रमिति भावः), कुलिशं = (वज्रम्), तैः अङ्कितौ = (चिह्नितौ), करौ = (हस्तौ), यस्य तेन। तादृशेन कुमारनिकरेण = राजवाहनादिकुमारसमूहेन, परिवेष्टितं = परिवृत्तम्, आनतशिरसं = (प्रणतमस्तकं, कृतप्रणाममिति भावः), राजानं = भूपं, राजहंसम्, अभिगम्य = उपसृत्य। तेन = राज्ञा, कृतां = विहितां, तां = प्रणामादिरूपां, परिचर्यां = सेवाम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य, निजं = (स्वकीयम्) यत् चरणकमलयुगलं = (पादपद्मयुग्मम्) तस्मिन् मिलन्तः = (संबध्नन्तः), मधुकरायमाणा = (भ्रमरवदाचरन्तः), काकपक्षाः = (शिखण्डकाः) यस्य, तम्।

विदलिष्यमाणाः = (पराजेष्यमाणाः), विपक्षाः = (शत्रवः) येन तम्। तादृशं, कुमारचयं = राजवाहनप्रभृतिकुमारसमूह, गाढं = दृढम्, आलिङ्ग्य = आश्लिष्य, मितं = (परिमितं, स्वल्पमिति भावः), यत्सत्यवाक्यं = (तथ्यपदसमूहः), तेन। विहिताशीः = कृताशीर्वचनः सन्। अभ्यभाषत = बभाषे॥1॥

भावार्थः- तब एक दिन वामदेव मुनि ने समस्त कलाओं में निपुण, कामदेव में सन्दिग्ध सौन्दर्यवाले, सहोदर (सगे) भाई सरीखे, साहस से कार्तिकेय का भी उपहास करने वाले, सुकुमार, जयपताका, छत्र और वज्र से चिह्नित हाथों वाले वैसे कुमारसमूह से घिरे गये तथा प्रणाम करने वाले राजा के सम्मुख जाकर उनसे की गई प्रणाम आदि सेवा को स्वीकार कर अपने दो चरणों में पड़ने से भ्रमर के सदृश केशों से युक्त कालान्तर में शत्रुओं को पराजित करने वाले ऐसे कुमारसमूह को गाढ़ आलिंगन कर आशीर्वाद देते हुए कहने लगे ॥1॥

2. 'भूवल्लभ, भवदीयमनोरथफलमिव समृद्धलावण्यं तारुण्यं नुतमिन्नौ भवत्पुन्नोऽनुभवति। सहचरसमेतस्य नूतमेतस्य दिग्विजयारम्भसमय एषः। तदस्य सकलक्लेशसहस्य राजवाहनस्य दिग्विजयप्रयाणं क्रियताम्' इति।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजवाहन के दिग्विजय यात्रा का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- भूवल्लभ = हे पृथिवीप्रिय!, हे पृथ्वीपते इति भावः। नुतानि = (स्तुतानि), मित्राणि = (सखायः) यस्य सः। भवत्पुत्रः = त्वत्तनयः, भवदीयः = (भावत्कः) यो मनोरथः = (अभिलाषः) तस्य फलम् = (सुपरिणामम्) इव। समृद्धम् (सम्यग्वृद्धम्), लावण्यं = (सौन्दर्यम्) यस्मिंस्तत्। तादृशं तारुण्यं = यौवनम्, अनुभवति = उपभुङ्क्ते। सहचरैः = (सुहृद्भिः), समेतस्य = (सहितस्य), एतस्य = राजवाहनस्य, एषः = अयं, दिग्विजयस्य = (काष्ठाजयस्य), आरम्भस्य = (उपक्रमस्य), समयः = (कालः),तत् = तस्मात्कारणात्, सकलक्लेशसहस्य = समस्तकष्टसहनसमर्थस्येति भावः, अस्य, राजवाहनस्य = भवत्पुत्रस्य। दिग्विजयप्रयाणं = काष्ठाविजययात्रा। क्रियतां = विधीयताम्।।2।।

भावार्थः- 'राजन्! प्रशंसित मित्रों वाले आपके पुत्र (राजवाहन) आपके मनोरथ के फल के समान समृद्ध सौन्दर्य वाले यौवन का अनुभव कर रहे हैं। निश्चय ही सहचरों के साथ उनका यह दिग्विजय के आरम्भ का समय है। इस कारण समस्त क्लेशों के सहने में समर्थ इनकी आप दिग्विजय के लिए यात्रा करावें।।2।।

3. कुमारा माराभिरामा रामाद्यपौरुषा रुषा भस्मीकृतारयो रयोपहसितसमीरणा रणाभियानेन याने अभ्युदयाशंसं राजानमकार्षुः। तत्साचिव्यमितरेषां विधाय समुचितां बुद्धिमुपदिश्य शुभे मुहूर्ते सपरिवारं कुमारं विजयाय विससर्ज।

प्रसंगः- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में राजवाहन के शुभ मुहूर्त में दिग्विजय पर जाने का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्याः- कुमारा = कुमारगणाश्चराजवाहनं, माराऽभिरामाः = कामसमसुन्दराः, रामः = (रघुनाथः), आद्यः = (प्रथमः) येषां ते, तेषाम् इव पौरुषं = (पुरुषाऽर्थः) येषां ते, रुषा = कोपेन हेतुना, भस्मीकृताः = (भस्मीकृताः, विनाशिता इति भावः) अरयः = (शत्रवः) यैस्ते। रयेण = (वेगेन), उपहसितः = (उपहासविषयीकृतः, तिरस्कृत इति भावः) समीरणः = (वायुः) यैस्ते। तादृशाः कुमाराः = राजवाहनादयः। रणे = (युद्धे) अभिमानं = (सम्मुखगमनम्) यस्मिंस्तेन, यानेन = यात्रया। राजानं = नृपं, राजहंसम्, अभ्युदयस्य = (उन्नतेः), आर्शसा = (प्राप्तीच्छा) यस्य, तम्। अकार्षुः = कृतवन्तः, इतरेषाम् = अन्येषाम्। तस्य = (राजवाहनस्य), साचिव्यं = (मन्त्रित्वं, तत्सहायकत्वमिति भावः), विधाय = कृत्वा। समुचितां = योग्यां, यात्रार्थमिति शेषः। बुद्धिं = ज्ञानम्, उपदिश्य = उपदेशं कृत्वा। शुभे = शोभने। मुहूर्ते = समयविशेषे, सपरिवार = सपरिजनं, कुमारं = राजवाहनं, विजयाय = विजेतुम्, विससर्ज = विसृष्टवान् (पेषयामास), राजहंस इति शेषः।।3।।

भावार्थ:- कामदेव के समान सुन्दर, रामचन्द्र आदि के समान पराक्रम वाले, क्रोध से शत्रुओं को भस्म (संहार) करनेवाले और वेग से वायु का उपहास करने वाले कुमारगण ने रण में संमुख गतिवाली विजययात्रा से राजा को उन्नतिप्राप्ति की आशा से युक्त कर दिया। राजा ने अन्य मन्त्रिपुत्रों को राजवाहन का सचिव (मन्त्री, सहचर) बनाकर यात्रा के लिए उचित ज्ञान का उपदेश कर शुभ मुहूर्त में परिवार के साथ राजकुमार (राजवाहन) को विजययात्रा के लिए भेज दिया।।3।।

4. राजवाहनो मङ्गलसूचकं शुभशकुनं विलोकयन्देश कञ्चिदतिक्रम्य विन्ध्याटवीमध्यमविशत्। तत्र हेतिहतिकिणाङ्कं कालायककर्कशकार्यं यज्ञोपवीतेनानुमेयविप्रभावं व्यक्तकिरातप्रभावं लोचनपरुषं कमपि पुरुषं ददर्श।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने मंगल सूचक शुभ लक्षणों का वर्णन तथा विंध्याटवी प्रस्थान वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- राजवाहनः = राज्ञः, मङ्गलसूचक = शुभफलज्ञापकं, शुभशकुनं, मङ्गलनिमित्तं, विलोकयन् = पश्यन्। कंचित् = अज्ञातनामधेयं, देशं = जनपदम्, अतिक्रम्य = गत्वेति भावः। विन्ध्याऽटवीमध्यं = दक्षिणशैलान्तरम्, अविशत् = प्रविष्टः, तत्र = विन्ध्याऽटवीमध्ये। हेतिभिः = (शस्त्रैः) या हतिः = (प्रहारः), तस्याः किणाः = (व्रणाः), तेषाम् अङ्कः = (चिह्नानि) यस्मिन्, कालायसम् = (लोहः) इव, कर्कशः = (कठोरः), कायः = (शरीरम यस्य, तम्)।

यज्ञोपवीतेन = ब्रह्मसूत्रेण। अनुमेयः = (अनुमातुं योग्यः), विप्रभावः = (ब्राह्मणत्वम्) यस्य, तम्। व्यक्तः = (स्फुटः), किरातप्रभावः = (वनचरविशेषबलम्) यस्य, तम्। लोचनयोः = (नेत्रयोः), परुषम् = (कठोरम्)। कमपि = अज्ञातनामानं, पुरुषं = पुमांसं, ददर्श = दृष्टवान् ।।4।।

भावार्थ:- राजवाहन ने मङ्गलसूचक शुभ शकुन को देखते हुए कुछ रास्ता पार कर विन्ध्य पर्वत के वन के मध्य में प्रवेश किया। वहाँ हथियार के आघात के व्रणरूप चिह्नवाले, लोहे के समान कठोर शरीरवाले और यज्ञोपवीत (जनेऊ) से ब्राह्मणत्वका अनुमान किये जानेवाले तथा किरात के समान बल जिनमें स्पष्ट था, ऐसे तथा नेत्रों में कठोर ऐसे किसी पुरुष को देखा ।।4।।

5. तेन विहितपूजनो राजवाहनोऽभाषत-'ननु मानव! जनसङ्गरहिते मृगरहिते घोरप्रचारे कान्तारे विन्ध्याटवीमध्ये भवानेकाकी किमिति निवसति ? भवदंसोपनीतं यज्ञोपवीतं भूसुरभावं द्योतयति। हेतिहतिभिः किरातरीतिरनुमीयते। कथय किमेतद् ? इति।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में मातंग नामक उस किरात का वृत्तान्त प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- तेन = पूर्वोक्तपुरुषेण, विहितं = (कृतम्), पूजनं = (पूजा, सत्कार इति भावः) यस्य सः। राजवाहनः = राजपुत्रः, अभाषत = भाषितवान्। नन्विति = वाक्यारम्भे, मानव! =हे मनुज, जनानां = (नराणाम्), सङ्गेन = (सङ्गमेन), रहिते = (वर्जिते), मृगेभ्यः = (पशुभ्यः), हिते = (अनुकूले), घोरप्रचारे- घोरः = (भयङ्करः), प्रचारः = (संचारः) यस्मिन्, तस्मिन्। विन्ध्याऽटवीमध्ये = विन्ध्यवनाऽन्तरे। कान्तारे = दुर्गममार्गे, भवान्, एकाकी = एककः, किमिति = केन कारणेन, निवसति = निवास करोति। भवदंसे = (त्वत्स्कन्धे), उपनीतं = प्रापितम्, यज्ञोपवीतं = ब्रह्मसूत्रं, भूसुरभावं = ब्राह्मणत्वं, द्योतयति = सूचयति। हेतिहतिभिः = शस्त्रप्रहारैः, तच्चिह्नैरिति भावः। किरातरीतिः = वनचरस्वभावः, अनुमीयते = ऊह्यते, तत्र्क्यत इति भावः। एतत् = इदं, किं, कथय = ब्रूहि। इति॥5॥

भावार्थ:- उस से पूजित होकर राजवाहन ने कहा- हे मानुष! मनुष्योंके समागमसे रहित, पशुओंको हितकारक, भयंकर संचारवाले दुर्गम रास्तेमें विन्ध्यपर्वत के वन के बीच मार्ग में आप क्यों अकेले निवास कर रहे हैं? आपके कन्धे में रक्खा गया यज्ञोपवीत आपके ब्राह्मणत्वका प्रकाश कर रहा है। हथियारोंके आघातके चिह्नोंसे किरात के स्वभाव का भी अनुमान किया जाता है। कहिए, यह क्या बला है? ॥5॥

6. 'तेजोमयोऽयं मानुषमात्रपौरुषो नूनं न भवति' इति मत्वा स पुरुषस्तद्वयस्यमुखान्नामजनने विज्ञाय तस्मै निजवृत्तान्तमकथयत्-'राजनन्दन! केचिदस्यामटव्यां वेदादिविद्याभ्यासमपहाय निजकुलाचारं दूरीकृत्य सत्यशौचादिधर्मव्रातं परिहृत्य किल्बिषमन्विष्यन्तः पुलिन्दपुरोगमास्तदन्नमुपभुंजाना बहवो ब्राह्मणब्रुवा निवसन्ति। तेषु कस्यचित्पुन्नो निन्दापात्रचरित्रो मातङ्गो नामाहं सह किरातबलेन जनपदं प्रविश्य ग्रामेषु धनिनः स्त्रीबालसहितानानीयाटव्यां बन्धने निधाय तेषां सकलधनमपहरन्नुद्धृत्य वीतदयो व्यचरम्। कदाचिदेकस्मिन्कान्तारे मदीयसहचरगणेन जिघांस्यमान भूसुरमेकमवलोक्य दयायत्तचित्तोऽब्रवम् 'ननु पापाः! न हन्तव्यो ब्राह्मण:' इति।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने किरात एवं राजवाहन की वार्ता का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तेजोमयः = प्रचुरतेजः सम्पन्नः, अयं = निकटवर्तीपुरुषः, मानुषमात्रं = (मनुष्यप्रमाणम्) पौरुषं = (पराक्रमः) यस्य सः। नूनं = निश्चयेन, न भवति = नो विद्यते। इति = इत्थं, मत्वा = ज्ञात्वा,

सः = पूर्वोक्तः, पुरुषः = पुमान्। तस्य = (राजवाहनस्य), वयस्यमुखात् = (सवयोवदनात्, नामजनने = नामधेयजन्मनी, विज्ञाय = बुद्ध्वा, राजवाहनस्येति भावः। तस्मै = राजवाहनाय, निजवृत्तान्तं = स्वोदन्तम्, अकथयत् = कथितवान्, राजनन्दन = हे राजकुमार!, अस्याम् = एतस्याम्, अटव्यां = वने, केचित्, वेदादयः = (श्रुत्यादयः), या विद्याः = (शास्त्राणि), तासाम् अभ्यासम् = (अभ्यसनम्, आवृत्तिमिति भावः) अपहाय = त्यक्तवा, निजं = (स्वकीयम्), कुलाचारं = (वंशधर्मम्), दूरीकृत्य = पृष्ठतः कृत्वा। सत्यशौचादयः = (तथ्यपवित्रतादयः) ये धर्माः = (सदाचाराः) तेषां व्रातं = (समूहम्) परिहृत्य = परित्यज्य। अतः किल्बिषं = पापम्। अन्विष्यन्तः = मार्गयन्तः। पुलिन्दपुरोगमाः = म्लेच्छजातिविशेषनेतारः, सन्तीविशेषः। तदन्नं = पुलिन्दपुरोगमान्नम्, उपभुंजानाः = भक्षयन्तः, बहवः = अनेके, ब्राह्मणब्रुवाः = विप्राधमाः, निवसन्ति = निवासं कुर्वन्ति। तेषु = ब्राह्मणब्रुवेषु, कस्यचित् = ब्राह्मणब्रुवस्य, पुत्रः = तनयः, निन्दापात्र = (कुत्साभाजनम्), चारित्र = (चरितम्), यस्य सः। मातङ्गो नाम = नाम्ना मातङ्गः, अहं किरातबलेन = वनचरसैन्येन, सह = समं, जनपदं = देशं, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा। स्त्रीबालसहितान् = नारीपुत्रसमेतान्। धनिनः = इभ्यान्। अटव्यां = बने, बन्धने निधाय = कारागृहे क्षिप्त्वा, तेषां = धनिनां, सकलधनं = समस्तद्रव्यम्, अपहरन् = मुष्णन्, उद्धत्य = उन्मूल्य। वीता = (अपगता), दया = (करुणा), यस्मात्सः। व्यचरं = विचरणम् अकरवम्। कदाचित् = जातुचित्, एकस्मिन्, कान्तारे = वने; मदीयः = (मामकः) यः सहचरगणः = (सहगामिसमूहः), तेन। जिघांस्यमानं = हन्तुमिष्यमाणम्, एकम्, भूसुरं = ब्राह्मणम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा। दयायाः = (करुणायाः), आयत्तम् = (अधीनम्), चित्तं = (चेतः) यस्य सः, तादृशः सन्। अब्रवम् = अकथयम्। ननु पापाः = हे पापिनः। ब्राह्मणः = भूसुरः, न हन्तव्यः = नो मारणीयः। इति।।6।।

भावार्थः- 'प्रचुर तेजवाला यह मनुष्यमात्र के समान बलयुक्त निश्चय ही नहीं है' ऐसा सोचकर उस पुरुष ने राजवाहन के मित्रों के मुँह से उनके नाम और उत्पत्ति का वृत्तान्त जानकर उन्हें अपना वृत्तान्त बतलाया। राजकुमार ! इस जंगल में वेद आदि विद्याओंका अभ्यास छोड़कर अपने कुलाचारको दूर कर सत्य और पवित्रता आदि धर्मसमूह छोड़कर पाप का अन्वेषण करते हुए और म्लेच्छ जाति विशेष को अपना नेता बनाने वाले तथा उनके अन्नका उपभोग करने वाले बहुत से अधम ब्राह्मण निवास करते हैं। उनमें किसी का पुत्र, निन्दाका पात्र चरित्रवाला मातंग नामक मैं किरात सैन्य के साथ शहर में घुसकर गांवों में स्त्री और बालकोंके साथ धनियोंको लाकर वनमें उनको बन्धन में डालकर उनका समस्त धन का अपहरण करता हुआ निर्दय होकर उन्मूलन कर विचरण करता था। किसी

समय एक वनमें मेरे सहचरोंसे मारे जाते हुए एक ब्राह्मणको देखकर दयाके अधीन चित्तवाला होकर मैंने कहा-''पापियो! ब्राह्मण को नहीं मारना चाहिये''।।6।।

7. रे रोषारुणनयना मां बहुधा निरभत्र्सयन्। तेषां भाषणपारुष्यमसहिष्णुरहमवनिसुररक्षणाय चिरं प्रयुध्य तैरभिहतो गतजीवितोऽभवम्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने किरात एवं राजवाहन की वार्ता का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- ते = पुलिन्दाः, रोषारुणनयनाः- रोषेण = (कोपेन), अरुणे = (रक्तवर्णे), नयने = (नेत्रे), मां बहुधा = बहुविधम्, बहुभिः प्रकारैः, निरभर्त्सयन् = तर्जितवन्तः। तेषां = पुलिन्दानां, भाषणपारुष्यं = वचनकठोरताम्, असहिष्णुः = सोढुमसमर्थः, अहम्, अवनिसुरस्य = (भूसुरस्य, ब्राह्मणस्य), रक्षणाय = (रक्षितुम्)। चिरं = बहुसमयपर्यन्तं, प्रयुध्य = युद्धं कृत्वा, तैः = पुलिन्दैः, अभिहतः = ताडितः, सन्। गतजीवितः = अपगतप्राणः, अभवम् = अभूवम्।।7।।

भावार्थ:- तब क्रोधे से लाल नेत्रों वाले उन लोगों ने अनेक प्रकार से मेरी भर्त्सना की। उनके भाषण की कठोरता को सहने में असमर्थ होकर उस ब्राह्मण की रक्षा करने के लिए बहुत समय तक लड़कर उन किरातों से आहत (घायल) होकर मैं निष्प्राण हो गया ।।7।।

8. ततः प्रेतपुरीमुपेत्य तत्र देहधारिभिः पुरुषैः परिवेष्टित सभामध्ये रत्नखचितसिंहासनासीनं शमनं विलोक्य तस्मै दण्डप्रणाममकरवम्। सोऽपि मामवेक्ष्य चित्रगुप्तं नाम निजामात्यमाहूय तमवोचत्- 'सचिव! नैषोऽमुष्य मृत्युसमयः। निन्दितचरितोऽप्ययं महीसुरनिमित्तं गतजीवितोऽभूत्। इतः प्रभृति विगलितकल्मषस्यास्य पुण्यकर्मकरणे रुचिरुदेष्यति। पापिष्ठैरनुभूयमानमत्र यातनाविशेषं विलोक्य पुनरपि पूर्वशरीरमनेन गम्यताम्' इति।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में चित्रगुप्त से उस किरात का वृतांत प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- ततः = अनन्तरं, प्रेतपुरीं = प्रेतनगरीं, यमपुरीं संयमिनीमिति भावः। उपेत्य = प्राप्य, तत्र = प्रेतपुर्यां, देहधारिभिः = शरीरधारिभिः, पुरुषैः = पुंभिः, परिवेष्टितं = परिवृत्तं, सभामध्ये = परिषदन्तरे, रत्नखचितं = (मणिप्रत्युप्तम्) यत् सिंहासनं = (भद्रासनम्) तत्र आसीनम् = (उपविष्टम्), शमनं = यमराजं, तस्मै = शमनाय, दण्डप्रणामं = दण्डवद्भूमौ शयित्वा नमस्कारम्, अकरवं = कृतवान्। माम्

अवेक्ष्य = दृष्ट्वा, चित्रगुप्तं नाम = नाम्ना चित्रगुप्तं, निजाऽमात्यं = स्वमन्त्रिणम्, आहूय = आकार्य, तं = चित्रगुप्तम्, अवोचत् = उक्तवान्। सचिव = हे अमात्य!, अमुष्य = मर्त्यलोकस्थस्य, अस्य एषः = अयं, न मृत्युसमयः = नो मरणकालः। निन्दितचरितोऽपि = गर्हितचरित्रोऽपि, अय = ब्राह्मणः, महीसुरनिमित्तं = ब्राह्मणार्थं, गतजीवितः = गतप्राणः। अभूत = अभवत्। इतःप्रभृतिः = अस्मात्कालादारभ्य, विगलितं = (नष्टम्), कल्मषं = (पापम्), यस्य सः, तस्य अस्य = ब्राह्मस्य, पुण्यकर्मकरणे = धर्माचरणे, रुचिः = प्रीतिः, उदेष्यति = उत्पत्स्यते। अत्र = इह, पापिष्ठैः = अतिशयपापैः, अतिशयेन पापाःपाषिष्ठाः, तैः। अनुभूयमान = भुज्यमान, यातनाविशेषं = तीव्रवेदनाविशेषं, विलोक्य = दृष्ट्वा। पुनरपि = भूयोऽपि। अनेन = ब्राह्मणेन, पूर्वशरीरं = प्राचीनशरीरं, गम्यतां = प्राप्यताम, इति।।8।।

भावार्थः- अनन्तपुर प्रेतपुरी को प्राप्त कर वहाँ शरीरधारी पुरुषों से घिरे गये और सभाके बीच में रत्नखचित सिंहासन पर बैठे हुए यमराज को देखकर मैंने उनको दण्डवत् प्रणाम किया । उन्होंने भी मुझे देखकर चित्रगुप्त नामके अपने मन्त्री को बुलाकर उन्हें कहा-मन्त्रीजी! इस (ब्राह्मण) का यह मरण का समय नहीं है। निन्दित चरित्र वाला होकर भी यह ब्राह्मण को बचाने के लिए निष्प्राण हो गया है। इस समय से निष्पाप होने वाले इसकी पुण्यक्रिया के आचरण में रुचि होगी। यहाँ पर पापिष्ठों से अनुभव किये जाने वाले यातना विशेष तीव्र दुःख भेद को देखकर फिर भी यह अपने पूर्व शरीर में चला जाय ।।8।।

9. चित्रगुप्तोऽपि, तत्र तत्र सन्तप्तेष्वायसस्तम्भेषु बध्यमानान्, अत्युष्णीकृते विततशरावे तैले निक्षिप्यमाणान, लगुडैर्जर्जरीकृतावयवान्, निशितटङ्कैः परितक्ष्यमाणानपि दर्शयित्वा पुण्यबुद्धिमुपदिश्य माममुञ्चत्। तदेव पूर्वशरीरमहं प्राप्तो महाटवीमध्ये शीतलोपचारं रचयता महीसुरेण परीक्ष्यमाणः शिलायां शयितः क्षणमतिष्ठम्।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने किरात एवं राज ब्राह्मण की वार्ता का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- चित्रगुप्तोऽपि = यमाऽमात्योऽपि, तत्र तत्र = तस्मिन् तस्मिन् स्थाने, संतप्तेषु = सन्तापयुक्तेषु। आयसस्तम्भेषु = लोहस्थूणासु, बध्यमानान् = नह्यमानान्, अत्युष्णीकृते = अतिसन्तप्तीकृते, विततशराबे = विस्तीर्णमृत्पात्रे, तैले = तिलस्नेहे, निक्षिप्यमाणान् = न्यस्यमानान्। लगुडैः = यष्टिभिः, जर्जरीकृताऽवयवान्- जर्जरीकृताः = (जीर्णीकृताः), अवयवाः = (अङ्गानि) येषां

तान्। निशितटङ्कैः = तीक्ष्णपाषाणदारणैः, परितक्ष्यमाणान् = तनूक्रियामाणान्, तादृशान्पापान्, अपि, दर्शयित्वा = प्रदर्श्य, पुण्यबुद्धिं = सुकृताचरणमतिम्, उपदिश्य = उपदेशं कृत्वा। माम्, अमुंचत् = मुक्तवान्, तदेव = पुर्वोक्ते, पूर्वशरीरं = प्राक्तनदेहं, प्राप्तः = आसादितः अहं, महाटवीमध्ये = महाटव्याः = (अरण्यान्याः), मध्ये = (अन्तरे), शीतलोपचारं = शीतद्रव्यप्रयोगं, रचयता = कुर्वता, महीसुरेण = ब्राह्मणेन, परीक्ष्यमाणः = अयं जीवति वा नवेति क्रियमाणा परीक्षा इति भावः। शिलायां = पाषाणे, शायितः = स्थापितः, क्षणं = कंचित्कालं, अतिष्ठं = स्थितवान् ।।9।।

भावार्थ:- चित्रगुप्त ने भी अनेक स्थानों में गर्म किये गये लोहे के स्तम्भों में बांधे जाते हुए, अत्यन्त गर्म किये गये फैले हुए मिट्टीके बर्तनों में रक्खे गये तैलमें डाले जाते हुए, लाठियोंसे चूर-चूर किये गये अंगों वाले, तीखे पाषाणदारणोंसे छीले जाते हुए ऐसे पापियोंको भी दिखला कर पुण्य करनेकी बुद्धिका उपदेश कर मुझे छोड़ दिया। उसी पहलेके शरीरको प्राप्त मैं महावन के बीच में शीतल उपचार की रचना करते हुए (उसी) ब्राह्मण से ''यह जीयेगा कि नहीं'' ऐसी परीक्षा किया जाकर तथा शिलातलमें लिटाया जाता हुआ मैं कुछ समय तक वहीं रहा ।।9।।

10. तदनु विदितोदन्तो मदीयवंशबन्धुगणः सहसागत्य मन्दिरमानीय मामपक्रान्तव्रणमकरोत्। द्विजन्मा कृतज्ञो मह्यमक्षरशिक्षां बिधाय विविधागमतन्त्रमाख्याय कल्मषक्षयकारणं सदाचारमुपदिश्य ज्ञानेक्षणगम्यमानस्य शशिखण्डशेखरस्य पूजाविधानमभिधाय पूजां मत्कृतामङ्गीकृत्य निरगात्।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में किरात एवं राज ब्राह्मण की वार्ता का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- तदनु = तदनन्तरं, विदितोदन्तः = ज्ञातवृत्तान्तः, मदीयः = (मत्सम्बन्धी), वंशबन्धुगणः = (कुलबान्धवसमूहः), सहसा = अतर्कित एव। आगत्य = आगमनं कृत्वा। मन्दिरं = गृहम्, आनीथ = आनयनं कृत्वा, माम्, अपक्रान्तव्रणम् = अपक्रान्ताः (चिकित्सिताः), व्रणाः = (प्रहारस्थानानि), यस्य तम्, अकरोत् = कृतवान्। द्विजन्मा = ब्राह्मणः, द्वे = (उभे, गर्भतः संस्कारश्च), जन्मनी = (उत्पत्ती) यस्य सः। कृतज्ञः = विहितवेदी, मत्कृतोपकाराऽभिज्ञ इति भावः, मह्यं = क्रियाग्रहणाच्चतुथी। अक्षरशिक्षां = वर्णोपदेशं, विधाय = कृत्वा। विविधाममानाम् = (अनेकशास्त्राणाम्), तन्त्रम् = (सिद्धान्तम्), आख्याय = कथयित्वा। कल्मषस्य = (पापस्य) यः क्षयः = (नाशः) तस्य कारणं = (हेतुम्), सदाचारं = सताम् (शिष्टानाम्), आचारम् = (क्रियमाण धर्मम्), उपदिश्य = उपदेशं कृत्या। ज्ञनेक्षणेन = (बोधरूपनयनेन), गम्यमानस्य = (प्राप्यमाणस्य) न तु चर्मचक्षुषेति भावः। शशिखण्डः = (अर्धचन्द्रः) शेखरः = (शिरोभूषणम्) यस्य, तस्य, शङ्करस्येति

भावः, पूजाविधानम् = अर्चनविधिम्, अभिषाय = उक्त्वा। मत्कृतां = मद्विहिताम्, पूजां = सपर्याम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य। निरगात् = निर्गतः।।10।।

भावार्थ:- तदनन्तर यह वृत्तान्त जानकर मेरे कुल के बन्धुगणने सहसा आकर मुझे घर में ले जाकर मेरे व्रणों की चिकित्सा की। वे ब्राह्मण कृतज्ञ होकर मुझे अक्षरशिक्षा देकर अनेक शास्त्रोंका सिद्धान्त बतलाकर पापक्षयका कारण शिष्टों के आचार का उपदेश कर ज्ञानरूप नेत्रसे प्राप्य चन्द्रखण्ड-शिरोभूषण वाले महादेव का पूजा विधान बतलाकर मुझसे किये गये सत्कार को स्वीकार कर चले गये ।।10।।

11. तदारभ्याह किरातकृतससर्गं बन्धुवर्गमृत्सृज्य सकललोकैकगुरुमिन्दुकलावतंसं चेतसि स्मरन्नस्मिन्कानने दूरीकृतकलङ्को वसामि। 'देव! भवते विज्ञापनीय रहस्यं किञ्चिदस्ति। आगम्यताम्' इति।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने मातंग एवं राजवाहन की वार्ता का वर्णन किया है ।

व्याख्या:- तदा = तस्मिन्काले, आरभ्य = आरम्भं कृत्वा। अहं, किरातैः = (वनचरविशेषैः) कृतः = (विहितः), संसर्गः = (सम्पर्कः) येन, तादृशं बन्धुवर्गं = कुटुम्बसमूहम्, उत्सृज्य = त्यक्तवा, सकललोकानाम् = (समस्तजनानाम्), एकगुरुम् = (मुख्यगुरुम्), इन्दुकला = (चन्द्रकला) अवतसः = (शिरोभूषणम्) यस्य, तं, महादेवमिति भावः। चेतसि = चित्ते, स्मरन् = ध्यायन्, अस्मिन्, कानने = वने, दूरीकृतः = (निवारितः), कलङ्कः = (अपवादः) येन सः निष्कलङ्कः = (सन्निति भावः) वसामि = निवासं करोमि। देव = महाराज्! भवते = तुभ्यं, विज्ञापनीयं = निवेदनीयं, किंचित् = किमपि, रहस्य = गोप्यम्, अस्ति = विद्यते। आगम्यताम् = आगमनं क्रियताम्।।11।।

भावार्थ:- उस समयसे आरम्भ कर किरातों से सम्पर्क करनेवाले बन्धुवशके जनोंको छोड़कर सम्पूर्ण लोगोंके एक मात्र गुरु चन्द्रकला का भूषण धारण करने वाले महादेव को चित्त में स्मरण (याद) करता हुआ इस वनमें कलंक (लोकाऽपवाद) को दूर कर निवास कर रहा हूँ। ''राजकुमार! आपको निवेदन करनेके योग्य कुछ रहस्य (गोप्य) विषय है। अत: आप मेरे साथ आइए ।।11।।

12. स वयस्यगणादपनीय रहसि पुनरेनमभाषत-'राजन्! अतीते निशान्ते गौरीपतिः स्वप्नसन्निहितो निद्रामुद्रितलोचनं विबोध्य प्रसन्मवदन कान्तिः प्रश्रयानत मामवोचत्-'मातङ्ग!-दण्डकारण्यान्तरालगामिन्यास्तटिन्यास्तीरभूमौ सिद्धसाध्याराध्यमानस्य स्फटिकलिङ्गस्य पश्चादद्रिपतिकन्यापदपङ्क्तिचिह्नितस्याश्मनःसविधे विधेराननमिव किमपि बिलं विद्यते। तत्प्रविश्य तत्र निक्षिप्तं ताम्रशासनं शासनं विधातुरिव समादाय विधिं तदुपदिष्ट दिष्टविजयमिव विधाय

पातालल‍ोकाधीश्वरेण भवता भवितव्यम्। भवत्साहाय्यकरो राजकुमारोऽद्य श्वो वा समागमिष्यति' इति। तदादेशानुगुणमेव भवदागमनमभूत्। साधनाभिलाषिणो मम तोषिणो रचय साहाय्यम्‘ इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजवाहन का मातंग के साथ वनगमन वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- सः = मातङ्गः, वयस्यगणात् = सुहृत्समूहात्, अपनीय = दूरं नीत्वा, राजवाहनमिति शेषः। रहसि = एकान्ते, पुनः = भूयः, एनं = राजवाहनम्, अभाषत = भाषितवान्। राजन् = देव!, अतीते = अतिक्रान्ते, निशान्ते = निशायाः (रात्रेः), अन्ते = (अवसाने), प्रभातकल्पायां रजन्यामिति भावः। स्वप्ने = (सवेशे), सन्निहितः = (निकटवर्ती), गौरीपतिः = पार्वतीश्वरः, महादेवः। निद्रया = (स्वप्नेन) मुद्रिते = (निमीलिते), लोचने = (नयने) यस्य, तं मामितिं शेषः।

विबोध्य = विबुद्धं (जागरितम्) कृत्वा, प्रसन्ना = (प्रसादयुक्ता), वदनकान्तिः = (मुखशोभा) यस्य सः, तादृशः सन्। प्रश्रयानतं = प्रश्रयेण (विनयेन), आनतम् = (अवनतम्) माम्, अवोचत् = उक्तवान्। दण्डकारण्यस्य = (दण्डकवनस्य) अन्तराले = (मध्ये), गामिन्याः = (गमनशीलायाः), तटिन्याः = (नद्याः), तीरभूमौ = तटभुवि, सिद्धाः = (देवयोनिविशेषाः, अथवा प्राप्तसिद्धयः) साध्याश्च = (गणदेवाश्च) तैः आराध्यमानस्य = (पूज्यमानस्य)। स्फटिकलिंगस्य = स्फटिकनिर्मितलिंगस्य, मद्विग्रहस्येति भावः। पश्चात् = पश्चिमे भागे। अद्रिपतेः = (पर्वतराजस्य, हिमालयस्येत्यर्थः) या कन्या = (पुत्री पार्वती) तस्याः पदपङ्क्त्या = (चरणन्यासराज्या) चिह्नितस्य = (अङ्कितस्य) अश्मनः = प्रस्तरस्य, सविधे = समीपे, विधेः = ब्रह्मणः आननं = वदनम्, इव, किमपि = अनिर्वाच्य, बिलं = रन्ध्र, विद्यते = अस्ति। तत् = बिलं, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, तत्र = तस्मिन्बिले, निक्षिप्तं = निहितं, विधातुः = ब्रह्मणः, शासनम् = आज्ञापत्रम् इव, ताम्रशासनं = शुल्ब (पत्त्र) स्थमादेशं, समानाय = संगृह्य, दिष्टविजयं = भाग्यविजयम्, इव।

तदुपदिष्ट = तस्मिन् (ताम्रशासनं), उपदिष्टं = (लिखितम्), विधिं = विधानं बिधाय = कृत्वा। भवता = त्वया, पाताललोकस्य = (अधोभुवनस्य), अधीश्वरेण = (राज्ञा) भवितव्यं = भाव्यम्। भवतः= (तव) साहाय्यकरः = (सहायकः), राजकुमारः = नृपपुत्रः, अद्य = अस्मिन्दिने, श्वः = परदिने, वा, समागमिष्यति = सप्राप्स्यति। तदादेशस्य = (तदाज्ञायाः), अनुगुणम् = (अनुरूपम्) एव भवदागमनं = त्वत्प्राप्तिः, अभूत् = अभवत्। साधनम् = (कार्यसिद्धेरुपकरणम्), अभिलषति = (इच्छति) इति तच्छीलस्तस्य, तोषिणः = सन्तुष्टस्य, मम, साहाय्यं = सहायतां, रचय = कुरु। इति ।12।।

भावार्थ:- मातंग ने मित्रगण से राजवाहन को अलग कर एकान्त में फिर उन को कहा-'हे राजन! बीती हुई रात के अन्त में गौरीपति (महादेव) ने स्वप्न में मेरे पास आकर नींद से मुदी हुई आँखों वाले मुझे जगाकर प्रसन्न मुखकान्तिवाले होकर विनयसे नम्र मुझे कहा- 'दण्डकारण्यके मध्यसे वहने वाली नदीकी तीरभूमिमें सिद्धों और साध्योंसे आराधना किये जानेवाले स्फटिकमयशिवलिंगके पीछे पार्वतीकी चरणन्यासकी पंक्ति से चिह्नित पाषाणके समीप ब्रह्माजीके मुखके सदृश एक बिल है। उसमें प्रवेश कर उसमें रक्खे गये ब्रह्माजी के आज्ञापत्र के समान ताम्रपत्र को लेकर भाग्य विजय के समान उसमें उपदिष्ट विधिका अनुष्ठान कर तुम्हें पाताल लोकका स्वामी होना चाहिये। तुम्हारी सहायता करनेवाला राजकुमार आज या कल आ जायेगा। महादेव जी की आज्ञा के अनुसार ही आपका आगमन हुआ है। सन्तुष्ट और साधनका अभिलाष करनेवाले आप मेरी सहायता करें ॥12॥

13. 'तथा' इति राजवाहनः साकं मातङ्गेन नमित्तोत्तमाङ्गेन विहायार्धरात्रे निद्रापरतन्त्रं मित्रगण वनान्तरमवाप। तदनु तदनुचराः कल्ये साकल्येन राजकुमारमनवलोकयन्तो विषण्णहृदयास्तेषु तेषु वनेतु सम्यगन्विष्यानवेक्षमाणाः एतदन्वेषणमनीषया देशान्तरं चरिष्णवोऽतिसहिष्णवो निश्चितपुनः सकेतस्थानाः परस्परं वियुज्य ययुः।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में राजवाहन का पाताल लोक गमन वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- तथा = तेन प्रकारेण, अस्त्विति शेषः। इति = एवं कथयित्वा राजवाहनः। नमितोत्तमाङ्गेन = अवनतीकृतशिरसा, मातङ्गेन = तन्नाम्ना ब्राह्मणेन, साकं = समम्, अर्धरात्रे = निशीथे, निद्रापरतन्त्रं = स्वापाऽधीन, निद्रितमिति भावः। मित्रगणं = सुहृत्समूहं, विहाय = त्यक्त्वा, वनान्तरम्, अन्यद् = वनम्, अवाप = प्राप। तदनु = तदनन्तरं, तदनुचराः = राजवाहनाऽनुसारिणः। कल्ये = प्रभाते, साकल्येन = समग्रतः। राजकुमारं = राजवाहनम्, अनवलोकयन्तः = अपश्यन्तः, विषण्णहृदयाः = खिन्नचित्ताः। तेषु तेषु = तत्र तत्र, वनेषु = अरण्येषु, सम्यक् = समीचीनरूपेण, अन्विष्य, अन्वेषणं कृत्वा। अनवेक्षमाणाः = अपश्यन्तः।

एतस्य = (राजवाहनस्य), अन्वेषणमनीषया = (गवेषणाबुद्ध्या), देशान्तरम् = अन्यं देश, चरिष्णवः = गन्तुमनसः सन्तः, निश्चितेत्यादिः = निश्चितं (निर्णीतम्) पुनः सङ्केतस्था नं = (भूयः समागमस्थलम्) यैस्ते, तादृशाः सन्तः परस्पर = मिथः, वियुज्य = वियुक्ता भूत्वा। ययुः = गताः ।13॥

भावार्थ:- 'ऐसा ही हो' ऐसा कहकर राजवाहन नमस्कार करने वाले मातंग के साथ आधीरात में निद्रा में मग्न मित्रगण को छोड़कर दूसरे वनमें चले गये। उसके बाद उनके अनुचर सबके सब कुमार को नहीं देखते हुए चिन्तित होकर अनेक वनों में अच्छी तरह ढूंढकर भी उनको नहीं देखते हुए फिर भी उनको ढूँढने की इच्छासे अत्यन्त सहनशील होकर दूसरे देशमें चलते हुए फिर मिलने के लिए एक संकेत स्थान का निश्चय कर परस्पर बिछुड़कर चले गये ।13॥

14. लोकैकवीरेण कुमारेण रक्ष्यमाणः सन्तुष्टान्तरङ्गो मातङ्गोऽपि बिलं शशिशेखरकथिताभिज्ञानपरिज्ञातं निःशङ्कं प्रविश्य गृहीतताम्रशासनो रसातल पथा तनैवोपेत्य तत्र कस्यचित्पत्तनस्य निकटे केलीकाननकासारस्य विततसारसस्य समीपे नानाविधेनेशशासनविधानोपपादितेन हविषा होमं विरच्य प्रत्युहपरिहारिणि सविस्मयं विलोकयति राजवाहने समिदाज्यसमुज्ज्वलिते ज्वलने पुण्यगेहे देहं मन्त्रपूर्वकमाहुतीकृत्य तडित्समानकान्तिं दिव्यां तनुमलभत।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने रत्नों व अलंकारों से अलंकृत कुमारी का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- लोके = (भुवने), एकवीरेण = (प्रमुखशूरेण), कुमारेण= राजवाहनेन, रक्ष्यमाणः = क्रियमाणरक्षः, सन्तुष्टाऽतरङ्ग = प्रीतचित्तः, मातङ्गोऽपि, शशिशेखरेण = (चन्द्रशेखरेण, महादेवेन) कथितं = (भाषितम्) यत् अभिज्ञानं = (चिह्नम्) तेन परिज्ञानं = (परिविदितम्); बिलं = रन्ध्रं, निःशङ्कं = निः संदेहं, निर्भयमिति भावः, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा। गृहीतम् = (आत्तम्) ताम्रशासनं = शुल्वपत्रलिखितादेशः येन सः। तथा = तेनैव त्र पुर्वोक्तेनैव। पथा = मार्गेण, रसातलं = पातालम्, उपेत्य = संप्राप्य, तत्र = पाताले, कस्यचित्, पत्तनस्य = नगरस्य, निकटे = समीपे विततसारसस्य = वितताः = (विस्तृताः, बहव इति भावः) सारसाः = (पक्षिविशेषाः) यस्मिंस्तस्य, अथवा वितताानि; सारसानि = कमलानि यस्मिंस्तस्य। केलीकानने = (क्रीडावने), कासारस्य = (सरसः) समीपे = निकटे, नानाविधेन = अनेकप्रकारेण, ईशेत्यादिः = ईशशासनस्य (महादेवादेशस्य) विधानेन = (विधिना)। उपपादितेन = संपादितेन, हविषा = हवनद्रव्येण, आज्यादिनेति शेषः। होमं = हवनं, विरच्य = विरचय्य, कृत्वेति भावः। प्रत्यूहं = (विघ्नम्), परिहरति = (निवारयति) तच्छीलः (तत्स्वभावः) तस्मिन्, राजवाहने = राजकुमारे सविस्मयं (साश्चर्यम्), विलोकयति = पश्यति सति। समिधश्च = (दारूणि), आज्यं च = (घृतं च) समुज्ज्वलिते = (प्रदीप्ते), ज्वलने = अग्नौ; पुण्यगेहं = पुण्यस्य (धर्मस्य) गेहं = (भवनम्, आधारभूतमिति भावः) देहं = (शरीरम्), मन्त्रपूर्वकं =

मन्त्रोच्चारणपुरः सरम्, आहुतीकृत्य = आहुतिभूतां कृत्वा। तडिता = (विद्युता), समाना = (तुल्या) कान्तिः = (शोभा) यस्यास्तां, दिव्यां = लोकोत्तरां, तनु = शरीरम्, अलभत् = लब्धवान् ।।14।।

भावार्थ:- लोक में मुख्यवीर कुमारसे रक्षा किये गये और सन्तुष्ट चित्तवाले मातंगने भी महादेवसे कहे गये चिह्नसे पहिचाने गये बिलमें निःशंक होकर प्रवेश कर ताम्रशासन लेकर उसी मार्गसे पातालमें पहुँचकर वहाँ किसी शहरके नजदीक विस्तृत सारस पक्षियोंसे अथवा प्रचुर कमलोंसे युक्त वनमें स्थित तालाबके निकट अनेक प्रकारके महादेवकी आज्ञाके विधानसे सम्पादित हविसे होम करके आश्चर्यके साथ विघ्नका परिहार करनेवाले राजवाहनके अवलोकन करनेपर समिधा और घृतसे प्रज्ज्वलित अग्नि में पुण्य के आधारस्वरूप अपने शरीर को आहुति बनाकर बिजलीके तुल्य कान्तिवाले दिव्य शरीरको प्राप्त किया।।14।।

15. तदनु मणिमयमण्डनमण्डलमण्डिता सकललोकललनाकुलललामभूतकन्या काचन विनीतानेकसखीजनानुगम्यमाना कलहंसगत्या शनैरागत्यावनिसुरोत्तमाय मणिमेकमुज्ज्वलाकारमुपायनीकृत्य तेन 'का त्वम्'? इति पृष्टा सोत्कण्ठा कलकण्ठस्वनेन मन्दं मन्दमुदञ्जलिरभाषत-

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में पाताल लोक निवासी उस कुमारी (कालिंदी) का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- तदनु = तदनन्तरं, मणिमयानि = (रत्नप्रचुराणि) यानि मण्डनानि = (भूषणानि) तेषां मण्डलं = (समूहः) तेन मण्डिता = (भूषिता) सकललोकानां = (समस्तभुवनानाम्) यत् ललनाकुल = (प्रमदासमूहः) तस्य ललामभूता = (भूषणभूता)। विनीताः = (शिक्षिताः) ये अनेकसखीजनाः = (बहुवयस्यालोकाः), तैः अनुगम्यमाना = (अनुस्रियमाणा)। तादृशी सती। कलहंसगत्या = कादम्बसदृशगमनेन, मथरेणेति शेषः। शनैः = मन्दम्, आगत्य = आगमनं कृत्वा। अवनिसुरोत्तमाय = ब्राह्मणश्रेष्ठाय, मातङ्गायेति भावः।

उज्ज्वलाकारम् = उद्दीप्ताकृतिम्, एकम् = अद्वितीयं, मणिं = रत्नम्, उपायनीकृत्य = उपदीकृत्य, तेन = मातङ्गेन, त्वम् = भवती, का = किंनामधेया, इति = एवम्, पृष्टा = अनुयुक्ता। सोत्कण्ठा = उत्कण्ठायुक्ता सती। कलकण्ठस्वनेन = कलकण्ठस्य (कोकिलस्य) इव स्वनेन = (शब्देन)। मन्दं मन्दम् = अतिशयमन्दस्वरम्, उदंजलिः = बद्धांजलिः सती। अभाषत = भाषितवती।।15।।

भावार्थ:- तब प्रचुर रत्नोंवाले भूषणसमूह से भूषिता; विनीता (नम्रा वा शिक्षिता) समस्तलोकों के स्त्रीसमूहके भूषणस्वरूप, अनेक सखीजनों से अनुगमन की जानेवाली ऐसी कोई कन्या हंसके समान गति से धीरे-धीरे आकर ब्राह्मणश्रेष्ठ (मातंग) को उज्ज्वल आकार वाले एक रत्न का उपहार देकर, उनके ''तुम कौन हो?'' ऐसा पूछनेपर अंजलि बाँधकर उत्कण्ठापूर्वक कोयल के समान स्वर से मन्द मन्द भाषण करने लगी।।15।।

16. भूसुरोत्तम! अहमसुरोत्तमनन्दिनी कालिन्दी नाम। मम पितास्य लोकस्य शासिता महानुभावो निजपराक्रमासहिष्णुना विष्णुना दूरीकृतामरे समरे यमनगरातिथिकरकारि। तद्वियोगशोकसागरमग्नां मामवेक्ष्य कोऽपि कारुणिकः सिद्धतापसोऽभाषत-

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कालिंदी व मातंग की वार्ता का वर्णन किया है।

व्याख्या:- भूसुरोत्तम = ब्राह्मणश्रेष्ठ! अहम्, असुरोत्तमनन्दिनी = दैत्यराजपुत्री, कालिन्दी नाम = नाम्ना कालिन्दी अस्मि। अस्य, लोकस्य = पातालस्य, शासिता = शासनकर्ता। महानुभावः = महाप्रभावः, मत्पितः = मज्जनकः। निजपराक्रमेण = (स्वविक्रमेण हेतुना), असहिष्णुना = (असहनशीलेन), विष्णुना = नारायणेन, दूरीकृताऽमरे = दूरीकृताः (विप्रकृष्टीकृताः, पराजिता इति भावः) अमराः = (देवाः) यस्मात्, तस्मिन्। समरे = युद्धे, यमनगरस्य = (अन्तकपुरस्य) अतिथिः = (प्रार्घुणकः) अकारि = कृतः, तस्य = (पितुः), वियोगः = (विप्रयोगः), तेन यःशोकः = (मन्युः) एव सागरः = (समुद्रः) तस्मिन् मग्नां = (पतिताम्), माम्, अवेक्ष्य = दृष्ट्वा। कोऽपि, कारुणिकः = दयालुः, सिद्धतापसः = प्राप्तसिद्धिस्तपस्वी। अभाषत = भाषितवान्। ।।16।।

भावार्थ:-''ब्राह्मणश्रेष्ठ! मैं दैत्याराज की पुत्री कालिन्दी नामवाली हूँ। इस लोकका शासन करने वाले महानुभाव मेरे पिता को अपने पराक्रम के कारण असहनशील विष्णु ने देवगण दूर (जिस देवासुर संग्राममें देवगण पराजित) किये गये युद्ध में यमराज के नगर में अतिथि बना डाला। उनके वियोगसे शोकसागर में डुबी हुई मुझे देखकर किसी दयालु सिद्ध तपस्वीने कहा ।।16।।

17. 'बाले! कश्चिद्दिव्यदेहधारी मानवो नवो वल्लभस्तव भूत्वा सकलं रसातलं पालसिष्यति' इति। तदादेशं निशम्य घनशब्दोन्मुखी चातकी वर्षागमनमिव तवालोकनकाङ्क्षिणीचिरमतिष्ठम्। मन्मनोरथफलायमान भवदागमनमवगम्य मद्राज्यावलम्बभूतामात्यानुमत्या मदनकृतसारथ्येन मनसा भवन्तमागच्छम्। लोकस्यास्य राजलक्ष्मीमङ्गीकृत्य मां तत्सपत्नीं करोतु भवान्' इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने मातंग एवं कालिंदी के विवाह का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- बाले = हे तरुणि!, कश्चित् कोऽपि, दिव्यदेहधारी = अलौकिकशरीरधारकः, नवः = नवीनः, युवेति भावः। मानवः = मानुषः, तव = भवत्याः, वल्लभः = प्रियः, पतिरिति भावः। भूत्वा, सकलं = सम्पूर्णं, रसातलं = रसायाः (पृथिव्याः), तलम् = (अधोभागम्, पातालमित्यर्थः), पालयिष्यति = रक्षिष्यति। इति। तदादेशं = सिद्धतापसाज्ञां, निशम्य = श्रुत्वा। घनशब्देन = (मेघध्वनिना) उन्मुखी = (ऊर्धवमुखी), चातकी = चातकभार्या, वर्षागमनं = वर्षाणां (प्रावृषः), आगमनम् = (आव्रजनम्) इव। तव = भवतः, आलोकनकाङ्क्षिणी = दर्शनाऽभिलाषिणी सती, चिरं = दीर्घकालं यावत्। अतिष्ठं = स्थिता।मन्मनोरथस्य = (मदभिलाषस्य) फलायमानं = फलवदाचरत्, भवदागमनं = त्वदाब्रजनम्, अवगम्य = ज्ञात्वा। मद्राज्यस्य = (मद्राष्ट्रस्य), अवलम्बभूताः = (अवम्बनभूताः) ये अमात्याः = (मन्त्रिणः), तेषामनुमत्या = अनुज्ञया। मदनेन = (कामने), कृतं = (विहितम्), सारथ्यं = (सारथिकर्म), यस्य, तेन। तादृशेन मनसा = चित्तेन, भवन्तं = त्वाम्, आगच्छम् = आगता। अस्य लोकस्य = पातालस्य, राजलक्ष्मी = राज्यश्रियम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य, भवान, मां, तत्सपत्नीं = तस्या (राजलक्ष्म्याः), सपत्नीं = (समानभर्तृकाम्), सपत्नीमित्यत्र समानः = (तुल्यः), पतिः = (भर्ता) करोतु = विदधातु। इति। ।।17।।

भावार्थ:- बाले! कोई दिव्य शरीर को धारण करने वाला जवान मनुष्य तुम्हारा पति होकर समस्त पाताल का पालन करेगा" ऐसी उनकी आज्ञा को सुनकर जैसे मेघ के शब्द से ऊपर मुख करनेवाली चातकी (मादा पपीहा) वर्षा ऋतु के आगमन की इच्छा करती है वैसे ही आपके दर्शनकी इच्छा करती हुई मैं बहुत समय तक रह गई हूँ। मेरे अभिलाष के फल के समान आचरण करनेवाले आपके आगमन को जानकर मेरे राज्य के आलम्बन स्वरूप मन्त्रियों की अनुमति से कामदेव के साहचर्य से युक्त मन से आपके पास आ गई हूँ। आप इस (पाताल) लोककी राज्यलक्ष्मी को अंगीकार कर मुझे उसकी सपत्नी (सौत) बनाइए।।17।।

18. मातङ्गोऽपि राजवाहनानुमत्या तां तरुणी परिणीय दिव्याङ्गनालाभेन हृष्टतरो रसातलराज्यमुररीकृत्य परमानन्दमाससाद।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में मातंग एवं कालिंदी के विवाह का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- मातङ्गोऽपि राजवाहनस्य = (राजकुमारस्य), अनुमत्या = (अनुज्ञया), तां, तरुणीं = युवतिं, परिणीय = विवाह्यदि, दिव्याऽङ्गनायाः = (अलौकिकसुन्दर्याः), लाभेन = (प्राप्त्या), हृष्टतरः = अतिशयेन प्रसन्नः सन्, रसातलराज्यं = पातालराज्यम्, उररीकृत्य = स्वीकृत्य। परम् = अमन्दम्, आनन्दं = हर्षम्, आससाद = प्राप्तवान्। ॥18॥

भावार्थ:- मातंगने भी राजवाहनकी अनुमतिसे उस तरुणी के साथ विवाह कर दिव्य स्त्री की प्राप्ति से अत्यन्त हृष्ट होकर और पातालराज्य को अंगीकार कर परम आनन्दको प्राप्त किया॥18॥

19. वञ्चयित्वा वयस्यगणः समागतो राजवाहनस्तदवलोकनकौतूहलेन भुवं गमिष्णुः कालिन्दीदत्त क्षुत्पिपासादिक्लेशनाशनं मणिं साहाय्यकरणसंतुष्टान्मातङ्गाल्लब्ध्वा। कञ्चनाध्वानमनुवर्तमानं तं विसृज्य बिलपथेन तेन निर्ययौ। तत्र च मित्रगणमनवलोक्य भुवं बभ्राम।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने राजवाहन का पुनः पृथ्वी लोक में आने का वर्णन तथा राजवाहन का मित्रवर्मा को खोजने का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- वंचयित्वा = प्रतायं, वयस्यगण: = मित्रसमूहः, समागतः = संप्राप्तः, राजवाहनः = राजपुत्रः, तेषां = (वयस्यानाम्), अवलोकनस्य = (दर्शनस्य) यत्तु कौतूहम् = (कौतुकमृ) तेन। भुवं = भूलोकं, गमिष्णुः = गमनशीलः, कालिन्दीदत्तं = कालिन्दीवितीर्णं, क्षुत्पिपासादीनां = (बुभुक्षातृष्णाप्रभृतीनाम्), यः क्लेशः = (कष्टम्), तन्नाशकं = (तन्निवर्तकम्) मणिं = रत्नं, साहाय्येत्यादिः = साहाष्यकरणेन (सहायताविधानेन), संतुष्टात् = (प्रीतात्) मातङ्गत्, लब्ध्वा =प्राप्य। कंचन अध्वानं = मार्गम्, अनुवर्तमानम् = अनुसरन्तं, तं = मातङ्गं, विसृज्य = स्वगृहं संप्रेष्य, तेन = पूर्वोक्तेन, बिलपथेन = रन्ध्रमार्गेण, निर्ययौ = निर्जगाम। तत्र च = भूवि। मित्रगणं = सुहृत्समूहम्, अनवलोक्य = अदृष्ट्वा। भुवं =भूमिं, बभ्राम = भ्रान्तवान्॥19॥

भावार्थ:- मित्रगण को वंचन कर आये हुए राजवाहन उन (मित्रगण) को देखने की उत्कण्ठा से पृथिवी में जाते हुए कालिन्दीसे दिये गये भूख और प्यास आदि कष्टको नाश करनेवाली मणिकी सहायतासे (जिसे उन्होंने सहायता करनेसे सन्तुष्ट मातंगसे पाई थी) कुछ मार्गग तक अनुसरण करनेवाले मातंग को रुखसत कर उस बिलके मार्गसे निकले। वहाँ मित्रगणको न देखकर भूमिमें भ्रमण करने लगे॥19॥

20. भ्रमश्च विशालोपशल्ये कमप्याक्रीडमासाद्य तत्र विशश्रमिपुरान्दोलिकारूढ रमणीसहिमाप्तजनपरिवृतमुद्याने समागतमेक पुरुषमपश्यत्। सोऽपि परमानन्देन पल्लवितचेता विकसितवदनारविन्दः 'मम स्वामी सोमकूलावतंसो विशुद्धयशोनिधी राजवाहन एषः महाभाग्यतयाकाण्ड एवास्य पादमूलं गतवानस्मि। सम्प्रति महान्नयनोत्सवो जातः' इति

ससम्भ्रममान्दोलिकाया अवतीर्य सरभसपदविन्यासविलासिहर्षोत्कर्षचरितस्त्रिचतुरपदान्युद्रतस्य चरणकमलयुगल गलदुल्लसन्मल्लिकावलयेन मौलिना पस्पर्श।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में राजवाहन का सोमदत्त से मिलन का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- भ्रमन् = भ्रमणं कुर्वंश्च। विशालोपशल्येन - विशालं = (महत्) यत् उपशल्यं = (ग्रामान्तः) तन, कमपि, आक्रीडम् = उद्यानम्। आसाद्य = ग्राप्य, तत्र = आक्रीडे, विशश्रमिषुः = विश्रमितुमिच्छुः। उद्याने = आक्रीडे, आन्दोलिकारूढम् = आन्दोलिकाम् (दोलाम्), आरूढम् = (अधिरूढम्), रमणीसहितं = ललनासमेतम्, आप्तजनैः = (विश्वस्तमानवैः), परिवृम् = (परिवेष्टितम्), समागतम् = समायातम्, एकं, पुरुषं = पुमांसम्, अपश्यत् = दृष्टवान्। सोऽपि = समागतः पुरुषोऽपि, परमानन्देन = अतिशयहर्षेण, पल्लवितं = (विकसितम्) चेतः = (चित्तम्) यस्य सः। विकसित = (प्रफुल्लम्), वदनम् = (मुखम्) एव अरविन्द कमलम् यस्य सः। एषः = अतिनिकटस्यः, सोमकुलस्यं = (चन्द्रवंशस्य), अवतसः = (भूषणम्), विशुद्धः = (परमपवित्रः), यशोनिधिः = (कान्तिशेवधिः) यस्य सः। राजवाहनः अस्तीति शेषः। महाभाग्यतया = अनुकूलभाग्यभावेन, एव, अस्य = स्वामिनः, पादमूल = चरणमूलं, गतोऽस्मि = प्राप्तोऽस्मि। सम्प्रति = अधुना, महान् = प्रचुरः, नयनोत्सवः = नेत्रोत्सवः, जातः = उत्पन्नः। इति = एवं, ससम्भ्रमम् = सत्वरम्, आन्दोलिकायाः = दोलायाः, अवतीर्य = अवरुह्य, सरभसः = (सहर्षः, सवेगो वा) यः पदविन्यासः = (चरणन्यासः) तेन विलासी = (विलासयुक्तः), हर्षोत्कर्षः = (आनन्दप्रकर्षः), चरिते = (चरित्रे) यस्य सः। त्रिचतुराणि = त्रोणि वा चत्वारि वा, यानि पदानि = पादन्यासान्, उद्रतस्य = उद्यातस्य, राजवाहनस्य, चरणकमलयुगलं = पादपद्मयुग्मं, गलत् = (अवनमनेन पतत्), उल्लसत् = (विकसत्), मल्लिकावलयं = (भूपदीपुष्मालाम्) मौलिना = मस्तकेन, पस्पर्श = स्पृष्टवान्, प्रणामं करोति भावः।।20।।

भावार्थ:- घूमते हुए विशाल ग्राम के प्रान्त भाग में किसी बाग में पहुँचकर वहाँ विश्राम करनेके लिए इच्छुक होकर राजवाहन ने पालकी में बैठे हुए पत्नी से युक्त और विश्वस्त मनुष्यों से घिरे हुए बाग में आये हुए एक पुरुष को देखा। उसने भी अतिशय आनन्द से पल्लवित चित्तवाला और प्रफुल्ल मुखकमलवाला ''ये मेरे प्रभु, चन्द्रवंशके भूषण और विशुद्ध कीर्ति के निधिस्वरूप राजवाहन हैं। महाभाग्य होनेसे अकस्मात् ही इनके चरणमूलको प्राप्त हो गया हूँ। इस समय महान् नेत्रोत्सव हो गया है।'' ऐसा कहकर शीघ्र पालकीसे उतर कर वेगसे चरणोंको रखनेसे विलासयुक्त हर्षके उत्कर्षसे विलासयुक्त चरित्रवाला होकर तीन चार कदम आगे बढ़े हुए उनके दो चरणोंको गिरी हुई बेलीके फूलोंकी मालावाले शिरसे स्पर्श किया (प्रणाम किया) ।।20।।

21. प्रमोदाश्रुपूर्णो राजा पुलकिताङ्गं तं गाढमालिङ्ग्य ” अये सौम्य सोमदत!, इति व्याजहार। ततः कस्यापि पुन्नागभूरुहस्य छायाशीतले तले संविष्टेन मनुजनाथेन सप्रणयमभाणि-‘सखे! कालमेतावन्तं देशे कस्मिन्, प्रकारेण केनास्थायि भवता? सम्प्रति कुत्र गम्यते ? तरुणी केयम् ? एष परिजनः सम्पादितः कथम् ? कथय’ इति।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में राजवाहन का सोमदत्त से मिलन का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- प्रमोदाऽश्रुभिः = हर्षजनयनजलैः, पूर्णः = पूरितः राजा = राजवाहनः, पुलकित्ताऽङ्गं = पुलकितम् = (रोमांचयुक्तम्), अङ्गम् = (अवयवः) यस्य तम्। तम् = आगतं पुरुषं, गाढं = गूढम्, आश्लिष्य = आलिङ्ग्य, अये सौम्य = सज्जन, सोमदत्त!, इति = एवं, व्याजहार = जगाद। ततः = अनन्तर, कस्याऽपि, पुंनागभूरुहस्य = केसरतरोः, छायाशीतले = अनातपशीते, तले = अधोभागे, संविष्टेन = उपविष्टेन टेमनुजनाथेन = नरपतिना, राजवाहनेन। सप्रणयं = प्रणयपूर्वकम्, अभाणि = कथितम्। सखे = मित्र!, एतावन्तम् = एतत्परिमाणं, कालं = समयं कस्मिन् देशे = जनपदे, केन प्रकारेण = विधया, भवता = त्वया, अस्थायि = स्थितं, सम्प्रति = इदानीं, कुत्र = कस्मिन् स्थाने, गम्यते = गमन क्रियते। इयं = सन्निहिता, तरुणी = युवतिः; का = किंनामधेया, एषः = अतिसन्निहितः, परिजनः = परिवारः, कथ = केन प्रकारेण, संपादितः = अर्जित, कथय = ब्रूहि। इति।।21।।

भावार्थ:- हर्षाश्रु से पूर्ण राजा (राजवाहन) ने रोमांचित अंगों वाले उस (सोमदत्त) को गाढ आलिंगनकर ‘’अरे सज्जन सोमदत्त!” ऐसा कहा। तब किसी पुन्नाग (नागकेसर) वृक्ष की छाया से शीतल प्रदेश में बैठे हुए राजा ने प्रेम से कहा-मित्र! इतने समय तक किस देश में किस तरह तुम रहे हो? इस समय कहाँ जा रहे हो? यह युवती कौन है? इतने जनों को तुमने कैसे इकट्ठा किया? कहो”।।21।।

22. सोऽपि मित्रसन्दर्शनव्यतिकरापगतचिन्ताज्वरातिशयो मुकुलितकरकमलः सविनयमात्मीयप्रचारप्रकारमवोचत्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने सोमदत्त का राजवाहन के साथ भ्रमण वृत्तान्त का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- सोऽपि = सोमदत्तोऽपि, मित्रस्य = (सहृदः) यः सन्दर्शनव्यतिकरः = (विलोकनव्यापारः) तेन अपगतः = (निवृत्तः), चिन्ताज्वरस्य = (चिन्तनसतापस्य), अतिशयः = (आधिक्यम्), यस्मात्

सः। मुकुलितकरकमलः = संयोजितहस्तमुकुलः सन्, आत्मीयः = स्वकीयः, प्रचारप्रकारः = भ्रमणभेदः, तं सविनयं = नम्रतापूर्वकम्। अवोचत् = उक्तवान् ।।22।।

भावार्थः- वह (सोमदत्त) भी मित्र के दर्शन की क्रिया से बढ़ी हुई चिन्ता के जानेसे हाथों को जोड़कर नम्रता के साथ अपने गमन के प्रकार को कहने लगा ।।22।।

3.4 सारांशः-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान चुके हैं कि आचार्य दण्डी ने द्वितीय उच्छवास में वामदेव ऋषि का वर्णन तथा राजवाहन के दिग्विजय यात्रा वर्णन किस प्रकार करते हैं। साथ ही आप जान चुके हैं कि दण्डी ने राजवाहन की यात्रा के दौरान विभिन्न देशाटनों का वृतान्त किस प्रकार वर्णित किया है।

3.5 शब्दावलीः-

सहोदर = सगे भाई
सचिव = राजा का मन्त्री या सहचर
अवयव = अंग
चातकी = मादा पपीहा

3.6 बोध प्रश्नः-

अभ्यास प्रश्न -

(1) बहुविकल्पीय प्रश्नः-

1. वामदेव ऋषि के शिष्य का क्या नाम है।

(क) सोमदेव (ख) राजवाहन
(ग) रामदेव (घ) इनमें से कोई नही

2.असुरराज की कन्या का क्या नाम है।

(क) चन्द्रवदना (ख) चन्द्रिका
(ग) कालिन्दी (घ) इनमें से कोई नही

3. भवदीय में कौन सा प्रत्यय है।

(क) छस् (ईय्) (ख) अण्
(ग) अनीयर् (घ) अनीय्

4. विजयाय में कौन सी विभक्ति है।

(क) प्रथमा (ख) द्वितीया

(ग) चतुर्थी (घ) सप्तमी

5. पापिष्ठैः में प्रत्यय है।

(क) इष्टन् (ख) इष्ट्

(ग) ईय् (घ) इनमें से कोई नही

6. द्वितीय उच्छवास का क्या नाम है।

(क) द्विजोपकृति (ख) कुमारोत्पत्ति

(ग) पुष्पोद्भवचरितं (घ) इनमें से कोई नही

(2) निम्न वाक्यों में सही के सामने (√) और गलत के सामने (×) का चिन्ह लगायें-

1. मातंग एक किरात है। ( )
2. राजवाहन के पाताल लोक गमन का वर्णन द्वितीय उच्छवास में है। ( )
3. राजवाहन का सोमदत्त से मिलन का वर्णन द्वितीय उच्छवास में है। ( )
4. सोमदत्त का राजवाहन से भ्रमण का वृतांत कथन प्रथम उच्छवास में वर्णित है। ( )

(3) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. .... मानुषमात्रपौरुषो नूनं न भवति' ।
2. 'ननु पापाः! न हन्तव्यो .... इति।
3. 'ननु मानव! ....घोरप्रचारे कान्तारे विन्ध्याटवीमध्ये भवानेकाकी किमिति निवसति ।
4. 'देव! भवते .... रहस्यं किञ्चिदस्ति।

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास - उमाशंकरशर्मा 'ऋषि' ।
2. संस्कृत वाड्मय का वृहद् इतिहास - पं० बलदेव उपाध्याय ।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास - कन्हैया लाल पोद्दार ।
4. संस्कृत साहित्य का इतिहास - पद्मभूषण आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी ।
5. संस्कृत साहित्य का आधुनिक इतिहास, डा0 राधावल्लभ त्रिपाठी, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी ।

3.8 अन्य सहायक पुस्तकें:-

1. दशकुमारचरितम् - महाकवि दण्डी, नारायण राम आचार्य, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली ।
2. दशकुमारचरितम् - आचार्य शेशराज शर्मा, 'रेग्मी' चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी ।
3. दशकुमारचरितम् - महाकवि दण्डी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी ।
4. दशकुमारचरित - आचार्य दण्डी ।
5. संस्कृतसुकवि - आचार्य बलदेव उपाध्याय ।

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर:-

(1) बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1. (क) 2. (ग) 3. (क) 4. (ग) 5. (क) 6. (क)

(2).

1. सही 2. सही 3. सही 4. गलत

(3).

1. तेजोमयोऽयं 2. ब्राह्मण 3. जनसङ्गरहिते मृगरहिते 4. विज्ञापनीय

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. राजवाहन के यात्रा वृतान्त का वर्णन कीजिए।
2. मांतग एवं कालिन्दी का परिचय दीजिए।

खण्ड-द्वितीय, इकाई-4
तृतीय उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 तृतीय उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)
4.4 सारांश
4.5 शब्दावली
4.6 बोध प्रश्न
4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.8 अन्य सहायक पुस्तकें
4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रिय शिक्षार्थियो!

संस्कृत गद्य साहित्य से सम्बन्धित यह द्वितीय खण्ड की चतुर्थ इकाई है। इससे पूर्व की इकाई में आपने कुमारों की दिग्विजय यात्रा को जाना। इस इकाई में आप सोमदत्त के भ्रमण वृत्तान्त उनके जीवन वृत्त एवं पुष्पोद्भव के प्रवेश को विस्तार से सम्यक रूप से जानेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात आप—

- ❖ सोमदत्त के बारे में जान पाएंगे।
- ❖ सोमदत्त के भ्रमण वृत्तान्त को जान पाएंगे।
- ❖ राजवाहन एवं सोमदत्त की वार्ता को जान पाएंगे।

4.3 तृतीय उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)

1. 'देव! भवच्चरणकमलसेवाभिलाषीभूतोऽहं भ्रमन्नेकस्यां वनावनौ पिपासाकुलो लतापरिवृतं शीतलं नदसलिलं पिबन्नुज्ज्वलाकारं रत्नं तत्रैकमद्राक्षम्। तदादाय गत्वा कञ्चनाध्वानमबरमणेरत्युष्णतया गन्तुमक्षमो वनेऽस्मिन्नेव किमपि देवतायतनं विष्टोदीनाननं बहुतनयसमेतं स्थविरमहीसुरमेकमवलोक्य कुशलमुदितदयोऽहमपृच्छम्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने सोमदत्त का भ्रमण वृत्तान्त का वर्णन किया है।

व्याख्या:- देव = राजन्!, भवतः = तव, ये चरणकमले = (पादपद्मे), तयोः = सेवा (परिचर्या) तस्याम् = अभिलाषीभूतः = अभिलाषयुक्तः, अहम्, एकस्यां, वनाऽवनौ = विपिनभुवि, भ्रमन् = पर्यटन, पिपासाऽकुलः = पातुमिच्छा, पिपासा = (तृषा) तया, आकुलः = (विह्वलः), लतापरिवृतं = वल्लीपरिवेश्टितं, शीतलं = शीतं, नदसलिलं = अकृत्रिमं जलप्रवाहजलं, पिबन् = धयन्, तत्र = तस्मिन्, एकम् = अद्वितीयम्, उज्ज्वलाकारं = दीप्यमानाकृतिं, रत्नं = मणिम्, अद्राक्षं = दृष्टवान्। तत् = रत्नम्, आदाय = गृहीत्वा। कंचन अध्वानं = मार्गं, गत्वा = व्रजित्वा। अम्बरमणेः = आकाशरत्नस्य, सूर्यस्येति भावः। अत्युष्णतया = अधिकतेजस्वित्वेन, गन्तुं = व्रजितुम्, अक्षमः =

असमर्थः, अस्मिन् एव, वने = अरण्ये, किमपि, देवतायतन = सुरमन्दिरं, प्रविष्टः = कृतप्रवेशः, दीनाननं = दैन्यव्याप्तवदनं, बहुतनयोपेतम् = बहुलपुत्रयुक्तम्, एकम् = स्थविरमहीसुरं = वृद्धब्राह्मणम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, उदिता = (उत्पन्ना), दया = (करुणा) यस्य सः। अहं, कुशलं = कल्याणं, अपृच्छं = पृष्टवान् ॥1॥

भावार्थ:- 'राजन्! आपके चरणकमलों की सेवा का अभिलाष करते भ्रमण करते हुए मैंने एक वन की भूमि में प्याससे आकुल होकर लताओंसे परिवेष्टित शीतल नद (जलप्रवाह) का जल पीता हुआ वहाँ उज्ज्वल आकारवाला एक रत्न देखा। उसे लेकर कुछ दूर जाकर सूर्यके अत्यन्त गर्म होनेसे चलनेमें असमर्थ होकर इसी वन में किसी देवमन्दिरमें प्रवेश कर दैन्ययुक्त मुखवाले अनेक सन्तानोंसे युक्त एक वृद्ध ब्राह्मण को देखकर, दया उत्पन्न होने से मैंने उनका कुशल पूछा। दीनता से मलिन मुखवाले और महत्त्वपूर्ण कार्य में तृष्णा युक्त चित्त वाले॥11॥

2. कार्पण्यविवर्णवदनो महदाशापूर्णमानसाऽवोचदग्रजन्मा- 'महाभाग! सुतानेतान्मातृहीनाननेकेरुपायै रक्षन्निदानीमस्मिन्कुदेशे भैक्ष्यं-सम्पाद्य दददेतेभ्यो वसामि शिवालयेऽस्मिन्' इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने सोमदत्त व वृद्ध ब्राह्मण का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- कार्पण्येन = (दैन्येन), विवर्णम् = (मलिनम्), आनन = (मुखम्), यस्य सः। महति = (महत्त्वपूर्णे कार्ये) या आशा = (तृष्णा), तया पूर्णं = (पूरितम्), मानसं = (चित्तम्) यस्य सः। अग्रजन्मा = ब्राह्मणः, अवोचत् = उक्तवान्। महाभाग = हे महाभाग्य! मातृहीनान् = जननीरहितान्। एतान् = अतिनिकटस्थान्, सुतान् = पुत्रान्, अनेकैः = बहुभिः। उपायैः = साधनैः, रक्षन् = पालयन्, इदानीम् = अधुना, अस्मिन्, कुदेशे = कुत्सितजनपदे, भैक्ष्यं = भिक्षासंपादितमन्नं, संपाद्य = उपार्ज्य, एतेभ्यः = सुतेभ्यः, ददत् = वितरन्, अस्मिन् शिवालये = शिवमन्दिरे, वसामि = निवासं करोमि ॥2॥

भावार्थ:- ब्राह्मण ने कहा- ''हे महाभाग! मातृहीन इन पुत्रों को अनेक उपायों से रक्षा करता हुआ इस समय इस कुदेश में भीख माँगकर अन्न का उपार्जन कर इनको देता हुआ इस शिवालयमें निवास कर रहा हूँ'' ॥2॥

3. 'भूदेव! एतत्कटकाधिपती राजा कस्य देशस्य; किं नामधेयः, किमत्रागमनकारणमस्य' इति पृष्टोऽभाषत महीसुरः 'सौम्य! मत्तकालो नाम लाटेश्वरो देशस्यास्य पालयितुर्वीरकेतोस्तनयां

वामलोचनां नाम तरुणीरत्नमसमानलावण्यं श्रावं श्रावमवधूतदुहितृप्रार्थनस्य तस्य नगरीमरौत्सीत्। वीरकेतुरपि भीतो महदुपायनमिव तनयां मत्तकालयादात्। तरुणीलाभहृष्टचेता लाटपतिः परिणेया निजपुर एव' इति निश्चित्य गच्छन्निजदेश प्रति सम्प्रति मृगयादरेणात्र वन सैन्यावासमकारयत्।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में वीरकेतु का मत्तकाल का प्रसंग प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- भूदेव = हे ब्राह्मण!, एतस्य = (समीपतरवर्तमानस्य), कटकस्य = (सैन्यस्य), अधिपतिः = (स्वामी), कस्य, देशस्य = जनपदस्य। किंनामधेयः = किंनामा, अत्र = अस्मिन् स्थाने, अस्य = कटकाऽधिपते, आगमनकारणे = प्राप्तिहेतुः, किम्। इति = एवं, पृष्टः = अनुयुक्तः, महीसुरः = ब्राह्मणः, अभाषत = भाषितवान्। सौम्य = सज्जन!, लाटेश्वरः = लाटदेशाऽधिपतिः, मत्तकालो नाम = नाम्ना मत्तकाल इति। अस्य देशस्य = जनपदस्य, पालयितुः = पालकस्य, वीरकेतोः, तनयां = पुत्रीं, असमानम् = (अनुपमम्), लावण्यं = (सौन्दर्यम्) यस्य तत् तरुणीरत्नं = युवतिश्रेष्ठां , वामलोचनां नाम = नाम्ना वामलोचनां, श्रावं श्रावं = श्रुत्वा, श्रुत्वा, अवधूता = (तिरस्कृता) दुहितृप्रार्थना = (पुत्र्यभ्यर्थना) येन, तस्य। तस्य = वीरकेतोः, नगरीं = पुरीम्, अरौत्सीत् = रुद्धवान्। वीरकेतुरपि, भीतः = त्रस्तः, तनयां = पुत्रीं, वामलोचनां, महत् = बहुमूल्यं, रत्नं = मणिम्, इव। मत्तकालाय = लाटेश्वराय, अदात् = दत्तवान्, तरुणीलाभेन = (युवतिप्राप्त्या), हृष्टचेताः = (प्रसन्नचित्तः), लाटपतिः = मत्तकालः, निजपुरे एव = स्वनगर एव, परिणेया = विवाह्या, इति = एवं, निश्चित्य = निर्णीय, निजदेशं प्रति = स्वजनपदं प्रति, गच्छन् = व्रजन्, सम्प्रति = इदानीं, मृगयायाम् = (आखेटके), आदरेण = (आदृत्य), अनुरोधेनेति भावः। अत्र = अस्मिन्, वने = विपिने। सैन्यावासं = सेनानिवासम्, अकारयत् = कारितवान्।।3।।

भावार्थ:- 'ब्राह्मण! इस सेना (फौज) के स्वामी किस देश के राजा हैं, इनका क्या नाम है ? यहाँ इनके आनेका क्या कारण है।' ऐसा पूछनेपर ब्राह्मणने कहा-''हे सज्जन! मत्तकाल-नामक लाटदेशके राजाने इस देशका पालन करनेवाला वीरकेतु की वामलोचना नामकी पुत्री जोकि अनुपम सौन्दर्य वाली और युवतियों में रत्न है, उनके सौन्दर्य को वारं वार सुनकर उनके पिता वीरकेतुसे उसको पानेके लिए प्रार्थना की। जब वीरकेतुने उनकी प्रार्थनाका तिरस्कार किया तब मत्तकालने उनके शहरको घेर लिया। वीरकेतुने डर कर महान् उपहारके समान अपनी कन्या मत्तकालको दे दिया। युवतीके लाभसे प्रसन्नचित्त होकर लाटदेशके राजा मत्तकालने 'इससे अपने नगर में ही विवाह करना उचित है' ऐसा

निश्चयकर अपने देश में जाता हुआ इस समय शिकार करनेकी इच्छासे इस वनमें सेनाओं का वासस्थान (पड़ाव) बनाया ।।3।।

4. कन्यासारेण नियुक्ता मानपालो नाम वीरकेतुमन्त्री मानधनश्चतुरङ्गबलसमन्वितोऽन्यत्र रचितशिविरस्तं निजनाथावमानखिन्नामानसोऽन्तर्विभेद' इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने मानधनी मन्त्री के चतुरंगिणी सेना का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- कन्या = (कुमारी), एव सारः = (धनम्) नियुक्तः = प्रेरितः, मानः = (अभिमानः) एव धनं = (द्रव्यम्) यस्य सः। मानपालो नाम = नाम्ना मानपालः, वीरकेतोः = (तन्नाम्नो राज्ञः), मन्त्री = (अमात्यः), चत्वारि = (हस्त्यश्वरथपादातरूपाणि), अङ्गानि = (अवयवाः), यस्य तत्, तादृशं यद् बलं = (सैन्यम्) तेन समन्वितः = (युक्तः), अन्यत्र = अन्यस्मिन् स्थाने, रचितं = (कृतम्), शिविरं = (सैन्यावासस्थानम्) येन सः, निजः = (आत्मीयः) यो नाथः = (स्वामी वीरकेतुरिति भावः) यस्य अवमानः = (अपमानः) तेन हेतुना खिन्नं = (विषण्णम्), मानसं = (चित्तम्) यस्य सः, अन्तः = (अन्तरे, मत्तकालस्य प्रकृत्यमात्यादाविति भावः) बिभेद = भेदं चकार। इति।।4।।

भावार्थ:- कन्यारूप धन से प्रेरित वीरकेतु के मन्त्री अभिमानी मानपाल ने चतुरङ्गिणी सेना (हाथी, रथ, घोड़ा और पैदल सैन्य) से युक्त होकर यहीं शिविर डालकर अपने स्वामी (वीरकेतु) के अपमान से खिन्न होकर मत्तकाल के प्रकृति वर्ग में भेद कर दिया ।।4।।

5. विप्रोऽसौ बहुतनयो विद्वान्निर्धनः स्थविरश्च दानयोग्य इति तस्मे करुणापूर्णमना रत्नमदाम्। परमाह्लादविकसिताननोऽभिहितानेकाशीः कुत्रचिदग्रजन्मा जगाम। अध्वश्रमखिन्नेन मया तत्र निरवेशि निद्रासुखम्। तदनु पश्चान्निगडितबाहुयुगल स भूसुरः कशाघातचिह्नितगात्रोऽनेनैस्त्रिशिकानु यातोऽभ्येत्य माम् 'असौ दस्युः' इत्यदर्शयत्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने रत्न प्राप्ति का वर्णन किया है।

व्याख्या:- असौ = अय, विप्रः = ब्राह्मणः, बहुतनयः = बहवः = (अधिकाः), तनयाः = (पुत्राः) यस्य सः। विद्वान् = विपश्चित, निर्धनः = निःस्वः, दरिद्र इति भावः। स्थविरश्च = वृद्धश्च, अतः दानयोग्यः = वितरणपात्रम्, इति = हेतुना, करुणापूर्णमनाः = दयापूरितचित्तः, सन्, तस्मै = विप्राय,

रत्नं, मणिम्, अदां = दत्तवान्। परमेण = (उत्कृष्टेन), आह्लादेन = (हर्षेण), विकसितम् = (प्रफुल्लम्), आनन = (वदनम्) यस्य सः। अभिहिताः = (उच्चारिताः, दत्ता इति भावः) अनेकाः = (अधिकाः) आशिषः = (आशीर्वादाः), येन सः, अग्रजन्मा = ब्राह्मणः, कुत्रचित् = कस्मिंश्चित्, स्थाने। जगाम = गतः। अध्वनि = (मार्गे) यः श्रमः = (आयासः) तेन हेतुना खिन्नेन = (परिश्रान्तेन), मया, तत्र = तस्मिन् स्थाने, निद्रासुख = शयनानन्दः, निरवेशि = निर्विष्टः उपभुक्तामिति भावः। तदनु = तदनन्तरं, पश्चात् = (पृष्ठदेशे), निगडितं = (बद्धम्), बाहुयुगलं = (भुजयुग्मम्) यस्य सः। कशायाः = (अश्वादेस्ताडन्या साधनेन), चिह्नितम् = (अङ्कितम्) गात्रं = (शरीरम्) यस्य सः। सः = पूर्वोक्तः, भूसुरः = ब्राह्मणः, अनेके = (बहवः) ये नैस्त्रिंशिकाः = (खड्गधारिणः, निस्त्रिंशेन चरन्तीति,) तैः अनुयातः = (अनुगतः) सन्, अभ्येत्य = सम्मुखमागत्य, माम्, असौ = अयं, दस्युः = तस्करः, दस्युतस्करमोषकाः' इत्यमरः इति = एवम्, अदर्शयत् = दर्शितवान्।।5।।

भावार्थः- यह ब्राह्मण बहुत पुत्रों से युक्त, विद्वान्, निर्धन और बूढ़ा भी है, अतः दानका पात्र है'' इस कारणसे दयासे पूर्ण चित्त होकर मैंने उस रत्नको दे दिया। तब असीम हर्षसे प्रफुल्ल मुखवाला होकर अनेक आशीर्वाद देकर वह ब्राह्मण कहीं चला गया। मार्गके परिश्रमसे थककर वहाँ मैंने निद्राके आनन्दका अनुभव किया। उसके बाद पृष्ठभागमें बँधे हुए दोनों बाहुओंसे युक्त उस ब्राह्मणने कोड़ेके प्रहारों से चिह्नित शरीरवाला और अनेक खड्गधारी पुरुषोंसे अनुगत होकर 'यह चोर है' कहकर मुझे दिखला दिया ।।5।।

6. परित्यक्तभूसुरा राजभटा रत्नावाप्तिप्रकारं मदुक्तमनाकर्ण्य भयरहितं मां गाढं नियम्य रज्जुभिरानीय कारागारम् 'एते तव सखायः 'इति निगडितान्कांश्चिन्निर्दिष्टवन्तो मामपि निगडिंतचरणयुगलमकार्षुः। किङ्कर्तव्यतामूढेन निराशक्लेशानुभवेनावाचि मया-'ननु पुरुषा वीर्यपरुषा।! निमित्तेन केन निर्विशथ कारावासदुःखं दुस्तरम्। यूयं वयस्या इति निर्दिष्टमेतैः, किमिदम्'? इति।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजपुरुषों द्वारा ब्राह्मण को छोड़ने का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- परित्यक्तः (बन्धनान्मुक्तः) भूसुरः (ब्राह्मणः) यैस्ते। राजभटाः = भूपयोधाः, मदुक्तं = मया उक्तम् (कथितम्) रत्नप्राप्तीत्यादिः रत्नस्य (मणेः) अवाप्तेः (प्राप्तेः) प्रकारम् (वृत्तान्तम्) अनाकर्ण्य अश्रुत्वा एव। भयरहितं = निर्भयं, मां, रज्जुभिः = रश्मिभिः गाढं = दृढं, नियम्य = बद्ध्वा, कारागारं = बन्धनगृहम्, आनीय = बानयनं कृत्वा, 'एते = इसे, तव, सखायः = सुहृदः इति = एवमुक्तवा,

निगडितान् = वद्धान, कांश्चित् = अनिर्दिष्टनामधेयांजनात्, निर्दिष्टवन्तः = दर्शितवन्तः, माम् अपि, निगडितं (बद्धम्) चरणयुगलम् (पादयुग्मम्) यस्य, तम्, अकार्षुः = कृतवन्तः। किंकर्तव्यतायां = (किं कर्तव्यमिति कर्मविषये) मूढेन (अज्ञेन), निर्गता आशा = (मुक्तितृष्णा) यस्मात् सः, तादृशः = यः क्लेशः (कष्टम्) तस्य अनुभूतिः = (अनुभवः), अबचि = उक्तम् । ननु = आमन्त्रणे, वीर्यपुरुषाः = वीर्येण (पराक्रमेण) परुषाः (कठोराः) हे पुरुषाः = हे पुमांसः! केन, निमित्तेन = कारणेन, दुस्तरं = दुःखेन तरितुं, शक्यं, दुर्निवार्यम्, खल् प्रत्ययः। कारावासदुःखं = कारागारक्लेशं, निर्विशथ = अनुभवथ। यूयं = भवन्तः, वयस्याः = सखायः, इति, एतैः = राजभटैः, निर्विष्टं = निर्देशः कृतः। इदम् = एतत्, किम् ? इति ।।6।।

भावार्थ:- ब्राह्मण को छोड़कर राजा के सिपाहियों ने मुझ से कहे गये रत्न पाने के वृत्तान्त को अनसुना करके भयरहित मुझको रस्सीसे कसकर बाँधकर जेलमें डालकर वहाँ पैर में बेड़ीवाले कुछ पुरुषों को 'ये तुम्हारे मित्र हैं' ऐसा निर्देश कर मेरे पैरों में भी बेड़ी डाल दी। कर्तव्य के विषय में मूढ़ और छूटने की आशा से रहित कष्ट का अनुभव करने वाले मैंने उन बन्दियों से कहा-पराक्रम से कठोर हे पुरुषों! किस कारणसे दुःखसे पार किये जानेवाले कारावास के दुःखका अनुभव कर रहे हो? तुम लोगों को ''यु तुम्हारे मित्र हैं'' कह कर इन लोगों ने मुझे कहा, यह क्या है ? ।।6।।

7. तथाविधं मामवेक्ष्य भूसुरान्मया श्रुतं लाटपतिवत्तान्तं व्याख्याय चैरवीराः पुनरवोचन् 'महाभाग! वीरकेतुमन्त्रिणो मानापालस्य किङ्करा वयम्। तदाज्ञया लाटेश्वरमारणाय रात्रौ सुरुङ्गद्वारेण तदागारं प्रविश्य तत्र राजाभावेन विषण्णा बहुधनमाहृत्य महाटवीं प्राविशाम। अपरेद्युश्च पदान्वेषिणो राजानुचरा बहवोऽभ्येत्यधृतधनचयानस्मान्परितः परिवृत्य दृढतर बद्ध्वा निकटमानीय समस्त वस्तुशोधनवेलायामेकस्यानध्यरत्नस्याभावेनास्मद्वधाय माणिक्यादानायाऽस्मान्किलाशृङ्खलयन्' इति।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में मनपाल के आदेश पर लाटदेशाधिपति की हत्या करने का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- तथाविधं = तादृशं, निगडितचरणयुगलम् इति भावः। माम् अवेक्ष्य = दृष्ट्वा, भूसुरात् = ब्राह्मणात्, मया, श्रुतम् = आकर्णितं, लाटपतिवृत्तान्तं = मत्तकालीदन्तं, व्याख्याय सविस्तरं कथयित्वा। चौरवीराः = तस्करशूराः। पुनः = भूयः। अवोचन् = उक्तवन्तः। महाभाग = महाभाग्य!, वयं वीरेत्यादिः = वीरकेतोः (राज्ञः), मन्त्रिणः = (अमात्यस्य) किङ्कराः = अनुचराः। तस्य =

(वीरकेतोः), मन्त्रिणः = (अमात्यस्य), आज्ञया = (आदेशेन), लाटेश्वरस्य = (मानपालस्य), मारणाय = (हननाय), रात्रौ = रजन्यां, सुरुङ्गयाः = (विलपथस्य), द्वारेण = (प्रतीहारेण), तदगारं = तस्य (लाटेश्वरस्य), अगारं = (वासस्थानम्), प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा। तत्र = लाटेश्वराऽगारे, राजाऽभावेन = राज्ञः (मत्तकालस्य), अभावेन = (राहित्येन), विषण्णः = विषादयुक्ताः, खिन्नाः सन्तः, बहुधनम् = अधिकं द्रव्यम्, आहृत्य = आहरणं कृत्वा, महाऽटवीं = महावनं, प्राविशाम = प्रवेशं कृतवन्तः।

अपरेद्युश्च = अपरस्मिन् दिने, पदाऽन्वेषिणः = पादन्यासगवेषिणः, बहवः = भूरयः, राजाऽनुचराः = भूपसेवकाः, अभ्येत्य = सम्मुखम् आगत्य। घृतः = (गृहातः), घनचयः = (द्रव्यसमूहः) यैस्तान् = अस्मान्, परितः = सर्वतः, परिवृत्य = संवेष्ट्य, दृढतरं = गाढतरं, बद्ध्वा = नद्ध्वा निकटं = समीपम्, आनीय = आनयनं कृत्वा, समस्तवस्तूनां = (सकलपदाऽर्थानाम्)। शोधनवेलायाम् = अन्वेषणसमये, एकस्य = अद्वितीयस्य, अनर्घ्यरत्नस्य = बहुमूल्यमणेः, अर्धम् = (मूल्यम्), अभावेन = राहित्येन, माणिक्यादानाय = माणिक्यस्य (रत्नस्य), आदानाय = माणिक्यदानपर्यन्तमिति भावः। अस्मान्, अशृङ्खलयन् = शृङ्खलाभिर्निगडितानकुर्वन् इति।।7।।

भावार्थः- बेड़ी डाले गये मुझे देखकर ब्राह्मण से सुने गये लाटदेशके राजाका वृत्तान्त बतलाकर उन वीर चोरों ने फिर कहा-''महाशय! हम लोग वीर केतु के मन्त्री मानपाल के नौकर हैं। उनकी आज्ञासे लाटराजको मारनेके लिए रातमें सुरंगके जरिए उनके निवासस्थानमें प्रवेश कर वहाँ राजाके न होनेसे खिन्न होकर बहुत-सा धन लेकर हमलोगोंने महावनमें प्रवेश किया। दूसरे दिन पैरोंके चिह्नोंसे अन्वेषण करनेवाले बहुतसे राजाके नौकरोंने आकर धनसमूहको लिये हुए हमलोगोंको चारों ओरसे घेर का दृढ़तासे बांधकर निकट लाकर चुराये गये सम्पूर्ण धनोंकी तलाशी करनेके समयमें एक बहुमूल्य रत्नके न होनेसे हमलोगोंको वध करने के लिए उस माणिक्यको लेने के लिए शृंखलाबद्ध कर दिया ।।7।।

8. श्रुतरत्नरत्नावलोकस्थानोऽहम् 'इदं तदेव माणिक्यम्' इति निश्चित्य भूदेवरदाननिमित्तं दुरवस्थामात्मनो जन्म नामधेयं युष्मदन्वेषणपर्यटनप्रकार चाभाष्य समयोचितैः संलापैर्मैत्रीमकार्षम्। ततोर्धरात्रै तेषां मम च शृङ्खलाबन्धन निर्भिद्य तैरनुगम्यमानो निद्रितस्य द्वारस्थगणस्यायुधजालमादाय पुररक्षान्पुरतोऽभिमुखागतान्पटुमराक्रमलीलयाभिद्राव्य मानपालशिविरं प्राविशम्। मानपालो निजकिङ्करेभ्यो मम कुलाभिमानवृत्तान्तं तत्कालीनं विक्रमं च निशम्य मामार्चयत्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने मनपाल द्वारा सोमदत्त का सत्कार वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- श्रुतम् = (आकर्णितम्), रत्नं = (माणिक्यम्), रत्नाऽवलोकनस्य = (माणिक्यदशनस्य) च स्थान = (स्थलम्) येन सः। अहम्, इदं = एतद्, तदेव = पूर्वोक्तमेव, माणिक्यं = रत्नम्। इति = इत्थं, निश्चित्य = निर्णीय। भूदेवाय = (ब्राह्मणाय), यद्दानं = (वितरणम्) तदेव निमित्तं = (कारणम्) यस्याः = सा, ताम्। आत्मनः = स्वस्य, दुरवस्थां = दुष्टदशां, आत्मनः= स्वस्य, जन्म = उत्पत्तिं, नामधेयं = नाम, नाम एव नामधेयं, स्वाऽर्थे = (प्रकृत्यर्थे) धेयप्रत्ययः। युष्माकं = (भवताम्) अन्वेषणाय = (मार्गणाय), यत्पयटनं = (भ्रमणम्) , तस्य प्रकारं = (भेदम्) च, आभाष्य = कथयित्वा। समयोचितैः = कालयोग्यैः, संलापैः = मिथोभाषणैः, मैत्रीं = मित्रताम्, अकार्ष = कृतवान्।

ततः = अनन्तरं, अर्धरात्रे = निशीथे, अर्धरात्रेः, तेषां = चैरवीराणां, मम च, शृङ्खलाबन्धनम् = अन्दुकबन्धनं, निर्भिद्य = भङ्क्त्वा, तैः = चैरवीरैः, अनगम्यमानः = अनुस्रियमाणः, निद्रितस्य = सुप्तस्य। द्वाःस्थगणस्य = द्वारपालसमूहस्य, आयुधजालं = प्रहरणसमूहम्, आदाय = गृहीत्वा। पुरतः = अग्रतः, अभिमुखागतान् = सम्मुखायातान्, पुररक्षान् = नगररक्षकान्, पटूवित्यादिः = पटूवी (समर्था), या पराक्रमलीला = (विक्रमविलासः) तया अभिद्राव्य = प्रपलाय्य, पलायितान्कृत्वेति भावः। मानपालशिविरं = मानपालसैन्यावासं, प्राविशं = प्रविष्टः।

मानपालः = वीरकेतुमन्त्री, निजकिङ्करेभ्यः = स्वसेवकेभ्यः। मम, कुलस्य = (वंशस्य) अभिमानस्य = आत्मसंमानस्य) च वृत्तान्तम् = (उदन्तम्) तत्कालीनं = तात्कालिकं, विक्रमं = पराक्रमं, च, निशम्य = श्रुत्वा, माम्, आर्चयत् = अपूजयत्, सत्कृतवानिति भावः ।।8।।

भावार्थ:- रत्न और रत्न देखनेके स्थानको सुनकर मैं ''यह (रत्न) वही माणिक्य है'' ऐसा निश्चय कर ब्राह्मणको दान देनेसे हुई अपनी दुर्दशा, अपना जन्म और नाम तथा आपको ढूँढनेके लिए की गई भ्रमणपद्धति भी कहकर समयके योग्य वार्तालापोंसे उन लोगोंसे मैंने मित्रता की। उसके बाद आधी रातमें मेरी और उन लोगोंकी बेड़ी तोड़कर उन लोगोंसे अनुगत होते हुए मैंने सोये हुए द्वारपालोंके हथियारोंको लेकर सम्मुख आये हुए नगररक्षकोंको कुशल पराक्रमके विलाससे भगाकर मानपालके शिविर (सैन्यावास) में प्रवेश किया। मानपालने अपने नौकरोंसे मेरे वंश और अभिमान का वृत्तान्त और उस समयका पराक्रम भी सुनकर मेरा सत्कार किया ।।8।।

9. परेद्युर्मतकालेन प्रेषिताः केचन पुरुषा मानपालमुपेत्य 'मन्त्रिन्! मदीयराजमन्दिरे सुरुङ्गया बहुधनमपहृत्य चोरवीरा भवदीयं कटकं प्राविशन्, तानर्पय। नो चेन्महाननथैः भविष्यति' इति क्रूरतर वाक्यमब्रुवन्। तदाकर्ण्य रोषारुणितनेत्रो मन्त्रीं 'लाटपतिः कः? तेन मैत्री का? पुनरस्य वराकस्य सेवया किं लभ्यम्'? इति तान्निरभत्र्सयन्। ते च मानपालेनोक्तं विप्रलापं मत्तकालाय तथैवाकथयन्। कुपितोऽपि लाटपतिर्दोर्वीर्यगर्वेणाल्पसैनिकसमेतो योद्धुमभ्यगात्। पूर्वमेव कृतरणनिश्चयो मानी मानपालःसंनद्धयोधे युद्धकामो भूत्वा निःशङ्कं निरगात्। अहमपि सबहुमानं मन्त्रिदत्तानि बहुलतुरंगमापेतं चतुरसारथिं रथं च दृढतरं कवचं मदनुरूपं चापं च विविधबाणपूर्ण तूणीरद्वय रणसमुचितान्यायुधानि गृहीत्वा युद्धसनद्धो मदीयबलविश्वासेन रिपुद्धरणोद्युक्तं मन्त्रिणमन्वगाम्। परस्परमत्सरेण तमुलसंगरकरमुभयसैन्यमतिक्रम्य समुल्लसद्भुजाटोपेन बाणवर्षं तदङ्गे विमुञ्चन्नरातीन्प्राहरम्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने मानपाल व लाटपति का युद्ध वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- परेद्यु = परस्मिन् दिने। मत्तकालेन = लाटपतिना, प्रेषिताः = प्रहिताः, केचन पुरुषाः = जनाः, मानपालं = वीरकेतुमन्त्रिणम्, उपेत्य = समीपमागत्य। मन्त्रिन् = अमात्य!, चैरवीराः = दस्युशूराः। मदीयं = (मामकम्) यद्राजमन्दिरं = (राजप्रासादः) तस्मिन्। सुरुङ्गया = बिलपथेन, बहुधन = प्रचुरद्रव्यम्, अपहृत्य = मोषित्वा, भवदीयं = भावत्कं, कटकं = सेनावासं, प्राविशन् = प्रवष्टिाः। तान् = चोरवीरान्, समर्पय = प्रत्यर्पय। नो चेत् = यद्येवं न क्रियते, महान्, अनर्थः = सङ्कष्टं, संभविष्यति = समुत्पत्स्यते। इति = एवं, क्रूरतरं = परुषतरं, वाक्यं = पदसमूहम्, अब्रुवन् = अवोचन्। तत् = वाक्यम्, आकण्र्य = श्रुत्वा, रोषेण (कोपेन अरुणिते (रक्तीकृते) नेत्रे (नयने) यस्य सः। मन्त्री = मानपालः, लाटपतिः = लाटाऽधिपतिः, कः? तेन, सहेति शेषः, मैत्री = मित्रता, का ? पुनः = भूयः, अस्य, वराकस्य = निकृष्टस्य, सेवया = परिचर्यया, किं = फलं, लभ्यं = लब्धुं शक्यम्? इति = एव, तान् = मत्तकालदूतान्, निरभत्र्सयत् = अतर्जयत्। ते च = मत्तकालदूताश्च, मानपालेन, उक्तं = कथितं, विप्रलापं = विरोधोक्तिं, मत्तकालाय = स्वस्वामिने, तथैव = तेन प्रकारेणैव, अकथयन् = कथितवन्तः। कुपितोऽपि = क्रुद्धोऽपि, लाटपतिः = मत्तकालः, = दोर्वीर्यस्य = (बाहुबलस्य), गर्वेण = (अभिमानेन), अल्पसैनिकैः = (न्यूनसैन्येः) समेतः= सहित: सन्। योद्धं = युद्धं कर्तुम्, अभ्यगात् = सम्मुखं गतः। पूर्वमेव = प्रागेव। कृतः = (विहितः), रणस्य = (युद्धस्य), निश्चयः = (निर्णयः) येन सः, मानी = अभिमानी, मानपालः = वीरकेतुमन्त्री, सनद्धाः = (धृतकवचाः), योधाः = (भटाः) यस्य सः,

युद्धकामः = रणाऽभिलाषी। भूत्वा, निःशङ्क = निर्भयमिति भावः। निरगात् = निर्गतः। अहम = अहमपि, सबहुमानम् = अधिकसत्कारपूर्वकं, मन्त्रिदत्तानि = अमात्यविर्णीर्णानि, बहुलाः = (बहवः), ये तुरङ्गाः = (अश्वाः), तैरुपेतं = (युक्तम्), रथं = स्यन्दनं, दृढतरं = गाढतरं, कवचं = वर्म, मदनुरुपं = मदुचितं, चाप = धनुः, विविधाः = (अनेकप्रकाराः), ये बाणाः = (शराः) तैः पूर्णं = (पूरितम्), तूणीरद्वयम् = इषुधिद्वितयं, रणसमूचितानि = युद्धोपयुक्तानि, आयुधानि = प्रहरणानि, गृहीत्वा = आदाय, युद्धसंनद्धः = युद्धाय (रणाय) सन्नद्धः = (धृतकवचः) सन्। मदीयं = (मामकीनम्) यद् बलं = (सामर्थ्यम्), तस्य विश्वासेन = (प्रत्ययेन), रिपुद्धरणोद्युक्तं = रिपुणाम् (शत्रूणाम्), उद्धरणे = (उन्मूलने), उद्युक्तम् = (उद्योगयुक्तम्), मन्त्रिणं = मानपालम्, अन्वगाम् = अन्वगमम्। परस्परमत्सरेण = अन्योन्यद्वेषेण, तुमुलसङ्गरकरं = संकुलयुद्धकारकम्, उभयसैन्यं = पक्षद्वयसैनिकम्, अतिक्रम्य = लङ्घयित्वा, समुल्लसन्तौ = (शोभमानौ) यौ भुजौ = (बाहू) तयोः आटोपेन = (गर्वेण), तदङ्गे = शत्रुसैन्यदेहे, बाणवर्ष = शरवृष्टिं, विमुंचन् = प्रहरन्, अरातीन् = शत्रून्, प्राहरम् प्रहारम् = अकरवम् ॥9॥

भावार्थः- दूसरे दिन मत्तकालसे भेजे गये कुछ पुरुषोंने मानपालके पास आकर ''मन्त्रीजी! मेरे राजमन्दिरमें सुरंगसे बहुतसा धन चुराकर बहुतसे वीर चोर तुम्हारे सैन्यावासमें घुसे हैं। उन्हें हमें सौंप दो। नहीं तो महान् अनर्थ हो जायगा'' ऐसा अत्यन्त कठोर वाक्य कहा। उसे सुनकर क्रोधसे लाल नेत्रोंवाले मन्त्रीने ''लाटपति कौन है ? उनसे हमारी मित्रता क्या है? उन बेचारेकी सेवासे क्या मिलता है'' ? ऐसा कह कर उनलोगोंकी भत्र्सना की। उन लोगोंने भी मानपालसे कहे गये विरोधके वचनको मत्तेकालको ज्योंका त्यों कह दिया। लाटपति मत्तकाल क्रुद्ध होकर भी अपने बाहुबलके घमण्डसे थोड़ी-सी सेनाको लेकर लड़नेके लिए चला। पहलेसे ही युद्धका निश्चय कर अभिमानी मानपाल भी सिपाहियोंको तैयार कर युद्धकी इच्छा कर निःशंक होकर निकला। मैं भी संमानपूर्वक मन्त्रोंसे दिये गये बहुत से घोड़ों से युक्त, चतुर सारथिवाला रथ, बहुत मजबूत कवच, मेरे योग्य धनुष, बहुतसे बाणोंसे पूर्ण दो तरकश और युद्ध के योग्य हथियारोंको लेकर युद्धके लिए तैयार होकर मेरे बलके विश्वाससे शत्रुको नष्ट करनेके लिए उद्योग करनेवाले मन्त्रीका अनुगामी होकर गया। परस्पर द्वेषसे तुमुल संग्राम करनेवाली दोनों ओरकी सेनाका अतिक्रमण कर शोभित होनेवाले बाहुओंके गर्वसे शत्रुसेनाके अंगमें बाणकी वृष्टि करते हुए मैंने शत्रुओंपर प्रहार किया ॥9॥

10. ततोऽतिरयतुरङ्गमं मद्रथं तन्निकट नीत्वा शीघ्रलङ्घनोपेततदीयरथोऽहमरातेः शिरःकर्तनमकार्षम्। तस्मिन्पतिते तदवशिष्टसैनिकेषु पलायितेषु नानाविधहयगजादिवस्तुजातमादाय परमानन्दसम्भृतो मन्त्री ममानेकविधां सम्भावनामकार्षीत्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने लाटपति की मृत्यु का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- ततः = अनन्तरम्, अतिरयाः = (अतिवेगवन्तः), तुरङ्गमाः = (अश्वाः यस्य, तं, मद्रथं मत्स्यन्दनं, तन्निकटं = तस्य (मानपालस्य), निकटं = (समीपम्), नीत्वा = प्रापय्य, शीघ्रलङ्घनेन = (सत्वराऽतिक्रमणेन), उपेतः = (प्राप्तः), तदीयः = (मानपालसंबद्धः), रथः = (स्यन्दनम्), येन सः = तादृशोऽहम्, अरातेः = शत्रोः लाटपतेरिति भावः। शिरःकर्तनं = मस्तकच्छेदनम्, अकार्षं = कृतवान्।

तस्मिन् = मत्तकाले, पतिते = मृते सतीति भावः। तस्य = (मत्तकालस्य), अवशिष्टेषु = (अवशेषयुक्तेषु), सैनिकेषु = (सैन्येषु), पलायितेषु = कृतपलायनेषु सत्सु, नाना विधम् = (बहुपकारम्), यद् हयगजादिवस्तुजातं = (तुरङ्गहस्तिप्रभृतिपदार्थसमूहः), तत्, आदाय = गृहीत्वा। परमानन्देन = (उत्कृष्टहर्षेण), संनतः = (अवनतः), मन्त्री = मानपालः, मम, अनेकप्रकारां = नानाविधां, संभावनां = सत्कारम्, अकार्षीत् = कृतवान् ॥10॥

भावार्थ:- तब अति वेग वाले घोड़ों से युक्त मेरे रथ को शत्रु के पास पहुँचाकर उसके रथ को शीघ्र लंघन कर मैंने मत्तकाल के शिर का छेदन कर दिया। उसके मरनेपर बचे हुए सैनिकों के भागने पर बहुतेरे घोड़े, हाथी आदि पदार्थसमूह लेकर अतिशय आनन्द से अवनत मन्त्री ने मेरा अनेक प्रकार का सत्कार किया॥10॥

11. मानपालप्रेषितात्तदनुचरादेनदखिलमुदन्तजातमाकर्ण्य सन्तुष्टमना राजाभ्युद्रतो मदीयपराक्रमे विस्मयमानः समहोत्सवममात्यबान्धवानुमत्या शुभदिने निजतनयां मह्यमदात्। ततो यौवराज्याभिषिक्तोऽहमनुदिनमाराधितमहीपालचित्तो वामलोचनयानया सह नानाविधं सौख्यमनुभवन्भवद्विरहवेदनाशल्यसुलभवैकल्यहृदयः सिद्धादेशेन सुहृज्जनावलोकनफल प्रदेश महाकालनिवासिनः परमेश्वरस्याराधनायाद्य पत्नीसमेतः समागतोऽस्मि। भक्तवत्सलस्य गौरीपतेः कारुण्येन त्वत्पदारविन्दसदर्शनानन्दसन्दोहो मया लब्धः' इति।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में सोमदत्त व वामलोचना का विवाह प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- मानपालेन = (मन्त्रिणा), प्रेषितात् = (प्रहितात्), तस्य = (मानपालस्य), अनुचरात् = (सेवकात्), एनत् = इदम्, अखिलं = समस्तम्, उदन्तजातं = वृत्तान्तसमूहम्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, सन्तुष्टमनाः = परितुष्टचित्तः, राजा = वीरकेतुः, अभ्युद्रतः = समानार्थं सम्मुखप्राप्तः सन्। मदीयपराक्रमे = पद्विक्रमे। विस्मयमानः = आश्चर्यं कुर्वन्। समहोत्सवः = महोत्सवपूर्वकम्, अमात्यबान्धवानाम् = (मन्त्रिबन्धूनाम्), अनुमत्या = (अनुमोदनेन), शुभदिने = शुभदिवसे, निजतनयां = स्वदुहितरं, वामलोचनामिति भावः। मह्यम्, अदात् = दत्तवान्।

यौवराज्याऽभिषिक्तः = यौवराज्ये (युवराजकर्मणि), अभिषिक्तः= जाताऽभिषेकः, अनुदिनं = प्रतिदिनम्, आराधितं = (सन्तोषितम्), महीपालस्य = (राज्ञो वीरकेतोः), चित्तं = (चेतः), येन सः। अनया = सम्मुखस्थितया, वामलोचनया = सुन्दरनयनया अथवा तन्नामधेयया, नानाविधम् = अनेकप्रकारं, सौख्यं = सुखम्, अनुभवन् = निर्विशन्। भवद्विरहेण = (त्वद्वियोगेन) यत् वेदनाशल्यं = (तीव्रयातनारूपः शङ्कुः), तेन सुलभं = (प्राप्यम्), वैकल्यं = (विकलता विह्वलतेति भावः) यस्मिस्तादृशं हृदयं = (चित्तम्) यस्य सः। तादृशोऽहं, सिद्धादेशेन सिद्धस्य = (प्राप्तयोगसिद्धेः, तादृशस्य महात्मनः), आदेशेन = (आज्ञया), सुहृज्जनस्य = (मित्रजनस्य अवलोकनं = (दर्शनम्) एवं फलं = (सुपरिणामः) यस्मिंस्तम्। तादृशं प्रदेशं = स्थानम्। महाकालनिवासिनः = महाकालनामकस्थाने निवासकारिणः, परमेश्वरस्य = भगवतः। आराधनाय = पूजनाय, अद्य = अस्मिन्दिने, पत्नीसमेताः = भार्यायुक्तः, समागतः = समायातः, अस्मि = भवामि ॥11॥

भावार्थ:- मानपालसे भेजे गये उनके नौकरसे संपूर्ण वृत्तान्त सुनकर संतुष्ट चित्त राजाने मेरी अगवानी कर मेरे पराक्रममें आश्चर्यकर महोत्सवके साथ मन्त्री ओर बान्धवोंकी संमति से शुभ दिनमें अपनी पुत्रीको मुझे समर्पण किया। तब यौवराज्यमें अभिषिक्त होकर मैं प्रतिदिन राजाके चित्तको सन्तुष्ट कर इस सुन्दरीके साथ अनेक प्रकारके सुख का अनुभव करता हुआ मैं आपके वियोगकी वेदनारूप शल्यसे सुलभ विह्वलता वाले चित्तसे युक्त होकर सिद्धकी आज्ञासे महाकाल (नामक स्थान) में निवास करनेवाले परमेश्वरकी आराधना करनेके लिए पत्नीसे युक्त होकर मित्रजनके दर्शनरूप फलवाले इस प्रदेशमें आया हूँ। भक्तवत्सल पार्वतीपतिकी करुणासे आपके चरणकमलोंके दर्शनके आनन्दका समूह मैंने पा लिया ॥11॥

12. तन्निशम्याभिनन्दितपराक्रमो राजवाहनस्तन्निरापधदण्डे दैवमुपालम्भ्य तस्मै क्रमेणात्मचरितं कथयामास। तस्मिन्नवसरे पुरतः पुष्पोद्भवं विलोक्य ससम्भ्रम निजनिटिलतटस्पृष्टचरणाङ्गुलिमुदञ्जलिममुंगाढमालिङ्ग्यानन्दवाष्पसङ्कुलसंफुल्ललोचनः 'सौम्य सोमदत्त! अयं स पुष्पोद्भवः' इति तस्मै तं दर्शयामास।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने राजवाहन द्वारा सोमदत्त की प्रशंसा का वर्णन एवं पुष्पोद्भव की राजवाहन से वार्ता का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तद् = वाक्यं, निशम्य = श्रुत्वा। अभिनन्दितः = (प्रशंसितः), पराक्रमः = विक्रमः, येन सः। राजवाहनः = नृपकुमारः। तस्य = (सोमदत्तस्य), निरपराधदण्डे = अपराधाऽभावेऽपि दमने, दैवं = भाग्यम्, उपालभ्य = उपालम्भ कृत्वा, निन्दयित्वेति भावः। तस्मै = सोमदत्ताय, क्रमेण = अनुक्रमेण, आत्मचरिर्त = स्वचरित्र्र, कथयामास = कथितवान्।

मस्मिन् अवसरे = प्रसङ्गे, पुरतः = अग्रतः, पुष्पोद्भवं = रत्नोद्भवपुत्रं = स्वमित्रं, विलोक्य = दृष्ट्वा। ससंभ्रमं = सत्वरं, निजं = (स्वम्), यत् निटिलतटं = (भालभागः), तस्मिन् स्पृष्टाः = (आमृष्टाः), चरणाङ्गुलयः = पादाङ्गुलयः, राजवाहनस्येति शेषः), येन तम्। उदञ्जलिं = कृताऽञ्जलिम्, अमुं = पुष्पोद्भव, गाढं = दृढम्, आलिङ्ग्य = आश्लिष्य। सङ्कुले = (व्याप्ते) आनन्दबाष्पेण = (हर्षाऽश्रुजले), सफुल्ले = (विकसिते), लोचने = (नयने) यस्य सः। तादृशो = राजवाहनः, सौम्य = सज्जन! सोमदत्त!, अयं = सन्निहितं, सः = पुरातनसुहृत्, पुष्पोद्भवः इति = कथयित्वा, तस्मै = सोमदत्ताय, तंत्र =पुष्पोद्भवं, दर्शयामास = दर्शितवान्।।12।।

भावार्थ:- यह वाक्य सुनकर पुष्पोद्भव सोमदत्तके पराक्रमका अभिनन्दन कर राजवाहनने सोमदत्तके अपराधके विना दण्ड पानेसे भाग्यका उपालम्भक उनको क्रमसे अपना चरि= कहा। उस अवसर में अपने पास पुष्पोद्भवको देखकर जल्दबाजीके साथ अपने ललाटसे चरणोंकी अंगुलियोंका स्पर्श करनेवाले अंजलि बाँधे हुए पुष्पोद्भवको गाढ आलिंगन कर हर्षाश्रुसे विकसित नेत्रोंवाला होकर राजवाहनने "सौम्य सोमदत्त! ये पुष्पोद्भव हैं" ऐसा कहकर पुष्पोद्भव को दिखलाया।।12।।

13. तौ च चिरविरहदुःख विसृज्यान्योन्यालिङ्गनसुखमन्वभूताम्। ततस्तस्यैव महीरुहस्य छायायामुपविश्य राजा सादरहासमभाषतवयस्य! भूसुरकार्य करिष्णुरहं मित्रगणो विदितार्थः सर्वथान्तरायं करिष्यतीति निद्रितान्भवतः परित्यज्य निगाम्। तदनु प्रबुद्धो वयस्यवर्णःकिमिति निश्चित्य

मदन्वेषणाय कुत्र गतवान्। भवानेकाको कुत्र गतः’ ? इति। सोऽपि ललाटतटचुम्बदञ्जलिपुटः सविनयमलपत्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने पुष्पोद्भव एवं राजवाहन की वार्ता का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तौ च = सोमदत्तपुष्पोद्भवौ च। चिरविरहस्य = (दीर्घकालवियोगस्य), यद् दुःखं = (कष्टम्), तत् विसृज्य = त्यक्तवा। अन्योन्ययोः = (परस्परयोः) यत् आलिङ्गनसुखम् = (आश्लेशाऽऽनन्दः) तत्, अन्वभूताम् = अनुभूतवन्तौ। ततः = अनन्तरं, तस्यैव = पूर्वोक्तस्यैव, महीरुहस्य = पुनामस्येति भावः। छायायाम् = अनातपे स्थाने, उपविश्य = निषद्य। राजा = राजवाहनः। सादरेत्यादिः = सादरः = (आदरसहितः) हासः = (हास्यम्), अभाषत = भाषितवान्।

वयस्य = हे मित्र!, भूसुरकार्यं = ब्राह्मण = (मातङ्ग) कृत्यं, करिष्णुः = करणशीलः, अहं, मित्रगणः = सुहृत्समूहः, विदिताऽर्थः = ज्ञातप्रयोजनः सन्, सर्वथा = सर्वैः प्रकारैः। अन्तराय = विघ्नं, करिष्यन्ति = विधास्यन्ति, इति = कारणेन, निद्रितान् = सुप्तान्, भवतः = युष्मान्। परित्यज्य = परिहाय, निरणाम् = निर्गतः, तदनु = तदनन्तरं, प्रबुद्धः = जागरितः, वयस्यवर्गः = सुहृत्समूहः, किमिति = किमपि कार्यं, निश्चित्य = निर्णीय, मदन्वेषणाय = मन्मार्गणाय, कुत्र = क्व गतः, भवान् = त्वम्, एकाकी = एककः, कुत्र = कस्मिन्नपि स्थाने, गतः = प्राप्तः। सोऽपि = पुष्पोद्भवोऽपि। ललाटतटे = (स्वभालभागे), चुम्बितम् = (स्पृंशदिति भावः) अंजलिपुटं = (करसंपुटम्) यस्य सः। सविनयं = नम्रतापूर्वकम्, अलपत् = अभाषिष्ट, ।13।।

भावार्थ:- सोमदत्त और पुष्पोद्भव ने बहुतकाल से हुए वियोगके दुःख को छोड़कर परस्पर आलिंगन के सुखका अनुभव किया। उसके बाद उसी वृक्षकी छायामें बैठकर राजा (राजवाहन) ने आदर और हास्यके साथ कहा-मित्र! ब्राह्मण (मातंग) का कार्य करने वाला मैं ‘मित्रगण इस बातको जानकर सर्वथा विघ्न करेंगे’ ऐसा सोचकर सोये हुए आप लोगोंको छोड़कर निकल गया। इसके बाद जागकर मित्रवर्ग क्या निश्चय करके मेरे अन्वेषण के लिए कहाँ गये ? और आप अकेले कहाँ गये थे ? वे (पुष्पोद्भव) भी ललाट में अंजलि रखकर नम्रतापूर्वक कहने लगे।।13।।

4.4 सारांश:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान चुके है कि सोमदत्त कौन है ? उनके भ्रमण वृत्तान्त, वीरकेतु व मत्तकाल का वर्णन, मानपाल के आदेश पर लाटदेशाधिपति की हत्या, मानपाल द्वारा सोमदत्त का सत्कार, मानपाल एवं लाटपति का युद्ध वर्णन, सोमदत्त व वामलोचना के विवाह वर्णन को सम्यक रूप से इस इकाई के माध्यम से आपने जाना।

4.5 शब्दावली:-

उदिता	-	उत्पन्न होना
दया	-	करूणा
नद	-	प्रवाह
तनया	-	पुत्री
भूसुर	-	ब्राह्मण
वीर्यपुरूषा	-	पराक्रमी पुरूष
वृत्तान्त	-	विस्ता पूर्वक कहे जाने वाला

4.6 बोध प्रश्न:-

अभ्यास प्रश्न 1-

(1) बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1. वामलोचना किसकी पुत्री है।

(क) वीरकेतु (ख) राजवाहन

(ग) वामदेव (घ) इनमें से कोई नहीं

2. लाटदेशाधिपति का राजा कौन है।

(क) राजहंस (ख) मत्तकाल

(ग) मानसार (घ) प्रहारवर्मा

3. तृतीय उच्छवास का दूसरा क्या नाम है।

(क) कुमारोत्पत्तिचरितं (ख) द्विजोत्पत्तिचरितं

(ग) सोमदत्तचरितं (घ) इनमें से कोई नहीं

4. चतुरंगिणी सेना में होते हैं।

(क) हाथी (ख) रथ

(ग) घोड़े और पैदल (घ) उक्त सभी

5. सोमदत्त का भ्रमण वृत्तान्त किस उच्छवास में वर्णित है।

(क) तृतीय (ख) चतुर्थ

(ग) प्रथम (घ) पंचम

6. वीरकेतु के मन्त्री का क्या नाम है।

(क) मानधनी (ख) मानपाल

(ग) मत्तकाल (घ) इनमें से कोई नहीं

7. वामलोचना का विवाह किससे होता है।

(क) सुमित्र (ख) राजवाहन

(ग) सोमदत्त (घ) मातंग

8. पुष्पोद्भव एवं राजवाहन की वार्ता का वर्णन किस उच्छवास में वर्णित है।

(क) चतुर्थ (ख) पंचम

(ग) प्रथम (घ) तृतीय

(2) निम्न वाक्यों में सही के सामने (√) और गलत के सामने (×) का चिन्ह लगायें-

1. मानपाल वीरकेतु का मन्त्री है। ( )
2. लाट देश का राजा वीरकेतु है। ( )
3. वामलोचना का विवाह मत्तकाल के साथ हुआ। ( )
4. मनपाल सोमदत्त का आदर सत्कार करते हैं। ( )
5. ब्राह्मण का वर्णन तृतीय उच्छवास में मिलता है। ( )

(3) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. मत्तकालो नाम लाटेश्वरो देशस्यास्य पालयितुर्वीरकेतोस्तनयां .... नाम तरुणीरत्नमसमानलावण्यं श्रावं श्रावमवधूतदुहितृप्रार्थनस्य तस्य नगरीमरौत्सीत्।

2. .... निराशक्लेशानुभवेनावाचि मया-‘ननु पुरुषा वीर्यपरुषा।!

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास - उमाशंकरशर्मा ‘ऋषि’।
2. संस्कृत वांगमय का वृहद् इतिहास - पं० बलदेव उपाध्याय।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास - कन्हैया लाल पोद्दार।
4. संस्कृत साहित्य का इतिहास - पद्मभूषण आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
5. संस्कृत साहित्य का आधुनिक इतिहास, डा0 राधावल्लभ त्रिपाठी, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी।

4.8 अन्य सहायक पुस्तकें:-

1. दशकुमारचरितम् - महाकवि दण्डी, नारायण राम आचार्य, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली ।
2. दशकुमारचरितम् - आचार्य शेशराज शर्मा, 'रेग्मी' चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी ।
3. दशकुमारचरितम् - महाकवि दण्डी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी ।
4. दशकुमारचरित - आचार्य दण्डी ।
5. संस्कृतसुकवि - आचार्य बलदेव उपाध्याय ।

4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर:-

(1) बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1.(क) 2. (ख) 3. (ग) 4. (घ) 5. (क) 6. (ख) 7. (ग) 8. (घ)

(2).

1. सही 2. गलत 3. गलत 4. सही 5. सही

(3).

1. वामलोचनां
2. किङ्कर्तव्यतामूढेन

4.10 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. सोमदत्त का परिचय दीजिये।
2. वामलोचना का परिचय दीजिये।
3. तृतीय उच्छवास का कथासार लिखिए।

खण्ड-द्वितीय, इकाई-5
चतुर्थ उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 चतुर्थ उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)
5.4 सारांश
5.5 शब्दावली
5.6 बोध प्रश्न
5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.8 अन्य सहायक पुस्तकें
5.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
5.10 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना:-

प्रिय शिक्षार्थियो!

इससे पूर्व की इकाई में आपने सोमदत्त के यात्रा वृत्तान्त को जाना। इस इकाई में आप पुष्पोद्भव के बारे में जानेंगे। साथ ही बालचन्द्रिका से प्रेम, बन्धुपाल के साधु विचारों एवं दारूवर्मा के वध और मिलन का विस्तार पूर्वक अध्ययन करेंगे।

5.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात आप—

- ❖ पुष्पोद्भव के वृतान्त से परिचित हो सकेंगे।
- ❖ बालचन्द्रिका के बारे में जान पाएंगे।
- ❖ बन्धुपाल के शुभ शकुन विचार को जान पाएंगे।
- ❖ दारूवर्मा के वध के प्रसंग को जान पाएंगे।
- ❖ राजवाहन पुष्पोद्भव का उज्जयिनी पुरी में प्रवेश वर्णन को जान पाएंगे।

5.3 चतुर्थ उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)

1. 'देव! महीसुरोपकारायैव देवो गतवानिति निश्चित्यापि देवेन गन्तव्यं देशं निर्णेतुमाशक्रुवानो मित्रगणः परस्परं वियुज्य दिक्षु देवमन्वेष्टुमगच्छन्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने पुष्पोद्भव व राजवाहन की वार्ता प्रसंग का वर्णन किया है।

व्याख्या:- देव = राजन्!, महीसुरस्य = (ब्राह्मणस्य, मातङ्गस्य), उपकाराय = (उपकृत्यै), एव देवः = भवान्, गतवान् = गतः, इति = इत्थं, निश्चित्य = निर्णीय, अपि, देवस्य = भवतः, गन्तव्यं = गमनीयं देशं = जनपदं, निर्णेतुं = निश्चेतुम्, अशक्रुवानः = असमर्थः, मित्रगणः = सुहृत्समूहः, परस्पर = मिथः, वियुज्य त्र वियु = भूत्वा, दिक्षु = प्राच्यादिकाष्ठासु, देवं = भवन्तम्, अन्वेष्टुं = मार्गयितुम्, अगच्छत् = गतः॥1॥

भावार्थः- राजन्! ब्राह्मण के उपकार के लिए ही आप गये हैं ऐसा निश्चय करके भी आपसे गन्तव्य देश का निर्णय करनेमें समर्थ नहीं होते हुए मित्रगण परस्पर बिछुड़कर अनेक दिशाओं में आपका अन्वेषण करने के लिए चले गये ॥1॥

2. अहमपि देवस्यान्वेषणाय महीमटन्कदाचिदम्बरमध्यगतस्याम्बरमणेः किरणमसहिष्णुरेकस्य गिरितटमहीरुहस्य प्रच्छायशीतले तले क्षणमुपाविशम्। मम पुरोभागे दिनमध्यसंकुचितसर्वावयवां कूर्माकृतिं मानुषच्छायां निरीक्ष्योन्मुखो गगनतलान्महारयेण पतन्तं पुरुषं कञ्चिदन्तराल एव दयोपनतहृदयोऽहमवलम्ब्य शनैरवनितले निक्षिप्य दूरापातवीतसंज्ञं तं शिशिरोपचारेण विबोध्य शोकातिरिकेणोद्गतबाष्पलोचनं तं भृगुपतनकारणमपृच्छम्।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने पुष्पोद्भव का वन भ्रमण घटित घटनाओं का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- अहमपि = पुष्पोद्भवो अपि, देवस्य = भवतः, अन्वेषणाय = मार्गणाय, महीं = भूमिम्, अटन् = भ्रमन्, कदाचित् = जातुचित्, अम्बरमध्यगतस्य = आकाश मध्य भाग प्राप्तस्य, अम्बरमणेः = सूर्यस्य, किरणं = करम्, असहिष्णुः = असहनशीलः सन्। एकस्य गिरितटे = (पर्वताऽधोभागे), यो महीरुहः = (वृक्षः) तस्य प्रच्छायेन = (प्रकृष्टाऽनातपेन), शीतले = (शीते), तादृशे तले = अधोभागे। क्षणं = कंचितत्कालं, उपाविशम् = उपविष्टः। मम पुरोभागे = अग्रभागे, दिनमध्ये = (मध्याह्न), सङ्कुचिताः = (जातसङ्कोचाः), सर्वे = (सकलाः), अवयवाः = (अङ्गानि), यस्यास्ताम्। अतएव कूर्माकृतिं = कूर्मस्य (कच्छपस्य) इव आकृतिः = (आकारः) यस्यास्ताम् मानुषच्छायां = मानवच्छायां, निरीक्ष्य = दृष्ट्वा, उन्मुखः = ऊर्ध्ववदनः सन्।

गगनतलात् = आकाशमण्डलात्, महारयेण = महावेगेन, पतन्तं = निपतन्तं, पुरुषं = पुमांसम्, अन्तराले = मध्ये एव, दयया = (करुणया), उपनत = (नभ्रितं), हृदयं = (चित्तम्) यस्य सः। अहम्, अवलम्ब्य = गृहीत्वा, शनैः = मन्दम्, अवनितले = भूतले, निक्षिप्य = निधाय, दूरात् = (विप्रकृष्टप्रदेशात्), आपातेन = (आपतनेन), वीतसंज्ञः = वीता। (अपगता), संज्ञा = (चेतना) यस्य, तं = पुरुषं, शिशिरोपचारेण = शीतलोपचारेण, विबोध्य = प्रकृतिमापाद्य। शोकाऽतिरेकेण = शोकस्य (मन्योः) अतिरेकेण = (अतिशयेन), उद्गतं = (निर्गतम्), बाष्पम् = (अश्रु) याभ्यां ते, तादृशी लोचने = (नयने) यस्य सः। तं भूग्वित्यादिः = भृगोः (प्रपातात्), पतनस्य = (निपतनस्य), कारणम् = (हेतुम्), अपृच्छं = पृष्टवान् ॥2॥

भावार्थ:- मैं भी आपको ढूँढने के लिए पृथ्वी में भ्रमण करता हुआ किसी समय आकाश के मध्य भाग में प्राप्त सूर्य की किरण सहने में असमर्थ होकर पर्वत के तट पर स्थित वृक्ष **चन्द्र** की घनी छाया से ठण्डे निम्न भाग में कुछ समय बैठा। मेरे अग्रभाग में दिन के मध्य में संकुचित समस्त अवयवों वाली कछुवे के समान आकार वाली मनुष्यकी छाया देखकर ऊपर मुँह करके आकाशतले बड़े वेग से गिरते हुए किसी पुरुष को बीच में ही दयायुक्त हृदय वाला होकर मैंने अवलम्बन कर धीरे-धीरे भूतल में रखकर दूर से गिरने से बेहोश उस पुरुष को ठण्डे उपचार से होश में लाकर ज्यादा शोक से आँखों में आँसू भरे हुए पहाड़ से गिरने का कारण पूछा ॥2॥

3. सोऽपि कररुहैरश्रुकणानपनयन्नभाषत- सौम्य! मगधाधिनाथामात्यस्य पद्मोद्भवस्यात्मसम्भवो रत्नोद्भवो नामाहम्। वाणिज्यरूपेण कालयवनद्वीपमुपेत्य कामपि वणिक्कन्यकां परिणीय तया सह प्रत्यागच्छन्नम्बुधौ तोरस्यानतिदूर एव प्रवहणस्य भग्नतया सर्वेषु निमग्नेषु कथैकथमपि दैवानुकूल्येन तीरभूमिमभिगम्य निजाङ्गनावियोगदुःखार्णवे प्लवमानः कस्यापि सिद्धतापस स्यादेशादरेण षोडश हायनानि कथचिन्ननीत्वा दुःखस्य पारम् अनवेक्षमाणः गिरिपतनमकार्षम्' इति।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में रत्नोद्भव की आपबीती का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- सोऽपि = पुरुषोऽपि, कररुहैः = नखैः, अश्रुकणान् = नयनजललवान्, अपनयन् = दूरीकुर्वन, अभाषत = भाषितवान्, सौम्य = सज्जन!, मगधाऽधिनाथस्य = (मगधेश्वरस्य, राजहंसस्येति भावः), अमात्यस्य = (मन्त्रिणः), पद्मोद्भवस्य आत्मसंभवः = पुत्रः, अहं, रत्नोद्भवो नाम = नाम्नारत्नोद्भवः। वाणिज्यस्य = (वणिक्कर्मणः), रूपेण = (स्वभावेन), कालयवनद्वीपं = कालयवनं नामाऽन्तरीपम्, उपेत्य = संप्राप्य, कामपि, वणिक्कन्यकां = वाणिजकुमारीं, परिणीय = विवाह्य, तया, सह = समं, प्रत्यागच्छन् = प्रत्याव्रजन्; तीरस्य = तटस्य, अनतिदूरे = समीपे, एव, अम्बुधौ = समुद्रे, प्रवहणस्य = पोतस्य, भग्नतया = भग्नयुक्तत्वेन, सर्वेषु = सकलेषु जनेषु = मनुष्येषु, निमग्नेषु = ब्रुडितषु, कथं कथमपि = केनाऽपि प्रकारेण, देवानुकूल्येन = भाग्याऽनुकूलत्वेन च, तीरभूमिं = तटभुवम्, अभिगम्य = संप्राप्य, निजाङ्गनायाः = (स्वपत्न्याः) वियोगदुःखम् = (विरहकष्टम्) एव अर्णवः = (समुद्रः), तस्मिन्, प्लवमानः = (सन्तरन्)। कस्यापि, सिद्धतापसस्य = सिद्धिप्राप्ततपल्विनः, आदेशादरेण = आज्ञाविश्वसिन, षोडश, हायनानि = वत्सरान्, कथंचित् = केनाऽपि प्रकारेण, नीत्वा = यापयित्वा दुःखस्य = वियोगजनितककष्टस्य, पारम् = अन्तम्, अनवेक्षमाणः = अपश्यन्, गिरेः = (पर्वतात्), पतनम् = (निपतनम्), अकार्षं = कृतवान्, इति॥3॥

भावार्थ:- उसने भी नाखूनों से अश्रुकणों को पोंछकर कहा-'हे सज्जन! मगधराज (राजहंस) के मन्त्री पद्मोद्भव का मैं पुत्र हूँ, मेरा नाम रत्नोद्भव है। वाणिज्यके सिलसिले में कालयवन द्वीप में पहुँच कर किसी व्यापारी की कन्या से विवाह कर उसके साथ अपने देश में लौटता हुआ समुद्र में किनारे के कुछ दूरपर नाव के टूटने से सभी के डूब जानेपर भाग्यकी अनुकूलता से किसी प्रकार तटभूमि के सम्मुख जाकर अपनी पत्नीके वियोग के दुःखरूप समुद्र में डूबता हुआ किसी सिद्ध तपस्वी के फलादेश के आदर से सोलह साल किसी तरह बिताकर दुःखका पार (समाप्ति) नहीं देखता हुआ पहाड़से कूद पड़ा"।।3।।

4. तस्मिन्नेवावसरे किमपि नारीकूजितमश्रावि-'न खलु समुचितमिदं यत्सिद्धादिष्टे पतितनयमिलने विरहमसहिष्णुर्वैश्वानरं विशसि' इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने तपस्वी और रत्नोद्भव का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- तस्मिन् = पूर्ववृत्ते, अवसरे = प्रसङ्गे, किमपि; नारीकूजितं = स्त्रीशब्दः, अश्रावि = श्रुत, न खलु = निश्चयेन, सिद्धादिष्टे = सिद्धेन (सिद्धिप्राप्तेन), आदिष्टे = (आज्ञप्ते, कथित इति भावः), पतितनयेत्यादिः = पतितनययोः (स्वामिपुत्रयोः), मिलने = (संगमे, काल इति शेषः) विरहं = वियोगम्, असहिष्णुः = असहनशीलासती, वैश्वानरम् = अग्निम्, विशसि = प्रविशसि, इदं वैश्वानरप्रवेशनं, समुचितं = योग्यं, न = न हि, इति ।।4।।

भावार्थ:- उसी समय किसी स्त्रीका शब्द सुना गया-''सिद्धसे कहे गये पति और पुत्रके मिलनेके समयमें विरह सहनेमें असमर्थ होकर जो अग्निमें प्रवेश कर रही हो यह उचित नहीं है ।।4।।

5. तन्निशम्य मनोविदितजनकभावं तमवादिषम्-'तात! भवते विज्ञापनीयानि बहूनि सन्ति। भवतु, पश्चादखिलमाख्यातव्यम् । अधुना नारीकूजितमनुपेक्षणीयं मया । क्षणमात्रमत्र भवता स्थीयताम्' इति।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने पुष्पोद्भव और रत्नोद्भव की वार्ता का वर्णन किया है ।

व्याख्या:- तत् = पूर्वोक्तं, वाक्यं, निशम्य = श्रुत्वा, मनसा = (चित्तेन), विदितः = (ज्ञातः), जनकभावः = (पितृत्वम्) यस्य, त = पुरुषम्, अवादिषम् = उक्तवान्। तातः = हे पितः!, भवते = तुभ्यं, विज्ञापनीयानि = निवेदनीयानि, बहूनि = अधिकानि, वाक्यानीति शेषः। सन्ति = विद्यन्ते।

भवतु = अस्तु। पश्चात् = अनन्तरम्, अखिलं = समस्तं, वृत्तमिति शेषः। आख्यातव्यं = कथनीयम्। अधुना = इदानीं, नारीकूजितं = स्त्रीशब्दः, अनुपेक्षणीयं = न उपेक्षितव्यम्। अत्र = अस्मिन् स्थाने, भवता = त्वया, क्षणमात्रं = कंचित्कालं, स्थीयताम् = अवस्थानं क्रियताम्। इति ।।5।।

भावार्थः- उन वाक्य को सुनकर मनसे 'ये मेरे पिता हैं' ऐसा जानकर उनको मैंने कहा- पिताजी! आपको निवेदन करनेके योग्य बहुत बातें हैं। अस्तु। पीछे मुझे सब कुछ कहनेके योग्य बातें हैं। इस समय स्त्रीके शब्दकी मुझे उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। कुछ क्षणतक आप यहीं रहें ।।5।।

6. तदनु सोऽहं त्वरया किञ्चिदन्तरमगमम् । तत्र पुरतो भयङ्करज्वालाकुलहुतभुगवगाहनसाहसिकां मुकुलितांजलिपुटां वनितां काचिदवलोक्य ससंभ्रममनलादपनीय कूजन्त्या वृद्धया सह मत्पितुरभ्यर्णमभिगमय्य स्थविरामवोचम-वृद्धे! भवत्यौ कुत्रत्ये। कान्तारे निमित्तेन केन दुरवस्थानुभूयते ? कथ्यताम्' इति।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने वृद्ध स्त्री व रत्नोद्भव की वार्ता का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- तदनु = तदनन्तरं, सः = तादृशः, अहं त्वरया = संभ्रमेण, किंचित् = ईषत्, अन्तरम् = अवकाशम्, अगमं = गतः, तत्र = तस्मिन् स्थाने, पुरतः = अग्रतः। भयङ्करज्वालाभिः = (भीषणशिखाभिः), आकुलः = (व्याप्तः), यो हुतभुक् = (अग्निः), तस्मिन् अवगाहने = (प्रवेशे), साहसिकां = (साहसयुक्ताम्), सहसि = (बले), मुकुलितम् = (कुङ्मलितम्), अंजलिपुटं = (करसम्पुटम्), कांचित् = अज्ञातनामधेयां, वनितां = स्त्रियम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, ससंभ्रमं = सत्वरम्, अनलात् = अग्नेः, अपनीय = दूरीकृत्य, कूजन्त्या = शब्दायमानया, वृद्धया = स्थविरया, सह = सम, मत्पितुः = मज्जनकस्य भृगुपतनं कुर्वत इति भावः। अभ्यर्णं = समीपम्, अभिगमय्य = सम्मुखं प्रापय्य, स्थविरां = वृद्धां, कूजन्तीम्, अवोचम् = उक्तवान्, वृद्धे = स्थविरे!, भवत्यौ = युवां, कुत्रत्यौ = कुत आगते, केन निमित्तेन = कारणेन, कान्तारे = वने, दुरवस्था = दुष्टा दशा, अनुभूयते = निर्विश्यते। कथ्यताम् = उच्यताम्, इति।।6।।

भावार्थः- उसके बाद मैं शीघ्रतासे कुछ दूर चला गया। वहाँ सामने भयंकर ज्वालासे व्याप्त अग्निमें प्रवेश करनेकी साहसवाली एवम् अंजलि बाँधी हुई किसी स्त्रीको देखकर उसे घबड़ाहटके साथ आगसे हटाकर पूर्वोक्त वाक्य बोलती हुई बुढ़ियाके साथ मेरे पिताजीके संमुख लाकर मैंने बुढ़ियाको

कहा-''आप दोनों कहाँ की रहनेवाली हैं? इस वनमें किसी कारणसे दुर्दशाका अनुभव कर रही हैं? कहिए''।।6।।

7. सा सगद्गदमवादीत्-'पुत्र! कालयवनद्वीपे कालगुप्तनाम्नो वणिजः कस्यचिदेषा सुता सुवृत्ता नाम रत्नोद्भवेन निजकान्तेनागच्छन्ती जलधौ मग्ने प्रवहणे निजधात्र्या मया सह फलकमेकमवलम्ब्य दैवयोगेन कूलमुपेतासन्नप्रसवसमया कस्यांचिदटव्यामात्मजमसूत। मम तु मन्दभाग्यतया बाले वनमातङ्गेन गृहीते मद्द्वितीया परिभ्रमन्ती 'षोडशवर्षानन्तर भर्तृ पुत्रसङ्गमो भविष्यति' इति सिद्धवाक्यविश्वासादेकस्मिन्पुण्याश्रमे तावन्तं समयं नीत्वा शोकमपार सोढुमक्षमा समुज्ज्वलिते वैश्वानरे शरीरमाहतीकर्तुमुद्युक्तासीत्' इति।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में वृद्ध स्त्री व सुवृता का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- सा = वृद्धा, सगद्गद = गद्गदस्वरपूर्वकम्, अवादीत् = उक्तवती। पुत्र = हे वत्स! कालयवनद्वीपे, कस्यचित्, कालगुप्तनाम्नः = कालगुप्तनामकस्य, वणिजः = वाणिजकस्य। एषा = इय, सुवृत्ता नाम = नाम्ना सुवृत्ता, सुता = पुत्री, निजकान्तेन = स्ववल्लभेन, रत्नोद्भवेन, सह, आगच्छन्ती = निजकान्तगृहमायान्ती सती, प्रवहणे = पोते, जलधौ = समुद्रे, मग्ने = ब्रूडिते सति, निजधात्र्या = आत्मोपमात्रा, भया, सह, एक, फलकं = काष्ठशकलम्, अवलम्ब्य = आश्रित्य, दैवयोगेन = भाग्यसम्बन्धेन, कूलम् = तटम्, उपेता = प्राप्ता, आसन्नः = (समीपवर्ती), प्रसवसमयः = (अपत्यजननकालः) यस्याः सा। कस्यांचित् अटव्याम् = वने, आत्मजं = पुत्रम्, असूत = उत्पादितवती, मम तु मन्दभाग्यतया = अल्पभागधेयत्वेन, बाले = पुत्रे, वनमातङ्गेन = अरण्यहस्तिना, गृहीते = आत्ते सति। मद्द्वितीया = अहं द्वितीया = (सहायभूता) यस्याः सा, मया = सहेति भावः। परिभ्रमन्ती = परिभ्रमणं कुर्वती सती, षोडशवर्षाणाम् = (षोडशवत्सराणाम्) अनन्तरम् = (अनन्तरसमये), भर्तृपुत्रसंगमः = पतितनयसमागमः, भविष्यति = भविता, इति = इत्थं, सिद्धावाक्यस्य = (भविष्यद्वक्तृवचनस्य), विश्वासात् = (प्रत्ययात्), एकस्मिन, पुण्याश्रमे = पवित्राश्रमे, तावन्तं = तत्कालपरिमितं, समयं = कालं, नीत्वा = यापयित्वा, अपारम् = अन्तरहितं, शोक = शुचं, सोढुं = मर्षयितुम्, अक्षमा = असमर्था सती, समुज्ज्वलिते = संप्रदीप्ते, वैश्वानरे = अग्नौ, आहुतीकर्तुं = निपत्य स्वदेहं भस्मसात्कर्तुम्, उद्यता = तत्परा, आसीत् = अभूत इति।।7।।

भावार्थः- वह वृद्धास्त्री आखों में आसू भर कर धीमे स्वर में बोली-''पुत्र! कालयवन द्वीपमें कालगुप्त नामके किसी व्यापारीकी सुवृत्ता नामकी ये पुत्री हैं। अपने पति रत्नोद्भव के साथ आती हुई समुद्रमें नावके डूबनेसे तटको प्राप्तकर प्रसवका समय निकट होनेसे इन्होंने किसी जंगलमें पुत्रको पैदा किया। मेरा भाग्यमन्द होनेसे बालकका वनके हाथीसे ग्रहण करनेपर मेरे साथ परिभ्रमण करती हुई ''सोलह सालके बाद पति और पुत्रके साथ संगम होगा'' ऐसे सिद्धवाक्यके विश्वाससे एक पवित्र आश्रममें उतना (सोलह वर्षका) समय बिताकर पारसे रहित शोकको सहनेमें असमर्थ होती हुई जली हुए आगमें अपने शरीर को आहुति करनेके लिए उद्योग कर रही थीं'' ।।7

8. तदाकर्ण्य निजजननीं ज्ञात्वा तामहं दण्डवत्प्रणम्य तस्यै मदुदन्तमखिलमाख्याय धात्रीभाषणफुल्लवदन विस्मयविकसिताक्षं जनकमदर्शयम्। पितरौ तौ साभिज्ञानमन्योन्य ज्ञात्वा मुदितान्तरात्मानौ विनीत मामानन्दाश्रुवर्षेणाभिषिच्य गाढमाश्लिष्य शिरस्यपाघ्राय कस्याञ्चिन्महीरुहच्छायायामुपाविशताम्।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने रत्नोद्भव के कुटुम्ब का मिलन वृत्तान्त प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- तद् = वचनम्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, निजजननीं = स्वमातरं, ज्ञात्वा, बुद्ध्वा, अहं तां = जननीं, दण्डवत्प्रणम्य = साष्टाङ्गप्रणामं कृत्वा। तस्यै = निजजनन्यै, अखिलं = समस्तं, मदुदन्तं = मद्वृत्तान्तम्, आख्याय = कथयित्वा, धात्रीभाषणेन = (उपमातृवचनेन), फुल्लवदनम् = (विकसितमुखम्), विस्मयेन = (आश्चर्येण), विकसिते = (प्रफुल्ले), अक्षिणी = (नेत्रे) यस्य, तम्। ''बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात् षच्'' इति समासाऽन्तः षच्प्रत्ययः। जनकं = पितरम्, अदर्शयं = दर्शितवान्, तौ = पूर्वोक्तौ, पितरौ = मातापितरौ, साऽभिज्ञानम् = अन्योन्यपरिचयसूचकचिह्नसहितम्। अन्योन्यं = परस्परं, ज्ञात्वा = बुद्ध्वा। मुदितः = (हृष्टः), अन्तरात्मा = (अन्तःकरणम्) ययोस्तौ, = तादृशौ सन्तौ, विनीतं = नम्रं, मां = पुत्रम्। आनन्दाऽश्रुवर्षेण = हर्षजनयनजलवृष्ट्या, अभिषिच्य = अभिषेकं कृत्वा। गाढं = दृढम्, आश्लिष्य = आलिङ्ग्य, शिरसि = मूर्ध्नि, उपाघ्राय = घ्राणजप्रत्यक्षं विधाय, कस्यांचित् = अज्ञातनामधेयायां, महीरुहच्छायायां = वृक्षच्छायायाम्, उपाविशताम् = उपविष्टौ।।8।।

भावार्थः- ऐसा सुनकर 'ये मेरी माँ हैं' ऐसा जानकर उन्हें मैंने दण्डवत् प्रणाम कर-उन्हें मेरा समस्त वृत्तान्त कहकर धायके भाषणसे विकसित मुखवाले और आश्चर्यसे प्रफुल्ल नेत्रोंवाले पिताजीको मैंने

उन्हें दिखा दिया। ये मेरी माता और पिताजी परस्पर खास चिह्नसे पहचानकर प्रसन्न चित्तवाले होकर नम्रतायुक्त मुझ पुत्रको हर्षाश्रुकी दृष्टिसे अभिषेक कर गाढ आलिंगन कर शिरमें सूँघकर किसी पेड़की छायामें बैठ गये।।8।।

9. 'कथं निवसति महीवल्लभो राजहंसः'? इति जनकेन पुष्टोऽह तस्य राज्यच्युतिं त्वदीयजननं सकलकुमारावाप्तिं तव दिग्विजयारम्भ भवतो मातङ्गानुयानमस्माकं युष्मदन्वेशणकारणं सकलमभ्यधाम्। ततस्तौ कस्यचिदाश्रमे मुनेरस्थापयम्। ततो देवस्यान्वेषणपरायणोऽहमखिलकार्यनिमित्तं वित्तं निश्चित्य भवदनुग्रहाल्लब्धस्य साधकत्वस्य साहाय्यकरणदक्ष शिष्यगण निष्पाद्य विन्ध्यवनमध्ये पुरातनपत्तनस्थानान्युपेत्य विविधनिधिसूचकानां महीरुहाणामधोनिक्षिप्तान्वसुपूर्णान्कलशान् सिद्धांजनेन ज्ञात्वा रक्षिषु परितः स्थितेषु खननसाधनैरुत्पाद्य दीनारानसंख्यान् राशीकृत्य तत्कालागतमनतिदूरे निवेशितं वणिक्कटकं कश्चिदभ्येत्य तत्रबलिनो बलीवर्दान् गोणीश्च क्रीत्वान्यद्रव्यमिषेण वसु तद्गोणीसञ्चितं तैरुह्यमानं शनैः कटकमनयम्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने रत्नोद्भव के वृत्तान्त का वर्णन किया है।

व्याख्या:- महीवल्लभः = भूमिपतिः, राजहंसः = मगधेश्वरः, कथ = केन प्रकारेण, निवसति = निवास करोति। इति = एवं, जनकेन = पित्रा, पृष्टः = अनुयुक्तः, अहं, तस्य = राजहंसस्य, राज्यच्युतिं = राज्यभ्रंशं, त्वदीयजननं = भवदुत्पत्तिं, सकलकुमाराऽवाप्तिं = समस्तकुमारप्राप्तिं, तव = भवतः, दिग्विजयारम्भं = दिशाजयप्रक्रमं, भवतः = तव, मातङ्गाऽनुयगमनम्, अस्माकं, सकलं = समस्तं, युष्माकं = (भवताम्), अन्वेषणस्य = (मार्गणस्य), कारणम् = (हेतुम्), अभ्यधाम् = अभिहितवान्। ततः = अनन्तरं, तौ = मातापितरौ, कस्यचित् मुनेः = तापसस्य, आश्रमे = तपःस्थाने, अस्थापयं = स्थापितवान्। ततः = अनन्तरं, देवस्य = भवतः, अन्वेषणपरायण = मार्गणतत्परः अहम्, वित्तं = धनम्, अखिलकार्याणां = (समस्त कर्मणाम्)। निमित्तं = (कारणं), निश्चित्य = निर्णीय, भवदनुग्रहात् = त्वत्प्रसादात्, लब्धस्य = प्राप्तस्य, साधकत्वस्य = साधनकर्तृत्वस्य, साहाय्यकरणे = (सहायकत्वविधाने), दक्षं = (निपुणम्), शिष्यगणम् = अन्तेवासिसमूहं, निष्पाद्य = उपार्ज्य। विन्ध्यवनमध्ये = विन्ध्यारण्याऽन्तरे, पुरातनानि = (पुराणानि) यानि पत्तनस्थानानि = (नगरस्थलानि), उपेत्य = संप्राप्य, विविधनिधीनाम् = (अनेकप्रकारशेवधीनाम्), सूचकानां = (ज्ञापकानाम्), महीरुहाणां = वृक्षाणम्, अधोनिक्षिप्तान् = अधस्तलनिहितान्, वसुपूर्णान् = धनपूरितान्, कलशान् =

कुम्भान्। सिद्धांऽजनेन = सिद्धप्रदत्तनेत्रांऽजनेन; ज्ञात्वा = बुद्ध्वा। रक्षिषु = रक्षकेषु, परितः = सर्वतः, स्थितेषु = विद्यमानेषु, खननसाधनैः = खनित्रादिभिः, असंख्यान् = अपरिमितान्। दीनारान् = सुवर्णमुद्राः, उत्पाद्य = निष्पाद्य, राशीकृत्य = एकत्रीकृत्य, तत्कालगतं = तत्समयप्राप्तम्, अनतिदूरे = समीप एव, निवेशितम् = (स्थापितम्) कंचित् वणिक्कटकं = (वाणिजसमाजम्), अभ्येत्य = संमुखं गत्वा। तत्र = तस्मिन्स्थाने, बलिनः = बलवतः, बलीबर्दान् = वृषभान्, गोणीश्च = आवपनपात्राणि, क्रीत्वा = क्रयं कृत्वा। तद्गौणीसंचितं = तदावपनपात्र एकीकृतं, वसु = धनम्, अन्यद्रव्यमिषेण = अपरपदार्थच्छलेन, तैः = बलीवर्दै, उह्यमानं = धार्यमाणं, सत्, शनैः = मन्दं, कटकं = वणिक्समाजम्, अनयं = प्रापितवान् ।।9।।

भावार्थः- 'पृथ्वीपति राजहंस कैसे निवास कर रहे हैं' ? पिताजीसे इस प्रकार पूछे गये मैंने उनकी राज्यच्युति और आप (राजवाहन) की उत्पत्ति सब (दशों) कुमारोंकी प्राप्ति, आपके दिग्विजयका आरम्भ, आपका मातंग ब्राह्मण का अनुगमन करना, आपका अन्वेषणका कारण सब कुछ मैंने बता दिया। तब मैंने माता और पिताजीको किसी मुनिके आश्रममें रख दिया। तब आपको ढूँढ़नेमें तत्पर होकर मैंने "समस्त कार्यका हेतु धन है" ऐसा निश्चय कर आपके अनुग्रहसे प्राप्त साधकत्वकी सहायता करनेमें निपुण शिष्यगण तैयार कर विन्ध्यपर्वतके वनके मध्यमें प्राचीन नगरके स्थानोंको प्राप्त कर अनेक निधियों (खानों) के सूचक वृक्षोंके नीचे रक्खे गये धनोंसे पूर्ण कलशोंको सिद्धसे दिये गये अंजनसे जानकर रक्षकोंके चारों ओर रहनेपर खोदनेके साधनोंसे असंख्य अशर्फियोंको इकट्ठा कर उसी समय आये हुए समीपमें रहे हुए किसी व्यापारियोंके पड़ावके सम्मुख जाकर वहाँ बलवान् बैलोंको और धान्य रखनेके पात्रोंको भी खरीद कर दूसरे पदार्थके बहानेसे उस पात्रमें संचित धनको बैलों से धीरे-धीरे व्यापारियों के पड़ावमें पहुँचाया ।।9।।

10. तदधिकारिणा चन्द्रपालेन केनचिद्वणिक्पुत्रेण विरचितसौहृदोऽहममुनेव साकमुज्जयिनीमुपाविशम्। मत्पितरावपि तां पुरीमभिगमय्य सकलगुणनिलयेन बन्धुपालनाम्ना चन्द्रपालजनकेन नीयमानो मालवनाथदर्शनं विधाय तदनुमत्या गूढवसतिकरवम्। ततः काननभूमिषु भवन्तमन्वेष्टुमुद्युक्तं मां परममित्रं बन्धुपालो निशम्यावदत्- सकल धरणीतलमपारमन्वेष्टमक्षमो भवान्मनोग्लानिं विहाय तूष्णीं तिष्ठतु। भवन्नायकालोकनकारणं शुभशकुनं निरीक्ष्य कथयिष्यामि, इति।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने चन्द्रपाल व बन्धुपाल की वार्ता का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- तदधिकारिणा = तत्कटकप्रमुखेन, केनचित् वणिजपुत्रेण = वाणिजक्तनयेन, चन्द्रपालेन, विरचितसौहृदः = कृतसौहार्द्रः, अहम् अमुना = चन्द्रपालेन, साकं = समम्, उज्जयिनीं = विशालां पुरीम्। उपाविशम् = प्राविशम्। मत्पितराविति = मज्जनकौ अपि, ताम् = उज्जयिनीम्, पुरीं = अमिगमय्यय प्रापय्य। सकलगुणानां = (दयादाक्षिण्यादिसमस्तगुणानाम्), निलयेन = (आधारभूतेन), बन्धुपालनाम्ना = बन्धुपालनामकेन, चन्द्रपालजनकेन = चन्द्रपालपित्रा, नीयमानः = प्राप्यमाणः, अह, मालवनाथदर्शनं = मालवेश्वरसाक्षात्कारं, विधाय = कृत्वा। तदनुमत्या = मालवनाथस्याऽनुज्ञया, गूढवसतिं = गुप्तनिवासम्, अकरव = कृतवान्। ततः = अनन्तरं, काननभूमिषु = वनभृषु, भवन्तं = त्वाम्, अन्वेष्टुं = मार्गितुम् उद्युक्तं = तत्परं, मां, निशम्य = श्रुत्वा, परममित्रं = श्रेष्ठसुहृत्, बन्धुपालः = चन्द्रपालजनकः, अवदत् = अभाषत। सकल = समस्तम्; अपारम् = अन्तरहितं, धरणीतलम्, अन्वेष्टुं = मार्गयितुम्, अक्षमः = असमर्थः, भवान् = त्वम्, मनोग्लानिं = चित्तग्लानिं, हर्षक्षयमिति भावः। विहाय = त्यक्तवा, तूष्णीं = जोषं, तिष्ठतु = अवस्थानं करोतु। भवन्नायकस्य = (त्वत्स्वामिनः), अवलोकनकारणं = (दर्शनहेतुकम्), शुभशकुनं = कल्याणसूचकलक्षणं, निरीक्ष्य = दृष्ट्वा, कथयिष्यामि = वदिष्यामि। इति।।10।।

भावार्थ:- उस पड़ावके अधिकारी किसी व्यापारीके पुत्र चन्द्रपाल के साथ मित्रता कर मैंने उसीके साथ उज्जयिनीमें प्रवेश किया। मेरे माता और पिताको भी उसी उज्जयिनी पुरीमें पहुँचाकर समस्त गुणोंके आश्रय बन्धुपाल नामके चन्द्रपालके पितासे ले जाये गये मैंने मालवनाथका दर्शनकर उनकी अनुमतिसे गुप्त रूपसे निवास किया। तब वनभूमियोंमें आपको ढूँढने के लिए मैं उद्योगयुक्त हूँ ऐसा सुनकर परम मित्र बन्धुपालने कहा - ''अपार संपूर्ण भूतलमें ढूँढ़नेमें असमर्थ आप मनकी ग्लानि छोड़कर चुपचाप रहें। आपके स्वामीके दर्शनका कारण शुभशकुन देखकर मैं कहूँगा''।।10।।

11. तल्लपितामृताश्वासितहृदयोऽहमनुदिन तदुपकण्ठवर्ती कदाचिदिन्दुमुखीं नवयौवनावलीढावयवां नयनचन्द्रिकां बालचन्द्रिकां नाम तरुणीरत्न वणिङ्नन्दिरलक्ष्मीं मूर्तामिवावलोक्य तदीयलावण्यावधूतधीरभावो लतान्तबाणबाणलक्ष्यतामयासिषम्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने बालचंद्रिका के सौंदर्य का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तल्लपितम् = (तद्वचनम्), एव अमृतं = (पीयूषम्), तेन आश्वासितं = (जाताश्वासम्), हृदयं = (चित्तम्), अनुदिनं = प्रतिदिनम्, तस्य = (बन्धुपालस्य), उपकण्ठवर्ती = (निकटवर्ती) सन्।

कदाचित् = जातुचित्। नवयौवनेन = (नवीनतारुण्येन), अवलीढाः = (व्याप्ताः), अवयवाः= (अङ्गानि), नयनयोः = (नेत्रयोः), चन्द्रिका = (कौमुदीरूपा), इन्दुमुखीं = चन्द्रमुखीं, तरुणीरत्नं = युवतिश्रेष्ठां, मूर्तां = मूर्तिमतीं, वणिगित्यादि = वाणङ्मन्दिरस्य (वाणिजकगृहस्य), लक्ष्मीम् = (श्रियम्), इव बालचन्द्रिकां नाम = नाम्ना बालचन्द्रिकाम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा। तदीयं = (तत्सम्बन्धि), यत् लावण्य = (सौन्दर्यम्) तेन अवधूतः = (चालितः), धीरभावः = (धैर्यम्) यस्य सः। लतान्ताः = (पुष्पाणि), बाणाः = (शराः), तस्य ये बाणाः = (शराः) तेषां लक्ष्यताम् = (शरव्यताम्), अयासिषम् = अगमम्।।11।।

भावार्थः- उनके वचनरूप अमृतसे आश्वासित चित्तवाला होकर मैं प्रतिदिन उनका निकटवर्ती होकर किसी समय चन्द्रतुल्य मुखवाली नये योवनसे व्याप्त शरीरके अवयवोंसे युक्त नेत्रोंको चाँदनीसी प्रतीत होनेवाली व्यापारीके मन्दिरमें मूर्तिमती लक्ष्मीके समान, युवतियों में रत्न (श्रेष्ठ) बालचन्द्रिकाको देखकर उसके लावण्यसे धैर्यके नष्ट होनेसे कामदेवके बाणका लक्ष्य (निशान) हो गया।।11।।

12. चकितबालकुरङ्गलोचना सापि कुसुमसायकसायकायमानेन कटाक्षवीक्षणेन मामसुकृन्निरीक्ष्य मन्दमारुतान्दोलिता लतेवाकम्पत। मनसाभिमुखैः समाकुञ्चितैः रागलज्जान्तरालवर्तिभिः साङ्गवर्तिभिरीक्षणविशेषैर्निजमनोवृत्तिमकथयत्।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने बालचंद्रिका के सौंदर्य का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- चकितः = (भीतः), यो बालकुरङ्गः = (मृगशावकः), तस्येव लोचने = (नयने), साऽपि = बालचन्द्रिकाऽपि। कुसुमानि = (पुष्पाणि), सायकाः = (बाणाः) तस्य सायकायमानेन = सायकवदाचरता, कटाक्षवीक्षणेन = अपाङ्गदर्शनेन, माम् असकृत् = अनेकवारं, निरीक्ष्य = दृष्ट्वा, मन्दमारुतेन = (धीरवातेन), आन्दोलिता = (कम्पिता), लता = वल्ली, इव, अकम्पत = कम्पितवती। सा = बालचन्द्रिका, मनसा = चित्तेन, अभिमुखैः = सम्मुखैः, समाकुरचिंतैः = लज्जया सङ्कुचितैः, रागलज्जयोः = (अनुरागव्रीडयोः), अन्तराले = (मध्ये), वर्तन्ते = (विद्यन्ते), तैः अङ्गेषु = (तत्तदवयवेषु), ईक्षणविशेषैः = दर्शनविशेषैः, निजां = (स्वकीयाम्), मनोवृत्ति = (चित्तव्यापारम्), अकथयत् = मदनुरागं सूचितवतीति भावः।।12।।

भावार्थः- चकित बालमृगके समान नेत्रोंवाली वह भी कामदेवके बाणतुल्य कटाक्षयुक्त निरीक्षणसे मुझे वारंबार देखकर मन्द वायुसे हिली हुई लताके समान काँपने लगी। उसने मनसे सम्मुख

सङ्कुचित, अनुराग और लज्जाके बीचमें रहनेवाले अनेक अवयवों में होनेवाले निरीक्षणविशेषों (कटाक्षों) से अपनी मनोवृत्तिकी सूचना दी।।12।।

13. चतुरगूढचेष्टाभिरस्या मनोऽनुराग सम्यग्ज्ञात्वा सुखसङ्गमोपायमचिन्तयम्। अन्यदा बन्धुपालः शकुनैर्भवद्गतिं प्रेक्षिष्यमाणः पुरोपान्तविहारवनं मया सहोपेत्य कस्मिंश्चिन्महीरुहे शकुन्तवचनानि शृण्वन्नतिष्ठत्।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में बन्धुपाल के शुभशकुन का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- चतुराः = (निपुणाः), गूढाः = (गुप्ताः, प्रच्छन्ना इति भावः)। याश्चेष्टाः = (इन्द्रियव्यापाराः) ताभिः। अस्याः = बालचन्द्रिकायाः, मनोऽनुरागं = चित्तप्रीतिं, सम्यक् = निपुणं, ज्ञात्वा = विदित्वा, सुखेन = (अनायासेन), सङ्गमोपायम् = (समागमसाधनम्), अचिन्तयं = चिन्तितवान्। अन्यदा = अन्यस्मिन् काले। बन्धुपालः = चन्द्रपालपिता। शकुनैः = शुभ-निमित्तैः, भवद्गतिं = त्वदवस्थां, प्रेक्षिष्यमाणः = द्रक्ष्यमाणः, मया सह = समं। पुरोपान्ते = (नगरप्रान्ते), विहारवनं = क्रीडोपवनम्, उपेत्य = संप्राप्य, महीरुहे = वृक्षे, शकुन्तवचनानि = पक्षिकूजितानि, शृण्वन् = आकर्णयन्, अतिष्ठत् = स्थितः।।13।।

भावार्थ:- उसकी चतुर और गुप्त चेष्टाओंसे मनके अनुरागको भलीभाँति जानकर मैंने सुखसे समागमके उपायकी चिन्ता की। दूसरे दिन बन्धुपाल शकुनोंसे आपकी स्थितिका पता लगाने के लिए शहरके निकटमें स्थित क्रीडावनमें मेरे साथ पहुँचकर किसी पेड़में पक्षियोंके शब्दोंको सुनते रहे।।13।।

14. अहमुत्कलिकाविनोदपरायणो वनान्तरे परिभ्रमन्सरोवरतीरे चिन्ताक्रान्तचित्तां दीनवदनां मन्मनोरथकभूमिं बालचन्द्रिकां व्यलोकयम्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने उन दोनों का उपवन के समीप मिलन का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- अहम् उत्कलिकायाः = (उत्कण्ठायाः), विनोदने = (अपनयने), परायणः = (तत्परः) सन्, वनान्तरे = विपिनमध्ये, परिभ्रमन् = परिभ्रमण कुर्वन्। सरोवरतीरे = सुन्दरकासारतटे, चिन्तया = (आध्यानेन), आक्रान्तम् = (आकुलम्), चित्तं = (मानसम्) अत एव दीनवदनां =

खिन्नमुखीं, मन्मनोरथस्य = (मदभिलाषस्य), एकभूमिम् = (एकमात्राधारभूताम्), बालचन्द्रिकां, व्यलोकयं = विलोकितवान्।।14।।

भावार्थ:- मैंने भी उत्कण्ठाको दूर करनेमें तत्पर होकर वनके मध्यमें परिभ्रमण कर सरोवरके तीरमें चिन्तासे व्याप्त चित्तवाली दीनमुखवाली तथा मेरे अभिलाषकी एकमात्र पात्रस्वरूप बालचन्द्रिकाको देख लिया।।14।।

15. तस्याः ससम्भ्रमप्रेमलज्जाकौतुकमनोरम लीलाविलोकनसुखमनुभवन्सुदत्या वदनारविन्दे विषण्णभावं मदनकदनखेदानुभूतं ज्ञात्वा तन्निमित्तं ज्ञास्यंल्लोलया तदुपकण्ठमुपेत्यावोचम्-'सुमुखि! तव मुखारविन्दस्य दैन्यकारण कथय' इति।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने बालचंद्रिका के वार्ता का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तस्याः = बालचन्द्रिकायाः, ससंभ्रमम् = (त्वरामहितम्), प्रेमा = (प्रणयः), लज्जा = (व्रीडा) कौतुकम् = (औत्सुक्यम्), तेन मनोरमम् = (मनोहरम्), लीलया = (विलासेन), यद्विलोकनं = (दर्शनम्), तेन सुखं = हर्षम्, अनुभवन् = निर्विशन्। सुन्दर्याः = बालचन्द्रिकाया इति भावः, शोभनाः = (सुन्दराः), दन्ताः = (दशनाः), वदनाऽरविन्दे = मुखकमले, विषण्णभावं = खिन्नत्वम्, मदनेन = (कामेन), कदनं = (पीडनम्), तस्य = खेदेन (आयासेन), अनुभूतं = (निर्विष्टम्), ज्ञात्वा = विदित्वा। तन्निमित्तं = तत्कारणं, ज्ञास्यन् = अवगमिष्यन्। तदुपकण्ठ = बालचन्द्रिकासमीपम्, उपेत्य = संप्राप्य, लीलया = विलासेन, अवोचिषम् = उक्तवान्। हे सुमुखि = हे सुवदने!, तव = भवत्याः, मुखारविन्दस्य = वदनकमलस्य, दैन्यकारर्णं = दीनताहेतुं, कथय = वद। इति।।15।।

भावार्थ:- उसकी घबड़ाहट, प्रेम, लज्जा और कौतुकसे मनोहर, विलासपूर्वक दर्शनके सुखका अनुभव करते हुए मैंने उस सुन्दरीके मुख-कमलोंमें कामपीड़ाके खेदसे अनुभव खिन्नताको जानकर उसका कारण समझनेके लिए लीलासे उसके पास जाकर कहा-''हे सुन्दरी! मुखकमलकी दीनता का कारण बतलाओ'' ।।15।।

16. सा रहस्यसंजातविश्रम्भतया विहाय लज्जाभये शनैरभाषत-'सौम्य! मानसारो मालवाधीश्वरो वार्धकस्य प्रबलतया निजनन्दनं दर्पसारमुज्जयिन्यामभ्यषिंचत्। स कुमारः सप्तसागरपर्यन्त महीमण्डलं

पालयिष्यन्निजपैतृष्वस्रेयावुद्दण्डकर्माणौ चण्डवर्मदारुवर्माणौधरणीभरणे नियुज्य तपश्चरणाय राजराजगिरिमभ्यगात्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने चण्डवर्मा और दारूवर्मा का वर्णन प्रतिपादित किया है ।

व्याख्या:- रहस्ये = (गोपनीयस्थाने), संजातः = (उत्पन्नः), विश्रम्भः = (बिश्वासः), लज्जाभये = व्रीडाभीती, विहाय = त्यक्त्वा। शनैः = मन्दम्, अभाषत = भाषितवती। सौम्य = सज्जन!, मालवाऽधीश्वरः = मालवपतिः, मानसारः = वार्धकस्य, वृद्धभावस्य, जराया इति भावः। प्रबलतया = बलवत्तरत्वेन, निजनन्दन = स्वपुत्रं, दर्पसारम्, उज्जयिन्यां = विशालायां, पुरिं, अभ्यषिंचत् = अभिषिक्तवान्। सः = पूर्वोक्तः, कुमारः = मानसारनन्दनः, सप्त = (सप्तसंख्यकाः), सागराः = (समुद्रपाः), पर्यन्ताः = (सीमान्ताः यस्य तत्) तादृशं महीमण्डलं = भूमण्डलं, पालयिष्यन् = रक्षयिष्यन्। उद्दण्डम् = (उद्धतम्), कर्म = (क्रिया), निजौ = (स्वकीयौ), पैतृप्वस्रेयौ = (पितृष्वसृपुत्रौ)। धरणीभरणे = पृथिवीपालने, नियुज्य = नियुक्तौ कृत्वा। राजराजः = (कुबेरः) तपश्चरणाय = तपःकरणाय। अभ्यगात् = अभिगतः।।16।।

भावार्थ:- तब उसने एकान्त स्थानके कारणसे विश्वास होनेसे लज्जा और भय छोड़कर धीरे-धीरे कहा-''सौम्य! मालवराज मानसारने वार्धक्य प्रबल होनेसे अपने पुत्र दर्पसारको उज्जयिनीमें अभिषिक्त किया। वे (दर्पसार) सात समुद्रोंसे युक्त भूमण्डलका पालन करते हुए पितृष्वसा (फूफी) के पुत्र उद्धत कर्मवाले चण्डवर्मा और दारुवर्माको पृथ्वीके पालनमें नियुक्त करके कुबेरके पर्वत (कैलास) में तपस्या करनेके लिए चले गये।।16।।

17. राज्यं सर्वमसपत्नं शासति चण्डवर्मणि दारुवर्मा मातुलाग्रजन्मनोः शासनमतिक्रम्य पारदार्यपरद्रव्यापहरणादि दुष्कर्म कुर्वाणो मन्मथसमानस्य भवतो लावण्यात्तचितां मामेकदा विलोक्य कन्यादूषणदोषं दूरीकृत्य बलात्कारेण रन्तुमुद्युङ्क्त। तच्चिन्तया दैन्यमगच्छम्' इति।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में चण्डवर्मा के राज्यशासन का वर्णन, दारूवर्मा के व्यभिचार का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- चण्डवर्मणि = पितृष्वसृपुत्रे, सर्वं = सकल, राज्य = राष्ट्रम्, असपत्नं = शत्रुरहितं, यथा तथाशासति = शासन कुर्बति सति, दारुवर्मा = चण्डवर्माऽनुजः, मातुलाग्रजन्मनोः = मातृभ्रातुः

अग्रजभ्रातुश्च इत्थमुभयोः (द्वयोः) इति भावः। शासनम् = आज्ञाम्, अतिक्रम्य = लङ्घयित्वा। पारदार्यं = (परदारगमनम्), परद्रव्याऽपहरणं = (परस्वस्तेयम्), तदादि = तत्प्रभृति। पारदार्यमित्यत्र परस्य = (अन्यस्य), दाराः = (पत्न्यः), तादृशं दुष्कर्म = दूषितक्रियां, कुर्वाणः = विदधत्। मन्मथसमानस्य = कामदेवसदृशस्य, भवतः = तव, लावण्येन = (सौन्दर्येण), आत्तं = (गृहीतम्), चित्तं = (चेतः) यस्यास्ताम्। माम्, एकदा = एकस्मिन्दने, विलोक्य = दृष्ट्वा, कन्यायाः = (कुमार्याः) दूषणम् = (घर्षणादिकम्) एव दोषः, तम्, दूरीकृत्य = परिहृत्य, बलात्कारेण = शक्तिप्रयोगेण, रन्तुं = क्रीडितुम्, उद्युङ्कते = चेष्टते, तच्चिन्तया = तस्य (दुष्कर्मणः), चिन्तया = (आध्यानेन), दैन्यं = दीनभावम्, अगच्छं = गता। इति।।17।।

भावार्थः- शत्रुरहित समस्त राज्यको चण्डवर्माके शासन करने पर अपने दारुवर्मा मामा और बड़े भाईकी आज्ञाका उल्लंघन कर परस्त्री और परधनका अपहरण आदि दुष्कर्मकरता हुआ कामदेवके समान आपमें आकृष्ट चित्तवाली मुझे एक दिन देखकर-कन्याको दूषित करनेसे होनेवाले दोषकी परवाह न कर बलात्कारपूर्वक रमण करनेके लिए उद्योग कर रहा है। इसी बातकी चिन्तासे मैं दीनताको प्राप्त हुई हूँ'' ।।17।।

18. तस्या मनोगतं, मयि रागोद्रेकां मन्मनोरथसिद्धयन्तरायं च निशम्य बाष्पपूर्णलोचनां तामाश्वास्य दारुवर्मणो मरणोपायं च विचार्य वल्लभामवोचम्-'तरुणि!, भवदभिलाषिणं दुष्टहृदयमेन निहन्तुं मृदुरुपायः कश्चिन्मया चिन्त्यते। 'यक्षः कश्चिदधिष्ठाय बालचन्द्रिकां निवसति तदाकारसम्पदाशाशृङ्खलितहृदयो यः सम्बन्धयोग्यः साहसिको रतिमन्दिरे तं यक्षं निर्जित्य तथा एकसखीसमेतया मृगाक्ष्या सलापामृतसुखमनुभूय कुशली निगमिष्यति, तेन चक्रवाकसशयाकारपयोधरा विवाहनीयेति सिद्धेनैकेनावादीति पुरजनस्य पुरतो भवदीयैः सत्यवाक्यैजनैरसकृत्कथनीयम्। तदनु दारुवर्मा वाक्यानीत्थविधानि श्रावश्रावतूष्णीं यदि भिया स्थास्यति तर्हि वरम्, यदि वा दौर्जन्येन त्वया सङ्गमङ्गोकरिष्यति, तदा स भवदीयैरित्थ वाच्यः-

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने दारूवर्मा को मारने का षड्यंत्र वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- तस्याः = बालचन्द्रिकायाः, मनोगतम् = अभिलाषं, मयि = विषये, रागोद्रेकम् = अनुरागाऽतिशयं, मन्मनोरथस्य = (मदभिलाषस्य), सिद्धौ = सफलतायाम्, अन्तरायं = (विघ्नम्) च निशम्य = श्रुत्वा। बाष्पपूर्णे = अश्रुपूरिते, लोचने= (नेत्रे), तां = बालचन्द्रिकाम्, आश्वास्य =

सान्त्वयित्वा। दारुवर्मणः, मारणोपायं = हननसाधनं च, विचार्य = विमृश्य। वल्लभां = प्रियां, बालचन्द्रिकाम्, अवोचम् = उक्तवान्। हे तरुणि = हे युवति!, भवतीम् = (त्वाम्), अभिलषति = (इच्छति), दुष्टहृदय = दुष्टं (दोषयुक्तम्), हृदयं = (चित्तम्) यस्य, तम्। एनम् = इमं, दारुवर्माणं, निहन्तुं = व्यापादयितुं, मया कश्चित्, मृदुः = कोमलः, उपायः = साधनं, चिन्त्यते = विचार्यते। कश्चित्, यक्षः = देवयोनिविशेषः बालचन्द्रिकाम्, अधिष्ठाय = अधिष्ठानं कृत्वा, निवसति = निवासं करोति। तस्याः = (बालचन्द्रिकायाः), आकारसंपदः = (आकारसंपत्तेः), या आशा = (तृष्णा), तया = (आशया), शृंखलितं = (बद्धम्), हृदयं = (चित्तम्) यस्य सः। तादृशः = सम्बन्धयोग्यः = (सम्पर्काऽर्हः) अनुरूप इति भावः। यः साहसिकः = साहसं कर्तुमुद्यत इति भावः। रतिमन्दिरे = रतिक्रीडाभवने, तत्र = पूर्वोक्तं, यक्ष = देवयोनिविशेषं, निर्जित्य = विजित्य। एकसख्या = (एकवयस्यया), समेतया = (सहितया), मृगाक्ष्या = हरिणनयनया, मृगस्य = (हरिणस्य) इव अक्षिणं = (नयने) संलापः = (मिथोभाषणम्) एव अमृतं = (पीयूषम्), तस्य सुखम् = (आनन्दम्), अनुभूय = उपभुज्य, कुशली = कुशलयुक्तः, निर्गमिष्यति = निर्यास्यति, तेन = तादृशेन पुरुषेण, चक्रवाकस्य = (कोकस्य), संशयः = (सन्देहः) तादृश आकारः = (आकृतिः), ययोस्तौ = (तादृशौ), पयोधरौ = (कुचै) विवाहनीया = परिणेया। इति = एवम्, एकेन, सिद्धेन = प्राप्तसिद्धिनः, महात्मना, अवादि = उक्तम्, इति = एवं, पुरजनस्य = नगरलोकस्य, पुरतः = अग्रे, भवदीयैः = त्वदीयैः, सत्यवाक्यैः = तथ्यवचनैः, जनैः = लोकैः, असकृत् = वारवार, कथनीयं = वाच्यम्।

तदनु = तदनन्तरं, दारुवर्मा, इत्थंविधानि = एतादृशानि, वाक्यानि = वचनानि, श्रावं श्रावम् = असकृत् श्रुत्वा। भिया = भीत्या, तूष्णीं = तूष्णीकां, स्थास्यति = अवस्थितो भविष्यति, यदि = चेत्, तर्हि = तदा, वरम् = इष्टापत्तिः, यदि वा = अथवा, दौर्जन्येन = दुर्जनभावेन, त्वया = भवत्या, सङ्ग = समागमम्, अङ्गीकरिष्यति = स्वीकरिष्यति, तदा = तर्हि, भवदीयैः = भवत्या बन्धुभिः, सः = दारुवर्मा, इत्थम् = अनेन प्रकारेण, वाच्यः = वक्तव्यः।।18।।

भावार्थः- इस प्रकार उसका मनोभाव मुझपर प्रेमका आधिक्य और अपने अभिलाषकी सिद्धिमें विघ्नका श्रवणकर आँसूसे भरे हुए नेत्रोंवाली उसे आश्वासन देकर दारुवर्माको मारनेके उपायका विचार कर प्रियाको मैंने कहा-‘‘हे तरुणि! तुम्हें चाहने वाले दुष्टहृदय उसे मारनेके लिए कुछ कोमल उपायका मैं विचार करता हूँ। ’’कोई यक्ष बालचन्द्रिकामें आविष्ट होकर निवास कर रहा है। उस (बालचन्द्रिका) की आकार सम्पत्तिकी आशासे आकृष्ट चित्तवाला जो सम्बन्धयोग्य साहसी पुरुष रमणगृहमें उस यक्षको जीतकर एक सखीसे युक्त मृगनयनासे संलाप (बातचीत) रूप अमृतके सुखका

अनुभव कर कुशल (सही सलामत) रूपसे निकलेगा उससे चक्रवाकके संशय वाले आकारसे युक्त स्तनोंवाली सुन्दरी (बालचन्द्रिका) व्याही जायेगी ''ऐसा एक सिद्धने कहा है'' यह बात नागरिक जनोंके सामने आपके सत्य वाक्य बोलने वाले बन्धुजनोंको बार-बार कहना चाहिये। उसके बाद दारुवर्मा ऐसे वाक्योंको वारंवार सुनकर डरसे यदि चुपचाप रहेगा तो अच्छा ही है। अथवा दुर्जनतासे तुम्हारे साथ सम्बन्ध करना मंजूर करेगा तो तुम्हारे बन्धुगण उसे ऐसा कहें-।।18।।

19. 'सौम्य! दर्पसारवसुधाधिपामात्यस्य, भवतोऽस्मन्निवासे साहसकरणमनुचितम्। पौरजनसाक्षिकं भवन्मन्दिरमानीतया अनया तोयजाक्ष्या सह क्रीडन्नायुष्मान्यदि भविष्यति तदा परिणीय तरुणीं मनोरथान्निर्विश' इति। साऽप्येतदङ्गीकरिष्यति। त्वं सखीवेषधारिणा मया सह तस्य मन्दिरं गच्छ। अहमेकान्तनिकेतने मुष्टिजानु गदाघातैस्त रभसान्निहत्य पुनरपि वयस्यामिषेण भवतीमनु निःशङ्क निर्गमिष्यामि। तदेनमुपायमङ्गीकृत्य विगतसाध्वसलज्जा भवज्जनकजननीसहोदराणां पुरत आवयोः प्रेमातिशयमाख्याय सर्वथास्मत्परिणयकरणेताननुनयेः। तेऽपि वशसंपल्लावण्याढ्याय यूने मह्य त्वां दास्यन्त्येव। दारुवर्मणो मारणोपायं तेभ्यः कथयित्वा तेषासुत्तरमाख्येयं मह्यम्' इति।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने दर्पसार का वर्णन किया है।

व्याख्या:- सौम्य = सज्जन!, दर्पसारवसुधाऽधिपस्य = (दर्पसारभूपतेः), अमात्यस्य = (मन्त्रिणः), भवतः = तव, अस्मन्निवासे = अस्मद्भवने, साहसकरणं = साहसकार्यविधानम्, अनुचितम् = अयोग्यम्। पौरजनसाक्षिकं = पौरजनाः = (नागरजनाः), साक्षिणः = (साक्षाद्द्रष्टारः) यथा तथा। पौरजनाः = साक्षिणः, भवन्मन्दिरं = त्वत्प्रसादम्, आनीतया = प्रापितया, तोयजाक्ष्या = कमलनयनया, सह = समं, क्रीडन् = रतिक्रीडां कुर्वन्, आयुष्मान् = आयुःसम्पन्नः, भविष्यति = भविता, भवानितिशेषः, यदि = चेत्, तदा = तर्हि, तरुणीं = युवतिं, बालचन्द्रिकां, परिणीय = विवाह्य, मनोरथान् = अभिलाषान्, निर्विश = उपभुङ्क्ष्व। इति। सोऽपि = दारुवर्माऽपि, एतत् = पूर्वोक्तं वचनम्, अङ्गीकरिष्यति = स्वीकरिष्यति। त्वं = बालचन्द्रिका, सखीवेषधारिणा = वयस्यानेपथ्यधारकेण, मया, सह = समं, तस्य = दारुवर्मणः, मन्दिरं = प्रासादं, गच्छ = व्रज। अहम्, एकान्तनिकेतने = रहोगृहे, मुष्टीत्यादिः = मुष्ट्यूरुपर्वचरणपहारैः, तं = दारुवर्माणं, रभसाद् = वेगात्, निहत्य = व्यापाद्य। पुनरपि = भूयोऽपि, वयस्यामिषेण = सखीकैतवेन, भवतीं = त्वाम्, अनु = सह। निःशङ्क = निःसन्देहं, निर्गमिष्यामि = निःसरिष्यामि।

तत् = तस्मात्कारणात्, एनम् = इमम्, उपायं = साधनम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य, विगते = (अवगते), साध्वसलज्जे = (भीतिव्रीडे) भवत्या = (तव), जनकजननीसहोदराणां = (पितृ-मातृ-सोदराणाम्), पुरतः = अग्रे। आवयोः = तव मम च। प्रेमाऽतिशयं = प्रणयाधिक्यम्, आख्याय = कथयित्वा, अस्माकं परिणयकरणे = (विवाहविधाने), सर्वथा = सर्वैः, प्रकारैः, तान् = जनकादीन्, अनुनयेः = तोषयेः। तेऽपि = जनकादयोऽपि, वंश-सम्पल्लावण्यैः = (कुलसम्पत्ति-सौन्दर्यैः), आढ्याय = (सम्पन्नाय), यूने = तरुणाय, मह्यं = पुष्पोद्भवाय = (सम्प्रदानभूताय), त्वां = भवतीं, दास्यन्त्येव = वितरिष्यन्त्येव। दारुवर्मणः = चण्डवर्माऽनुजस्यं, मारणोपायं = हननसाधनं, तेभ्यः = जनकादिभ्यः, क्रियाग्रहणाच्चतुर्थी। कथयित्वा = अभिधाय, तेषां जनकादीनाम्, उत्तरं = प्रतिवाक्यं, मह्यम्, आख्येय = प्रकथनीयम्, इति॥19॥

भावार्थ:- ''सौम्य! राजा दर्पसार के मन्त्री होकर आपको हमारे घर में ऐसा साहस (जबर्दस्ती) करना अनुचित है। नागरिकोंको साक्षी बनाकर आपके प्रासाद (महल) में लाई गई कमलनयना (बालचन्द्रिका) से क्रीड़ा करके भी आप चिरंजीव होंगे तो उस तरुणीसे विवाह करके अपने मनोरथोंका उपभोग कर लें''। वह भी इस प्रस्तावको अंगीकार करेगा। तुम सखीका वेष लेनेवाले मेरे साथ उसके प्रासादमें जाओ। मैं भी एकान्त कोठरीमें मुट्ठी, घुटना और चरणके ताडनोंसे वेगपूर्वक उसे मारकर फिर भी सखीके बहानेसे तुम्हारे साथ वहाँसे निकल जाऊँगा। इस कारणसे इस उपायको मंजूर कर भय और लज्जासे रहित होकर तुम्हारे पिता, माता और सहोदर भाइयोंके सामने हम दोनोंके बढ़े हुए प्रणयको बतलाकर हमलोगोंके विवाह करनेके निमित्त उन लोगोंको मना लो। वे लोग भी कुल सम्पत्ति और सौन्दर्यसे सम्पन्न तथा जवान मुझे तुम्हारा प्रदान करेंगे ही। दारुवर्माको मारनेके लिए ऐसा उपाय उन लोगोंको कहकर उन लोगोंका उत्तर मुझे कहो॥19॥

20. सापि किञ्चिदुत्फुल्लसरसिजानना मामब्रबीत्-'सुभग! क्रूरकर्माणं दारुवर्माणं भवानेव हन्तुमर्हति। तस्मिन्हते सर्वथा युष्मन्मनोरथः फलिष्यति। एवं क्रियताम्। भवदुक्तं सर्वमहमपि तथा करिष्ये' इति मामसकृद्विवृतवदना विलोकयन्ती मन्दं मन्दमगारमगात्। अहमपि बन्धुपालमुपेत्य शकुनज्ञात्तस्मात् 'त्रिंशद्दिवसानन्तरमेव भवत्सङ्ग सभविष्यति' इत्यशृणवम्। तदनु मदनुगम्यमानो बन्धुपालो निजावासं प्रविश्य मामपि निलयाय विससर्ज।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने बालचन्द्रिका व बन्धुपाल के शुभशकुन का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- साऽपि = बालचन्द्रिकाऽपि, किंचिदुत्फुल्लम् = (ईषद्विकसितम्), यत् मरसिजं = (कमलम्) तदिव आननं = (वदनम्) यस्याः सा। माम् = अव्रवीत् = अकथयत्। सुभग = हे सौभाग्यसम्पन्न!, क्रूरकर्माणं = कठोरक्रियं, दारुवर्माणं, भवान् एव, हन्तुं = व्यापादायितुम्, अर्हति = योग्यो भवति। तस्मिन् = दारुवर्मणि, हते = व्यापादिते, युष्मन्मनोरथः = भवदभिलाषः। सर्वथा = सर्वैः, प्रकारैः, फलिष्यति = सफलो भविष्यति। एवम् = इत्थमेव, क्रियतां = विधीयताम्। भवदुक्तं = भवत्कथितं, सर्वं = समस्तं, कृत्यम्, अहमपि, तथा = तेनैव प्रकारेण, करिष्ये = विधास्यामि। इति = एवमुक्त्वा, असकृत् = (वारं वारम्), विवृत्तं = (परावृत्तम्), वदनं = (मुखं यस्याः सा), विलोकयन्ती = पश्यन्ती, मन्द मन्दं = शनैः शनैः, अगार = भवनम्, अगात् = गता। अहमपि, बन्धुपालं = चन्द्रपालजनकम्, उपेत्य = प्राप्य। शकुनज्ञात् = शुभनिमित्ताऽभिज्ञात्। तस्मात् = बन्धुपालात्। त्रिंशद्दिनेभ्यः = (त्रिंशद्वासरेभ्यः), अनन्तर = (पश्चात्कालम्) एव, भवत्सङ्गः = भवतः समागमः सभविष्यत = संभविता, इति = इत्थम्, अशृणवं = श्रुतवान्। तदनु = तदनन्तरं, मया = (पुष्पोद्भवेन), अनुगम्यमानः = (अनुस्त्रियमाणः), बन्धुपालः = चन्द्रपालपिता, निजावास = स्ववासस्थानं, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, माम्, अपि, निलयाय = निलयं (गृहम्) विससर्ज = विसृष्टवान्।।20।।

भावार्थ:- ऐसा सुनकर कुछ खिले हुए कमल के समान मुखवाली वह (बालचन्द्रिका) बोली-''हे सौभग्यशालिन्! कठोर कर्मवाले दारुवर्माको मारनेके लिए आप ही योग्य हैं। उसके मारे जानेपर आपका मनोरथ सर्वथा फलीभूत होगा। ऐसा ही करें। आपसे कहे गये सब काम मैं भी उसी प्रकार करूँगी।', ऐसा कह कर बार-बार मुझे मुँह फेर कर देखती हुई वह धीरे-धीरे अपने भवन में चली गई। मैंने भी बन्धुपाल के पास जाकर शकुन जाननेवाले उनसे ''तीस दिनों के बाद ही आपका सम्पर्क होगा'' ऐसा सुन लिया। तदनन्तर मुझसे अनुगत होकर बन्धुपाल ने अपने घर में प्रवेशकर मुझे भी अपने घर जाने के लिए रुखसत किया।।20।।

21. मन्मायोपायवागुरापाशलग्नेन दारुवर्मणा रतिमन्दिरे रन्तुं समाहूता बालचन्द्रिका तं गमिष्यन्ती दूतिकां मन्निकटमभिप्रेषववती। अहमपि मणिनूपुरमेखलाकङ्कयकटकताटङ्कहारक्षौमकज्जलं वनितायोग्यं मण्डनजातं निपुणतया ततत्स्थानेषु निक्षिप्य सम्यगङ्गीकृतमनोज्ञवेषो वल्लभया तया सह तदागारद्वारोपान्तमगच्छम्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में दारूवर्मा का मायाजाल में फंसकर मंदिर द्वार पहुंचने का वर्णन किया है।

व्याख्या:- मम् मायया = (कपटेन), य उपायः = (साधनम्) स एव वागुरापाशः = (मृगबन्धनरज्जुः) तस्मिन् लग्नेन = (बद्धेन), दारुवर्मणा, रतिमन्दिरे = रमणगृहे, रन्तुं = रमणं कर्तुं, समाहूता = आकारिता, बालचन्द्रिका तं = दारुवर्माणं, गमिष्यन्ती = यास्यन्ती, मन्निकठं = मत्समीपं, दूतिकां = वार्ताहराम्, अभिप्रेषितवती = प्रहितवती। अहम्, अपि, मणिनूपुरः = (रत्नखचितमंजीरः), मेखला = (कांची), कङ्कणं = (करभूषणम्), कटकः = (प्रकोष्ठाभरणम्), ताटङ्कं = (कर्णभूष्ज्ञणम्), हारः (मुक्तामाला), क्षौमं = (दुकूलम्), कज्जलम् = (नेत्रांऽजनम्), वनितायोग्यं = ललनोचितं, मण्डनजातम् = अलङ्कारसमूहं, निपुणतया = प्रवीणतया, तत्तत्स्थानेषु = तत्तदवयवेषु, निक्षिप्य = परिधाय, सम्यगित्यादिः = (समीचीनं यथा तथा) अङ्गीकृतः = (स्वीकृतः), मनोज्ञः = (सुन्दरः) वेषः = (नेपथ्यम्) येन सः। तया = पूर्वोक्तया, वल्लभया = प्रियया, बालचन्द्रिकया, सह = समं, तस्य = (दारुवर्मणः) अगारद्वारस्य = (भवनप्रतीहारस्य) उपान्तं = (समीपम्) अगच्छं = गतः।।21।।

भावार्थ:- मेरे छलरूप उपायपाशमें लगे हुए दारुवर्माने रमणगृहमें रमण करने के लिए बुलाई गई बालचन्द्रिकाने उसके पास जानेके लिए मेरे पास दूतीको भेजा। मैं भी स्त्रीके योग्य रत्न, नूपुर, मेखला, कंकण, वलय, कर्णभूषण, हार, रेशमी वस्त्र और कज्जल आदि श्रृंगार उपकरणोंको कुशलतापूर्वक तत्तत् स्थानोंमें में पहनकर अच्छी तरह सुन्दर वेष धारण कर उस प्रिया (बालचन्द्रिका) के साथ दारुवर्माके द्वारके पास गया।।21।।

22. द्वाःस्थकथितास्मदागमनेन सादरं विहिताभ्युद्गतिना तेन द्वारोपान्तनिवारिताशेषपरिवारेण मदन्विता बालचन्द्रिका संकेतागारमनीयत। नगरव्याकुलां यक्षकथां परीक्षमाणो नागरिकजनोऽपि कुतूहलेन दारुवर्मणः प्रतीहारभूमिमगमत्।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने दारूवर्मा रति मन्दिर में प्रवेश का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- द्वास्थैः = (द्वारस्थैः, द्वारपालैरिति भावः) कथितम् = (उक्तम्), अस्माकम् = (मम) आगमनम् = (आगतिः), सादरम् = (आदरपूर्वकम्), विहिता = (कृता), अभ्युद्गतिः = (अभ्युत्थानम्) येन। द्वारोपान्ते = (प्रतीहारसमीपे), निवारिताः = (दूरीकृताः), अशेषाः = (समस्ताः), परिवाराः = (परिजनाः) येन, तेन = दारुवर्मणा, मदन्विता = मया अन्विता (युक्ता), बालचन्द्रिका, सङ्केताऽगारं = पूर्वनिर्दिष्टप्रकोष्ठम्, अनीयत = प्रापिता। नगरव्याकुलां = पुरविस्तृतां, यक्षकथां = यक्षवार्ता,

परीक्षमाणः = परीक्षां कुर्वन्। नागरिकजनोऽपि = पौरलोकोऽपि, कुतूहलेन = कौतुकेन, दारुवर्मणः, प्रतीहारभूमिं = द्वारभुवम्, अयमत् = गतः।।22।।

भावार्थः- हम लोगोंका आगमन जब द्वारपालने कहा तब आदरपूर्वक हमारी अगवानी कर द्वारके पास सब परिवारोंको हटाकर दारुवर्मा सखीरूप लिए मेरे साथ बालचन्द्रिकाको संकेतगृहमें ले गया। शहरमें फैली हुई यक्षकथाकी परीक्षा करता हुआ नागरिक-जन भी कुतूहलसे दारुवर्माकी द्वारभूमिमें गये।।22।।

23. विवेकशून्यमतिरसौ रागातिरेकेण रत्नखचितहेमपर्यङ्केहंसतूलगर्भशयनमानीय तरुणींमारोप्य तस्यै मह्यं तमिस्रासम्यगनवलोकितपुं भावाय मनोरमस्त्रीवेषाय च चामीकरमणिमयमण्डनानि सूक्ष्माणि चित्रवस्त्राणि कस्तूरिकामिलित हरिचन्दनं कर्पूरसहितं ताम्बूलं सुरभीणि सुकुमानीत्यादिवस्तुजातं समर्प्य मुहूर्तद्वयमात्रं हासवचनैः संलपन्नतिष्ठत्।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में दारूवर्मा की कामवासना व उसके हास परिहास का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- विवेकेन = (सदसदितिनिद्र्धारणेन), शून्या = (रहिता), मतिः = (बुद्धि), असौ = अयं, दारुवर्मा, रागाऽतिरेकेन = कामावेशाधिक्येन। रत्नखचिते = (मणिजटिते), हेमपर्यङ्के = (सुवर्णपल्यङ्के), हंसः = (मरालः) यस्तूलः = (कार्पासः) स गर्भे = (अभ्यन्तरे) तादृशं शयनम् = (पर्यङ्कम्), तरुणीं = युवतिम्, आरोप्य = स्थापयित्वा। तस्यै = तरुण्यै, तमिस्रया = (तामस्या रात्र्या हेतुना), सम्यक् = (व्यक्तं यथा तथा), अनवलोकितः = (अदृष्टः), पुंभावः = (पुंस्त्वम्) यस्य, तस्मै। मनोरमः = (सुन्दरः), स्त्रीवेषः = (नारीनेपथ्यम्), तादृशाय = मह्यम्। चामीकराणि = (सुवर्णमयानि) मणिमयानि = (रत्नप्रचुराणि), तादृशानि मण्डनानि = (अलंकारान्), सूक्ष्माणि = (श्लक्षाणि), चित्रवसनानि = किर्मीरवस्त्राणि, कस्तूरिकामिलित = मृगमदमिश्रं, हरिचंदनं = सरभिगन्धद्रव्यं, कर्पूरसहितं = घनसारयुक्तं, ताम्बूलं = नागवल्लीदलं, सुरभीणि = सुगन्धयुक्तानि, कुसुमानि = पुष्पाणि, इत्यादिवस्तुजातं = पूर्वोक्तपदार्थसमूहं, समप्र्य = वितीर्य, मुहूर्तद्वयमात्रं = चतुर्विंशतिक्षणमात्रकालम्। हासवचनैः = हास्युक्तवाक्यैः, संलपन् = मिथो भाषमाणः, अतिष्ठत् = स्थितः।।23।।

भावार्थः- विवेक से शून्य बुद्धिवाला वह (दारुवर्मा) अनुरागके आधिक्यसे रत्नखचित सोनेके पलंग में हंसके समान सफेद रुई वाली शय्यामें उस तरुणीका प्रचुर अन्धकारवाली रात्रिके कारण पुरुषत्वको

न देखनेसे सुन्दरी स्त्रीके वेष लेनेवाले, मुझे भी सुवर्ण और प्रचुर रत्नयुक्त भूषण, महीन विचित्र वस्त्र, मस्तूरी मिला हुआ चन्दन, कर्पूरसे युक्त ताम्बूल और सुगन्धित (खुशबुदार) फूल इत्यादि वस्तुओं का समर्पण कर दो मुहूर्ततक हास्ययुक्त वचनोंसे बातचीत करता हुआ रहा।।23।।

24. ततो रागान्धतया सुमुखीकुचग्रहणे मतिं व्यधत्त। रोषारुणितोऽहमेन पर्यङ्कतलनिःशङ्को निपात्य मुष्टिजानुपादघातेः प्राहरम्। नियुद्धरभसविकलमलंकार पूर्ववन्मेलयित्वा भयकम्पितां नतांगीमुपलालयन्मन्दिरांगणमुपेतः साध्वसकम्पित इवोच्चैरकूजमहम्-'हा! बालचन्द्रिकाधिष्ठितेन घोराकारेण यक्षेण दारुवर्मा निहन्यते। सहसा समागच्छत। पश्यतेमम्' इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने दारूवर्मा के वध का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- ततः = अनन्तरं, रागाऽन्धतया = रागेण = (कामावेशेन), अन्धतया = (मत्तत्वेन, विवेकशून्यत्वेनेति भावः। सुमुख्याः = (सुन्दर्याः, बालचन्द्रिकायाः), कुचग्रहणे = (पयोधरपीडने); मतिं = बुद्धिं, व्यधत्त = विहितवान्, रोषेण = (कोपेन हेतुना), अरुणितः= (संजातरक्तवर्णः) अहम्। एनं = दारुवर्माणं, पर्यङ्कतलात् = मंचाऽधोभागात्, निःशङ्क = निःसंदेह, निपात्य = दारुवर्माण, मुष्टिः = (बद्धपाणिः), जानु = (ऊरुपर्व), पादः = (चरणम्), घातैः = (ताडनैः), प्राहरं = प्रहृतवान्। नियुद्धस्य = (बाहुयुद्धस्य), रभसः = (वेगः), तेन हेतुना विकलम् = (विपर्यस्तम्), अलङ्कार = भूषणं पूर्ववत् = प्रागिव, मेलयित्वा = स्वस्थाने, भयेत्यादिः = भयात् = (हेतोः) वेपिताङ्गी = कम्पितदेहाऽवयवां, नताङ्गीम् = अवनतदेहावयवां, तादृशी = बालचन्द्रिकाम्। उपलालयन् = सान्त्वययन्, मन्दिरस्य = (दारुवर्मप्रासादस्य), अंगणम् = (चत्वरम्), उपेतः = उपगतः सन्, साध्वसेन = (भयेन), कम्पितः = संजातकम्पः, इव, अहम् उच्चैः = तारस्वरेण, अकूजं = कूजितवान्।

हा = दारुवर्माणम् इति, बालचन्द्रिकाऽधिष्ठितेन = बालचन्द्रिकास्थितेन, घोराकारेण = भीषणकृतिना यक्षेण = देवयोनिविशेषेण, दारुवर्मा, निहन्यते व्यापाद्यते। सहसा = अतर्कित एव। समागच्छत = संप्राप्नुत, इमं = दारुवर्माणं, पश्यत = विलोकयत। इति।।24।।

भावार्थ:- तब अनुरागसे अन्धा होकर उसने सुन्दरीके स्तनग्रहण करनेकी बुद्धि की। क्रोधसे लालवर्ण होकर मैंने उसके पलंगके नीचेसे निकलकर निःशंक होकर मुक्के घुटनों और पैरों से प्रहार किया। बाहुयुद्धके वेगसे अस्त-व्यस्त अलंकारको पहलेके समान ठीक कर भयसे कांपी हुई सुन्दरीको दिलासा देता हुआ भवनके मैदानमें पहुँचकर भयसे कम्पित समान होकर ऊँचे स्वरसे मैंने शोर किया-

‘‘हाय! बालचन्द्रिकामें आविष्ट घोर आकार वाला यक्ष दारुवर्माको मार रहा है। तुरंत आ जाओ, इसको देखो’’।।24।।

25. तदाकर्ण्य मिलिता जनाः समुद्यद्बाष्पा हाहानिनादेन दिशो बधिरयन्तः ‘बालचन्द्रिकामधिष्ठितं यक्षं बलवन्त शृण्वन्नपि दारुवर्मा मदान्धस्तामेवायाचत ? तदसौ स्वकीयेन कर्मणा निहतः। किं तस्य विलापेन’ इति मिथो लपन्तः प्राविशन्। कोलाहले तस्मिंश्चटुललोचनया सह नैपुण्येन सहसा निर्गतो निजावासमगाम्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने दारूवर्मा के वध का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तद् = मद्वचनम् आकर्ण्य = श्रुत्वा। मिलिताः = समवेताः, समुद्यन्ति = (समुत्पद्यमानानि), बाष्पाणि = (अश्रूणि) येषां ते, हाहानिनादेन = हाहाशब्देन, दिशः = आशाः, बधिरयन्तः = बधिरीकुर्वन्तः, जनाः = लोकाः। बालचन्द्रिकाम्, अधिष्ठितम् = आश्रितम्, बलवन्त = शक्तिसम्पन्नं, यक्षं = देवयोनिविशेषं, शृण्वन् = आकर्णयन्, अपि, दारुवर्मा, मदाऽन्धः = मदेन (अहंकारेण), अन्धः = ज्ञानशून्यः सन्। तां = बालचन्द्रिकाम, एव, अयाचत = याचितवान्। तत् = तस्मात् कारणात्, अमौ = दारुवर्मा, स्वकीयेन = आत्मीयेन, कर्मणा = क्रियया, निहुतः = व्यापादितः। अतः तस्य = दारुवर्मणः, विषय इति शेषः। विलापेन = परिदेवनेन, किं = किं फलम्, इति = एवं, मिथः = परस्परं, लपन्तः = भाषमाणाः सन्तः। प्राविशन् = प्रविष्टाः, दारुवर्मभवनमिति शेषः। तस्मिन् = पूर्वप्रतिपादिते, कोलाहले = कलकले, चटुलेत्यादिः = चटुले = (चंचले), लोचने = (नेत्रे), नैपुण्येन = कौशलेन, सहसा = केनाऽप्यतर्कित एव, निजावासं = स्ववासस्थानम्, अंगा = गतः।।25।।

भावार्थ:- ऐसा सुनकर इकट्ठे हुए मनुष्यलोग आँसू गिराते हुए हाहाकार शब्द से दिशाओंको बहरी करते हुए ’’बालचन्द्रिकामें अधिष्ठित बलवान् यक्ष है’’ ऐसा सुनते हुए भी दारुवर्माने उसीकी याचना की। इस कारणसे वह अपने कर्मसे मारा गया। अतः उसके लिए विलाप करनेसे क्या होता है? ’’ऐसा परस्पर कहते हुए भवनके भीतर घुस गये। उसी कोलाहलमें चंचल नयनों वाली बालचन्द्रिकाके साथ कुशलतासे अकस्मात् निकलकर मैं अपने वासस्थानमें चला गया।।25।।

26. ततो गतेषु कतिपयदिनेषु पौरजनसमक्षं सिद्धादेशप्रकारेण विवाह्य तामिन्दुमुखीं पूर्वसङ्कल्पितान्सुरतविशेषान्यथेष्टमन्वभूवम् बन्धुपालशकुननिर्दिष्टे दिवसेऽस्मिन्निर्गत्य पुराद् बहिर्वर्तमानो नेत्रोत्सवकारि भवदवलोकनसुखमप्यनुभवामि’ इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने बालचंद्रिका के विवाह का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- ततः = अनन्तरं, कतिपयदिनेषु = केषुचिद्दियमेषु, गतेषु = व्यतीतेषु, पौरजनसमक्षं = नागरिकलोकसंमुखं, तां = पूर्वोक्ताम्; इन्दुमुखीं = चन्द्रवदनां, बालचन्द्रिकां, विवाह्य = परिणीय, पूर्वसंकल्पितान् = प्राङ्गानः कल्पितान्, सुरतविशेषान् = रतिक्रीडाभेदान्, यथेष्टं = यथाभिलाषम्, अन्वभूवम् = अनुभूतवान्, अहमिति शेषः। बन्धुपालस्य = (चन्द्रपालपितुः), शकुननिर्दिष्टे = (कल्याणसूचकसमयप्रदर्शिते), अस्मिन्, दिवसे = दिने, पुरात् = नगरात्, बहिः = बाह्यपदेशे, वर्तमानः = विद्यमानः, अहमिति शेषः। नेत्रोत्सवकारि नयनोत्सवकारकं, भवतः = (तव) अवलोकनसुखम् = (दर्शनानन्दम्), अपि, अनुभवामि = निर्विशामि। इति।।26।।

भावार्थ:- तब कुछ दिनोंके बीतनेपर नागरिक मनुष्योंके सम्मुख सिद्धकी आज्ञाके अनुसार उस चन्द्रमुखीसे विवाह कर पहले से संकल्पित रमणविशेषों का मैंने यथेष्ट अनुभव किया। बन्धुपालके शकुनसे निर्दिष्ट इस दिनमें शहरसे बाहर रहता हुआ मैं आपके दर्शनसुखका अनुभव कर रहा हूँ"।।26।।

27. एव मित्रवृतान्तं निशम्याम्लानमानसो राजवाहनः स्वस्य च सोमदत्तस्य च वृत्तान्तमस्मै निवेद्य सोमदत्तम् 'महाकालेश्वराराधनानन्तरं भवद्वल्लभां सपरिवारां निजकटकं प्रापय्यागच्छ' इति नियुज्य पुष्पोसेव्यमानो भूस्वर्गायमानमवन्तिकापुर विवेश। तत्र 'अयं मम स्वामिकुमारः' इति बन्धुपालादये बन्धुजनाय कथयित्वा तेन राजवाहनाय बहुविधां सपर्यां कारयन्सकलकलाकुशलो महीसुरवर इति पुरि प्रकटयन्पुष्पोद्भवोऽमुष्य राज्ञो मज्जनभोजनादिकमनुदिनं स्वमन्दिरे कारयामास।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में पुष्पोद्भव का वृतांत वर्णन, राजवाहन का अपना और सोमदत्त का समाचार पुष्पोद्भव को सुनाने का वर्णन, राजवाहन का पुष्पोद्भव के साथ उज्जयिनी पुरी में प्रवेश, उनका स्वागत सत्कार आदि का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- एवम् = इत्थं, मित्रवृत्तान्तं = सुहृद्वार्तां, निशम्य = श्रुत्वा, अम्लानम् = (अग्लानम्), मानसं = (चित्तम्) यस्य सः, तादृशः = राजवाहनः, स्वस्थ = आत्मनः, सोमदत्तस्य, च, वृत्तान्तम् = उदन्तम्, अस्मै = पुष्पोद्भवाय, निवेद्य = ज्ञापयित्वा। सोमदत्तं, महाकालेश्वरस्य = (उज्जयिनीस्थितमहादेवस्य) आराधनस्य = (पूजनस्य), अनन्तरं = (पश्चात्कालम्), सपरिवारां =

परिजनसहितां, भवद्वल्लभां = त्वत्प्रियां, निजकटकं = स्वसैन्यावासं, प्रापय्य = नीत्वा, आगच्छ = एहि, इति = एवं, नियुज्य = आदिश्य, पुष्पोद्भवेन = स्वसुहृदा, सेव्यमानः = परिचर्यमाणः, भूस्वर्गायमानम् = (भूस्वर्गवदाचरत्) अवन्तिकापुरम् = उज्जयिनीनगरीं, विवेश = प्रविष्टः। तत्र = अवन्तिकापुरे, अयं = निकटवर्ती, जनः।

मम स्वामिकुमारः = प्रभुपुत्रः, इति = एवं, बन्धुपालादये = बन्धुपालप्रभृतये, बन्धुजनाय = सुहृद्वर्गाय, कथयित्वा = उक्त्वा। तेन = बन्धुजनेन, प्रयोज्यकत्र्रा। राजवाहनाय, बहुविधाम् = अनेकप्रकारां, सपर्यां = पूजां, कारयन् = कर्तुं प्रेरयन्। सकलकलासु = (गीतवाद्यादिसमस्तशिल्पेषु), कुशलः = (निपुणः), महीसुरवरः = (ब्राह्मणश्रेष्ठः), इति = एवं, पुरि = नगर्यां, प्रकटयन् = प्रकाशयन्, पुष्पोद्भवः = रत्नोद्भवमन्त्रिपुत्रः, अमुष्य = एतस्य, राज्ञः = भूपस्य, राजवाहनस्येति भावः। मज्जनभोजने = (स्नानभक्षणे), आदी = (प्रभृती) यस्य तत्, तादृशं कर्म, अनुदिनं = प्रतिदिनं, स्वमन्दिरे = आत्मभवने, कारयामास = कारितवान् ।।27।।

भावार्थः- मित्रका ऐसा वृत्तान्त सुनकर प्रफुल्ल चित्तवाले राजवाहनने अपना और सोमदत्त का वृत्तान्त उसे (पुष्पोद्भवको) कहकर सोमदत्तको महाकाल ईश्वरकी आराधनाके बाद परिवारसे युक्त तुम्हारी प्रियाको अपने पड़ावमें पहुँचाकर आओ" ऐसी आज्ञा देकर पुष्पोद्भवसे सेवित होते हुए पृथिवीके स्वर्गके समान उज्जयिनी पुरीमें प्रवेश किया। वहाँ "ये मेरे स्वामीके पुत्र हैं" बन्धुपाल आदि बन्धुजनोंको ऐसा कहकर उनसे राजवाहनका अनेक प्रकारका सत्कार कराते हुए उनके विषयमें "ये समस्त कलाओंमें निपुण श्रेष्ठ ब्राह्मण हैं" ऐसा शहरमें प्रख्यात करते हुए पुष्पोद्भवने राजवाहनको प्रतिदिन अपने गृहमें स्थान और भोजन आदि कराया।।27।।

5.4 सारांशः-

इस इकाई में आपने पुष्पोद्भव एवं राजवाहन की वार्ता, पुष्पोद्भव के वन भ्रमण का वर्णन, पुष्पोद्भव एवं रत्नोद्भव का वृत्तान्त, वालचन्द्रिका के सौन्दर्य का वर्णन, वालचन्द्रिका का विवाह उज्जयिनी पुरी का वर्णन प्रसंगों को विस्तार पूर्वक जाना।

5.5 शब्दावलीः-

गिरे	-	पर्वत
अवगाहने	-	प्रवेश करना
भर्तृ	-	पति
निधि	-	खजाना
रत्न	-	श्रेष्ठ

5.6 बोध प्रश्न:-

अभ्यास प्रश्न 1-

(1) बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1. सुबृत्ता किसकी पुत्री है।

(क) मानसार (ख) कालगुप्त

(ग) प्रहारवर्मा (घ) बन्धुपाल

2. कालयवन द्वीप के राजा का क्या नाम है।

(क) प्रहारवर्मा (ख) राजहंस

(ग) कालगुप्त (घ) इनमें से कोई नहीं

3. चतुरंगिणी सेना में होते हैं।

(क) हाथी (ख) घोड़े और पैदल

(ग) रथ (घ) उक्त सभी

4. दर्पसार ने शासन करने के लिए किसको नियुक्त किया।

(क) चण्डवर्मा (ख) दारूवर्मा

(ग) क एवं ख दोनों (घ) इनमें से कोई नहीं

5. चतुर्थ उच्छवास का अपर का क्या नाम है।

(क) पुष्पोद्भवचरितम (ख) सोमदत्तचरितम

(ग) कुमारोत्पत्तिचरितम (घ) इनमें से कोई नहीं

(2) निम्न वाक्यों में सही के सामने (√) और गलत के सामने (×) का चिन्ह लगायें-

1. बालचन्द्रिका के सौन्दर्य का वर्णन चतुर्थी उच्छवास में वर्णित है। ( )

2. बन्धुपाल के शुभ शकुनों का वर्णन चतुर्थ उच्छवास में मिलता है। ( )

(3) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. ……………… यत्सिद्धादिष्टे पतितनयमिलने विरहमसहिष्णुर्वैश्वानरं विशसि इति।

2. ……………………………………………निमित्तेन केन दुरवस्थानुभूयते।

3. कथं निवसति महीवल्लभो ……………………………………………... ।

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास - उमाशंकरशर्मा 'ऋषि'।

2. संस्कृत वांगमय का वृहद् इतिहास - पं० बलदेव उपाध्याय।

3. संस्कृत साहित्य का इतिहास - कन्हैया लाल पोद्दार।

4. संस्कृत साहित्य का इतिहास - पद्मभूषण आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।

5. संस्कृत साहित्य का आधुनिक इतिहास, डा0 राधावल्लभ त्रिपाठी, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी।

5.8 अन्य सहायक पुस्तकें:-

1. दशकुमारचरितम् - महाकवि दण्डी, नारायण राम आचार्य, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।

2. दशकुमारचरितम् - आचार्य शेशराज शर्मा, 'रेग्मी' चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी।

3. दशकुमारचरितम् - महाकवि दण्डी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।

4. दशकुमारचरित - आचार्य दण्डी।

5. संस्कृतसुकवि - आचार्य बलदेव उपाध्याय।

5.9 बोध प्रश्नों के उत्तर:-

(1) बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1. (ख)
2. (ग)
3. (घ)
4. (ग)
5. (क)

(2). 1. सही 2. सही

(3).

1. न खलु समुचितमिदं
2. कान्तारे
3. राजहंसः

5.10 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. पुष्पोद्भव का परिचय दीजिये।
2. चतुर्थ उच्छवास का कथासार लिखिए।

खण्ड-द्वितीय, इकाई-6
पंचम उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 पंचम उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)
6.4 सारांश
6.5 शब्दावली
6.6 बोध प्रश्न
6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
6.8 अन्य सहायक पुस्तकें
6.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
6.10 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना:-

प्रिय शिक्षार्थियो!

इससे पूर्व की इकाई में आपने पुष्पोद्भव के बारे में जाना। इस इकाई में आप बसन्त ऋतु का वर्णन, राजवाहन को अवन्तिसुन्दरी का दर्शन, राजवाहन का पूर्व जन्म की कथा सुनाना, अवन्तिसुन्दरी का आना और विरह से कष्टानुभूति, ऐन्द्रजालिक विद्येश्वर का प्रवेश, राजवाहन और अवन्तीसुन्दरी का प्रेम प्रसंग, विद्येश्वर का राजवाहन और अवन्तिसुन्दरी का विवाह कराने का वर्णन, को विस्तार से अध्ययन करेंगे।

6.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात आप—

- ❖ अवन्तिसुन्दरी के सौन्दर्य से परिचित हो सकेंगे।
- ❖ राजवाहन और अवन्तिसुन्दरी के प्रेम प्रसंग से परिचित हो सकेंगे।
- ❖ राजवाहन और अवन्तिसुन्दरी के विवाह वर्णन को जान पाएंगे।

6.3 पंचम उच्छवास, वर्ण्य विषय (प्रसंग, व्याख्या, भावार्थ)

1. अथ मीनकेतनसेनानायकेन मलयगिरिमहीरुहनिरन्तरावासिभुजंगमभुक्तावशिष्टेनेव सूक्ष्मतरेण धृतहरिचन्दनपरिमलभरेणेव मन्दगतिना दक्षिणानिलेन वियोगिहृदयस्थं मन्मथानलमुज्ज्वलयन्, सहकारकिसलयमकरन्दास्वादनरक्तकण्ठानां मधुकरकलकण्ठानां काकलीकलकलेन दिक्चक्रं वाचालयन्, मानिनीमानसोत्कलिकामुपनयन्, माकन्दसिन्दुवाररक्ताशोककिंशुकतिलकेषु कलिकामुपपादयन्, मदनमहोत्सवाय रसिकमनांसि समुल्लासयन्, वसन्तसमयः समाजगाम।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने बसन्त ऋतु का वर्णन किया है।

व्याख्या:- अथ = अनन्तरं, मीनकेतनस्य = (कामदेवस्य), सेनानायकेन = (सैन्याधिपतिना), मलयगिरेः = (मलयपर्वतस्य), महीरुहेषु = (वृक्षेषु), निरन्तरम् = (सततम्), आवासिनः= (निवासकारिणः), ये भुजङ्गमाः = (सर्पाः), तैर्भुक्तस्य = (उपभुक्तस्य), अवशिष्टेन = (शेषभागेन) इव। सूक्ष्मतरेण = अतिशयमन्देन, धृतः = (गृहीतः), हरिचन्दनस्य = (चन्दनविशेषस्य), परिमलभरः

= (आमोदभारः), येन = तेन, मन्दगतिना = मनथरगमनेन, दक्षिणाऽनिलेन = मलयजवातेन, वियोगिहृदयस्थं = विरहिचित्तस्थितं, मन्मथाऽनलं = कामाग्निम्, उज्ज्वलयन् = उद्दीपयन्, सहकाराणाम् = (अतिसौरभचूतानाम्) ये किसलया मकरन्दाः = (पल्लव-पुष्परसाः), तेषामास्वादनेन = (भक्षणेन), रक्तः = (मधुररागयुक्तः), कण्ठः = (गलः), येषां = तेषाम्। मधुकरकलकण्ठानां = भ्रमर-कोकिलानां, काकलीकलकलेन = सूक्ष्मध्वनिविस्तारेण। दिक्चक्रं = दिशामण्डलं, वाचालयन = मखरं कुवन्। मानिनीनां = (प्रणयमानयुक्तानां नायिकानाम्), मानसस्य = (चित्तस्य), उत्कलिकाम् = (उत्कण्ठाम्), उपनयन् =प्रापयन्। माकन्दः = (सहकारः), सिन्दुवारः = (निर्गुण्डी), रक्ताऽशोकः= (किंशुकः पलाशः), तिलकः = (क्षुरकः), कलिकां =कोरकम्, उपपादयन् =जनयन्। मदनमहोत्सवाय = कामपरमोत्सवाय, रसिकमनांसि = रागिचित्तानि, समुल्लासयन् = हर्षयन्। तादृशो वसन्तसमयः = सुरभिकालः, समाजगाम = समागतः ॥1॥

भावार्थः- अनन्तर कामदेवके सेनापति, मलयपर्वतके वृक्षोंमें निरन्तर रहनेवाले सर्पोंसे पीकर अवशिष्टसे, अतिशय मन्द और हरिचन्दनके सुगन्धसमूहके धारणकिये हुए के समान, मन्दगतिवाले दक्षिणदिशाके समीर (वायु) से वियोगियों के हृदयमें स्थिर कामाऽग्निको उज्ज्वल करता हुआ (वसन्त ऋतु आ गया), कलमी आमके पल्लव और पुष्परसके आस्वादनसे सुरीला गलावाले भौंरे और कोयलोंके सूक्ष्म कलकलसे दिशमण्डलको मुखर बनाता हुआ, प्रणयकोप करती हुई अभिमानिनी स्त्रियोंके चित्तमें उत्कण्ठा उत्पन्न करता हुआ, कलमी आत; निर्गुण्डी, लाल अशोक, ढाक और तिलक इन वृक्षोंमें कलियोंको उत्पन्न करता हुआ, कामदेवके महोत्सवके लिए रसिकपुरुषोंके चित्तोंको हर्षयुक्त करता हुआ वसन्तऋतु आ गया॥1॥

2. तस्मिन्नतिरमणीये कालेऽवन्तिसुन्दरी नाम मानसारनन्दिनीं प्रियवयस्यया बालचन्द्रिकया सह नगरोपान्तरम्योद्याने विहारोत्कण्ठया पौरसुन्दरीसमवायसमन्विता कस्यचिच्चूतपोतकस्य छायाशीतले सैकततले गन्धकुसुमहरिद्राक्षतचीनाम्बरादिनानाविधेन परिमलद्रव्यनिकरेण मनोभवमर्चयन्ती रेमे।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने मालवेश्वर राजा मानसार की पुत्री अवन्तिसुन्दरी का अपनी प्रिय सहेली बालचन्द्रिका के साथ उपवन में प्रवेश करने का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- अतिरमणीये = अतिशयमनोहरे, तस्मिन् काले = वसन्तसमये। अवन्तिसुन्दरी नाम = नाम्ना अवन्तिसुन्दरी, मानसारनन्दिनी = मालवेश्वरपुत्री। प्रियवयस्यया = अभीष्टसख्या,

बालचन्द्रिकया, सह = समम्। नगरोपान्ते = (पुरसमीपे) यद् रम्यम् = (मनोहरम्), उद्यानम् = (आक्रीडः), तस्मिन्। विहारोत्कण्ठया = क्रीडात्कलिकया। पौरसुन्दरीणां = (नागरिकाऽङ्गनानाम्), समवायसमन्विता = (समुदाययुक्ता), कस्यचित्, चूतपोतकस्य = लघोराम्रवृक्षस्य। छायाशीतले =छायया (अनातपेन), शीतले = (शीते), सैकततले = सिकतामये अधोभागे। गन्धः = (मलयजः), कुसुमं = (पुष्पम्), हरिद्रा = (निशा), अक्षताः = (आर्द्रतण्डुलाः), चीनाम्बर = (सूक्ष्मवस्त्रम्), तदादिना = (तत्प्रभृतिना), नानाविधेन = (अनेकप्रकारेण), परिमलद्रव्यनिकरेण = सुरभिपदार्थसमूहेन, मनोभवं = कामदेवम्, अर्चयन्ती = पूजयन्ती। रेमे = चिक्रीड ।।2।।

भावार्थः- उस अतिमनोहर समयमें राजा मानसारकी कुमारी अवन्तिसुन्दरी अपनी प्रियसखी बालचन्द्रिकाके साथ शहरके समीपस्थित सुन्दरबगीचेमें क्रीड़ाकी उत्कण्ठासे नगरकी सुन्दरियोंके समूहसे युक्त होकर किसी छोटेसे आम्रवृक्षकी छायासे ठण्डे बालूके नीचे चन्दन, फूल, हल्दी, अक्षत, रेशमी वस्त्र आदि अनेक प्रकारके सुगन्धित पदार्थोंके समूहसे कामदेवकी पूजा करती हुई क्रीड़ा करने लगी ।।2।।

3. तत्र रतिप्रतिकृतिमवन्तिसुन्दरीं द्रष्टुकामः काम इव वसन्तसहायः पुष्पोद्भवसमन्वितो राजवाहनस्तदुपवनं प्रविश्य तत्र तत्र मलयमारुतान्दोलितशाखानिरन्तरसमुद्भिन्नकिसलयकुसुम-फलसमुल्लसितेषु रसालतरुषु कोकिलकीरालिकुलमधुकराणामालापाञ्श्रावं श्रावं किञ्चिद्विकसदिन्दीवरकह्लारकरवराजीवराजीकेलिलोलकलहंससारसकारण्डवचक्रवाकचक्रवालक लरवव्याकुलविम- शीतलसलिलललितानि सरांसि दर्शंदर्शममन्दलीलया ललनासमीपमवाप।

प्रसंगः- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में राजवाहन का पुष्पोद्भव के साथ अवन्तिसुन्दरी को देखने के लिए उपवन में प्रवेश का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्याः- तत्र = तस्मिन् स्थाने, रतिप्रतिकृतिं = रतेः (कामप्रियायाः), प्रतिकृतिम् = (उपमास्वरूपाम्) अवन्तिसुन्दरीं = अमानसारनन्दिनीं, द्रष्टुकामः = (दिदृक्षुः), द्रष्टुं कामः = (इच्छा), वसन्तसहायः = सुरभिसहचरः, कामः = मन्मथः इव। पुष्पोद्भवसमन्वितः = पुष्पोद्भवयुक्तः, राजवाहनः = राजहंसकुमारः, तत् = पूर्वोक्तम् उपवनम् = आरामं, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा। तत्र तत्र = तस्मिन् तस्मिन् स्थाने, मलयमारुतेन = (दाक्षिणात्यवातेन), आन्दोलिताः = (चालिताः) याः शाखाः = (लताः), तासु समुद्भिन्नानि = (प्रादुर्भूतानि), यानि किसलयकुसुमफलानि = (पल्लव-

पुष्पसस्यानि) तैः समुल्लसितेषु = (संशोभितेषु), रसालतरुषु = आम्रवृक्षेषु, कोकिल-कीराऽऽलिकुलस्य = (पिकशुकराजिसमूहस्य), मधुकराणाम् = (भ्रमराणाम्), आलाप = ध्वनिं, श्रावं श्रावं = श्रुत्वा श्रुत्वा, किंचित् = (ईषत् यथा तथा),

विकसन्ति = (प्रफुल्लन्ति), यानि इन्दीवरकह्लारकैरवराजीवानि = (नीलकमलरक्तोत्पल-कुमुदकमलानि) तेषां राज्यो = (पक्तौ), केलिः = (क्रीडाः), तत्र लोलाः = (चंचलाः), कलहंसाः = (कादम्बाः), सारसाः = (पुष्कराह्वाः), काण्डवाः = (मद्गवः), चक्रवाकाः = (कोकाः तेषां चक्रवालं = (मण्डलम्), तस्य ये कलरवाः = (मधुरस्वराः), तैः व्याकुलं = (व्याप्तम्) विमलं = (निर्मलम्), शीतल = (शीतम्), यत् सलिलं = (जलम्), तेन ललितानि = (मनोहराणि) सरांसि = कासारान्। दर्शं दर्शम् = वारं वारं दृष्टवा, अमन्दलीलया = अमन्थरविलासेन, ललनासमीपं = सुन्दरीनिकटम् अवाप = प्राप॥3॥

भावार्थः- वहाँ रतिके समान अवन्तिसुन्दरीको देखनेकी इच्छा करतेहुए मित्र वसन्तके साथ रहे हुए कामदेवके समान, पुष्पोद्भव से युक्त राजवाहनने उस बगीचेमें प्रवेश कर स्थान-स्थान पर मलयकी हवासे कम्पित शाखाओं में निरन्तर विकसित पल्लव, पुष्प और फलोंसे शोभित आमके पेड़ोंमें कोयल, तोतोंके समूह और भौंरों की आवाजोंको बारबार सुनकर कुछ खिले हुए नीलकमल, सौगन्धिक, कुमुद और कमलोंकी पंक्ति (कतार) में क्रीड़ा करनेमें चंचल कलहंस, सारस, कारण्डव और चक्रवाकों (चकवों) की मनोहर आवाजसे व्याप्त निर्मल शीतल जलसे सुन्दर तालाबोंको बारबार देखकर अमन्द विलाससे स्त्रियोंके समूहमें आ पहुँचे॥3॥

4. बालचन्द्रिकया 'निःशङ्कमित आगम्यताम्' इति हस्तसंज्ञपा समाहूतो निजतेजोनिजितपुरुहूतो राजवाहनः कृशोदर्या अवन्तिसुन्दर्या अन्विकं समाजगाम।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने राजवाहन का अवन्तिसुन्दरी के समीप जाने का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- बालचन्द्रिकया = पुष्पोद्भवपत्न्या, निःशंकं = निःसन्देहम्, इतः = अस्मिन् स्थाने, आगम्यताम् = आगमन क्रियताम्। इति = एव, हस्तसंज्ञया = (करसंकेतेन), समाहूतः = (समाकारितः), निजतेजसा = (स्वाऽनुभावेन), निर्जितः = (पराजितः), पुरुहूतः = (इन्द्रः), येन सः। तादृशी = राजवाहनः। कृशोदर्याः = तन्वङ्गयाः, अवन्तिसुन्दर्याः अन्तिकं = समीपं, समाजगाम = समागतः॥4॥

भावार्थः- बालचन्द्रिकासे ''कुछ भी सन्देह न कर यहाँ पधारे'' हाथके ऐसे इशारेसे बुलाये गये और तेजसे इन्द्रको जीतनेवाले राजवाहन कृशोदरी अवन्तिसुन्दरीके समीप आये ।।4।।

5. या वसन्तसहायेन समुत्सुकतयारतेः केलीशालभञ्जिकाविधित्सया कञ्चन नारीविशेषं विरच्यात्मनः क्रीडाकासारशारदाविन्दसौन्दर्येण पादद्वयम, उद्यानवनदीर्धिकामत्तमरालिकागमनरीत्या लीलालसगतिविलासम्, तूणीरलावण्येन जङ्घे, लीलामन्दिरद्वारकदलीलालित्येन मनोज्ञमरुयुगम्, जैत्ररथचातुर्येण घन जघनम्, किञ्चिद्विकसल्लीलावतंसकह्लारकोरककोटरानुवृत्या गङ्गावर्तसनाभिं नभिम्, सौधारोहणपरिपाट्या वलित्रयम्, मौर्वीमधुकरपङ्क्तिनीलिमलीलया रौमावलिम्, पूर्णसुवर्णकलशशोभया कुचद्वन्द्वम्, लतामण्डपसौकुमार्येण बाहू, जयशङ्खाभिख्यया काण्ठम्, कमनीयकर्णपूरसहकारपल्लवरागेण प्रतिबिम्बीकृत बिम्ब रदनच्छदम्, बाणायमानपुष्पलावण्येन शुचि स्मितम्, अग्रदूतिकाकलकण्ठिकाकलालापमाधुर्येण वचनजातम्, सकलसैनिकनायकमलयमारुतसौरभ्येण निःश्वासपवनम्, जयध्वजमीनदर्पेण लोचनयुगलम्, चापयष्टिश्रिया भ्रूलते, प्रययसुहृदः सुधाकरस्यापनीतकलङ्कया कान्त्या वदनम्, (लीलामयूरबर्हभङ्गया केशपाशम्) च विधाय समस्तमकरन्दकस्तूरिकासम्मितेन मलयजरसेन प्रक्षाल्य कर्पूरपरागेण सम्पृज्य निर्मितेव रराज।

प्रसंगः- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने अवन्तिसुन्दरी के सौन्दर्य का वर्णन किया है।

व्याख्याः- या = अवन्तिसुन्दरी, वसन्तसहायेन = कामदेवेन, समुत्सुकतया = समुत्कण्ठितत्वेन। रतेः = स्वपत्न्याः। केलीशालभंजिका = (क्रीडार्थ निर्मिता पांचालिका) तस्याः विधित्पया = (विधातुमिच्छया)। कंचन, नारीविशेषं = प्रमदाविशेषम्। विरच्य = विरचय्य, रचयित्वा। आत्मनः = स्वस्य, क्रीडाकासारे = (केलिसरसि), शारदं = (शारदृतुसम्बन्धि), यत् अरविन्दं = (कमलम्), तस्य सौन्दर्येण = (शोभया), पादद्वयं = चरणद्वितयम्। उद्यानवने = (आरामे), या दीर्घिका = (वापी), तस्यां या मत्तमरालिका = (समदहंसी), तस्या गमनरीत्या = (गतिपरिपाट्या), लीलया = (शृंङ्गारचेष्टया), या अलसगतिः = (मन्दगमनम्), तस्याः विलासं = (विभ्रमम्), तूणीरलावण्येन = तूणीरस्य (निषङ्गस्य), लावण्येन = (सौन्दर्येण), जङ्घे = प्रसृते, लीलामन्दिरस्य = (विलासभवनस्य), द्वारे = (प्रतीहारे) या कदली = (रम्भालता), तस्या लालित्येन = (सौन्दर्येण), मनोज्ञ = मनोहरम्, ऊरुयुगं = सक्थियुग्मम्, जैत्ररथस्य = (जयशीलस्यन्दनस्य), चातुर्येण = (रचनाकौशलेन), घनं = निविडं, जघनं = कटिपुरोभागं, किंचित् = (ईषत्), विकचन् = (प्रस्फुटन्), लीलाऽवतंसः = (विलासकर्णाभरणाम्)

तादृशो यः कह्लारकोरकः = (सौगन्धिककलिका), तस्य कोटरं = (निष्कुहः, मध्यभाग इति भावः), तस्य अनुवृत्या = (अनुवर्तनेन सादृश्येनेति भावः) ,गङ्गायाः = (भागीरथ्याः) य आवर्तः = (अम्भोभ्रमः), तस्य सनामि = (सदृशम्), नाभिम्, सौधारोहणस्य = (राजसदनसोपानस्य), पिरपाटया = (अनुक्रमेण), बलित्रयम् = उदररेखाचितयं, मौर्वी = (कामदेवस्य) एव या मधुकरपङ्क्तिः = (भ्रमरराजिः), तस्या यो नीलिमा = (नीलत्वम्), तस्य लीलया = (विलासेन), रोमावलिं = लोमपङ्क्तिम्। पूर्णौ = (पूरितौ) यौ सुवर्णकलशौ = (हेमकुम्भौ), तयोः शोभया = (कान्त्या), कुचद्वन्द्वं = पयोधरद्वितयम्। लतामण्डपस्य = (वल्लीनिर्मितगृहविशेषस्य), सौकुमार्येण = (कोमलत्वेन), बाहू = भुजौ, जयशङ्खस्य = (विजयसूचककम्बोः), अभिख्यया = (शोभया), कण्ठं = गलम्। कमनीयः = (सुन्दरः), कर्णपूरः = (श्रोत्राभरणभूतम्), यत् सहकारपल्लवम् = (अतिसौरभचूतकिसलयम्) तस्य रागेण = (लौहित्येन), प्रतिबिम्बीकृत = (प्रतिनिधीकृतम्), बिम्बं= (बिम्बफलम्) येन त, रदनच्छदम् = अधरम्। बाणायमान = (बाणवदाचरत्), यत् पुष्पं = (कुसुमम्) तस्य लावण्येन = (सौन्दर्येण), शुचि = शुक्लं शुद्धं वा। स्मितं = सन्दहासम्, अग्रदूतिका = (मुख्यसन्देशहरा), या कलकण्ठिका = (कोकिला), तस्याः यः कलः = (अव्यक्त मधुरः), आलापः = (ध्वनिः), तस्य माधुर्येण = (मनोहरत्वेन), वचनजातं = भाषितसमूहम्। सकलसैनिकानां = (समस्तसैन्यानाम्), नायकः = (नेता), यो मलयमारुतः = (दाक्षिणात्यवातः), तस्य सौरभ्येण = (सौगन्ध्येन), विश्वासपवनं = मुखश्वासवातम् , जयध्वजौ = (विजयपताकारूपौ), यौ मीनौ = (मत्स्यौ), तयोः दर्पेण = (अहङ्कारेण), लोचनयुगलं = (नेत्रयुग्मम्), चापयष्ट्योः = (धनुर्यष्ट्योः) श्रिया = (शोभया), भ्रूलते = नयनरोमपंक्तिवल्ल्यौ। प्रथमसुहृदः = मुख्यमित्रस्य, सुधाकरस्य = चन्द्रमसः, अवनीतः = (दूरीकृतः), कलङ्कः = (लांछनम्), कान्त्या = शौभया, वदनं = मुखम्। लीलामयूरस्य = (विलासार्थकबर्हिणस्य), बर्हभंगया = (पिच्छविच्छित्या), केशपाशं = कचकलापं, च, विधाय = कृत्वा, समस्ता = सम्पूर्णा, या मकरन्दकस्तूरिका = (पुष्परसयुक्तमृगमदः), तया संमितेन = (युक्तेन), मलयजरसेन = चन्दनद्रवेण, प्रक्षाल्य = क्षालयित्वा। कर्पूरपरागेण = घनसारचूर्णेन, निर्मिता = रचिता, इव, रराज = शुशुभे।।5।।

भावार्थ:- जो कि वसन्तके सहायतासे उत्कण्ठित होनेसे कामदेवने अपनी पत्नी रतिकी क्रीड़ाकी पुतलीबनानेकी इच्छासे किसी प्रमदाविशेषकी रचना कर अपने क्रीड़ाके तालाबमें स्थित शरद् ऋतुके कमलकी सुन्दरतासे दो चरणोंको (बनाकर) बागीचेकी बाबलीमें मदयुक्त हंसीके गमनकी रीतिसे लीलासे मन्दगतिके विलासको, तरकशकी सुन्दरतासे दो जांघोको, लीलाभवनके द्वारस्थित कदली (केला) के सौन्दर्यसे मनोहर दो ऊरूओंको, कामदेवके जयशील रथकी चतुरतासे घने जघन (कटिके पूर्वभाग) को कुछ खिले हुए लीलाके भूषणस्वरूप सौगन्धिक कमलके मध्य भागके सादृश्यसे गंगाके आवर्त (भँवर) के सदृश नाभिको महलकी सीढ़ियोंके अनुक्रमसे तीन वलियों (उदररेखाओंको),

कामदेवकी प्रत्यंचास्वरूप भ्रमरपङ्क्तिकी कृष्णताके विलाससे रोमोंकी पंक्तिको, पूर्ण सुवर्णकुम्भ की शोभा से दोनो पयोधरों को, लतामण्डपकी सुकुमारता से दो बाहुओं को जयसूचक शङ्खकी शोभासे कण्ठ (गले) को, मनोहर कर्णभूषणस्वरूप कलमी आमके पल्लवकी लालिमासे बिम्ब फलके प्रतिनिधिस्वरूप ओष्ठ (होठ) को, कामदेवके बाणके समान आचरण करते हुए फूल के सौन्दर्यसे सफेद वा शुद्ध मन्दहास्य (मुसकान) कामदेवकी मुख्य दूती कोयलके मधुर ध्वनिके माधुर्य (मिठास) से वचन समूहको, कामदेवके समस्त सेनाओंकेनायक मलयवायुकेसौरभ्य (खुशबू) से निःश्वासवायुको, कामदेवके जयध्वजरूप मत्स्य (मछली) के गर्वसे दोनों नेत्रोंको कामदेवकी धनुर्यष्टिकी शोभासे दो भौहोंको, कामदेवके मुख्यमित्र चन्द्रमाकी कलंकरहित कान्तिसे मुखको, विलासके साधनभूत मयूर (मोर) के वह (पंख) की विच्छिति (शोभा) से केशपाशको बनाकर समस्त पुष्परस और कस्तूरीसे युक्त चंदनरससे प्रक्षालन कर कपूरके चूर्णसे संमार्जन कर बनी हुई सी होकर शोभित हुई ।।5।।

6. सा मूर्तिमतीव लक्ष्मीर्मालवेशकन्यका स्वेनैवाराध्यमानं सङ्कल्पितवरप्रदानायाविर्भूतं मूर्तिमन्तं मन्मथमिव तमालोक्य मन्दमारुतान्दोलिता लतेव मदनावेशवती चकम्पे। तदनु क्रीडाविश्रम्भान्निवृत्ता लज्जया कानि कान्यपि भावान्तराणि व्यधत्त।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने अवन्तिसुन्दरी के सौंदर्य का वर्णन प्रतिपादित किया है ।

व्याख्या:- सा = पूर्वोक्ता, मालवेशस्य = (मालवेश्वरस्य, मानमरस्येति भावः), कन्यका = (कुमारी), अवन्तिसुन्दरीति भावः। मूर्तिमती = शरीरधारिणी, लक्ष्मीः = कमला (शोभाऽधिष्ठात्री देवी), इव, स्वेन = आत्मना, एव, आराध्यमानं = सेव्यमानं, संकल्पितेत्यादिः = संकल्पितस्य (मानसिचिन्तितस्य), वरस्य = (अभीष्टस्य), प्रदानाय = (विवरणाय), आविर्भूतं = प्रादुर्भूतम्, समायातमिति भावः। मूर्तिमन्ते = शरीरधाराणं, मन्मथं = कामदेवम, इव, तं = राजवाहनम्, आलोक्य = दृष्ट्वा, मदनस्य = (कामदेवस्य), आवेशवती = (आविर्भाववती), मन्दमारुतेन = (मन्थरवायुना) आन्दोलिता = (कम्पिता), लता = वल्ली, चकम्पे = कम्पिता । तदनु = तदनन्तरं, क्रीडाविश्रम्भात् = केलिविश्वासात्, निवृत्ता = विरता, लज्जया = व्रीडया हेतुना। कानि कानि = अतिशयेनाऽनिर्वचनीयानि, भावान्तराणि = अनुरागविशेषान्, व्यधत्त = विहितावती ।।6।।

भावार्थ:- वह मालवेश्वर (मानसार) की कुमारी अवन्तिसुन्दरी, शरीरधारिणी लक्ष्मीकी समान होकर आपसे सेवा किये जाते हुए मनसे चाहे हुए वर देनेके लिए प्रकट मूर्तिमान् कामदेवके समान उन (राजवाहन) को देखकर मन्दवायुसे कम्पित लताकी तरह कामदेव आवेशसे युक्त होती हुई काँपने लगी। अनन्तर क्रीड़ा प्रसंग को छोड़कर लज्जासे अनेक प्रकारके अनुराग विशेषों को प्रकट करने लगी ।।6।।

7. 'ललनाजनं सृजता विधात्रा नूनमेषा घुणाक्षरन्यायेन निर्मिता। नो चेदब्जभूरेवंविधो निर्माणनिपुणो यदि स्यात्तर्हि तत्समानलावण्यामन्यां तरुणीं किं न करोति' इति सविस्मयानुराग विलोकयतत्तस्य समक्षं स्थातुं लज्जिता सती किञ्चित्सखीजनान्तरितगात्रा तन्नयनाभिमुखैः किञ्चिदाकुंचितैरञ्चितभ्रूललैरपाङ्गवीक्षितेरात्मनःकुरङ्गस्यानायमानलावण्यं राजवाहनं विलोकयन्त्यतिष्ठत्।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में अवन्तिसुन्दरी के सौन्दर्य का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- ललनाजनं = प्रमदालोकं, सृजता = उत्पादयता, विधात्रा = ब्रह्मदेवेन, एषा = समीपतरस्थिता, अवन्तिसुन्दरीति भावः। घुणाऽक्षरन्यायेन = काकतालीयन्यायेनेति भावः। निर्मिता = रचिता, नूनम् = इव। उत्प्रेक्षाऽलङ्कारः। उक्तमर्थ = समर्थयते, नोचेत् = इत्थं न स्याद्यदि, एवंविधस्य = (अवन्तिसुन्दरीसदृशस्य जनस्य), निर्माणे = (रचनायाम्), निपुणः = (प्रवीणः), स्याद् यदि = भवेच्चेत्, तर्हि = तदा, तया = (अवन्तिसुन्दर्या), समानं = (तुल्यम्), लावण्यं = (सौन्दर्यम्), अन्याम् = इतरां, तरुणीं = युवतीं, किं न करोति = किं न विदधाति ?, इति = एवं, सविस्मयाऽनुरागम् = आश्चर्यप्रणयसहितं यथा तथा, विलोकयतः = पश्यतः, तस्य = राजवाहनस्य, समक्षं = संमुखमितिभावः। स्थातुम् = अवस्थानं कर्तुम्, लज्जिता = व्रीडिता सती, किंचित् = (ईषत् यथा तथा), सखीजनैः = (वयस्यागणैः), अन्तरितं = (व्यवहितम्), गात्रं = (शरीरम्), तन्नयनयोः = (राजवाहननेत्रयोः), अभिमुखैः = (सम्मुखैः), अंचिते = (पूजिते, शोभिते इति भावः), भ्रूलते = (नेत्रलोमवल्लयो), येषु तैः। अपांगवीक्षितैः = कटाक्षनिरीक्षितैः, आत्मनः = स्वरूपरूपस्य, कुरङ्गस्य = मृगस्य, आनायमान = (जालवदाचरत्), लावण्यं = (सौन्दर्यम्) तादृशं = राजवाहनं, विलोकयन्ती = पश्यन्ती, अतिष्ठत् = स्थिता ॥7॥

भावार्थ:- 'स्त्री समुदायकी सृष्टि करनेवाले ब्रह्माजीने निश्चय ही घुणाक्षरन्यायसे इसका निर्माण किया है। ऐसा नहीं होता तो ब्रह्माजी इसके समान सौन्दर्यवाली अन्य स्त्रीका क्यों नहीं निर्माण करते हैं ? ऐसा सोचकर आश्चर्य और अनुरागसे देखते हुए उन (राजवाहन) के सम्मुख टिकनेमें लज्जित होती हुई सखीजनोंके बीचमें अपने शरीरको छिपाकर उनके नेत्रोंके सम्मुख कुछ सङ्कुचित और शोभित भ्रूलताओंसे युक्त कटाक्ष दर्शनों से स्वस्वरूप मृग के पाश के समान सौन्दर्य वाले राजवाहनको देखती हुई स्थित हुई ॥7॥

8. सोऽपि तस्यास्तदोत्पादितभावरसानां सामग्र्या लब्धवलस्येव विषमशरस्य शरव्यायमाणमानसो बभूव।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने राजवाहन के मन में अवन्तिसुन्दरी के सौंदर्य का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- सोऽपि = राजवाहनोऽपि, तदा = तस्मिन्समये, तस्याः = अवन्तिसुन्दर्याः, उत्पादिताः = (जनिताः), भावाः = (मनोविकाराः), एव रसाः = (शृङ्गारादयः), तेषां सामग्रया = समग्रत्वेन, लब्धबलस्य = लब्धं (प्राप्तम्), बलं = (शक्तिः), विषमशरस्य = विषमाः (अयुग्माः, पंच संख्यका इति भावः) शराः = (बाणाः) यस्य = तस्य, कामदेवस्येति भावः। शरव्यवदाचरत् = (लक्ष्यवदाचरत्) मानसं = (चित्तम्) यस्य सः, तादृशो बभूवं = अभवत्। अवन्तिसुन्दरी विलोकनेन राजवाहनो मदनबाणलक्ष्यभूतो जात इति भावः।।8।।

भावार्थ:- वे (राजवाहन) भी उस समय अवन्ति सुन्दरीके उत्पादित मनोविकार रूप रसोंकी सामग्रीसे बलको पाये हुए कामदेवके लक्ष्य बनते हुए चित्तवाले हो गये अर्थात् कामबाण से विद्ध हुए ।।8।।

9. सा मनसीत्थमचिन्तयत्-'अनन्यसाधारणसौन्दर्येणानेन कस्यां पुरि भाग्यवतीनां तरुणीनां लोचनोत्सवः क्रियते। पुत्ररत्नेनामुना पुरन्ध्रीणां पुत्रवतीनां सीमन्तिनीनां का नाम सीमन्तमौक्तिकीक्रियते। कास्य देवी। किमत्रागमनकारणमस्य। मन्मथो मामपहसितनिजलावण्यमेनं विलोकयन्तीमसूययेवातिमात्रं मथ्मन्निजनाम सान्वय करोति। किं करोमि। कथमयं ज्ञातव्य' इति।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने अवन्तिसुन्दरी के मन में राजवाहन के प्रति रमणीयता का वर्णन किया है।

व्याख्या:- सा = अव्तिसुन्दरी, मनसि = चित्ते, इत्थम् = अनेन प्रकारेण, अचिन्तयत = चिंतितवती। अनन्यसाधारणम् = (अनितरसामाण्यम्, अद्वितीयमिति भावः) सौन्दर्यम् = (लावण्यम्) यस्य, तेन। अनेन = पुंसा, राजवाहनेनेति भावः, कस्यां = कनामधेयायां, पुरि = नगर्यां, भाग्यवतीनां = सोभाग्यसम्पन्नानां, तरुणीनां = यूवतीनां, लोचनोत्सवः = नयनोत्सवः। क्रियते = विधीयते। पुत्ररत्नेति = तनयश्रेष्ठेन, अमुना = पुंसा, राजवाहनेन। पुरन्ध्रीणां = कुटुम्बिनीनां, पुत्रवतीनां = तनयसम्पन्नानां, सीमन्तिनीनां = नारीणां, मध्ये। का = कतमा, सीमन्तिनी = नारी, नामेति प्रसिद्धौ। सीमन्तस्य = (केशवेशस्य), मौक्तिकीक्रियते = (मुक्ताभूषणीक्रियते)। सीम्नोऽन्तः, अस्य = पुरुषस्य, देवी = पत्नी, का ? अस्य = पुरुषस्य। अत्र = अस्मिन् स्थाने, आगमनकारणम् = आगमहेतुः, किम् ?।

मन्मथः = मदनः, अपहसितेत्यादिः = अपहसितं (हास्यविषयीकृतं, तिरस्कृतमिति भावः) निजं = (स्वकीयम्), लावण्यं = (सौन्दर्यम्) येन, तं, तादृशं एनं = पूर्वोक्तं पुमासं, विलोकयन्ती = पश्यन्तीम्,

माम्, असूयया = ईर्ष्याया, इव, मथ्नन् = पीडयन्, निजनाम = स्वाऽभिधानं करोतीति भावः। किं =कर्म, करोमि =विदधामि। अयं =पुरुषः, ककं =केन प्रकारेण, ज्ञा, साऽन्वयं = सार्थकं, करोति = विदधाति। गतः = (चेतनायाः), मथः = (विलोडकः) इति, तव्यः = वेदनीयः इति ।।9।।

भावार्थ:- वह अवन्तिसुन्दरी मन में ऐसा सोचने लगी-असाधारण सौन्दर्य वाले ये किस शहर में भाग्यवती युवतियों के नेत्रोंमें उत्सव कर रहे हैं? ऐसे पुत्ररत्नसे कुटुम्बिनी पुत्रवती स्त्रियोंमें कौन-सी स्त्री सीमन्त (माँग) में मोती की समान बनाई जा रही है। इनकी पत्नी कौन है? यहाँ इनके आगमनका कारण क्या है? मन्मथ (कामदेव) अपने सौन्दर्य का तिरस्कार करनेवाले इनको देखती हुई मुझे मानों ईर्ष्यासे अत्यन्त मन्थन करता हुआ अपना नाम साऽर्थक कर रहा है। मैं क्या करूँ? कैसे ये जाने जायेंगे?।।9।।

10. ततो बालचन्द्रिका तयोरन्तरङ्गवृत्तिं भावविवेकैर्ज्ञात्वा कान्ता समाजसन्निधौ राजनन्दनोदन्तस्य सम्यगाख्यानमनुचितमिति लोकसाधारणैर्वाक्यैरभाषत-भर्तृदारिके! अयं सकलकलाप्रवीणो देवतासान्निध्यकरण आहवनिपुणो भूसुरकुमारो मणिमन्त्रौषधिज्ञः परिचर्यार्हो भवत्या पूज्यताम्' इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजवाहन के स्वागत सत्कार का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- ततः = अनन्तरं, बालचन्द्रिका, भावविवेकैः = आशविवेचनैः, तयोः = अवन्तिसुन्दरी-राजवाहनयोः, अन्तरङ्गवृत्तिं = मनोवृत्तिं, ज्ञात्वा = विदित्वा, कान्तासमाजस्य = (ललनासमूहस्य) सन्निधौ = (समीपे), राजनन्दनस्य = (राजपुत्रस्य, राजवाहनस्य), उदन्तस्य = (वृत्तन्तस्य), सम्यक् = स्फुटं यथा तथा। आख्यानं = कथनम्, अनुचित्तम् = अयोग्यम्, इति = हेतोः, लोकसाधारणैः = जनसामान्यैः, वाक्यैः = वचनैः, अभाषत = भाषितवती। भर्तृकारिके = हे राजकुमारि!, अयं = समीपस्थः, पुरुषः, सकलकलासु = (समस्तनृत्यगीतवादित्रादिशिल्पेषु), प्रवीण = (निपुणः), देवतासान्निध्यस्य = (देवसामीप्यस्य), करणः = (कारकः), आहवनिपुणः = समरप्रवीणः, मणिमन्त्रौषधिज्ञः = रत्नमनुभेषजाऽभिज्ञः। परिचर्याऽर्ह = सेवायोग्यः, भूसुरकुमारः = ब्राह्मणपुत्रः, भवत्या = त्वया, पूज्यताम् = अर्च्यताम् इति।।10।।

भावार्थ:- तब बालचन्द्रिकाने मनोविकारों से उन दोनों की मनोवृत्ति जानकर स्त्री समाजके समीप राजपुत्रका वृत्तान्त पूरा कहना अनुचित है ऐसा सोचकर लोकमें सामान्य वाक्योंसे कहा- ''राजकुमारि! समस्त कलाओं में निपुण और देवताओंका प्रत्यक्ष दर्शन करनेवाले तथा युद्ध करनेमें

प्रवीण, मणि, मन्त्र और औषधोंके जानकार पूजाके योग्य इन ब्राह्मणकुमारकी आप पूजा कीजिए" ।।10।।

11. तदाकर्ण्य निजमनोरथमनुवदन्त्या बालचन्द्रिकया सन्तुष्टान्तरङ्गा तरङ्गावली मन्दानिलेनेव सङ्कल्पजेनाकुलीकृता राजकन्या जितमारं कुमारं समुचितासनासीनं विधाय सखीहस्तेन शस्तेन गन्धकुसुमाक्षतघनसारताम्बूलादिनानाजातिवस्तुनिचयेन पूजां तस्मै कारयामास। राजवाहनोऽप्येवमचिन्तयत्-'नूनमेषा पूर्वजन्मनि मे जाया यज्ञवती। नो चेदेतस्यामेवंविधोऽनुरागो मन्मनसि न जायेत। शापावसानसमये तपोनिधिदत्तं जातिस्मरत्वमावयोः समानमेव। तथापि कालजनितविशेषसूचकवाक्यैरस्या ज्ञानमुत्पादयिष्यामि, इति।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने राजवाहन के स्वागत सत्कार का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तद् = वचनम्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, निजमनोरथं = स्वाऽभिलाषम्, अनुवदन्त्या = अनुवादं कुर्वत्या। बालचन्द्रिकया = स्वसख्या। सन्तुष्टाऽन्तरङ्गा = परितुष्टाऽन्तःकरणा, मन्दाऽनिलेन = मन्थरवातेन, तरङ्गावली = वीचिराजिः, इव। संकल्पजेन = कामदेवेन, आकुलीकृता = विह्वलीकृता, राजकन्या = भूपसुता, अवन्तिसुन्दरी। जितमारं = पराजितकामदेवं, कुमार = राजकुमारं राजवाहनम्। समुचितासने = (योग्योपवेशनस्थाने), आसीनम् = (उपविष्टम्), विधाय = कृत्वा। शस्तेन = पूजितेन, सखीहस्तेन = बालचन्द्रिकाकरेण, गन्धः = (मलयजः), कुसुमम् = (पुष्पम्) अक्षताः = (प्रक्षालिततण्डुलाः), घनसारः = (कर्पूरः), ताम्बूलं = (नागवल्लीदलम्), तदादिः = (तत्प्रभृतिः), नानाजातिः = (अनेकप्रकारः) यो वस्तुनिचयः = (पदार्थसमूहाः), तेन। तस्मै = राजवाहनाय, पूजां = सपर्या, कारयामास = कारितवती। राजवाहन अपि एवम् = इत्थम्, अचिन्तयत् = चिन्तितवान्। एषा = अतिसमीपवर्तिनी नारी, पूर्वजन्मनि = जन्मान्तरे, मे = मम, जाया = पत्नी। यज्ञवती, नूनं = किमु ?। नो चेत् = एवं, न यदि।

एतस्यां = समीपतरवर्तिन्यामस्यां ललनायाम्, एवविधः = एतादृशः, अनुरागः = प्रेम, मन्मनसि = मच्चित्ते, न जायेत = न उत्पद्येत्। शापाऽवसानसमये = शापसमाप्तिकाले, तपोनिधिता = तापसेन, मुनिना, दत्तम् = (वित्तीर्णम्), आवयोः = (दम्पत्योः अवन्तिसुन्दर्या मम चेति भावः), जातिस्मरत्वं = पूर्वजन्मस्मरणं, समानं = तुल्यम्, एव। तथाऽपि = पूर्वजन्मस्मरणस्यावयोस्तुल्यत्वेऽपि, कालेन = (दीर्घसमयेन), जनितः = (उत्पादितः), यो विशेषः = (भेदः), पूर्वजन्मनोऽवन्तिसुन्दर्या यद्विस्मरणम्

तस्य, सूचकवाक्यैः = (उद्बोधकवचनसमूहैः), अस्याः = अवन्तिसुन्दर्याः, ज्ञानं = स्मरणम्, उत्पादयिष्यामि = जनयिष्यामि ।।11।।

भावार्थ:- ऐसा सुनकर अपने मनोरथका अनुवाद करनेवाली बालचन्द्रिकासे सन्तुष्ट चित्तवाली राजकन्याने मन्दवायुसे तरंगपंक्तिकी तरह कामदेवसे व्याकुल की हुई होकर कामदेवको जीतनेवाले कुमार (राजवाहन) को समुचित आसनमें बिठाकर सुन्दर सखीके हाथसे चन्दन, फूल, अक्षत, कपूर और पान आदि अनेक पदार्थों के समूहसे उनकी पूजा कराई। राजवाहनने भी ऐसा सोचा ''यह निश्चय ही पूर्वजन्मकी मेरी पत्नी यज्ञवती है। ऐसा न होता तो मेरे मनमें इनमें ऐसा अनुराग उत्पन्ननहीं होता। शापकी समाप्तिके समयमें तपस्वीसे दिये गये हम दोनोंका पूर्व जन्मका स्मरण समान ही है। तो भी दीर्घकालसे उत्पादित भेद (स्मरण) के सूचक वाक्योंसे इनको भी ज्ञानका स्मरण कराता हूँ ।।11।।

12. तस्मिन्नेव समये कोऽपि मनोरमो राजहंसः केलीविधित्सया तदुपकण्ठमगमत्। समुत्सुकया राजकन्यया मरालग्रहणे नियुक्तां बालचन्द्रिकामवलोक्य 'समुचितो वाक्यावसर' इति सम्भाषणनिपुणो राजवाहनः सललीमलपत्-'सखि! पुरा शाम्बो नाम कश्चिन्महीवल्लभो मनोवल्लभया सह विहारवाञ्छया कमलाकरमवाप्य तत्र कोकनदकदम्बसमीपे निद्राधीनमानसं राजहंसं शनर्गृहीत्वा बिसगुणेन तस्य चरणयुगलं निगडयित्वा कान्तामुखं सानुरागं विलोकयन्मन्दस्मितविकसितैककपोलमण्डलस्तामभाषत-'इन्दुमुखि! मया बद्धोमरालः शान्तो मुनिवदास्ते। स्वेच्छयानेन गम्यताम्' इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने राजवाहन और अवन्तिसुन्दरी के पूर्व जन्म के वृत्तान्त का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- तस्मिन्नेव = पूर्वोक्त एव, समये = काले, कोऽपि, मनोरमः = सुन्दरः, राजहंसः = मरालः, केलेः = (क्रीडायाः), विधित्सया = (विधातुमिच्छया)। तयोः = (अवन्तिसुन्दरी राजवाहनयोः) उपकण्ठं = समीपम्, अगमत् = गतः। समुत्सुकयेति = समुत्सुकया = अत्युत्कण्ठितया, राजकन्यया = राजकुमार्या मरालग्रहणे = हंसादाने, नियुक्तां = प्रेरितां, बालचन्द्रिकाम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा। वाक्याऽवसरः = वचनप्रगङ्ग समुचितः = योग्यः। इति = कारणेन, सभाषणे = (मिथ आलापे), निपुणः = (प्रवीणः), राजवाहनः, सलीलं = सविलासम्, अलपत् = अगदत्। हे सखि = हे वयस्ये! पुरा = पूर्वकाले। शाम्बो नाम = नाम्ना शाम्बः, कश्चित् = कोऽपि, महीवल्लभः = पृथ्वीपतिः, राजा। मनोवल्लभया = चित्तप्रियया, स्वपत्न्या, सह = समम्।

विहारवांछया = क्रीडेच्छया। कमलाकरं = सरः। अवाप्य = प्राप्य। तत्र = तस्मिन्। कोकनदकदम्बस्य = (रक्तोत्पलसमूहस्य), समीपे = (निकटे)। निद्राऽधीन = (संवेशायम्), मानसं = (चित्तम्) यस्य तम्। राजहंसं = मरालं, शनैः = मन्दम्। गृहीत्वा = आदाय, बिसगुणेन = मृणालरज्ज्वा, तस्य = राजहंसस्य, चरणयुगलं = पादयुग्मं, निडयित्वा = बद्ध्वा, कान्तामुख = प्रियाबदनं, साऽनुराग = सप्रणयं, विलोकयन् = पश्यन्, मन्दस्मितेन = (ईषद्धास्येन), विकसितं = (प्रफुल्लम्, एकं) कपोलमण्डलं = (गण्डमण्डलम्) यस्य सः तादृशः सन्। तां = कान्ताम्, अभाषत = भाषितवान्। हे इन्दुमुखि = हे चन्द्रवदने! मया, वद्धः = निगडितः, मरालः = राजहंसः, शान्तः = शमयुक्तः, मुनिवत् = मुनिना, आस्ते = तिष्ठति। अनेन = मरालेन, स्वच्छया = निजवांछया, गम्यतां = गमनं क्रियताम् इति।।12।।

भावार्थ:- उसी समय कोई सुन्दर राजहंस क्रीडा करनेकी इच्छा से उनके पास आ गया। उत्कण्ठित राजकुमारीसे हंसको पकड़नेमें नियुक्त बालचन्द्रिकाको देखकर "इस समय बोलने का अवसर समुचित है" ऐसा सोचकर संभाषण में प्रवीण राजवाहनने विलासके साथ कहा-''सखि! पहले शाम्ब नामके किसी राजा ने अपनी पत्नीके साथ क्रीडाकी इच्छासे तालाब में पहुँचकर वहाँ लाल कमलोंके समूहके समीप निद्राके अधीन चित्तवाले राजहंसको धीरे-धीरे पकड़कर मृणालके तन्तुसे उसके दो चरणोंको बाँधकर प्रियाके मुखको प्रेमके साथ देखते हुए मन्दहास्य से विकसित एक कपोलवाला होकर उन्हें (प्रियाको) कहा-'हे चन्द्रमुखि! मुझसे बाधा गया हंस शान्त होकर मुनिके समान बैठा हुआ है। यह अपनी इच्छा से चला जाय।।12।।

13. सोऽपि राजहंसः शाम्बमशपत्-'महीपाल! यदस्मिन्नम्बुजषण्ढेऽनुष्ठानपरायणतया परमानन्देन तिष्ठन्तं नैष्टिकं मामकारणं राज्यगर्वेणावमानितवानसि, तदेतत्पाप्मना रमणीविरहसन्तापमनुभव इति। विषण्यवदनः शाम्बो जीवितेश्वरीविरहमसहिष्णुर्भूमौ दण्डवत्प्रणम्य सविनयमभाषत-'महाभाग, यदज्ञानेनाकरव तत्क्षमस्व' इति। स तापसः करुणाकृष्टचेतास्वतमवदत्-'राजन्, इह जन्मनि भवतः शापफलाभावो भवतु। मद्वचनस्यामोघतया भाविनि जननेशरीरान्तर गतायाः अस्याःसरसिजाक्ष्या रसेन रमणो भूत्वा मुहूर्तद्वय मच्चरणयुगलबन्धकारितया मासद्वय शृङ्खलानिगडितचरणो रमणीवियोगविषादमनुभूय पश्चादनेककाल बल्लभया सह राज्यसुखं लभस्व' इति।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में राजवाहन और अवन्तिसुन्दरी के पूर्व जन्म के वृतांत का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- सोऽपि = पूर्वकथितोऽपि, राजहंसः = मरालः, शाम्बं = तन्नामानं राजानम्, अशपत् = शप्तिवान्! महीपाल = हे राजन! ? यत् = यस्मात्कारणात् अस्मिन् अम्बुजषण्डे = कमलसमूहे, अनुष्ठानपरायणतया = नियमसाधनतत्परत्वेन, परमानन्देन सुखाऽतिशयेन तिष्ठन्तं = स्थितिं, कुर्वन्तं, नैष्ठिकं = ब्रह्मचारिणं, माम् अकारणं = हेतुं बिना। अकारणम्, राज्यगर्वेण = राजभावदर्पेण अवमानितवान् = अवज्ञातवान्, असि = विद्यसे। तत् = तस्मात्कारणात्, एतत्पाप्मना = मदवज्ञापापने, रमणीत्यादिः = रमणीविरहेण (कान्तावियोगेन), संतापम् = (सज्वरम्), अनुभव = निर्विश। इति। विषण्ण = (खिन्नम्), वदन = (मुखम्), यस्य सः। शाम्बः = तन्नामा राजा। जीवितेश्वर्याः = (प्राणेश्वर्याः, प्रियाया इति भावः), विरहम् = (वयोगम्) असहिष्णुः = (असहनः) सन्। भूमौ = भुवि, दण्डवत्, प्रणम्य = साष्टाङ्गं नमस्कृत्य। सविनयं = नम्रतापूर्वकम्, अभाषत = अगदत्। महाभाग = महोदथ!, अज्ञानेन = ज्ञानाऽभावेन, यत् = कर्म, स्विद्वन्धन = रूपमिति, भावः = अकरवम् =कृत वान्। तत् = क्षमस्य = मर्षया इति। सः = पूर्वोक्ताः, तापसः = तपस्वी, करुणया = (दयया), आकृष्टं = (गहीतम्), चेतः = (चित्तम्) यस्य सः, तादृशः सन् त = राजानम्, अवदत् = अब्रवीत्। राजन्! = हे पार्थिव!, इह = अस्मिन्, जन्मनि = जनने, भवतः = तव, शापफलस्य = (दुरेषणा परिणामस्य), अभावः = (राहित्यम्), भवतु = अस्तु। मद्वचनस्य = मद्भाषितस्य; अमोघतया = अनिष्फलतया, भाविनी = भविष्यति, जनने = जन्मनि शरीरान्तरं = देहान्तरं, गताया = प्राप्तायाः, अस्याः = निकटस्थायाः, सरसिजाक्ष्याः = कमलनयानायाः, रसेन = अनुरागेण, रमणः = पतिः, भूत्वा, मुहूर्तद्वयं = मुहूर्तद्वितयं, मम = (मरालस्य), चरणयुगलस्य = (पादद्वयस्य), बन्धकारितया = (बन्धनकारकत्वेन), मासद्वयं = मासद्वितयं, शृङ्घलया = (अन्दुकेन), निगडिंतौ = (बद्धौ), चरणौ = (पादौ), रमणीवियोगेन = (कान्तीविरहेण), विषादम् = (खेदम्), अनुभूय = निविश्य, पश्चात् = परवर्तिनि काले। वल्लभया = प्रियया, सह = समम्, अनेककालं = बहुसमयपर्यन्तं, राज्यसुखं = राज्यानन्दं, लभस्व = प्राप्नुहि। इति ॥13॥

भावार्थ:- उस राजहंसने भी शाम्बको शाप दिया-हे राजन! जो कि इस कमलसमूहमें अनुष्ठानमें तत्पर होनेसे अत्यन्त आनन्दसे रहे हुए मुझ ब्रह्मचारीको राज्यके घमण्ड से विना कारण अपमानित किये हुए हो, इस कारणसे इस पापके कारण आप पत्नीके विरहका सन्ताप भोगें। खिन्न मुखवाले शाम्बने प्राणेश्वरी (पत्नी) के विरह सहनेमें असमर्थ होकर भूमिमें साष्टांग प्रणामकर नम्रतासे कहा-''महोदय! मैंने अज्ञानसे जो किया उसे क्षमा करें''। दयासे आकृष्ट चित्तवाले उन तपस्वीने राजाको कहा-''राजन्! इस जन्ममें आपको शापफल न हो, परन्तु मेरा वचन निष्फल नहीं होनेसे दूसरे जन्ममें दूसरे शरीरको प्राप्त इस सुन्दरीके अनुरागसे पति होकर दो मुहूर्त तक मेरे दो चरणोंमें बन्धन करनेसे दो मास

तक शृंखला (सिकड़ी) से बँधे चरणबाला होकर पत्नीवियोग के विषादका अनुभव कर पीछे बहुत कालतक पत्नीके साथ राज्यसुखको प्राप्त करें'' ॥13॥

14. तदनु जातिस्मरत्वमपि तयोरन्वगृह्णात्। 'तस्मान्मरालबन्धनं न करणीयं त्वया' इति। सापि भर्तृदारिका तद्वचनाकर्णनाभिज्ञातस्वपुरातनजननबृत्तान्सा 'नूनमयं मत्प्राणवल्लभः' इति मनसि जानती रागपल्लवितमानसा समन्दहासमवोचत्-''सौम्य! पुरा शाम्बो यज्ञवन्ती सन्देशपरिपालनाय तथाविधं हंसबन्धनमकार्षीत्। तथा हि लोके पण्डिता अपि दाक्षिण्येनाकार्य कुर्वन्ति' इति। कन्याकुमारायेवमन्योन्यपुरातनजनननामधेये परिचिते परस्परज्ञानाय साभिज्ञमुक्त्वा मनोजरागपूर्णमानसौ बभूवतुः।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने अवन्तिसुन्दरी और राजवाहन के परस्पर पुरातन जन्म एवं नाम से परिचित होने पर परस्पर ज्ञान के लिए सप्रमाण बातों को कहते-कहते उनके अनुराग का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- तदनु = तदनन्तरं, तयोः = यज्ञवतीशाम्बयोः, जातिस्मरत्वम् = पूर्वजन्मस्मरणम् अपि। अन्वगृह्णात् = अनुगृहीतवान्। तस्मात् = कारणात्, स्वया = भवत्या, मरालबन्धनं = राजहंसबन्धनं, न करणीयं = न कर्तव्यम् इति। साऽपि = पूर्वोक्ता, भर्तृदारिक = राजकुमारी, अवन्तिसुन्दरी, तद्ववचनस्य = (राजवाहनवचसः), आकर्णनेन = (श्रवणेन), अभिज्ञातः = (स्मृतः), स्वपुरातनजननस्य = (आत्मपूर्वजन्मनः), बृत्तान्तः = (वार्ता), यया = सा। नूनं = निश्चयेन, अयं = सन्निकृष्टस्य राजवाहनः, मत्प्राणवल्लभः = मत्प्राणप्रियः, इति = एवं, मनसि = चित्ते, जानती = अवगच्छन्ती सती, रागेण = (अनुरागेण), पल्लवितं = (प्रफुल्लम्), मानसं = (चित्तम्), समन्दहासं = स्मितहास्यपूर्वकम्। अवोचत् = उक्तवती। हे सौम्य = हे सज्जन!, पुरा = पूर्वकाले, शाम्बः = तन्नामा राजा। यज्ञवत्याः = (स्वपत्न्याः), सन्देशस्य = (वाचिकाऽनुरोधस्य), परिपालनाय = (संरक्षणाय), तथाविधं = तादृशं हंसबन्धनं = हंसनिगडनम्, अकार्षीत् = कृतवान्। हि = निश्चयेन, तथा = तेन प्रकारेण, लोके = भुवने, पण्डिताः = विद्वांसः अपि। दाक्षिण्येन = पराऽभिप्रायाऽनुरोधेन, अकार्यम् = अप्रशस्तं कार्य, कुर्वन्ति = विदधति। कन्याकुमाराविति = राजकन्याराजकुमारौ, अवन्तिसुन्दरीराजवाहनाविति भावः। एवम् = इत्थम्। परिचिते = संस्तुते, परस्परज्ञानाय = मिथोबोधाय, साऽमिज्ञं = संस्मरम्, उक्त्वा = अमिधाय। मनोजरागाभ्यां = (कामावेशाऽनुरागाभ्याम्), पूर्णौ = (पूरितम्), मानसं = (चितम्), अभूवतुः = अभवताम्॥14॥

भावार्थ:- इसके बाद उन दोनोंमें पूर्वजन्मका स्मरण होनेका भी अनुग्रह किया। ''इस कारण तुम्हें हंसका बन्धन नहीं करना चाहिये''। वह राजकुमारी भी उनके वचनसे पूर्वजन्मके वृत्तान्तका स्मरण करके निश्चय ही ये मेरे प्राणनाथ है'' ऐसा मनमें समझती हुई अनुरागसे विकसित चित्तवाली होकर मन्दहास्यपूर्वक कहने लगी ''सौम्य! पहले राजा शाम्बने अपनी पत्नी यज्ञवतीके सन्देशका परिपालन करने के लिए उस प्रकार हंसको बन्धनमें डाल दिया। उस प्रकार लोकमें पण्डित भी दूसरे का चित्त रखनेके लिए अकार्य करते हैं''। इस प्रकार कुमारी (अवन्तिसुन्दरी) और कुमार (राजवाहन) परिचित परस्पर पूर्वजन्म और नामको परस्परमें ज्ञात करनेके लिए स्मरणपूर्वक कहकर कामदेवके आवेश और अनुरागसे पूर्ण चित्तवाले हो गये।।14।।

15. तस्मिन्नवसरे मालवेन्द्रमहिषा परिजनपरिवृता दुहितृकेलिविलोकनाय तं देशमवाप। बालचन्द्रिका तु वां दूरतो विलोक्य ससम्भ्रमं रहस्यनिर्भेदभिया हस्तसंज्ञया पुष्पोद्भवसेव्यमानं राजवाहनवृक्षवाटिकान्तरितगात्रमकरोत्। सा मानसारमहिषो सखीसमेताया दुहितुर्नानाविधां विहारलीलामनुभवन्ती क्षणं स्थित्वा दुहित्रः समेता निजागारगमनायाद्युक्ता बभूव। मातरमनुगच्छन्ती अवन्तिसुन्दरी राजहंसकुलतिंलक! विहारवांछया केलिवने मदन्तिकमागतं भवन्तमकाण्ड एवं विसृज्य मया समुचितमिति जनन्यनुगमनं क्रियते, तदने भवन्मनोरागोऽन्यथा मा भूत इति मरालमिव कुमारमुद्दिश्य समुचितालापकलाप 'वदन्ती पुनः पुनः परिवृत्तदीननयना वदनं विलोकयन्ती निजमन्दिरमगात्।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने अवन्तिसुन्दरी का अपनी माता के साथ घर जाने का वर्णन किया है।

व्याख्या:- तस्मिन् अवसरे = प्रसङ्गे, मालवेन्द्रस्य = (मानसारस्य), महिषी = (महाराज्ञी), परिजनपरिवृत्त = परिवार परिवेष्टिता सती। दुहितृकेल्याः = (पुत्रीक्रीडायाः), विलोकनाय = (दर्शनाय), देशं = स्थानम्, मवाप = प्राप्तवती। बालचन्द्रिका तु तां = मालवेन्द्रमहिषीं, दूरितः = विप्रकृष्टप्रदेशात्, विलोक्य = दृष्ट्वा। रहस्य = (गोप्यबृत्तस्य), निर्भेदभिधा = (प्राकट्यभीत्या), ससंभ्रमं = सत्वरं, हस्तसंज्ञया = करसंकेतेन, पुष्पोद्भिवेन = (तन्नामस्वसुहृदा), सेव्यमानं = (परिचयमाणम्), राजवाहनं, वृक्षवाटिकायां = (तरुपूर्णगृहोद्याने), अन्तारत = (व्यवहितम्), गात्रं = (शरीरम्), अकरोत् = कृतवती। सा = पूर्वोक्ता, मानसारमहिषो = मालवेशपत्नी, सखीसमेतायाः = वयस्यसायुक्तायाः, दुहितुः = पुत्र्याः अवन्तिसुन्दर्याः, नानाविधाम् = अनेकप्रकारां, विहारलीलां = क्रीडाविलासम्, अनुभवंती = निर्विशंती, क्षणं कंचितकालं स्थित्वा = अवस्थाय, दुहित्रा = पुत्र्या, समेता = सहिता सती, निजाऽगारे = (स्वभवने), गमनाय = (ब्रजनाय), उद्युक्ता = तत्परा, बभुव =

अभवत्। मातरं = जननी, मानसारमहिषीम्, अनुगच्छन्ती = अनुसरन्ती अवन्तिसुन्दरी, राजहंसस्य = (मरालस्य, तन्नाम्नो मगधाऽधिपस्य वा) यत् कुलं = वंशः, तस्य तिलक = (भूषणभूत), विहारवांछया = क्रीडेच्छया, केलीवने = क्रीडोपवने, मदन्तिकं = मत्समीपम्, आगतम् = आयातं, भवन्तं = त्वाम्, अकाण्डे = अनवसरे, विसृज्य = विहाय। मया समुचितं = योग्यम्, इति, जनन्यनुगमनं = मात्रनुसरणं, क्रियते = विधीयते, तत् = तस्मात्कारणात्, अनेन = मत्कर्मणा, भवन्मनोरागः = त्वच्चित्ताऽनुरागः, अन्यथा = अन्येन प्रकारेण, शिथिल इति भावः। मा भूत = नो भवेत्, इति = एवं, मरालं = राजहंसम्, कुमारं = राजवाहनम्, उद्देश्य = अमुद्य, समुचितम् = (समुपयुक्तम्), आलापकलापम् = (आभाषणसमूहम्), वदन्ती = कथयन्ती। पुनः पुनः = भूयो भूयः। परिवृत्ते = (विवृत्ते), दीने = (दैन्ययुक्ते), नयने = (नेत्रे), सा वदनं = मुखं, राजवाहनस्येति शेषः। विलोकयन्ती = पश्यन्ती सती। निजमन्दिरं = स्वभवनम्, अगात् = गता।।15।।

भावार्थः- उसी अवसर में मालवराजकी रानी अपने बहुत से परिजनों (सेविकाओं) से घिरी हुई पुत्रीकी क्रीड़ा देखनेके लिए उस स्थान में आ गई। बालचन्द्रिका ने उनको दूरसे ही देखकर गोप्य विषयके प्रकाश होनेके भयसे शीघ्रतापूर्वक हाथके इशारेसे पुष्पोद्भवसे सेवा किये जाते हुए राजवाहनके शरीरको वृक्षवाटिकामें छिपादिया। वह मानसारकी रानी सखियोंसे युक्त अपनी पुत्रीके अनेक प्रकारके क्रीडाविलासों को देखती हुई कुछ काल तक ठहरकर पुत्रीके साथ अपने महलमें जानेके लिए तत्पर हो गई। माताके पीछे जाती हुई अवन्तिसुन्दरी ‘‘राजहंस (राजहंस वा राजा राजहंस) के वंशके तिलक (भूषणस्वरूप)! क्रीड़ा की इच्छासे क्रीड़ावन में मेरे समीप आये हुए आपको असमय में ही छोड़कर उचित समझकर माताजीका अनुगमनकर रही हूँ इससे आपके मन का अनुराग मुझमें दूसरे प्रकार का (विरक्तियुक्त) न हो’’ इस प्रकार राजहंस के समान कुमार को उद्देश्य कर उचित वार्तालाप करती हुई बार-बार दीन नयनोंको घूमकर राजवाहन मुख को देखती हुई अपनेभवनमें चली गई।।15।।

16. तत्र हृदयवल्लभकथाप्रसङ्गे बालचन्द्रिकाकथिततदन्वयनामधेया मन्मथावाणपतनव्याकुलमानसा विरहवेदनया दिने दिने बहुलपक्ष शशिकलेव क्षामक्षामाहारादिसकलं व्यापारं परिहृत्य रहस्यमन्दिरे मलयजरसक्षालितपल्लवकुसुमकल्पिततलावर्तितनुलता बभूव।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने बालचंद्रिका के मुख से राजा राजवाहन के वंश का वर्णन, अवन्तिसुन्दरी का उसके प्रति काम के बाणों से पूर्ण विद्ध होने का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- तत्र = तस्मिन्, निजमन्दिर इति भावः। हृदयवल्लभस्य = (चित्तप्रियस्य, राजवाहनस्य) कथाप्रसंगे = (कथनाऽवसरे), बालचन्द्रिकया, कथिते = (अभिहिते), तस्य = (राजवाहनस्य), अन्वय नामधेये = (वंशनामनी) मन्मथवाणानां = (कामशराणाम्), पतनेन = (पातनेन), व्याकुलं =

(अतिशयाकुलम्), मानसं = (वित्तम्), विरहवेदनया = वियोगपीडया। दिने दिने = प्रतिदिनं वीप्सायां द्विरुक्तिः। बहुलपक्षस्य = (कृष्णपक्षस्य), शशिकला = (चन्द्रकला) इव, क्षामक्षामा = अतिशयकृशा। आहारादि = भक्षणादिकं, सकलं = समस्तं व्यापारं = क्रिया, परिहृत्य = परित्यज्य, रहस्यमन्दिरे = एकान्तगृहे, मलयजरसेन = (चन्दनद्रवेण), क्षालितानि = (धौतानि), यानि पल्लवकुसुमानि = (किसलयपुष्पाणि) तैः कल्पितं = (निर्मितम्) यत् तल्पतलं = (पर्यङ्कभागम्) तस्मिन् आवर्तिनी = (परिवर्तिनी), तनुलता = (देहवल्ली) बभूव = अभवत्॥16॥

भावार्थ:- वहाँ पर हृदयके प्रिय राजवाहन के विषयमें बातचीतके अवसर में बालचन्द्रिका से कहे हुए राजवाहन के वंश और नाम जानकर कामदेवके बाणके प्रहारसे व्याकुल चित्तवाली होकर वियोगकी वेदना से प्रतिदिन (हररोज) कृष्णपक्षके चन्द्रकी कलाके समान अत्यन्त कृश होकर आहार आदि समस्त क्रिया को छोड़कर एकान्त भवनमें चंदनके रससे प्रक्षालित पल्लवों और फूलोंसे रची हुई शय्या में अपनी शरीरलताकी करवट ले रही थी॥16॥

17. तत्र तथाविधावस्थामनुभवन्तीं मन्मथानलसन्तप्तां सुकुमारीं कुमारीं निरीक्ष्य खिन्नो वयस्यागणः काञ्चनकलशसञ्चितानि हरिचन्दनोशीरघनसारमिलितानि तदभिषेककल्पितानि सलिलानि बिसतन्तुमयानि वासांसि च नलिनीदलमयानि तालवृन्तानि च सन्तापहरणानि बहूनि संपाद्य तस्याः शरीरमशिशिरयत्। तदपि शीतलोपचरणं सलिल-मिव तप्ततैले तदङ्गेनदहनमेव समन्तादाविश्चकार। किंकर्तव्यतामूढां विषण्णं बालचन्द्रिकामाषदुन्मीलितेन कटाक्षवीक्षितेन वाष्पकणाकुलेन विलोक्य विरहानलोष्णनिः श्वासग्लपिताघरया नताङ्गया शनैःशनैः सगद्गदं व्यलापि-''प्रियसखि ! कामः कुसुमायुधः पञ्चबाण इति नूनमसत्यमुच्यते। इयमहमयोमयैरसंख्यैरिषुभिरनेन हन्ये। सखि! चन्द्रमसं वडवानलाददतितापकरं मन्ये। यदस्मिन्नन्तः प्रविशति शुष्यति पारावारः सति निर्गते तदैव वर्धते। दोषाकरस्य दुष्कर्म किं वण्यते मया। यददेन निज सोदर्याः मद्मालयाया गेहभूतमपि कमलं विहन्यते।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में सुकुमारी का कामाग्नि में सन्तप्त होने का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- तत्र = तस्मिन्, रहस्यमन्दिरे। तथाविधाऽवस्थां = तादृशदशाम्, अनुभवन्तीं = निर्विशन्तीं, मन्मथाऽनलेन = (कामाऽग्निना), सन्तप्तां = (सन्तापयुक्ताम्), सुकुमारीं = कोमलां, कुमारी = राजकन्यामवन्तिसुन्दरीं, निरीक्ष्य = दृष्ट्वा। खिन्नः = खेदयुक्तः, वयस्यागणः = सखीसमूहः। कांचनकलशे = (सुवर्णकुम्भे), संचितानि = (एकत्र कृतानि), हरचन्दनेन =

(उत्कृष्टमलयजविशेषेण) उशीरेण = (नलदेन), घनसारेण = (कर्पूरेण), च मिलितानि = (मिश्राणि), तस्याः = (अवन्तिसुन्दर्याः), अभिषेकाय = (स्नानाय), कल्पितानि = (प्रस्तुतानि), सलिलानि = (जलानि), बिसतन्तुमयानि = मृणालसूत्रनिर्मितानि, वासांसि = वस्त्राणि, नलिनी-दललयानि = कमलिनीपत्त्ररचितानि, तालवृन्तानि = व्यजनानि च, इत्थं सन्तापहराणि = संज्वरनिवारकाणि, बहूनि = अधिकानि, संपाद्य = उपपाद्य, तस्याः = अवन्तिसुन्दर्याः, देहं = शरीरम्, अशिशिरयत् शिशिरं = (शीतलम्) कृतवान्। तदपि = पूर्वोक्तमपि, शीतलोपचरणं = शीतोपचारः, तप्ततैले = सन्तप्ततिलविकारे, सलिलं = जलम्, तदङ्गे = अवन्तिसुन्दरीदेहाऽवयवे, समन्तात् = समन्ततः दहनम् = अग्निम्, एव। आविश्चकार = प्रादुश्चकार। किंकर्तव्यतायां = सम्प्रति किंकरणीयमिति विषये, मूढाम् = (अनभिज्ञाम्), विषण्यां = विषादयुक्तां, बालचन्द्रिकां = स्वसखीम्, इषदुन्मीलितेन = किंचिद्विकसितेन, बाष्पकणैः = (अश्रुलवैः), आकुलेन = (व्याप्तेन), कटाक्षवीक्षितेन = अपाङ्गनिरीक्षणेन। विलोक्य = निरीक्ष्य। विरहाऽनलेन = (वियोगाऽग्निना), उष्णः = (धर्मः), यो निःश्वासः = (मुखश्वासः), तेन ग्लपितः = (म्लानीकृतः), अधरः = (ओष्ठः), नातङ्ग्या = अवनताऽवयवया, कुचनितम्बभारादिति भावः, अवन्तिसुन्दर्या, शनैः = मन्दं, सगन्ददम् = अस्फुटस्वरपूर्वक, व्यलापि = विलपितम्।

प्रियसखि = दयितवयस्ये!, कामः = मदनः, कुसुमायुधः = पुष्पप्रहरणः, पंचबाणः = अरविन्दादिपंचबाणयुक्तः, इति = एवम्, नून = निश्चयेन, असत्य = मिथ्या, उच्यते = कथ्यते। इयं = निकटस्था, अहम्, अनेन = कामेन, असंख्यैः = अनन्तैः अयोमयैः = लौहनिर्मितैः, इषुभि = बाणैः, हन्ये = लक्ष्यीक्रिये। सखि = हे वयस्ये!, चन्द्रमसं = चन्द्रं, वाडवाडवानलात् = वडवाऽग्नेः, अतितापकरम् = प्रचुरसंज्वरकारकं, मन्ये = जानामिं। यत् = यस्मात्कारणात्, अस्मिन् = चन्द्रमसि, अन्तः = अभ्यतरं, प्रविशति = प्रवेशं कुर्वति सति। पाराऽवारः = समुद्रः, शुष्यति = शुष्को भवति। निर्गते सति = निःसृते सति, चन्द्रमसीति शेषः। तदा एव = तस्मिन् काल एव। वर्धते = एधते। दोषाकरस्य = दोषा (रात्रिम्), दोषाणाम् = (विरहिसन्तापनरूपदूषणानाम्), आकरस्य = (खनेः), दुष्कर्म = दुष्टा क्रिया, मया = वर्ण्यते = अभिधीयते। यत् = यस्मात्कारणात्, अनेन = चन्द्रमसा, निजसोदर्याः = स्वसहोदरायाः, गेहभूतं = गृहभूतं, कमलम् = पद्मम्, अपि। विहन्यते = ताड्यते, मुकुलीक्रियत इति भावः॥17॥

भावार्थः- वहाँ वैसी अवस्था का अनुभव करती हुई, कामाऽग्निसे सन्तप्त सुकुमारी कुमारी को देखकर खिन्न होकर सखीसमूहमें सुवर्ण कलशमें संचित हरिचन्दन, अशीर (खश) और कपूरसे

मिश्रित उनके स्नानके लिए संचित जल, मृणाल सूत्रोंसे बने हुए वस्त्र और कमलिनीके पत्तोंसे बने हुए पंखे और सन्ताप हटानेवाली बहुत-सी वस्तुओंका सम्पादन कर उनके शरीरको ठण्डा किया। वह शीतोपचार भी गर्म तैलमें जलके समान उनके अंगमें चारों ओरसे आग (सन्ताप) को प्रकट करने लगा। किंकत्र्तव्यता (क्या करें इस भाव) से मूढ़ और खिन्न बालचन्द्रिकाको कुछ विकसित और अश्रुकणोंसे आकुल कटाक्षदृष्टिसे देखकर वियोगाऽग्निसे गर्म निःश्वाससे म्लान किये गये ओष्ठवाली होकर अवनतशरीर से युक्त अवन्तिसुन्दरी ने धीरे-धीरे गद्गद स्वर से विलाप किया-''प्रिय सखी! कामदेव पुष्परूप अस्त्रवाला और पंचबाण (पाँच बाणोंसे युक्त), ऐसा जो कहा जाता है वह झूठ है। यदि मैं इससे लौहमय और अगणित बाणोंसे ताडित की गई हूँ। सखि! मैं चन्द्रमाको वाडवाऽग्निको अधिक सन्ताप करनेवाला जानती हूँ। जो कि इसके भीतर प्रवेश करनेपर समुद्र सूख जाता है, इसके निकलनेपर उसी समय समुद्र बढ़ जाता है। दोषाकर (चन्द्रमा वा; दोषका आकर) के दुष्टकर्म का मैं क्या वर्णन करूँ? जो कि वह अपनी सहोदर बहन लक्ष्मीके गृहस्वरूप कमल का भी नाश कर देता है।।17।।

18. विरहानलसंतप्तहृदयस्पर्शेन नूनमुष्णीकृतः स्वल्पीभवति मलयानिलः। नवपल्लवकल्पितं तल्पमिदमनङ्गाग्निशिखापटलमिव सन्तापं तनोस्तनोति। हरिचन्दनमपि पुरा निजयष्टिसंश्लेषवदुरगरदनलिप्तौल्वणगरलसंकलितमिव तापयति शरीरम्। तस्मादलमलमायासेनशीतलोपचारे। लाण्यजितमारो राजकुमार एवागदंकारो मन्मथज्वरापहरणे। सोऽपि लब्धुमशक्यो मया। किं करोमि' इति।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने सुकुमारी का कामाग्नि में सन्तप्त दशा का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- विरहाऽनलेन = (वियोगाऽग्निना), सन्तप्तं = (संज्वरयुक्तम्), यत हृदयम् = (चित्तम्), तस्य स्पशेन = (आमर्शेनेन)। उष्णीकृतः = उत्तप्तीकृतः, मलयाऽनिलः = दाक्षिणात्यवातः, नूनं = निश्चयेन, स्वल्पीभवति = अतिन्यूनीभवति। नवपल्लवैः = (नूनकिसलयैः), कल्पितम् = (रचितम्), इदं = निकटस्थं, तल्पं = पर्यङ्कः, अनङ्गाऽनेः = (कामाऽनलस्य), शिखापटलम् = (ज्वालासमूहः), तनोः = शरीरस्य, सन्तापं = सज्वरं, तनोति = विस्तारयति। हरिचंदनं = उत्कृष्टचन्दनविशेषः, अपि, पुरा = पूर्वकालेः, निजयष्टेः = (हरिचन्दनलतायाः) संश्लेषवन्तः = (सम्बन्धवन्तः), ये उरगाः = (सर्पाः), तेषां रदनैः = (दन्तैः), लिप्तं = (संयुक्तम्) यत् उल्वणविषं = (तीव्रगरलम्), तेन संकलितम् = (व्याप्तम्), इव, शरीरं = देहं, तापयति = सन्तप्तं करोति। तस्मात् = कारणात्, शीतलोपचारे =

शीतोपचारे, आयासेन = प्रयत्नेन, अलम् अलम् = पर्याप्तं पर्याप्तं, मन्मथज्वरस्य = (कामसन्तापस्य), अपहरणे = (निवारणे)। लावण्येन = (सौन्दर्येण), जितः = (पराजितः), मारः = (कामदेवः), येन सः तादृशो राजकुमारः = राजपुत्रः, राजवाहनः, एव अगदङ्कारः = वैद्यः, अगदं = (रोगाऽभावम्), करोतीति, सोऽपि = राजकुमारोऽपि। मया, लब्धुं = प्राप्तुम्, अशक्यः = न शक्ति विषयः। किं, करोमि = विदधामि इति।।18।।

भावार्थः- वियोगाऽग्निसे सन्तप्त हृदयमें स्पर्श करनेसे निश्चय ही वलय पर्वतकी हवा भी गर्म की जाकर अल्प हो जाती है। नये पल्लवोंसे बनाई गई यह शय्या भी कामाग्निकी ज्वालाके समूहके समान शरीरमेल सन्ताप फैला देती है। हरिचन्दन भी मानो पहले अपनी शाखामें सम्बद्ध सर्पोंके दातोंसे लिप्त विषम विषसे व्याप्त होकर शरीर को संतप्त कर रहा है। इस कारण शीतोपचार में आयास मत करो। सौन्दर्य से कामदेवको जीतनेवाले राजकुमार ही कामज्वरको दूर करने में वैद्य हैं। वे भी इस समय मुझसे नहीं पाये जा रहे हैं। मैं क्या करूँ'' ?।।18।।

19. बालचन्द्रिका मनोजज्वरावस्थापरमकाष्ठां गतां कोमलाङ्गीं तो राजवाहनलावण्याधीनमानसामनन्यशरणामवेक्ष्यात्मन्यचिन्तयत-'कुमारः सत्वरमानेतव्यो मया। नो चेदेनां स्मरणीयां गतिं नेष्यति मीनकेतनः। तत्रोद्याने कुमारयोरन्योन्यावलोकनवेलायामसमसायकः सममुक्तसायकोऽभूत। तस्मात्कुमारानयनं सुकरम्' इति। ततोऽवन्तिसुन्दरीरक्षणाय समयोचितकरणीयचतुरं सखीगणं नियुज्य राजकुमारमन्दिरमवाप पुष्पबाणबाणतूणीरायमाणमानसोऽनङ्गतप्तावयवसंपर्कपरिम्लान पल्लवशयनमधिष्टितो राजवाहनः प्राणेश्वरीमुद्दिश्य सह पुष्पोद्भवेन संल, पन्नागतां प्रियवयस्यामालोक्य पादमूलमन्वेषणीया लतेव बालचन्द्रिकाऽऽगतेति संतुष्टमना निटिलतटमण्डनीभावदम्बुजकोरकाकृतिलसदंजलिपुटाम् 'इतो निषीद' इति निर्दिष्टसमुचितासमासीनामवन्तिसुन्दरी प्रेषितं सकपूरं ताम्बूल विनयेन ददतीं तां कान्तावृत्तान्तमपृच्छत् तया सविनयमभाणि-'देव! क्रीडावने भवदवलीकनकालमारभ्य मन्मथभ्यमाना पुष्पलतादिषु तापशमनमलभमाना वामनेनेयोन्नीततरुफलमलभ्य त्वदुरः स्थलालिङ्गनसौख्य स्मरान्धतया लिप्सुः सा स्वयमेव पत्रिकामालिख्य 'वल्लभायेनामपथ' इति मां नियुक्तवती। राजकुमारः पत्रिकां तामादाय पपाठ-

प्रसंगः- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने राजवाहन का कामज्वर से सन्तप्तता का वर्णन, अवन्तिसुन्दरी के विषय में पुष्पोद्भव से बातें करने का वर्णन किया है।

व्याख्या:- बालचन्द्रिका मनोजज्वरस्य = (कामसन्तापस्य), अवस्थायाः = (दशायाः), परमकाष्ठां = (पूर्णस्थितिम्), गतां = प्राप्तां, कोमलाऽङ्गीं = मृदुलशरीरां, ताम् = अवन्तिसुन्दरीम्, अनन्यशरणाम् = अन्याश्रयरहिताम्, अत एव = राजवाहनस्य, लावण्यं = (सौन्दर्ये), अधीनम् = (आयत्तम्) चित्तं = (मनः), अवेक्ष्य = निरीक्ष्य, आत्मनि = स्वचित्ते, अचिन्तयत् = चिन्तितवती। कुमारः = राजवाहनः, मया, सत्वर = शीघ्रम्, आनेतव्यः = आनेयः। नो चेत् = न आनण्ये यदि, मनीकेतनः = कामदेवः, एनाम् = अवन्तिसुन्दरीम्, स्मरणीयां = स्मर्तव्यां, गतिं = स्थितिम्, नेष्यति = प्रापयिष्यति मृत्युं प्रापयिष्यतीति भावः।

तत्र = तस्मिन्, उद्याने = आक्रीडे, कुमारयोः = कुमारीकुमारयोः अवन्तिसुन्दरीराजवाहनयोरिति भावः। अन्योन्येत्यादिः = अन्योन्यर्योः (परस्परयोः) अवलोकनवेलायां = (दर्शनकाले), असमसायकः = विषमबाणः, कामदेवः। सम = युगपत्, मुक्तसायकः = प्रहितबाणः, द्वयोर्वाणैर्वेधमकरोदिति भावः। तस्मात् = कारणात्, कुमारानयनं = राजवाहनप्रापणं, सुकरं = सुखसाध्यम्, इति।

तः = अनन्तरम्, अवन्तिसुन्दरीरक्षणाय = अवन्तिसुन्दरीत्राणाय, समयोचितं = (कालयोग्यम्), यत् करणीयम् = (कृत्यम्), तस्मिन् चतुरं = (निपुणम्), सखीगणं = पयस्यासमूहं, नियुज्य = नियुक्तं कृत्वा, राजकुमारमन्दिरं = राजवाहनभवनम्, अवाप = प्राप्तवती। पुष्पबाणस्य = (कामदेवस्य), ये बाणः = (शराः), तेषां तूणीरायमानं = (तूणीरवदाचरत्), मानसं = (चित्तम्), अनङ्गतप्ताः = (कामसंतप्ताः), ये अवयवाः = (हस्तपादाद्यंगानि), तेषां सम्पर्कः = (सम्बन्धः), तेन परिम्लानं = (परिग्लानम्), यत् पल्लवशयनं = (किसलयशय्या), अधिष्ठितः = अधिशयितः, राजवाहनः प्राणेश्वरीम् = अवंतिसुन्दरीम्, उद्दिश्य = अनूद्य, पुष्पोद्भवेन = निजमित्रेण, सह = समं, सलपन् = मिथो भाषमाणः, आगतांम् = आयातां, प्रियवस्यां = दयितसखी, बालचन्द्रिकाम्, आलोक्य = निरीक्ष्य, अन्वेषणीया = गवेषणीया, लता = वल्लीं, पादमूलं = वक्षचरणमूलम्, इव। बालचंद्रिका, आगता = आयाता, इति = हेतुना सन्तुष्ट मनाः = परितुष्टचितः, निटिलतटे = (भालतटे), मण्डलीभवन् = (भूषणीभवन्), यः अम्बुजकोरकः = (कमलकलिका), तस्य इव आकृतिः = (आकारः), तादृशो य अंजलिपुटः = (हस्तसम्पुटः), इतः = अस्मिन् स्थाने, निषीद = पविश, इति = एवं, निर्दिष्टम् = (उद्दिष्टम्), समुचितम् = (योग्यम्), यत् आसनम् = (उपवेशनस्थानम्), तस्मिन् आसीनाम् = (उपविष्टाम्), अवन्तिसुन्दरीप्रेषितत्म् = अवन्तिसुन्दरीप्रहितं, सकर्पूरं = घनस। रसहिथम् = ताम्बूलं नागवल्लीदलं, विनयेन = नम्रतया, ददतीं = वितरन्तीं, तां = बालचन्द्रिकां, कान्ताचन्द्रि

वृत्तान्तं = प्रियावार्ताम्, अपृच्छत् = पृष्टवान्, तया = बालचंद्रिकया, सविनयं = नम्रतापूर्वकम्, अभाविभ- देव = राजन्!, क्रीडावने = केल्युपवने, भवदवलोकनकालं = भवद्दर्शनसमयम्, आरभ्य = उपक्रम्य, मन्मथमथ्यमाना = मदनपीड्यमाना, अवन्तिसुन्दरीं, पुष्पतल्पादिषु = कुसूमशय्यादिषु, तापशमनं = संतापशान्तिम् अलभमाना = अप्राप्नुवन्ती, वामनेन = खर्वेण नरेण, अलभ्यम् = अप्राप्यम्, उन्नततरुफलम् = उच्चवृक्षफलम्, त्वदुरःस्थलस्य = (भवद्वक्षःस्थलस्य), आलिङ्गसौख्यम् = (आश्लेषसुखम्), स्मराऽधतया = कामाऽन्धतया, लिप्सुः = लब्धुमिच्छुः, सा = अवन्तिसुन्दरी, स्वयम् = आत्मना, एव, पत्रिकाम् = अल्प पत्त्रम्, आलिख्यत्र = लिखित्वा, वल्लभाय = प्रियाय, एनां = पत्रिकाम्, अपंय = देहि, इत = एव, मां नियुक्तवती = आदिष्टवती। राजकुमारः = राजवाहनः, तां = पूर्वोक्ता, पत्रिकाम् = अल्पं पत्त्रम्, आदाय =गृहीत्वा, पपाठ = पठितवान्।।19।।

भावार्थः- बालचन्द्रिका ने भी कामज्वर की दशाकी चोटी में पहुँची हुई उन कोमलाङ्गी को राजवाहन के सौनदर्य के अधीन चित्तवाली और अन्य रक्षकसे रहित देखकर अपने मनमें सोचा- ''मुझे राजकुमारको शीघ्र लाना चाहिये। ऐसा नहीं करूँगी तो कामदेव इन्हं स्मरणीय अवस्थाको प्राप्त करायेगा। उस बागीचेमें राजकुमारी और राजकुमारके परस्पर दर्शनके अवसरमें कामदेवने एक ही बार दोनोंपर बाण छोड़ा था। इस कारण कुमारको ले आना सुसाध्य है''। तदन्तर अवन्तिसुन्दरी की रक्षाके लिए समय के अनुसार कार्य करनेमें चतुर सहेलियों को नियुक्त करके बालचंद्रिका राजकुमारके भवनमें चली गई। वहाँ कामदेवके बाणोंके तरकशके समान चित्तवाले और कामदेव से सन्तप्त अंगों के सम्पर्क से मुरझाये गये पल्लवों की शय्या में उपविष्ट राजवाहन अपने मित्र पुष्पोद्भवके साथ बातचीत कर रहे थे। उन्होंने अपने पास आई हुई प्रियसखी अवन्तिसुन्दरी को उद्देश्यकर देखकर 'वृक्षके पादमूल में ढूढ़नेके लिए योग्यलता की समान बालचंद्रिका आ गई है ऐसा सोचकर सन्तुष्ट चित्तवाला होकर लिलारके रलङ्कारके समान, कमलकी कलीकी सदृश मनोहर अंजलि बांधने वाली उसे 'यहाँ बैठो' ऐसा कहकर निर्दिष्ट उचित आसनमें बैठी हुई और अवन्ति सुन्दरी से भेजे गये कपूरवाले पानके बीड़ेको नम्रतासे देती हुई उससे प्रिया (अवन्तिसुन्दरी) का वृत्तांत पूछा। उसने नम्रतासे कहा-राजन्! क्रीड़ाके बगीचेमें आपके दर्शनके समय से आरम्भ कर कामदेवसे पीड़ित कीगई और फूलों की शय्यया आदिमें तापशान्तिको न पानेवाली जैसे बौनेको ऊँचे पेड़ का फल अलभ्य होता है उसी तरह अलभ्य आपके वक्षःस्थलके आलिंगनके सौख्यको कामान्ध होनेसे पानेकी इच्छा करती हुई उन्होंने स्वयम् ही पत्रिका लिखकर ''प्रियको इसे समर्पण करो'' कहकर समर्पण करनेके लिए मुझे नियुक्त किया है। राजकुमार ने उस पत्रिकाको लेकर पढ़ा-।।19।।

20. **'सुभग! कुसुमसुकुमारं जगदनवद्यं विलोक्य ते रूपम्।**
मम मानसमभिलषति, त्वं चित कुरु तथा मृदुलम्।।

अन्वयः- हे सुभग! कुसुमसुकुमारं जगदनवद्यं ते रूपं विलोक्य मम मानसम् अभिलषति। त्वं तथा चित्तं मृदुलं कुरु, ।

प्रसंगः- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने अवन्तिसुन्दरी द्वारा भेजा गया प्रेमपत्र राजकुमार के द्वारा पढ़े जाने का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्याः- हे सुभग = हे सौभाग्यशालिन्! वा हे सुन्दर!, कुसुमम् = (पुष्पम्), इव सुकुमार = (कोमलम्), जगति = (लोके), अनवद्यम् = (निर्दोषम्) ते = तव, रूप = सौन्दर्य शरीरं वा, विलोक्य = निरीक्ष्य, मम = मदीय, मानसं = चित्तम्, अभिलषति = वांछति, त्वदीयं प्रणयमिति शेषः। त्व, तथा = तेन प्रकारेण, यथा रूपं मृदुलं तथैवेति भावः। चित्तं = स्वकीयं मनः, मृदुलं = कोमलं, कुरु = विधेहि।

भावार्थः- हे सुन्दर! फूलके समान सुकुमार, जगत्में अनिन्द्य आपका रूप देखकर मेरा चित्त आपका अभिलाष करता है, आप भी अपने रूपके समान चित्तको कोमल करें ।।20।।

वृत्तः- आर्या वृत्त, तल्लक्षणं यथा—

''यस्याः प्रथमे पादे द्वादश मात्रास्तया तृतीयेऽपि।
अष्टादश द्वितीये, चतुर्थके पंचदश साऽऽर्या''

21. इति पठित्वा सादरमभाषत ''सखि! छायावन्मामनुवतमानस्य पुष्पोद्भवस्य ल्लभा वत्वमेव तस्या मृगीदृशो बहिश्चराः प्राणा इव वर्तसे। स्वच्चातुर्यमस्यां क्रियालतायामालवालमभूत्। यत्तवाभीष्ट, येन प्रियामनोरथः फलिष्यति; तदखिल करिष्यामि। नलाङ्ग्या मन्मनःकाठिन्यमाख्यातम्। यदा केलिवने कुरङ्गलोचना लोचनपथमवर्तत, तदैवापहृतमदीयमानसा सा स्वमन्दिरमगात्। सा चेतसो माधुर्यकाठिन्ये स्वयमेव जानाति। दुष्करः कन्यान्तः- पुरप्रवेशः तदनुरूपमुपायमुपपाद्यः श्वः परश्वो वा नताऽङ्की सङ्गमिष्यामि। मदुदन्तमेवमाख्याय शिरीषकुसुमसुकुमाराया यथा शरीरबाधा न जायेत, तथाविधमुपायमाचर' इति।

प्रसंगः- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने प्रेमपत्र के प्रतिउत्तर में राजावाहन का पत्र प्रेषण का वर्णन किया है।

व्याख्या:- इति = इत्थं, पठित्वा = पाठं कृत्वा, सादरम् = आदरपूर्वकम्, अभाषत = भाषितवान्। हे सखि! = हे वयस्ये!, छायावत् = अनातपवत्, माम् अनुवर्तमानस्य = अनुसरतः, पुष्पोद्भवस्य = तत्राम्नो मत्सखस्य, वल्लभा = प्रिया, त्वम् एव तस्याः मृगीदृशः = हरिणीनयनायाः, बहिश्चराः = बाह्यदेशचरणशीलाः, प्राणाः = असवः, वर्तसे = विद्यसे। त्वच्चातुर्यं = तव चातुरी। अस्यां क्रियालतायां = कार्यरूपब्रवतौ, आलवालम् = आबालं, फलोत्पत्यर्थमिति शेषः। श्रभूत् = संजातम्। तत् = तस्मात्कारणात्, येन = कर्मणा, प्रियामनोरथः = दयिताऽभिलाषः, फलिष्यति = उत्पत्स्यते, तत्, अखिलं = समस्तं, करिष्यामि = विधास्यामि। नताङ्ग्या = अवनतदेहावयवया, अवन्तिसुन्दर्या, मन्मन इत्यादिः = मन्मनसः (मच्चित्तस्य) काठिन्यं = (कठोरता), आख्यातं = कथितम्। यदा = यस्मिन्काले, केलीवने = क्रीडोपवने, कुङ्गलोचना = मृगनयना, अवन्तिसुन्दरी। लोचनपथं = लोचनयोः = (नेत्रयोः), पन्थाः = (मार्गः), अवर्तत = अविद्यत, दृष्टेति भावः। तदा = तस्मिन् काले, अपहृतम् = (आकृष्टम्), मदीयं = (मामकम्), मानसं = (चित्तम्), यया सा। सा = अवन्तिसुन्दरी, स्वमन्दिरं = निजभवनम्, अगात् = गता। सा = अवन्तिसुन्दरी, चेतसः = चित्तस्य, माधुर्यकाठिन्ये = मृदुलता कठोरते, स्वयम् = आत्मना, एव, जानाति = बुध्यते। कन्यानाम् = (कुमारीणाम्), अन्तःपुरे = (शुद्धान्ते), प्रवेशः = (प्रवेशनम्), दुष्करः = दुःसाध्यः। तस्य = (कन्याऽन्तःपुरप्रवेशस्य), अनुरूपम् = (योग्यम्), उपायं = साधनम्, श्वः = द्वितीयदिने, वा = अथवा, परश्वः = तदनन्तरदिने, नताङ्गीम् = अवनताऽवयवाम्, अवन्तिसुन्दरीं, संगमिष्यामि = समागमं करिष्यामि। मदुदन्तं = मद्वार्ताम्, एवम् = ईत्थम्, आख्याय = कथयित्वा। शिरीषकुसुमम् = (कपीतनपुष्पम्), इव सुकुमारा = (कोमला), तस्याः अवन्तिसुन्दर्या इति भावः। यथा = येन प्रकारेण, शरीरबाधा = देहपीडा, न जायेत = नो भवेत्, तथाविधं = तादृशम्, उपायं = साधनम्, आचर = कुरु। इति ।।21

भावार्थ:- ऐसा पढ़कर आदरपूर्वक कहा-‘‘हे सखि! छायाके समान मेरा अनुसरण करनेवाले पुष्पोद्भवकी प्रिया तुम ही उस मृगनयना (अवन्तिसुन्दरी) के बाहर चलनेवाले प्राणके समान हो। तुम्हारी चतुराई इस क्रियारूपलतामें आलवाल (क्यारी) के समानहो गया है। जो तुम्हारा अभीष्ट है और जिससे प्रियाका अभिलाष फलित होगा, वह सब करूँगा। सुन्दरी (अवन्तिसुन्दरी) ने मेरे मनकी कठोरताको कहा। जब क्रीड़ावनमें मृगनयना नेत्रमार्गमें पड़ी, उसी समयसे मेरे चित्तका अपहरण करनेवाली वह अपने भवनमें चली गई। वह (अवन्तिसुन्दरी) चित्तको कोमलता और कठोरताको स्वयम् ही जानती है। कन्याओंके अन्तःपुरमें प्रवेश दुष्कर है। उसने अनुकूल उपायका संपादन कर

कल या परसों उस सुन्दरीसे मिलूँगा। इस प्रकार मेरा वृत्तान्त कहकर शिरीषके फूलके समान सुकुमार अवनितसुन्दरीकी शरीरपीड़ा जैसे न होगी वैसा उपाय करो'' ।।21।।

22. बालचन्द्रिकापि तस्य प्रेमगर्भितं वचनमाकर्ण्यं संतुष्टा कन्यापुरमगच्छत्। राजवाहनोऽपि य ? हृदयवल्लभावलोकनसुखमलभत, तदुद्यानं विहरविनोदाय पुष्पोद्भवसमन्वितो जगाम। तत्र चकोरलोचनावचितपल्लवकुसुमनिकुरम्वं महीरुहसमूहं शरदिन्दुमुख्या मन्मथसमाराधनस्थानं च नताङ्गीपदपङ्क्तिचिह्नितं शीतलसैकततलं च सुदतीभुक्तमुक्तं माधवोलतामण्डपान्तरपल्लवतल्पं च विलोकयंल्लनातिलकविलोकनवेलाजनितशेषाणि स्मार्रस्मारं मन्दमारुतकम्पितानि नवचूतपल्लवानि मदनाग्निशिखा इव चकितो दर्श दर्श मनोजकर्णेजपानामिव कोकिलकीरमधुकराणां कणितानि श्रावं श्रावं मारविकारेण क्वचिदप्यवस्थातुमसहिष्णुः परिबभ्राम।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से उद्धृत किए गए प्रस्तुत गद्यांश में गद्यसम्राट महाकवि दण्डी ने वालचन्द्रिका द्वारा राजावाहन का सन्देश अवन्तिसुन्दरी को सुनाने का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- बालचन्द्रिकाऽपि, तस्य =राजवाहनस्य, प्रेमगर्भितं =प्रियतायुक्तं, वचनं =वचः, आकर्ण्य =श्रुत्वा। संतुष्टा =संप्रीता सती। कन्यापुर =कुमारीभवनम्, अगच्छत् =गता। राजवाहन इति। राजवानोऽपि, यत्र =यस्मिन्उद्याने, हृदयवल्लभायाः = (चित्तप्रियायाः, अवन्तिसुन्दर्याः) अवलोकनसुखम् = (दशंनानन्दम्), अलभत = लब्धवान्, तत् = पूर्वोक्तम्, उद्यानम् = आक्रीड, विरहविनोदाय = वियोगनिवारणाय, पुष्पोद्भवसमन्वितः = पुष्पोद्भवयुक्तः सन्। जगाम = गतः। तत्र = तस्मिन्उद्याने, चकोरस्य = (चन्द्रिकापायिंपक्षिविशेषस्य) इव लोचने = (नेत्रे, रक्तवर्णे, इति भावः), यस्याः, तया अवचितम् = (लूनम्) पल्लवकुसुम निकुरम्बं = (किसलयपुष्पसमूहः) यस्मिंस्तम्। महीरुहसमूहं = वृक्षनिवहम्। शरदिन्दुः = (शरदृतुचन्द्रः), इव मुखं = (वदनम्) यस्यातस्याः। नताङ्ग्याः = (अवनतदेहाऽवयवायाः। अवन्तिसुन्दर्याः), पदपङ्क्त्या = (चरणन्यासावल्या), चिह्नितम् = (अङ्कितम्), शीतलं = (शीतम्) यत् संकेततलम् = (बालुकाभागम्), सुदत्याः = (शोभनदन्तयुक्तायाः, अवन्तिसुन्दर्याः), मुक्तमुक्तं = (प्राग्भुक्तं, पश्चात् मुक्तम्), माधवीलतामण्डपस्य = (वासन्तीलतागृहस्य), अन्तरे = (अभ्यन्तरे) यत् पल्लवतल्पं = (किसलयन्शय्याम्), विलोकयन् = पश्यन्। लनातिलकस्य = (सुन्दर्यलङ्कारभूतायाः अवन्तिसुन्दर्याः), विलोकनवेलायां = (दर्शनकाले), जनितानि = (आविर्भूतानि), शेषाणि = (अवशिष्टानि), वस्तूनीति शेषः। स्मारं स्मारं = स्मृत्वा स्मृत्वा। मन्दमारुतेन = (मन्थरवातेन) काम्पतानि = (चलितानि), नवचूतपल्लवानि = नूतनाम्रकिसलयानि, मनदाऽग्नेः = (कामाऽनलस्य) शिखाः = (ज्वालाः) इव चकितः = भीतः, सन्,

दर्श दर्श = वारं वारं निरीक्ष्य, मनोजेत्यादिः = मनोजस्य (कामदेवस्य), कर्णेजपानाम् = (सूचकानाम्) इव कोकिल-कीर-मधुकराणां = पिक-शुक-भ्रमराणां, क्वणितानि = ध्वनीन्, श्रावं श्रावं = श्रुत्वा श्रुत्वा। मारबिकारेण = कामविकृत्या, क्वचिदपि = कुत्राऽपि, स्थातुम् = अवस्थानं, असहिष्णुः = असहनः सन्, परिबभ्राम = परिभ्रमणं कृतवान्। ॥22॥

भावार्थः- वालचन्द्रिका भी उनके प्रेमसे भरे हुए वचनका श्रवणकर सन्तुष्ट होकर कन्याओंके अन्तःपुरमें गईं। राजवाहन भी जहांपर हृदयकी प्रिया (अवन्तिसुन्दरी) के दर्शनका सुख पाये हुए थे, उस उद्यानमें वियोगको हटानेके लिये पुष्पोद्भवको साथमें लेकर चले गये। वहां चकोरके समान नेत्रोंवाले (अवन्तिसुन्दरी) से तोड़े गये पल्लवों और फूलोंसे युक्त वृक्षोंके समूहको, शरत्कालके चन्द्रसदृश मुखवाली (अवन्तिसुन्दरी) के कामदेवकी आराधनाके स्थानको अवन्तिसुन्दरीकी पदपंक्तिसे चिह्नित शीतल बालूवाले स्थानको और सुन्दरीसे उपभोग कर छोड़ी गई माधवीलतामण्डपके भीतर स्थित पल्लव शय्याको देखते हुए सुन्दरियोंमें श्रेष्ठ (अवन्तिसुन्दरी) को देखनेके समयमें आविर्भूत अवशिष्ट पदार्थोंका बारंबार स्मरण कर मन्द हवासे कम्पित, नये आम्रपल्लवोंको कामाऽग्निकी ज्वालाओंके समान भीत होकर बारंबार देखकर कामदेवके गुप्तचरोंके समान कोयल, तोता और भ्रमरोंकी आवाजको बारंबार सुनकर कामविकारसे कहीं भी टिकनेमें समर्थ न होकर भ्रमण करने लगे ॥22॥

23. तस्मिन्नवसरे धरणीसुर एकः सूक्ष्मचित्रनिवसनः स्फुरन्मणिकुण्डलमण्डितो मुण्डितमस्तकमानवसमेतश्चतुरवेषमनोरमो यदृच्छया समागतः समन्ततोऽभ्युल्लसत्तेजोमण्डलं राजवाहनमाशीर्वादपूर्वकं ददर्श। राजवाहन सादरम् 'कोभवान् ? कस्यांविद्यायां निपुणः? इतितं पप्रच्छा स च 'विद्येश्वरनामधेयोऽहमेन्द्रजालिकविद्याकोविदो विविधदेशेषु राजमनोरंजनाय भ्रमन्नुज्जयिनीमद्यागताऽस्मि' इति शशंस। पुरनपि राजवाहनं सम्यगालाक्य 'अस्यां लीलावनौ पाण्डुरतानिमित्तं किम् ? इति साभ्रिपायं विहस्यापृच्छत्। पुष्पोद्भवश्च निजकार्यकरणं तर्कयन्नेनमादरेण बभाषे-'ननु सतां सख्यस्याभाषणपूवतया चिरं रुचिरभाषणो भवानस्माकं प्रियवयस्यो जातः। सुहृदामकथ्यं च किमस्ति ? केलीवनेऽस्मिन्वसन्तमहीत्मवायागताया मालवेन्द्रसुताया राजनन्दनस्यास्य चाकस्मिकदर्शनेऽन्योन्यानुरागातिरेकः समजायत। सततसंभोगसिद्ध्यु पायाभावेनासावी दृशीमवस्थामनुभवति' इति। विद्येश्वरो लज्जाभिरामं राजकुमारसुखमभिवीक्ष्य विरचितमन्दहासो व्याजहार-''देव! भवदनुचरे मयि तिष्ठति तव कार्यमसाध्यं किमस्ति ? अहमिन्द्रजालविद्यया मालवेन्द्रं मोहयन् पौरजनसमक्षमेव तत्तनयापरिणयं रचयित्वा कन्यान्तः

पुरप्रवेशं कारयिष्यामो’ इति वृत्तान्त एष राजकन्यकाये सखीमुखेन पूर्वनेव कथयितव्य’ इति। संतुष्टमना महीपतिरनिमित्तं मित्रं प्रकटीकृतकृत्रिमक्रियापाटवं विप्रलम्भकृत्रिमप्रेमसहजसौहार्दवेदिनं तं विद्येश्वरं सबहुमानं विससर्ज।

प्रसंग:- दण्डी द्वारा विरचित संस्कृतसाहित्य के प्रकृष्ट गद्य दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में बिन्धेश्वर नामक ब्राह्मण का वर्णन प्रतिपादित किया गया है।

व्याख्या:- तस्मिन् = पूर्वोक्ते, अवसरे = प्रसंगे, सूक्ष्मं = (श्लक्ष्णं), चित्र = (कर्बुरम्), निवसनं = (वस्त्रम्), यस्य सः। स्फूरद्भ्यां = (दीप्यमानाभ्याम्), मणिकुण्डलाभ्यां = (रत्नखचितकर्णवेष्टनाभ्याम्), मण्डितः = (भूषितः), मुण्डितः = (कृतमुण्डनः), मस्तकः = (शिरः), येषां ते, तादृशा ये मानवाः = (मनुष्याः), तैः समेतः = (सहितः), चतुरवेषेण = (कुशलनेपथ्येन), मनोरमः = (सुन्दरः), यदृच्छया = दैवगत्या, समागत = समायातः, एकः = अद्वितीयः, धरणीसुरः = ब्राह्मणः, समन्ततः = परितः, अभ्युल्लसत् = (अभिदीप्यत्), तेजोमण्डलं = (प्रकाशमण्डलम्), राजवाहनम् आशीर्वादपूर्वकम् = आशीर्वचनसहितं, दर्दशं = दृष्टवान्। राजवाहनः = भूपः सादरम् = आदरपूर्वकं, भवान् = त्वं, कः = किंनामधेयः, कस्यां, विद्यायां = शास्त्रे, निपुणः = प्रवीणः, इति = एवं, तं = धरणीसुरं, पप्रष्ट = पृष्टवान्। स च = धरणीसुरः, ऐन्द्रजालिकविद्यायां = (कुहकविद्यायाम्), कोविदः = (विद्वान्), विद्येश्वरनामधेयः = विद्येश्वरनामकः, अहम्। विविधदेशेषु = अनेकजनपदेषु, राज्ञां = (भूपालाणाम्) मनोरंजनाय = (चित्तविनोदनाय), भ्रमन् = पर्यटन्, अद्य = अस्मिन्दिने, उज्जयिनीं = विशालाम्, आगतः = आयातः, अस्मि। इति = एवम्, शशस = सूचितवान्। पुनरपि = भूयोऽपि, राजवाहनं = सम्यक् निपुणम्, आलोक्य = निरीक्ष्य, अस्या, लीलाऽवनौ = विलासभूमौ, पाण्डुरतानिमित्तं = पाण्डुताहेतुः; किम्, इति, साऽभिप्रायं = साकूतं, विहस्य = हसित्वा, अपृच्छत् = पुष्टवान्। पुष्पोद्भवश्च, निजकार्यकरणं = स्वकृत्यविधानं, तर्कयन् = विचारयन्, एन = विद्येश्वरम्, आदरेण = आदृत्या, बभाषे = भाषितवान्। ननु = वाक्यारम्भे, सतां = सज्जनानां, सख्यस्य = मैत्र्याः, आभाषणपूर्णतया = आलापपूर्वत्वेन, चिर = बहुसमयं, रुचिरभाषणः = मनोहरालापः, भवान् अस्माकं प्रियवयस्यः = दयितसहृत्, जातः = सम्पन्नः, सुहृदां = मित्राणाम्, अकथ्यम् = अकथनीयं, च किम् = अस्ति = विद्यते। अस्मिन् = इह, केलीवने = क्रीडोपवने, वसन्त-महोत्सवाय = सुरभिमहाक्षणाय, आगतायाः = आयातायाः, मालवेन्द्रसुतायाः = मानसारनन्दिन्याः अस्य, राजनन्दनस्य = राजकुमारस्य राजवाहनस्य च, आकल्मिकदर्शने = यादृक्छिकविलोकने, अन्योन्ययोः = (परस्परयोः), अनुरागातिरेकः = (प्रणयाऽतिशयः), समजायत = संजातः।

सततं = (निरन्तरम्) या संभोगसिद्धिः = (समागमससाफल्यम्) तस्याः उपायाऽभावेन = (साधनराहित्येन), असौ = अयम्, ईदृशीम् = एतादृशीम्, अवस्था = दशाम्, अनुभवति = अनुभवं करोति। विद्येश्वरः = ऐन्द्रजालको बिप्रः। लज्जाऽभिरामं = लज्जया (ब्रीडया), अभिराम = (सुन्दरम्), राजकुमारसुखं = राजवाहनवदनम्, अभीवीक्ष्य = विलोक्य, विरचितः = (कृतः), मन्दहासः = (स्मितहास्यम्), ब्याजहार = जगाद। देव = राजन्, त्वदनुचरे = भवत्सेवके, मयि तिष्ठति = अवस्थानं कुर्बति, तव = भवतः, कार्य = कृत्यम्, असाध्यम = असाधनीयं, किम्, अस्ति = विद्यते। अहम् इन्द्रजालविद्यया = कुहककलया, मालवेन्द्रं = मालवेश्वरं मोहयन् = मोहयुक्तं, कुर्बन्, पौरजनानां = (नागरलोकानाम्), समक्षम् = (प्रत्यक्षम्), तत्तनयायाः = (तद्दिहितुः), परिणयं = (विबाहम्), रचयित्वा = विधाय, कन्यानाम् = (कुमारीणाम्), अन्तः पुरप्रवेशं = (शुद्धन्तप्रवेशनम्), कारिष्यामि = विधास्यामि, एषः = अयं, वृत्तान्तः = वातां, सखीमुखेन = बयस्यावदनेन, राजकन्यकायै = नृपकुमार्यै, अबन्तिसुन्दर्यै पूर्वम् = प्रथमम्, एव कथयितब्यः = कथनीयः, इति।

सन्तुष्टमनाः = परितुष्टचित्तः, महीपतिः = राजा, राजवाहनः, अनिमित्तं = निष्कारणं, प्रकटीकृतं = दर्शितम्, कृत्रिमं = (क्रियानिर्बृत्तम्, अवास्तवम्), क्रियापाटवं = (कर्मकौशलम्), येन, = तम्। विप्रलम्भे = (विप्रयोगे), कृतिमप्रेम = (क्रियानिर्वृत्तप्रणयः), यत् तस्मिन् सहजसौहार्द्र = (स्वाभाविकसख्यम), तद्वेदिनं = (तद्वेत्तारम्), तं = तादृशं, विद्येश्वरम् = ऐन्द्रजालिकविप्रं, सबहुमानम् = अधिकसत्कारपूर्बकम्, बिससर्ज = गमनायाऽनुज्ञां ददौ ।।23।।

भावार्थ:- उस अवसरपर महीन और रंगीन वस्त्र पहने हुए, चमकते हुए मणिखचित कुण्डलोंसे भूषित, मुण्डन किये हुए मनुष्योंको साथमें लिये हुए, कुशल वेषसे सुन्दर, अकस्मात् आये हुए एक ब्राह्मणने चारों ओरसे प्रदीप्त तेजोमण्डलवाले राजवाहनको आशीर्वादपूर्वक देखा। राजा (राजवाहन) ने आदरके साथ उन्हें "आप कौन हैं? और किस विद्यामें प्रवीण हैं" ? ऐसा पूछा। उन्होंने भी ''मेरा नाम विद्येश्वर है, इन्द्रजालविद्यामें विद्वान् मैं बहुतसे देशोंमें राजाओंका मनोरंजन (दिलबहलाव) करनेके लिए घूमकर आज ही उज्जयनीमें आया हुआ हूँ" ऐसा कहकर फिर भी राजवाहनको भली-भाँति देखकर-''इस विलासभूमिमें आपकी पाण्डुरताका क्या कारण है'' ? ऐसा अभिप्रयापूर्वक हँसकर पूछा। पुष्पोद्भवने उन (विद्येश्वर) से अपना कार्य करनेकी तर्कना कर आदरके साथ उनको कहा-''बातचीतके अनन्तर सज्जनोंकी मित्र (दोस्ती) होनेसे बहुत समय तक मनोहर भाषण करनेवाले आप हमारे प्रिय मित्र हो गये हैं। मित्रोंको न कहने की बात ही क्या है। इस क्रीड़ाके उपवनमें वसन्त ऋतुके महोत्सवके लिए आई हुई मालवराज (मानसार) की पुत्रीका और इस

राजकुमार (राजवाहन) का आकस्मिक दर्शन होनेसे परस्पर अत्यन्त अनुराग हो गया है। परन्तु निरन्तर संगम की सिद्धि का उपाय न होने से ये ऐसी अवस्थाका अनुभव कर रहे हैं” तब विद्येश्वरने लज्जा से सुन्दर राजकुमारका मुख देखकर मुसकुराकर कहा-‘‘राजन्! आपके अनुचर मेरे रहते हुए आपका कौन सा कार्य असाध्य है? मैं इन्द्रजालिविद्यासे मालवराज (मानसार) को मोहित कर नगरवासी जनोंके देखते देखते मालवेन्द्रकी पुत्रीके साथ विवाह की रचनाकर कन्याओंके अन्तःपुरमें आपका प्रवेश कराऊँगा। यह वृत्तांत राजकुमारीको सखीके मुखसे पहलेही कहना चाहिये‘‘। तब संतुष्टचित्त होकर राजा (राजवाहन) ने विना कारण के मित्र और वियोगमें कृत्रिम प्रेममें स्वाभाविक मित्रताके ज्ञाता विद्येश्वरको बहुत समानके साथ रुखसत किया ॥23॥

24. अय राजवाहनो विद्येश्वरस्य क्रियापाटवेन फलितमिव मनोरथं मन्यमानः पुष्पोद्भवेन सह स्वमन्दिरमुपेत्यसादरं बालचन्द्रिकामुखेन निजवल्लभायै महीसुरक्रियमाण संगमोपायं वेदयित्वा कौतुकाकृष्टहृदयः ‘कथमिमांक्षपांक्षपयामि’ इत्यतिष्ठत्। परेद्युः प्रभाते विद्येश्वरो रसभाव रीतिगतिचतुरस्तादृशेन महतः निजपरिजनेन सह राजभवनद्वारान्तिकमुपेत्य दौवारिकनिवेदितनिजवृत्तान्तः सहसोपगम्य सप्रणाम् ऐन्द्रजालिकःसमागतः‘इति द्वाःस्थैर्विज्ञापितेन तदृर्शनकुतूहलाविष्टेन समुत्सुकावरोधसहितेन मालवेन्द्रेण समाहूयमानो विद्येश्वरः कक्षान्तरं प्रविश्य सविनयमाशिषं दत्त्वा तदनुज्ञातः परिजनताड्यमानेषु वाद्येषुनदत्सु गाय कीषु मदकलकोकिलामञ्जुलध्वनिषु समधिकरागरंजितसामाजिकमनो वृत्तिषु पिच्छिकाभ्रमणेषु सपरिवारं परिवृत्तं भ्रामयन्मुकुलितनयनः क्षणमतिष्ठत्। तदनु विषमं विषमुल्बणं वमन्तः फणालङ्करणा रत्नराजितराजराजमन्दिराभोगा भोगिनो भयं जनयन्तो निश्चेरुः।

प्रसंग:- दशकुमारचरितम् से संग्रहित इस गद्यांश में महाकवि दण्डी ने पुष्पोद्भव द्वारा बिन्धेश्वर नामक ब्राह्मण को राजवाहन के पूर्ण वृत्तान्त से परिचित कराने व ब्राह्मण का उन दोनों को मिलाने का संकल्प देकर, बिद्येश्वर की विदाई का वर्णन प्रतिपादित किया है।

व्याख्या:- अथ = अनन्तरं, राजवाहनः, विद्येश्वरस्य = एन्द्रजालिक विद्याऽभिज्ञस्य, क्रियापाटवेन = कर्मकुशलतया, मनोरथं = स्बाऽभिलाषं, फलितंसफलं, मन्यमानः = जानन्, पुष्पोद्भवने = स्वमित्रेण, सह = समं, स्वमंदिरम् = आत्मभवनम्, उपेत्य = संप्राप्य, बालचन्द्रिकामुखेन = बालचन्द्रिकावदनेन, सादरम् = आदरपूर्वकं, निजवल्लभायै = स्वप्रियायै, अवन्तिसुन्दर्यै, महीसुरेण = (ब्राह्मणेन, ऐन्द्रजालिकेन =विद्येश्वरेणेति भावः, क्रियमाणं = (विधीयमानम्), संगमोपायं = समागमोपायं, वेदयित्वा = ज्ञापयित्वा, कौतुकेन = (कौतूहलेन),

आकृष्ट = (गृहीतम्), हृदय = (चित्तम्), इमां, क्षपां = रात्रिं , कथं = केन प्रकारेण, क्षपयामि = यापयामि, इति = इत्थम्, अतिष्ठत् = स्थितः।

परेद्युः = अन्येद्युः, प्रभाते = प्रातः, रसाः = (शृङ्गरादयः), भावाः = (अभिप्रायाः) रीतिगतयः = (इन्द्रजालक्रियाः), तत्र चतुरः = (निपुणः), विद्येश्वरः, महता = प्रचुरेण, निजपरिजनेन = स्वपरिवारेण, सह = समम्, राजभवनस्य = (प्रासादस्य), यद् द्वारं = (प्रतीहारः), तदन्तिकम् = (तत्वमीपम्), उपेत्य = प्राप्य। दौवारिकेण = (द्वारपालेन), निवेदितः = (विज्ञापितः), निजवृत्तान्तः = (स्वोदन्तः), येन सः। सहसा = अतर्कितरूपेण, उपगम्य = समीपं गत्वा, सप्रणामं = प्रणतिपूर्वकम्, ऐन्द्रजालिकः = इन्द्रजालप्रयोक्ता, समागतः = समायातः, इति = एवं, द्वास्थैः = प्रतीहारस्थितैर्जनैः, विज्ञापितेन = निवेदितेन, तद्दर्शने = (ऐन्द्रजालिकविलोकने), यत् कुतूहलं = (कौतुकम्), तेन आविष्टेन = (व्याप्तेन), समुत्सुकाः = (समुत्कण्ठिता) ये अवरोधाः = शुद्धान्ताः, शुद्धान्तस्थजनाः = तक्षणया अयमर्थः। तैः सहितेन = युक्तेन, मालवेन्द्रण = मालवराजेन, समाहूयमानः = समाकार्यमाणः, विद्येश्वरः = ऐन्द्रजालिकब्राह्मणः, कक्षान्तरम् = अन्यां कक्षो, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, सविनयं = नम्रतापूर्वकम्, आशिषं = हिताशंसां, दत्त्वा = वितीर्य, तदनुज्ञातः = तेन (मालवेन्द्रेण), अनुज्ञातः = (आज्ञप्तः), विद्येश्वर इति भावः। परिजनै = (स्वजनैः), ताड्यमानेषु = (वाद्यमानेषु), वाद्येषु = वादित्रंषु, नदत्सु = ध्वनत्सु, सत्सु, गायकीषु = मानकर्त्रीषु स्त्रीषु, मदकलाः = (मदयुक्ताऽव्यक्तध्वनयः), याः = (कोकिलाः), ता इव मंजुलध्वनयः = (मनोहरस्वराः), तासु, समधिकरागेण = (अति शयाऽनुरागेण), रञ्जिता = (आकृष्टा), सामाजिकानां = (सभ्यानाम्) मनोवृत्तिः = (चित्तवृत्तिः), पिच्छिकानाम् = (इन्द्रजालोपकरणभूतानां पिच्छगुच्छानाम्), भ्रमणेषु = (घूर्णनेषु), सपरिवारं = परिवारसहितं यथा तथा। परिवृत्तं = मण्डलाकारं, भ्रामयन् = भ्रान्त कुर्वन्, मुकुलितनयनः = मुद्रितनेत्रः, क्षणं = कंचित्कालम, अतिष्ठत् = स्थितः।

तदनु = तदनन्तरम्, उल्बणं = तीव्रं, विषमं = दारुणं, विषं = गरलं, वमन्तः = उद्गिरन्तः, फलाऽलङ्करणाः = फणा (स्फठा), एव अलंकरणं = (भूषणम्), रत्नराज्या = (मणिपङ्कत्या) निराजितः = (उज्ज्वलीकृतः), राजमन्दिरस्य = (प्रासादस्य), आभोगः = (परिपूर्णप्रदेशः), यैस्ते, भोगिनः = सर्पाः, भोगः = (शरीरम्), भयं = भातिं, जनयन्तः = उत्पादयन्तः सन्तः, निश्चेरुः = निश्चक्रमुः॥24॥

भावार्थ:- अनन्तर राजवाहन विद्येश्वरकी कर्मकुशलतासे अपने अभिलाषको फलितके समान सोचतेहुए पुष्पोद्भवके साथ अपने भवनमें पहुंचकर बालचन्द्रिकाके मुखसे अपनी प्रियाको ब्राह्मण

(विद्येश्वर) से किये जानेवाले समागमके उपायको आदरपूर्वक जताकर कुतुहलसे आकृष्ट चित्तवाला होकर ''कैसे इस रातको बिताऊँगा'' ऐसा सोचकर अवस्थित हुए। दूसरे दिन प्रातःकालमें श्रृंगार आदि रस, अभिप्राय, रीति और गतिमें कुशल विद्येश्वर वैसे ही बहुतसे अपने सहचरोंके साथ राजभवनके द्वारके पास पहुंचकर द्वारपालोंसे अपने वृत्तान्तका निवेदन कर सहसा पास जाकर प्रणाम कर ''इन्द्रजालवाला (बागीगर) आया है इस प्रकार द्वारपालोंसे निवेदन किये गये और ऐन्द्रजालिकको देखनेमें कौतुकसे युक्त और उत्कण्ठित रानियोंके साथ मालवराजसे बुलाया गया विद्येश्वर दूसरी कक्षामें प्रवेशकर नम्रतासे आशीर्वाद देकर, राजासे आज्ञा पाकर सहचरोंसे बजाये गये वाद्योंके आवाज करनेपर, गानेवाली स्त्रियोंसे मदसे मनोहर शब्दवाली कोयलियों के समान मनोहर शब्द करनेपर, अत्यधिक अनुरागसे समाजके जनोंकी मनोवृत्तिको आकृष्ट करने वाले मोर पंखों के घुमाये जानेपर, परिजनों के साथ मण्डलाकार रूपसे मोरपंखोंको घुमाता हुआ कुछ समयतक आंखों को मूंदकर रहा। उसके बाद तीव्र और दारुण विषका वमन करते हुए फणारूप अलंकारवाले रत्नोंकी पंक्तिसे राजमन्दिरके प्रांगणको प्रकाशित करने वाले सर्प भयको उत्पन्न करते हुए निकले ।।24।।

25. गृघ्राश्च बहवस्तुण्डैरहिपतीनादाय दिवि समचरन्। ततोऽग्रजन्मा नरसिंहस्य हिरण्यकशिपोर्दैत्येश्वरस्य विदारणमभिनीय महदाश्चर्यान्वितं राजानमभाषत-'राजन् अवसानसमये भवता शुभसूचकं द्रष्टुमुदितम् ततः कल्याणपरम्परावाप्तये भवदात्मजाकारायास्तरुण्या निखिललक्षणोपेतस्य राजनन्दनस्य विवाहः कार्यः' इति। तदवलोकनकुतूहलेन महीपालेनानुज्ञातः स संकल्पितार्थसिद्धिसंभावनसम्फुल्लवदनः सकलमोहजनकमंजन लोचनयोर्निक्षिप्य परितो व्यलोकयत्। सर्वेषु 'तदैन्द्रजालिकमेव कर्म' इति साद्भुतं पश्यत्सु रागपल्लवितहृदयेन राजवाहनेन पूर्वसंकेतसमागतामनेकभूषणभूषिताङ्गीमवन्तिसुन्दरी वैवाहिकमन्त्रतन्त्रनैपुण्येनाग्निं साक्षीकृत्य संयोजयामास। क्रियावसाने सति 'इन्द्रजालपुरुषाः! सर्वे गच्छन्तु भवन्तः' इति द्विजन्मनोच्चैरुच्यमाने सर्वे मायामानवा यथायथमन्तर्भावं गताः'। राजवाहनोऽपि पूर्वसंकल्पितेन गूढोपायचातुर्येणन्द्रजालिकपुरुषवत्कन्यान्तः पुरं विवेश। मालवेन्द्रोऽपि तदद्भुतं मन्यमानस्तस्मै वाडवाय प्रचुरतर धनं दत्वा विद्येश्वरम् 'इदानी साधय' इति विसृज्य स्वयमन्तर्मन्दिरं जगाम। ततोऽवन्तिसुन्दरी प्रियसहचरीवरपरिवारा वल्लभोपेता सुन्दरं मन्दिर ययौ। एवं दैवमानुषबलेन मनोरथसाफल्यमुपेतो राजवाहनः सरसमधुरचेष्टाभि। शनैःशनैर्हरिणलोचनाया लज्जामपनयन्सुरतरागमुपनयन् रहो विश्रम्भमुपजनयन् संलापे तदनुलापपीयूषपानलोलश्चित्रचित्रं चित्तहारिण चतुर्दशभुवनवृत्तान्त श्रावयामास।

प्रसंग:- महाकवि दण्डी के दशकुमारचरितम् से अवतरित इस गद्यांश में कवि ने ब्राह्मण के इन्द्रजाल का वर्णन व राजवाहन के साथ अवन्तिसुन्दरी के विवाह संस्कार का वर्णन किया है।

व्याख्या:- बहवः = प्रचुराः, गृध्राश्च = दाक्षाय्याश्च, तुण्डैः = मुखैः, अहिपतीन् = सर्पश्रेष्ठान्, आदाय = गृहीत्वा, दिवि = आकाशे, समचरन् = अभ्रमन्। ततः = अनन्तरम्, अग्रजन्मा = ब्राह्मणः, नरसिंहस्य = नृसिंहस्य भगवतोऽवतारधारिणः, दैत्येश्वरस्य = दैतेयराजस्य, हिरण्यकशिपोः, विदारणं = नखैः पाटनम्, अभिनीय = अभिनयं कृत्वा। महेत्यादिः = महदाश्चर्येण (महाविस्मयेन), अन्वितं = (युक्तम्), राजानं = मालवपतिम्, अभाषत = भाषितवान्, राजन् = हे भूपाल!, अवसानसमये = कार्यसमाप्ति काले, भवत = त्वया, शुभसूचकं = कल्याणसूचकं, वृत्तम्, द्रष्टुं = विलोकयितुं, उचितं = योग्यम्। ततः = तस्मात्कारणात्, कल्याणपरम्परायाः = (मङ्गलश्रेणेः), अवाप्तये = (प्राप्तये), भवदात्मजायाः = (त्वत्पुत्र्याः), इव आकारः = (आकृतिः), तरुण्याः = युवत्याः, निखिललक्षणैः = (समस्तशुभचिह्नैः), उपेतस्य = (युक्तस्य), राजनन्दनस्य = राजपुत्रस्य, विवाहः = परिणयः, कार्यः = कर्तव्यः। इति। तस्य = (विवाहस्य), अवलोकने = (दर्शने), कुतूहलेन = (कौतुकेन), हेतुना। महीपालेन = मालवाऽधीशेन, अनुज्ञातः = आज्ञप्तः। संकल्पितस्य = (कृतसंकल्पस्य, अभीष्टस्येति भावः) अर्थस्य = (प्रयोजनस्य) या सिद्धिः = (सफलता), तस्याः संभावनेन = (आशंसया), संफुल्लं = (विकसितम्) वदनं = (मुखम्) सकलानां = (समस्तानां जनानाम्), मोहजनकम् = (भ्रमोत्पादकम्), अंजनं = कज्जलं, लोचनयोः = नेत्रयोः, निक्षिप्य = निधाय, परितः = सर्वतः। व्यलोकयत् = अपश्यत्। सर्वेषु = सकलेषु, ऐन्द्रजालिकम् = इन्द्रजालसम्बन्धि, एव, तत्, कर्म = क्रिया, इति = एवं, साद्भुतम् = आश्चर्यपूर्वकं, पश्यत्सु = विलोकः यत्सु, रागेण = (अनुरागेण), पल्लवितं = (विकसितम्), हृदयं = (चेतम्) यस्य, तेन। राजवाहनेन, पूर्वसङ्केतेन = (प्राक्तनसूचनया), समागताम् = (समायाताम्), अनेकभूषणैः = (बहुविधाऽलङ्कारैः), भूषिताऽङ्गीम् = (अलङ्कृतदेहाऽवयवाम्, अवन्तिसुन्दरीं) वैवाहिकाः = (विवाहसम्बन्धिनः), ये मन्त्रतन्त्राः = (वेदमन्त्रागमाः), तेषां नैपुण्येन = (प्रवीणतया), अग्निं = संस्कृतानलं, साक्षीकृत्य = साक्षिणं कृत्वा। संयोजयामास = संयुक्तां चकार, विद्येश्वर इति भावः। क्रियावसाने = कार्यसमाप्तौ, इन्द्रजालपुरुषाः = मायामानवाः। सर्वे = समस्ताः, भवन्तः = यूयम्। गच्छन्तु = व्रजन्तु, इति, द्विजन्मना = ब्राह्मणेन, विद्येश्वरेण, उच्चैः = तारस्वरेण, उच्यमाने = अभिधीयमाने सति, सर्वे = सकलाः, मायामानवाः = इन्द्रजालपुरुषाः, यथायथं = यथास्वम्, अन्तर्भावम् = अन्तर्धानं, गताः = प्राप्ताः। पूर्वसङ्कल्पितेन = पुराकृतसंकल्पेन, गूढोपायस्य = (गुप्तसाधनस्य), चातुर्येण = (कौशल्येन), ऐन्द्रजालिकपुरुषवत् = मायामानववत्, कन्याऽन्तः पुरं = कुमारीशुद्धान्तं, विवेश = प्रविष्टः।

मालवराजोऽपि तत् = कृतं कर्मं, अद्भुतम् = आश्चर्यपूर्णं, मन्यंमानः = जानानः, तस्मै = पूर्वोक्ताय, वाडवाय = ब्राह्मणाय, विद्येश्वराय, प्रचुरतरं = पर्याप्तं, धनं = द्रव्य द्रव्य, दत्त्वा = वितीर्य, विद्येश्चरम् = ऐन्द्रजालिकविप्रम्, इदानीम् = अधुना, साधय = गच्छ, इति = एवमुक्त्वा, विसृज्य = गमनाऽनुज्ञां दत्त्वा, स्वयम् = आत्मना, अन्तर्मन्दिरं = प्रासादाभ्यन्तरं, जगाम = गतः। ततः = अनन्तरम्, अवन्तिसुन्दरी = राजकुमारी, प्रियः = (अभीष्टः), सहचरीवरः = (सखीश्रेष्ठः), परिवारः = (परिजनः), वल्लभोपेना = प्रियसहिता सती, सुन्दरं = मनोहरं, मन्दिरं = प्रसादं, ययौ = जगाम्।

एवम् = इत्थं, दैवेन = (देवसम्बन्धिना), मानुषेण = (मनुष्यसम्बन्धिना), बलेन = (शक्त्या), मनोरथसाफल्यम् = अभिलाषसिद्धिम्, उपेतः = प्राप्तः, राजवाहनः, सरसाः = (सानुरागाः), मधुराः = (मनोहराः), याश्चेष्टाः = (शारीरिकव्यापाराः), ताभिः, शनैः शनैः = मन्दं मन्दं, हरिणलौचनायाः = मृगनयनायाः, लज्जां = व्रीडाम्, अपनयन् = दूरीकुर्वन, सुरतराग = निधुघनाऽभिलाषम्, उतनयन् = प्रापयन्। रहः = एकान्ते, घिश्रम्भं = विश्वासम्, उपजनयन् = उत्पादयन्, संलापे = मिथो भाषणे। तदनुलापेत्यादिः = तस्याः (अवन्तिसुन्दर्या), अनुलापः = (मुहुर्भाषा), एव यत् पीयूषम् = (अमृतम्), तस्य पादे = (धयने), लोलः = (चंचलः सन्), चित्रं = चित्रम् अतिशयाश्चयंरूपं, चित्तहारिणं = मनोहारिणं, चतुर्दशभुवनानां = स्वरादिचतुर्दशलोकानाम्, बृत्तान्तम् = (उदन्तम्), श्रावयामास = श्रावयति स्म ।।25।।

भावार्थः- बहुतसे गृध्र (गीध) भी मुखोंसे बड़े-बड़े सर्पोको लेकर आकाशमें घूमने लगे। तब ब्राह्मण (विद्येश्वर) ने भगवान् नृसिंहसे किये गये दैत्यराज हिरण्यकशिपुके विदारणका अभिनयकर आश्चर्यसे युक्त राजाको कहा-''राजन्! तमाशाके अनन्तर आपको कल्याणसूचक कुछ दृश्य देखना उचित है इस कारण शुभ परम्पराकी प्राप्तिके लिए आपकी पुत्रीके समान आकारवाली, किसी तरुणीका, समस्त लक्षणोंसे युक्त किसी राजपुत्रके साथ विवाह कराना चाहिये उस दृश्यको देखनेकी उत्कण्ठासे राजासे आज्ञापाकर संकल्पित प्रयोजन की सफलताकी संभावनासे प्रफुल्ल मुखवाले विद्येश्वरने सबको मोह पैदा करने वाला अंजन आंखोंमें डालकर चारों ओर देखा। ''यह इन्द्रजाल (जादू) का ही करतव है'' ऐसा समझकर सभोंके आश्चर्यपूर्वक रखनेपर अनुरागसे विकसित चित्तवाले राजवाहनसे पहलेके संकेतसे आई हुई, अनेक अलंकारोंसे सजे हुए अंगोंवाली अवन्तिसुन्दरीको विवाहसम्बद्ध मन्त्रतन्त्रोंकी निपुणतासे अग्निको साक्षी बनाकर संयुक्त कराया। इस कार्यकी समाप्तिके अनन्तर ''हे इन्द्रजाल-पुरुष! आप सब चले जायें'' ब्राह्मण (विद्येश्वर) से ऊँचे स्वरसे ऐसा कहनेपर वे मायामानव (इन्द्रजालके मनुष्य) जहाँ सेआये थे वहीं अन्तर्हित हो गये। राजवाहनने भी पहलेसे संकल्पित गूढ़

उपायकी चतुरतासे इन्द्रजालके पुरुषके समान कन्याओंके अन्तःपुरमें प्रवेश किया। मालवके राजाभी उस कर्मको अद्भुत (अनूठा) समझकर उस ब्राह्मण (विद्येश्वर) को पर्याप्त (काफी) धन देकर विद्येश्वरको ''इस समय जाओ'' ऐसा कहकर रुखसत कर (बिदा देकर) अपने प्रासादके भीतर चले गये। तब अवन्तिसुन्दरी प्रिय सखीआदि परिवारके साथ पति (राजवाहन) को लेकर सुन्दर भवनको गई। इस प्रकार भाग्य और मनुष्यको शक्तिसे अभिलाष की सफलता पाये हुए राजवाहन अनुरागपूर्ण मनोहर चेष्टाओंसे धीरे-धीरे मृगनयना (अवन्तिसुन्दरी) की लज्जा हटाते हुए रमणके अभिलाषको और एकान्त में बातचीत करनेमें विश्वासको उत्पन्न कर अवन्तिसुन्दरीके साथ भाषणरूप अमृतके पानमें चंचल होकर उन्हें अतिशय आश्चर्यस्वरूप मनोहर चैदह भुवनों का वृत्तांत सुनाया ।।25।।

6.4 सारांश:-

इस इकाई में आपने अवन्तिसुन्दरी का वालचन्द्रिका के साथ उपवन में प्रवेश वहीं राजवाहन का पुष्पोद्भव के साथ अवन्तिसुन्दरी को देखने के लिए उपवन में प्रवेश वर्णन, अवन्तिसुन्दरी का सौन्दर्य वर्णन, राजवाहन के मन में अवन्तिसुन्दरी के लिए प्रेमानुराग का अंकुरण, राजवाहन एवं अवन्तिसुन्दरी का एक दूसरे के प्रति कामज्वरर की सन्तप्तता का वर्णन, विद्येश्वर नामक ब्राह्मण का वर्णन, ब्राह्मण के इन्द्रजाल द्वारा राजवाहन के साथ अवन्तिसुन्दरी के विवाह का वर्णन को आपने सम्यक रूप से जाना।

6.5 शब्दावली:-

समीर	-	वायु।
रते	-	कामदेव की पत्नी।
कदली	-	केला।
मालवेश्वर	-	मानसार।
प्रणेश्वरी	-	पत्नी का पर्याय।
कुमारी	-	अवन्तिसुन्दरी।
कुमार	-	राजवाहन।
पंचवाण	-	कामदेव के पांच बाण।
दोषाकर	-	चन्द्रमा।
ब्राह्मण	-	बिद्येश्वर।
आर्या	-	छन्द का एक भेद।
मालवराज	-	मानसार।

गृध्र - गीध

इन्द्रजाल - जादूगर

6.6 बोध प्रश्न:-

अभ्यास प्रश्न 1-

(1) बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1. पंचम उच्छवास में किसका वर्णन है।

(क) अवन्तिसुन्दरी (ख) वसुमती

(ग) सुवृत्ता (घ) कालिन्दी

2. चन्द्रपाल के पिता का क्या नाम है।

(क) वामदेव (ख) बन्धुपाल

(ग) राजहंस (घ) मातंग

3. अवन्तिसुन्दरी किसकी पुत्री है।

(क) प्रहारवर्मा (ख) मानपाल

(ग) मालवेश्वर मानसार (घ) वन्धुपाल

4. अवन्तिसुन्दरी ने राजवाहन को प्रथम दर्शन कब किए।

(क) होलीकोत्सव पर (ख) दीपोत्सव पर

(ग) जन्मोत्सव पर (घ) मदनोत्सव पर

5. अवन्तिसुन्दरी के दर्शन के समय राजवाहन के साथ में कौन था।

(क) पुष्पोद्भव (ख) रत्नोद्भव

(ग) मातंग (घ) वामदेव

6. अवन्तिसुन्दरी की प्रियसखी का क्या नाम है।

(क) कालिन्दी (ख) वालचन्द्रिका

(ग) सुवृत्ता (घ) इनमें से कोई नहीं

7. कामज्वर में सन्तप्त अवन्तिसुन्दरी ने किसके माध्यम से राजवाहन तक अपना प्रेम पत्र भिजवाया।

(क) कालिन्दी (ख) वामदेव

(ग) वालचन्द्रिका (घ) बन्धुपाल

8. राजवाहन एवं अवन्तिसुन्दरी के विवाह में किसने सहायता की।

(क) पुष्पोद्भव (ख) मानसार

(ग) ब्राह्मण (घ) इेन्द्रजालिक

9. वसन्त ऋतु का स्वामी कौन है।

(क) कामदेव (ख) मीनकेतु

(ग) श्वेतकेतु (घ) इनमें से कोई नहीं

10. मालेश्वर के राजा का क्या नाम है।

(क) राजा राजवाहन (ख) राजा मानसार

(ग) प्रहारवर्मा (घ) लाटेश्वर

(2) निम्न वाक्यों में सही के सामने (√) और गलत के सामने (×) का चिन्ह लगायें-

1. वसन्त ऋतु का वर्णन पंचम उच्छवास में मिलता है। ( )
2. मालवेश्वर मानसार की पुत्री वसुमति थी। ( )
3. अवन्तिसुन्दरी की सखी का नाम सुबृत्ता था। ( )
4. राजवाहन ने अवन्तिसुन्दरी को पुरातन जन्म का स्मरण कराया। ( )
5. विद्येश्वर नामक ब्राह्मण की सहायता से अवन्तिसुन्दरी एवं राजवान का विवाह होता है। ( )

(3) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. ललनाजनं सृजता .... नूनमेषा घुणाक्षरन्यायेन निर्मिता।
2. अनन्यसाधारणसौन्दर्येणानेन कस्यां पुरि .... लोचनोत्सवः क्रियते।
3. सुभग! .... जगदनवद्यं विलोक्य ते रूपम्।
4. यस्याः प्रथमे पादे ....मात्रास्तया तृतीयेऽपि।
5. पंचमे उच्छवासे .... अवन्तिसुन्दर्यो: वर्णनं विद्यते।
6. .... द्वितीये चतुर्थके पंचदश साऽऽर्या।

6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास - उमाशंकरशर्मा 'ऋषि'।
2. संस्कृत वांगमय का वृहद् इतिहास - पं० बलदेव उपाध्याय।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास - कन्हैया लाल पोद्दार।
4. संस्कृत साहित्य का इतिहास - पद्मभूषण आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
5. संस्कृत साहित्य का आधुनिक इतिहास - डा0 राधावल्लभ त्रिपाठी, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी।

6.8 अन्य सहायक पुस्तकें:-

1. दशकुमारचरितम् - महाकवि दण्डी, नारायण राम आचार्य, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
2. दशकुमारचरितम् - आचार्य शेशराज शर्मा, 'रेग्मी' चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी।

3. दशकुमारचरितम् - महाकवि दण्डी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।
4. दशकुमारचरित - आचार्य दण्डी।
5. संस्कृतसुकवि - आचार्य बलदेव उपाध्याय।

6.9 बोध प्रश्नों के उत्तर:-

(1) बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1. (क)	2. (ख)	3. (ग)	4. (घ)	5. (क)
6. (ख)	7. (ग)	8. (घ)	9. (क)	10. (ख)

(2).

1. विधात्रा
2. भाग्यवतीनां तरुणीनां
3. कुसुमसुकुमारं
4. द्वादश
5. राजवाहन
6. अष्टादश

(3).
1. सही
2. गलत
3. गलत
4. सही
5. सही

6.10 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. राजवाहन का परिचय दीजिए।
2. अवन्तिसुन्दरी का परिचय दीजिए।
3. पंचम उच्छ्वास का कथासार लिखिए।